विवेक

प्रभा

निबन्ध प्रभा

नवीनतम संस्करण

(दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान आदि प्रान्तों के विद्यार्थियों की परीक्षा 10+2 प्रणाली के पाठ्यक्रम के अनुसार अत्यन्त उपयोगी एकमेव पुस्तक)

लेखक

अनुभवी अध्यापक मंडल

प्रकाशक

सुभाष ब्रादर्स

नई सड़क, दिल्ली-110006

नया संस्करण **मूल्य : 19 रुपये**

प्रकाशक :

सुभाष ब्रादर्स

नई सड़क, दिल्ली-6

Smati-Langar
X th - A
Presentation Convent
School
Gandhi Nagar
Jammu

नया संस्करण

विशेषताएं :

- आधुनिक परीक्षोपयोगी निबन्ध
- पत्र-लेखन
- अपठित
- व्यावहारिक व्याकरण

मूल्य : 19 रुपये

मुद्रक :

हरविन्दर कम्पोजिंग हाऊस द्वारा तिलक प्रिंटिंग प्रेस

बाजार सीताराम, दिल्ली-110006

अनुक्रमणिका

निबन्ध प्रकरण

मुख्य नवीन निबन्ध

उत्सव

ऋतुएँ

मनोरंजन और विज्ञान

स्वास्थ्य सम्बन्धी

अनुशासन और शिक्षा सम्बन्धी

चरित्र-सम्बन्धी

साहित्य-सम्बन्धी

खेल और शिक्षा

नेता

आर्थिक और सामाजिक

देश, यात्रा, दुर्घटना

सामयिक विषय (क)

आत्म कथा

सूक्ति सम्बन्धी

सामयिक विषय (ख)

विविध विषय

पत्र-प्रकरण

अपठित

व्यावहारिक व्याकरण

अशुद्धि-संशोधन

वाग्धारा (मुहावरे) और लोकोक्तियाँ

निबन्ध-लेखन-पद्धति

निबन्ध की परिभाषा

निबन्ध शब्द की दो व्युत्पत्तियां मिलती हैं। (1) ("नि+बन्ध्+ल्युट्") अर्थात् जिस रचना में भावों को भली प्रकार बांधा जाए वह निबन्ध है। (2) ("नि=बन्ध्=घञ्") अर्थात् किसी विषय को निश्चित लक्ष्य के लिए विचारों में बांधना निबन्ध होता है। निबन्ध शब्द की इन दोनों व्युत्पत्तियों का अभिप्राय है—किसी निश्चित विषय के बारे में शृंखलाबद्ध (परस्पर सम्बन्ध रखने वाले) विचार व्यक्त करना। एक विद्वान् ने निबन्ध की यह परिभाषा दी है—"निबन्ध उस गद्य रचना को कहते हैं, जिनमें किसी विषय या विचार-सूत्र को केन्द्र बनाकर लेखक ने पाठकों से आत्मीयता स्थापित करने की चेष्टा करते हुए एक विशेष निजीपन और सजीवतापूर्वक उस विषय पर प्रकाश डाला हो।" कहानी, उपन्यास, नाटक आदि साहित्य के अन्य अंगों के समान निबन्ध लिखने की भी एक पृथक् कला है, जिसमें सतत अभ्यास से ही सफलता मिलती है।

निबन्ध के भाग

स्थूलरूप में निबन्ध के तीन भाग हैं :—

(क) भूमिका—निबन्ध की भूमिका या प्रस्तावना उसका प्रारम्भिक परिचय है। उसका आरम्भ बड़े आकर्षक ढंग से करना चाहिए। यदि सम्भव हो तो किसी उद्धरण से निबन्ध का प्रारम्भ किया जाए या अलंकृत भाषा का प्रयोग करना चाहिए, अर्थात् जो बात कहनी है, उसे कौतूहलपूर्ण ढंग से कहना चाहिए; जिससे उसमें आकर्षण उत्पन्न हो जाए। भूमिका में विषय की सामान्य, किन्तु अत्यन्त संक्षिप्त जानकारी हो जानी चाहिए।

(ख) मध्य भाग (विस्तार)—निबन्ध के मध्य भाग (विस्तार) में पृथक्-पृथक् अनुच्छेदों में उस विषय का प्रतिपादन करते हुए उसके लाभ और

हानियों आदि का वर्णन करना चाहिए। इसमें विचारों की बहुलता का समावेश करके उन्हें विभिन्न अनुच्छेदों में बांटकर लिखना चाहिए। कुछ विषय ऐसे भी होते हैं, जिनमें लाभ-हानि दिखाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, अपितु किसी दृश्य या घटना का सुन्दर शैली में वर्णन करना पड़ता है। अत: निबन्ध के विषय के अनुसार ही उसके मध्य भाग में हानि-लाभ अथवा दृश्य या घटना का सुन्दर शैली में वर्णन करना चाहिए। इसी भाग में विभिन्न उदाहरणों से अपने मत की पुष्टि की जाती है।

(ग) अन्त या उपसंहार—जिस प्रकार निबन्ध की भूमिका का आकर्षक होना अत्यावश्यक है, उसी प्रकार निबन्ध का उपसंहार भी आकर्षक होना चाहिए। इस भाग में विद्यार्थियों को उन बातों का संक्षिप्त सार देना चाहिए, जिन्हें वे इससे पूर्व लिख चुके हैं। यदि निबन्ध का अन्त किसी **उद्धरण** से किया जाए तो वह बड़ा प्रभावशाली रहता है।

निबन्ध के तत्त्व

निबन्ध के चार मुख्य तत्त्व होते हैं—(1) आत्माभिव्यक्ति (2) पाठकों से आत्मीयता स्थापित करना (3) एकान्विति (4) सजीव एव आकर्षक शैली।

(1) आत्माभिव्यक्ति—यह निबन्ध का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व होता है। इसका अभिप्राय यह है कि निबन्ध का लेखक किसी विषय के सम्बन्ध में दूसरों के ही मतों को न देता रहे, अपितु अपने निजी विचारों को प्रकट करते हुए यह दिखाए कि उसके बारे में लेखक की निजी मान्यताएं और विचार क्या हैं?

(2) पाठकों से आत्मीयता स्थापित करना—इसका अभिप्राय यह है कि निबन्धकार निबन्ध में वाक्यों की योजना इस प्रकार करे, जिससे पाठकों को ऐसा प्रतीत हो, मानो लेखक हमसे बातचीत-सी कर रहा है और अपने विचार को हमसे छिपा नहीं रहा, अपितु उन्हें उनके वास्तविक रूप में प्रगट कर रहा है।

एकान्विति—इसका अभिप्राय यह है कि किसी निबन्ध के विभिन्न अनुच्छेदों में जो विचार व्यक्त किये गये हैं, वे बिखरे-बिखरे और असम्बद्ध न हों, वरन् उनमें तारतम्य हो। उसके सभी विचार और उदाहरण आदि मूल विषय से अवश्य सम्बन्ध रखते हों।

(4) सजीव एवं आकर्षक शैली—निबन्ध की शैली का सजीव और

हानियों आदि का वर्णन करना चाहिए। इसमें विचारों की बहुलता का समावेश करके उन्हें विभिन्न अनुच्छेदों में बांटकर लिखना चाहिए। कुछ विषय ऐसे भी होते हैं, जिनमें लाभ-हानि दिखाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, अपितु किसी दृश्य या घटना का सुन्दर शैली में वर्णन करना पड़ता है। अतः निबन्ध के विषय के अनुसार ही उसके मध्य भाग में हानि-लाभ अथवा दृश्य या घटना का सुन्दर शैली में वर्णन करना चाहिए। इसी भाग में विभिन्न उदाहरणों से अपने मत की पुष्टि की जाती है।

(ग) अन्त या उपसंहार—जिस प्रकार निबन्ध की भूमिका का आकर्षक होना अत्यावश्यक है, उसी प्रकार निबन्ध का उपसंहार भी आकर्षक होना चाहिए। इस भाग में विद्यार्थियों को उन बातों का संक्षिप्त सार देना चाहिए, जिन्हें वे इससे पूर्व लिख चुके हैं। यदि निबन्ध का अन्त किसी **उद्धरण** से किया जाए तो वह बड़ा प्रभावशाली रहता है।

निबन्ध के तत्त्व

निबन्ध के चार मुख्य तत्त्व होते हैं—(1) आत्माभिव्यक्ति (2) पाठकों से आत्मीयता स्थापित करना (3) एकान्विति (4) सजीव एवं आकर्षक शैली।

(1) आत्माभिव्यक्ति—यह निबन्ध का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व होता है। इसका अभिप्राय यह है कि निबन्ध का लेखक किसी विषय के सम्बन्ध में दूसरों के ही मतों को न देता रहे, अपितु अपने निजी विचारों को प्रकट करते हुए यह दिखाए कि उसके बारे में लेखक की निजी मान्यताएं और विचार क्या हैं?

(2) पाठकों से आत्मीयता स्थापित करना—इसका अभिप्राय यह है कि निबन्धकार निबन्ध में वाक्यों की योजना इस प्रकार करे, जिससे पाठकों को ऐसा प्रतीत हो, मानो लेखक हमसे बातचीत-सी कर रहा है और अपने विचार को हमसे छिपा नहीं रहा, अपितु उन्हें उनके वास्तविक रूप में प्रगट कर रहा है।

एकान्विति—इसका अभिप्राय यह है कि किसी निबन्ध के विभिन्न अनुच्छेदों में जो विचार व्यक्त किये गये हैं, वे बिखरे-बिखरे और असम्बद्ध न हों, वरन् उनमें तारतम्य हो। उसके सभी विचार और उदाहरण आदि मूल विषय से अवश्य सम्बन्ध रखते हों।

(4) सजीव एवं आकर्षक शैली—निबन्ध की शैली का सजीव और

सरस होना परमावश्यक होता है; क्योंकि सरस-सजीव शैली ही निबन्ध का प्राण होती है। निबन्ध में यदि किसी कहानी या घटना का वर्णन करना हो, तब भी उस घटाना या कहानी के स्थान पर उस निबन्ध की शैली पर ही विशेष बल देना चाहिए।

निबन्ध के प्रकार

सभी प्रकार के निबन्धों को स्थूल रूप में तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है--(1) विचारात्मक (2) भावात्मक (3) वर्णनात्मक या विवरणात्मक। इनके अन्तर को संक्षेप में इस प्रकार समझा जा सकता है—

विचारात्मक निबन्ध—विचारात्मक निबन्धों में किसी विषय का प्रतिपादन विभिन्न प्रकार के प्रमाण और तर्क देते हुए किया जाता है। इनकी शैली भी प्राय: गम्भीर हुआ करती है। नाना प्रकार के प्रमाण, तर्क और दृष्टांत देकर किसी विषय का स्पष्टीकरण और प्रतिपादन करने की प्राय: दो शैलियां अपनाई जाती हैं—

(क) **आगमन शैली**—इसमें निबन्ध लेखक किसी निश्चित सिद्धान्त के स्पष्टीकरण के लिए अनेक प्रकार के उदाहरण ओर प्रमाण दिया करता है।

(ख) **निर्गमन शैली**—इसमें निबन्धकार विविध प्रकार के प्रमाणों के आधार पर कोई सिद्धान्त स्थापित किया करता है।

भावात्मक निबन्ध—जिन निबन्धों में विचारों के स्थान पर भावों की प्रधानता रहती है, उन्हें भावात्मक निबन्ध कहते हैं। इन निबन्धों में लेखक किसी विषय का तर्क और प्रमाणों के आधार पर विवेचन नहीं करता, अपितु अपनी अनुभूतियों और भावों को व्यक्त करने पर बल दिया करता है। इन निबन्धों में भावुकता का पुट अधिक रहता है।

वर्णनात्मक और विवरणात्मक निबन्ध—इस प्रकार के निबन्धों में प्रकृति, नगर, ग्राम, युद्ध, खेल, यात्रा आदि का वर्णन किया जाता है। ये निबन्ध मुख्यतया सूचनात्मक हुआ करते हैं। इनमें लेखक वर्ण्य-विषय का अधिक से अधिक स्पष्ट और पूर्ण विवरण देने की चेष्टा करता है।

निबन्ध लेखन के लिए कुछ उपयोगी परामर्श

(क) निबन्ध की भूमिका आकर्षक और सरस शैली में लिखनी चाहिए। उसका प्रत्येक वाक्य एक-दूसरे से भली प्रकार जुड़ा हो तथा भूमिका या अंतिम वाक्य में विषय की ओर संकेत किया जाए।

(ख) निबन्ध के एक अनुच्छेद में किसी एक ही भाव की अभिव्यक्ति करनी चाहिए।

(ग) इन अनुच्छेदों का एक-दूसरे से सम्बन्ध रहना चाहिए।

(घ) किसी भाव या विचार को निबन्ध में बार-बार नहीं दुहराना चाहिए।

(ङ) इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि विषय से सम्बन्धित बातें तो छूटने न पायें और अनावश्यक बातें कही न जायें।

(च) अपने मत के समर्थन के लिए यथासम्भव संस्कृत, अंग्रेजी और हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकारों की उक्तियां उद्धृत करना चाहिए।

(छ) निबन्ध की भाषा सरल, रोचक और स्पष्ट हो तथा उसकी शैली बड़ी चुबबुली और आकर्षक हो।

(ज) उसमें अपनी निजी मान्यताएं देने पर विशेष बल देना चाहिए।

(झ) निबन्ध का उपसंहार भी अत्यधिक आकर्षक हो चाहिए।

(ञ) आविष्कार सम्बन्धी निबन्धों में उस आविष्कार की तिथि, आविष्कार करने वाले का नाम, उसके लाभ तथा हानियों का वर्णन करना चाहिए।

(ट) महापुरुषों की जीवनी से सम्बन्धित निबन्धों में उनकी जन्म तिथि, उनके माता-पिता का नाम, तत्कालीन परिस्थिति, उनकी शिक्षा-दीक्षा, किसी क्षेत्र विशेष में उनके योगदान का उल्लेख करना चाहिए। अन्त में उनके जीवन से मिलने वाली शिक्षा का तथा यदि वह महापुरुष जीवित हो तो भगवान् से उनकी दीर्घायु की कामना करनी चाहिए।

(ठ) उत्सव या पर्व सम्बन्धी निबन्धों से उनके मानने की तिथि, उन्हें मनाने के कारण, मनाने की विधि, उनसे सम्बन्धित कथाओं और लाभ का वर्णन तथा कुरीतियों की निन्दा करनी चाहिए।

(ड) आत्म-कथात्मक निबन्धों में उत्तम पुरुष का प्रयोग करना ही उचित रहता है। जैसे— यदि रुपये की आत्मकथा लिखनी हो तो वह ही बताए कि मेरा जन्म कैसे हुआ था ? मैं किस-किस के पास घूमता-फिरता हूं ? आदि।

(ढ) निबन्ध का समापन करते हुए अन्तिम अनुच्छेद के उस निबन्ध में आई बातों का सार देना चाहिए।

(ण) यदि निबन्धों की 'शब्द-सख्या' दी गई है तो यह चेष्टा करनी चाहिए कि दस-बीस शब्दों के हेर-फेर से निबन्ध उतना ही बड़ा हो।

—०—

श्री राजीव गाँधी

(नये प्रधान मन्त्री)

राजीव गांधी भारत के वर्तमान प्रधान मन्त्री हैं। श्रीमती इन्दिरा गाँधी की हत्या के पश्चात् कांग्रेस संसदीय मंडल ने उन्हें इस पद पर निर्वाचित किया है। दूसरे शब्दों में अपनी माँ के रक्त से उनका राजाभिषेक हुआ है। वे केवल चालीस वर्ष की अवस्था में ही भारत राष्ट्र के इस गौरवपूर्ण पद पर निर्वाचित हुए हैं।

राजीव गाँधी श्रीमती इन्दिरा गांधी के ज्येष्ठ पुत्र हैं। उनके छोटे भाई संजय गांधी की एक हेलीकाप्टर दुर्घटना में कुछ वर्ष पूर्व मृत्यु हो गई थी। राजीव का जन्म 20 अगस्त सन् 1944 ई० में बम्बई में हुआ। इनकी शिक्षा देहरादून स्थित 'दून स्कूल' में हुई। प्रारम्भ में राजीव विमान के एक पायलट थे, जो अपने छोटे भाई संजय की मृत्यु के पश्चात् राजनीति में आये। राजीव गांधी पहले कांग्रेस के सामान्य सदस्य बने, फिर वे अमेठी से लोकसभा के सदस्य निर्वाचित हुए तथा उसके बाद वे कांग्रेस के महासचिव निर्वाचित हुए। प्रधान मन्त्री बनने से पूर्व वे इसी पद पर थे। प्रधान मन्त्री बनाने के पश्चात् कांग्रेस ने 1984 के आसन्न लोकसभा के चुनाव को देखते हुए और अपने दल को फूट से बचाने के लिए उन्हें ही कांग्रेस का अध्यक्ष भी निर्वाचित कर लिया था, तब से वे प्रधान मन्त्री और कांग्रेस अध्यक्ष दोनों पदों पर आसीन हैं।

राजीव के प्रधान मन्त्री बनने पर भारत के राजनीतिक इतिहास में एक नये युग का आरम्भ हुआ है। इन्दिरा जैसी अनुभवी राजनेत्री के बाद अल्प-अनुभव वाले राजीव इस देश को कैसे संभालेंगे ? इसका उत्तर भविष्य के गर्भ में छुपा था, पर थोड़े से दिनों में उन्होंने जो कुछ किया है, उसकी कुछ बानगी अवश्य देखनी चाहिए।

इन्दिरा गाँधी की निर्मम हत्या के बाद देश में प्रतिशोध की भावना से हिंसा, हत्या, लूट-पाट का दौर चला। तीन-चार दिन तक अराजकता-सी छाई रही। प्रधान मन्त्री बनते ही राजीव ने—जबकि इन्दिरा का शव तीन मूर्ति भवन में रखा हुआ था—दिल्ली के दंगा ग्रस्त क्षेत्रों का दौरा करके उस पर

नियन्त्रण करने का कठोर आदेश दिया, जिससे हिंसा दब गई। लूट-पाट बन्द हुई और शांति स्थापित हो गई।

राजीव गांधी ने इन्दिरा की मृत्यु के उपरान्त पर्याप्त गम्भीरता, सूझ-बूझ और राजनीतिक परिपक्वता का परिचय दिया था। माँ की मृत्यु के शोक को दबाकर वे अपने कर्त्तव्य को करने में संलग्न रहे। अपने निजी संताप को नियंत्रित कर साम्प्रदायिक दंगों को दबाने के लिए उन्होंने जिस दृढ़ता से पग उठाया उससे लगता था कि राजीव में संकल्प-शक्ति और आत्मानुशासन पर्याप्त मात्रा में हैं।

इन्दिरा गाँधी की मृत्यु पर समवेदना प्रकट करने आये विदेशी अतिथियों से भी वे ठीक ढंग से मिले थे और उनके सहयोग के लिए धन्यवाद दिया था। इधर पुरानी पीढ़ी के काँग्रेसी नेताओं का सहयोग भी उनको मिल गया था। तथ्य तो यह है कि पार्टी ने उन्हें अनुभव के आधार पर नहीं, बल्कि दल की एकता के लिए ही चुना था। इसके बाद राजीव ने तरुण सहयोगियों को और इन्दिरा गांधी के कुछ अतिविश्वस्त व्यक्तियों को अपने सलाहकार बना था। उन्हीं के सहयोग और परामर्श से उन्होंने शासन चलाना आरम्भ किया। कुछ ही दिन बाद हुए लोकसभा के सामान्य निर्वाचन में तीन चौथाई बहुमत से जीतकर वे पुनः प्रधान मन्त्री बन गये।

प्रधान मंत्री बनने के अनन्तर राजीव ने सहनशीलता, धैर्य, दृढ़ता, निर्णय की क्षमता आदि का जिस प्रकार परिचय दिया था, वह भविष्य के लिए अच्छा संकेत था। बहुत दिनों से लटकी पंजाब और असम समस्या को उन्होंने सुलझाया था।

देश की समस्याओं को सुलझाने की इच्छा रखकर उन्होंने पंजाब और असम समझौता किया। दोनों प्रदेशों में चुनाव भी हो गए थे, पर पंजाब की समस्या सुलझने की बजाय उलझती ही गई। वहाँ आतंकवादियों ने निरीह प्रजाजनों की हत्या करना नहीं छोड़ा। फलतः पंजाब में पुनः राष्ट्रपति शासन लागू करना पड़ा। इधर राजीव ने अपने को 'श्रीमान् स्वच्छ' के रूप में प्रस्तुत करने की चेष्टा की थी और जनता को इक्कीसवीं शताब्दी में ले जाने का और उसमें अधिक समृद्धि तथा सुख-सुविधाओं का नारा दिया था, पर वे भी थोथे ही सिद्ध हुए। दृढ़ शासन का उनका जादू भी ढाई वर्ष में ही उतर गया। अपने तीन

वर्ष के शासन में उन्होंने चौदह बार मंत्रि-मंडल में फेर बदल किया, पर कुछ लाभ न हुआ। अब तो प्रति चौथे-पाँचवें मास मंत्रि-मंडल में फर बदल की चर्चा होती है। इससे ही क्या होगा ?

इधर जनता में भी उनकी साख गिरती जा रही है। इसका प्रमाण हरियाणा प्रदेश का चुनाव है, जहाँ कांग्रेस को नब्बे स्थानों में से केवल पाँच स्थानों पर ही विजयी मिली है।

आज कल तो राजीव के शासन को नैया बड़ी कठिनाई से चल रही है। स्वीडन की बोफर्स कम्पनी से रक्षा के लिए तोपों की सौदे में तथा जर्मन से पनडब्बियों की खरीद में लगभग पैंसठ करोड़ की रिश्वत में उनके साथी और स्वयं राजीव बुरी तरह फंसे हैं। संसद में वे इसका कोई भी सन्तोषजनक उत्तर नहीं दे पाये। इसी काण्ड के कारण उसने श्री विश्वनाथप्रताप सिंह को पहले वित्त मंत्रालय से और बाद में रक्षा मंत्रालय से भी हटा दिया, क्योंकि उन्होंने ही मंत्री पद पर रह कर-वंचना सम्बन्धी तथा रक्षा सौदों में रिश्वत के घोटाले को उजागर किया था।

आज राजीव की स्वच्छता की छवि धूमिल हो चुकी है। इधर देश सूखे और साम्प्रदायिक दंगों की भयंकर चोट से भी व्यथित है। देखें, राजीव इस स्थिति से देश को कैसे उबारते हैं ? और स्वयं भी कैसे उबरते हैं ?

—o—

रामस्वामी वेंकटरमण

(भारत के आठवें राष्ट्रपति)

"मैं देश को विश्वास दिलाता हूं कि मैं न तो इस पद के (राष्ट्रपति पद) कर्तव्यों को पूरा करने में असफल रहूंगा और न ही संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों की सीमा का उल्लघन करूंगा। मैं अविश्वास के वातावरण को साफ करने के लिए काम करूंगा, ताकि जनता और संस्थाओं के मध्य पारस्परिक सम्मान का सम्बन्ध स्थिर हो। × × × राष्ट्रपति के सामने कोई चुनौती नहीं होती। उसकी भूमिका केवल प्रहरी की होती है। राष्ट्रपति और प्रधान मंत्री के सम्बन्ध परस्पर विश्वास पर टिके होने चाहिएं। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री को ऐसा भी परामर्श दे सकता है, जो उस अवसर पर सम्भवतः लोकप्रिय न हो, पर यह बात गोपनीय ही रहनी चाहिए। समाचार पत्रों में उसका प्रकाशन नहीं होना चाहिए।"

ये कुछ विचार हैं, श्री वेंकट रमण के; जो उन्होंने राष्ट्रपति बनने के उपरान्त व्यक्त किए हैं।

श्री रामस्वामी वेंकटरमण भारत के आठवें राष्ट्रपति हैं। सातवें राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह के निवर्तमान होने पर उन्होंने 25 जुलाई सन् 1987 को को राष्ट्रपति का पद ग्रहण किया है। वे सरल और सौम्य व्यक्तित्व के धनी हैं। उनके ओठों पर कभी अलग न होने वाली मुस्कुराहट बनी रहती है। श्रीवेंकटरमण का जन्म 4 दिसम्बर 1910 में हुआ। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा तँजाबूर और मद्रास में हुई। मद्रास विश्वविद्यालय से ही उन्होंने अर्थशास्त्र में एम० ए० किया। बाद में मद्रास के ही लॉ कॉलेज से कानून की उपाधि प्राप्त की।

श्री रामस्वामी ने आरम्भ में वकालत का व्यवसाय आरम्भ किया, पर सन् 1942 में राष्ट्र-भक्ति की भावना से प्रेरित होकर 'भारत छोड़ो' आंदोलन में सम्मिलित हो गए। इसमें उन्हें दो वर्ष के कारावास का दण्ड मिला। इसके पश्चात् तो भारत के स्वतंत्र होने तक वे स्वाधीनता के लिए ही संघर्ष करते रहे।

भारत के स्वतन्त्र होने पर वे तत्कालीन मद्रास राज्य (तमिलनाडु) सरकार में मंत्री रहे। बाद में वे केन्द्र में योजना आयोग के सदस्य रहे और तदनन्तर भारत सरकार के अनेक मंत्रालयों के मंत्री रहे। बाद में वे भारत के उपराष्ट्रपति बने। उपराष्ट्रपति बनने पर राज्य सभा की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने अपनी तीक्ष्ण प्रतिभा और सुदृढ़ व्यक्तित्व का परिचय दिया। उनके विधिज्ञान को और अनुभवों को ध्यान में रखकर ही उन्हें राष्ट्रपति पद पर आसीन किया गया है।

श्री वेंकटरमण का स्वभाव अत्यन्त मृदु है और वे बड़ा ही सरल जीवन बिताते हैं। धर्म के प्रति उनकी अडिग आस्था है। वे शाकाहारी हैं। पुस्तकों के अध्ययन में उनकी अत्यन्त रुचि है। खेल, संगीत और नृत्य में भी उनकी रुचि है। प्राचीन परम्पराओं और मान्यताओं को नवीन संदर्भ में समझने वाले भी वे हैं।

श्री वेंकटरमण आज देश के उसी सर्वोच्च पद पर आसीन हैं, जिसे देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद और मनीषी डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन् जैसे सज्जन सुशोभित कर चुके हैं। उनसे राष्ट्र यह आशा कर सकता है कि वे न तो फखरुद्दीन

ी अहमद के समान प्रधान मंत्री को संवैधानिक धोखा करने देंगे और न
ी जैल सिंह के समान विपक्ष की बन्दूक अपने कंधों पर रखकर चलने की
ुमति देंगे।

जैसा कि हम प्रारम्भ में ही संकेत कर चुके हैं कि श्री वेंकटरमण ने
ान मंत्री और राष्ट्रपति के विशेषाधिकारों के बारे में मध्य मार्ग अपनाने का
र्णय किया है। अपने चुनाव प्रचार में उन्होंने कहा भी था कि राष्ट्रपति को
ान मंत्री से प्रत्येक सूचना पाने का पूर्ण अधिकार है, पर यह आशा नहीं की
सकती कि प्रधान मंत्री प्रत्येक जानकारी पूर्ण विस्तार से राष्ट्रपति को
ताएंगे ही। हम आशा करते हैं कि श्री रामस्वामी वेंकटरमण राष्ट्रपति पद
दायित्व का पूर्ण दक्षता से निर्वाह करेंगे। ईश्वर चिरकाल तक उन्हें राष्ट्र
ी सेवा करने का सु-अवसर दें।

—०—

सूखा

(इस शताब्दी की भयंकर प्राकृतिक विपदा)

हमारा प्यारा भारतवर्ष, जो सदा खेत-खलिहानों, अनाज के भरे
भंडारों व दूध की नदियों के लिए प्रसिद्ध रहा है, इस वर्ष इस शताब्दी के सब
से भयानक सूखे का सामना कर रहा है। प्रकृति के खेल भी निराले हैं। जो
इन्द्र देवता हमेशा हमारे देश पर कृपादृष्टि रखते थे, इस बार कुपित हो गए
लगते हैं। इस वर्ष अभी तक एक बार भी सामान्य वर्षा नहीं हुई है। वैसे यह
स्थिति गत तीन वर्ष से चल रही थी, किन्तु इस वर्ष तो सूखे ने देश में अकाल
की स्थिति उत्पन्न कर दी है। सूखे और अकाल की काली छायाओं ने अनगिनत
नागरिकों के सामाजिक जीवन को बुरी तरह ढक लिया है। उड़ीसा से लेकर
गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, नागा-
लैण्ड, और दक्षिण में कर्नाटक आदि राज्यों में यह सूखा इस वर्ष अचानक तो
नहीं पड़ा, लेकिन इन राज्यों में इस साल का सूखा पिछले कई सालों की
अपेक्षा अधिक भयंकर रूप धारण कर चुका है।

उक्त प्रान्तों में 75% खरीफ की फसल पानी के अभाव में चौपट हो। है। कृषि योग्य भूमि बंजर हो गई है। कुंओं, तालाबों, नदियों व अन्य जल शयों में पानी का स्तर काफी नीचे चला गया है। पानी के अभाव में व स्पतियाँ भी सूख गई हैं, जिससे पशुओं के लिए चारे का अभाव उत्पन्न हो ग है, चारे के अभाव में वे भूख से तड़प-तड़प कर मर रहे हैं। इस भयानक सू के कारण गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा मध्यप्रदेश में अकाल पड़ा हुआ है हजारों लोग यहाँ अकाल से दम तोड़ रहे रहे हैं। गाँवों से किसान व मज बड़ी संख्या में शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। किसान अपनी बड़ी-बड़ी जमीनें छोड़कर शहर में मजदूरी करने आ रहे हैं, ताकि किसी प्रकार अपना बाल-बच्चों का पेट भर सकें।

सूखे की विभीषका का पता मौसम विभाग की इस टिप्पणी से लगाया ज सकता है, कि ऐसा भयंकर सूखा इससे पहले सन् 1877 में पड़ा था। ता आंकड़ों के अनुसार धान की फसल 10 मिलियन टन कम होगी। भारत भूमिहीन मजदूरों की संख्या 5-6 करोड़ के करीब है; जिनको कि बहुत क मजदूरी दी जाती है। जब फसल सूखे के कारण मारी जाती है तो उनकी य मजदूरी भी खेतों में काम नहीं होने के कारण मारी जाती है। सरकारी योज नाओं की विफलता व भ्रष्ट प्रशासन तन्त्र भी सूखे का कारण हैं। सन् 195 में 246 बड़ी सिंचाई परियोजनाएं शुरू की गई थीं, जिनमें से आज तक केव 65 योजनाएं ही पूरी हुई हैं। सिंचाई परियोजनाओं का न्यूनतम उपयोग भ नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त किसानों को ट्यूबवैल चलाने के लिए समय प और पर्याप्त बिजली नहीं मिलती, जिस कारण वे सही समय पर सिंचाई नही कर पाते हैं। बिजली विभाग के भ्रष्ट कर्मचारी किसानों को अकारण ही तं करते रहते हैं। ऐसा नहीं कि केवल सिंचाई के लिए पानी की कमी हो गई हो, सूखे के कारण पेयजल का भी गंभीर संकट उत्पन्न हो गया है। राजस्थान में अजमेर जिले की अनासागर झील, जो पूरे शहर को पानी की पूर्ति करती है, सूख कर पपड़ी बन गई है। वहाँ एक ओर पानी का स्रोत पायसागर झील भी सूख गई है। राहत कार्य भी चल रहे हैं। लेकिन वे ऊंट के मुंह जीरे के बराबर हैं। सूखी नहरों में खुदाई का कार्य चल रहे हैं, लेकिन पानी अभी तक कहीं नजर नहीं आया है।

गुजरात में भी चारे और पीने के पानी की समस्या बन गई है। स्वच्छ पानी मिलना दुर्लभ हो गया है। जिसके अभाव में बच्चों का स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन खराब होता जा रहा है और पेट की बीमारियाँ भी फैलती जा रही हैं। आदिवासी और ग्रामीण क्षेत्रों के निवासी के बीमारियों के सबसे ज्यादा शिकार हो रहे हैं। महाराष्ट्र में अहमदनगर, औरंगाबाद, लातूर, उस्मानाबाद, बीड़; नासिम आदि जिलों में गाँवों से अति संख्या में लोगों का पलायन हो रहा है। ये लोग शहरों में जाकर मजदूरी कर रहे हैं। उत्तरप्रदेश में 57 से 51 जिलों में सूखा पड़ा हुआ है, मध्यप्रदेश के 40 जिली में सूखा पड़ा हुआ है। गत चार वर्षों से मध्यप्रदेश में बारिश नहीं हुई है। नदी, तालाब सब सूख गए हैं, सर्वत्र हा-हा कार मचा हुआ है।

सूखे को दूर करने के लिए सरकार को बड़े पैमाने पर सहायता कार्य हाथ में लेने होंगे। अपने अन्न के भंडार खोलने होंगें, तभी प्रकृति की मार से पीड़ित मानवता को कुछ आराम मिल सकेगा। अन्यथा लाखों लोग काल के कराल गाल में समा जायेंगे।

—o—

साम्प्रदायिक दंगे

मनुष्य के जीवन में धर्म का महत्त्वपूर्ण स्थान है। धर्म ही उसके जीवन को संयमित व उसके आचरण को मर्यादित करता है। अपने धार्मिक संस्कारों से ही वह जीवन की प्रत्येक कठिनाइयों का सामना करने की प्रेरणा पाता है। इतना अवश्य है कि प्रत्येक मानव की या समुदाय की पूजा-पद्धति अलग-अलग हो। भारतवर्ष में अनेक सम्प्रदाय सैकडों वर्षों से साथ-साथ रहते आए हैं। विभिन्न सम्प्रदायों या धर्म की उत्पत्ति इस पवित्र भारत-भूमि में हुई। इस पवित्र भूमि ने सभी धर्मों को फलने-फूलने का मौका दिया है। चाहे वे बौद्ध हों, जैन हों, सिक्ख या मुसलमान हों। सभी यहाँ के मुख्य धर्म हिन्दू या सनातन धर्म को मानने वालों के साथ प्रेमपूर्वक रहते आये हैं। यहाँ यह स्पष्ट कर लेना आवश्यक है कि बौद्ध, सिक्ख, जैन भी हिन्दू धर्म के ही अंग हैं; परन्तु अंग्रेजों के 200 वर्षों के शासनकाल में यह आपसी सौहार्द समाप्त हो गया। अंग्रेज शासकों ने अपनी फूट डालो और राज करो की नीति के अन्तर्गत

विभिन्न धर्मावलंबियों को लड़वाया और उनमें आपस में अविश्वास व वैमनस्य को बढ़ाया व एक दूसरे के प्रति घृणा के बीज बो दिये ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति तक हालात ऐसे पैदा हो गए हैं कि दो मुख्य धर्मावलंबी 'हिन्दू व मुसलमान' एक दूसरे की जान के दुश्मन बन गए । कोई एक दूसरे को सहन करने को तैयार नहीं था । इस स्थिति को पैदा करने में मुस्लिम कट्टर-पंथियों का व क्षुद्र मुस्लिम राजनीतिज्ञों का हाथ था, जिन्होंने अंग्रेजों के साथ मिलकर सत्ता हथियाने के लिए हिंसा व अराजकता को बढ़ावा दिया, जिसकी परिणति 'देश-विभाजन' में हुई । मुसलमानों ने जिन्ना के नेतृत्व में अपने लिए अलग देश हासिल कर लिया ।

हमारे देश के कांग्रेसी नेताओं ने, जिन्होंने सत्ता संभाली, भारत को एक धर्म-निरपेक्ष राष्ट्र घोषित किया । तब इन पढ़े-लिखे नेताओं को भ्रम था कि इस देश की सुख-शांति का रहस्य धर्म-निरपेक्षा के सिद्धांत में छुपा है । उन्होंने तब उन मुसलमानों को भी पाकिस्तान जाने से रोका, जिन्होंने अपने लिए अलग देश मांग लिया था । खैर, अब हम आजाद हो चुके थे और हमें आशा थी कि सभी समुदाय व धर्मावलंबी आपस में मिल-जुल कर राष्ट्रीय धारा में एकाकार होकर रहेंगे ।

दुर्भाग्यवश आज स्वतंत्रता के चालीस वर्ष बाद भी देश में साम्प्रदायिकता की समस्या दिनों दिन जोर पकड़ रही है । विभिन्न सम्प्रदायों में आपसी वैम-नस्य बढ़ता जा रहा है । आज देश के प्रत्येक हिस्से में घाव हो गया है । कोई भी प्रदेश शांत नहीं । साम्प्रदायिक दंगों के कारण प्रति वर्ष करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति की हानि होती है ।

हमारे शासकों ने धर्म-निरपेक्षता की नीति अपनाई, लेकिन हमारे यहाँ के अल्पसंख्यक समुदायों ने कभी इस नीति का सम्मान नहीं किया । वे करते भी क्यों ? एक तो वे स्वभाव से ही असहिष्णु हैं, दूसरे 'वोटों की राजनीति' के कारण कांग्रेस और तथाकथित सेक्यूलर दलों ने उन्हें यहाँ की मूलधारा से मिलने ही नहीं दिया । वे उनकी कट्टरता को मतदान के समय खूब हवा देते हैं । वे अपने को संकीर्ण खोलों में बन्द किए रहे । अपनी संकुचित मनोवृत्ति के कारण वे अपने को राष्ट्रींय धारा में शामिल करने से डरते रहे हैं । मुसलमानों को उनके मौलवी बरगलाते रहे कि अगर वे आधुनिक विचार धारा या शिक्षा को अप-नायेंगे तो इससे इस्लाम को खतरा पैदा हो जाएगा । इसी कारण भारत के

मुसलमान आर्थिक रूप से उन्नति नहीं कर सके। अन्य सम्प्रदायों की आर्थिक उन्नति देखकर उनमें ईर्ष्या व घृणा की भावना जन्म लेती है, जिसकी परिणिति साम्प्रदायिक दंगों में होती है। आजादी के बाद से मध्यप्रदेश, गुजरात, असम, राजस्थान आदि प्रत्येक प्रांत में कई बार दंगे हो चुके हैं। सन् 1960 में असम में भीषण दंगे हुए।

आज हालात ऐसी हो गई कि जरा-जरा-सी बातें हिन्दू-मुसलमान दंगों को जन्म देती है। चाहे वह बच्चों का आपसी झगड़ा हो, या आपसी गाली-गलौच हो, तत्काल दगे शुरू हो जाते हैं। मुसलमान अभी तक अपने दिमाग से यह बात नहीं निकाल पाये हैं कि कभी इस वे देश के शासक थे। यह बात उन्हें सालती रहती है, व उनके मन में वैमनस्य पदा करती है। उत्तरप्रदेश में अली-गढ़, लखनऊ, मुरादाबाद, मेरठ, सहारनपुर व अयोध्या संवेदनशील क्षेत्र हैं। पिछले वर्ष फरवरी में जब्र राम-जन्म-भूमि का ताला खुला था, तभी से उत्तर-प्रदेश में कई बार झगड़े हो चुके हैं व तनाव बरकरार है। मुसलमान इस बात की सच्चाई को स्वीकार करने को तैयार नहीं है कि हिन्दुस्तान की पहचान जन नायक 'राम' से ही हो सकती है, न कि घर्मांध बावर से। वे बिना वजह इस स्थान की हासिल करने की जिद पकड़े हुए हैं। गत वर्ष 30 मई को एक लाख मुसलमानों से संसद पर प्रदर्शन करके वातावरण को और तनावपूर्ण बना दिया है। पिछले साल 14 अप्रैल 1978 से किसी न किसी बहाने मेरठ जिला दंगे की चपेट में रहा है। वहाँ सैकण्ड़ों जानें गईं और लाखों की सम्पत्ति नष्ट हुई। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक 1 जनवरी 1986 से 25 जुलाई 1987 के मध्य उत्तरप्रदेश के 17 जिलों में साम्प्रदायिक दंगों की 35 घटनायें हुई, जिनमें 295 लोग मारे गये। मार्च, 1986 में मेरठ में हुए दंगे में 23 व्यक्तियों की मृत्यु हुई थी। यहाँ का व्यापार चौपट हो गया है। प्रशासन ने भी मुआवजा देने में अल्पसंख्यकों का ही पक्ष ज्यादा लिया है। न केवल उत्तरप्रदेश ही, अपितु गुजरात भी तीन-चार वर्षों से साम्प्रदायिकता की आग में जल रहा है। यहाँ भी मुसलमान जरा-जरा-सी बात पर दंगा कर देते हैं। अहमदाबाद, बड़ोदरा इसके केन्द्र हैं। यह रवैया आपसी वैमनस्य को और बढ़ाता है। कांग्रेज सर-कार की मुस्लिम तुष्टीकरण नीति ने भी आपस में घृणा को बढ़ाया है।

उत्तर पूर्वी राज्यों में ईसाई साम्प्रदायिकता सिर उठा रही है। वे वहाँ के

भोले-भोले लोगों को फुसलाकर उनका धर्म परिवर्तन करवाकर वहाँ अलगाव-वाद की भावनाएं भड़का रहे हैं। रांची के आदिवासी इलाकों में ईसाई मिशन-रियों का हिन्दू संगठनों से संघर्ष चलता रहता है। आज पंजाब में सिक्ख अपने आपको हिन्दुओं से अलग कौम बताकर हिन्दुओं की हत्या कर रहे हैं। एक समय का समृद्ध पंजाब आज बिल्कुल पिछड़ गया है।

अगर आज की परिस्थितियों में साम्प्रदायिक दंगों पर लगाम लगानी है तो सरकार को अल्पसंख्यक तुष्टिकरण की नीतियां छोड़नी पड़ेंगी। धर्माचार्यों को अपने शिष्यों को सहनशीलता का पाठ पढ़ाना होगा। सभी धर्मावलंबियों को एक-दूसरे के धर्म का आदर करना होगा तथा सभी धर्म ग्रन्थों के मूल सार, अहिंसा, प्रेम व त्याग को अपनाना होगा, तभी यह बीमारी मिट सकती है।

—०—

आधुनिक शिक्षा पद्धति : गुण तथा दोष

प्रस्तावना

शिक्षा का उद्देश्य है – मानव का सर्वांगीण विकास। सर्वांगीण विकास का अभिप्राय है—व्यक्ति का बौद्धिक, शारीरिक, मानसिक और चारित्रिक विकास। इनके विकास के लिए ही छात्रों को शिक्षा दी जाती है। प्रत्येक देश की शिक्षा पद्धति अपने-अपने देश की संस्कृति, सभ्यता तथा आदर्शों के अनुरूप विविध प्रकार के ज्ञान-विज्ञान, शिल्प तथा कला से युक्त होती है। परिस्थिति और आवश्यकता के अनुसार उसमें समय-समय पर परिवर्तन और परिवर्धन भी होता रहता है।

जहाँ तक भारत की शिक्षा पद्धति का सम्बन्ध है; वह अंग्रेजों के भारत में आगमन से पूर्व प्राचीन भारतीय प्रद्धति से शिक्षा दी जाती थी; जिसे गुरु-कुल या ऋषिकुल पद्धति कहा जाता है। अंग्रेजों के आने के साथ ही उस शिक्षा पद्धति में परिवर्तन होने लगा था। न केवल तब शिक्षा पद्धति में ही परिवर्तन हुआ, अपितु शिक्षा के लक्ष्य में भी परिवर्तन हुआ और उसे 'आधुनिक शिक्षा-पद्धति' कहा जाने लगा। वस्तुत: यह अंग्रेजी शिक्षा का भारतीय रूपान्तर मात्र था, जिसका प्रचार और प्रसार अंग्रेजों ने अपने स्वार्थ के लिए किया था। अंग्रेजों का एकमात्र उद्देश्य भारत में येन-केन प्रकारेण अंग्रेजी राज्य को

सुदृढ़ करना, सरकारी कार्यालयों के लिए लिपिक (क्लर्क) तैयार करना और भारतीयों के मनों में दास-मनोवृत्ति को बढ़ावा देना था। इस विषय में लार्ड मैकाले का कथन था कि—"अंग्रेजी शिक्षा द्वारा अंग्रेजी राज्य के संचालन के लिए सस्ते क्लर्क पैदा किए जाएं, जो शरीर से भले ही भारतीय दिखाई दें, परन्तु उनकी वेष-भूषा, विचार धारा तथा खान-पान सभी अंग्रेजी ढंग का हो।"

मैकाले के उपयुक्त कथन से एकदम स्पष्ट है कि अंग्रेजी शिक्षा-पद्धति के मूल में क्या उद्देश्य था? अत्यन्त दुःख से कहना पड़ता है कि स्वतन्त्रता के चालीस वर्ष बीतने पर अब भी वही घिसी-पिटी तथा सड़ी-गली शिक्षा पद्धति चल रही है और उसे आधुनिक शिक्षा-पद्धति कहा जा रहा है। इसमें कुछ गुण भी हैं तो दोष भी हैं।

गुण

आधुनिक कही जानेवाली इस शिक्षा पद्धति का गुण यह है कि इसके द्वारा शिक्षा-क्षेत्र में स्त्री-पुरुष के, जाति-पांति, पंथ-सम्प्रदाय के भेद को मिटा दिया गया है। इसके द्वारा शिक्षा के द्वार किसी वर्ग के लिए बन्द नहीं हैं, अपितु सबके लिए खुले हैं। इसके द्वारा केवल भाषा, व्याकरण, गणित और धर्मशास्त्र को ही नहीं, अपितु और व्यापार शास्त्र, कला, शिल्प और अभियांत्रिकी (इंजीनियरिंग) आदि विविध विषयों की भी शिक्षा दी जाती है। प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य की जा चुकी है। माध्यमिक स्तर तक शुल्क नहीं लिया जाता। कन्याओं की शिक्षा का भी बहुत प्रचार-प्रसार हुआ है तथा विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्व-विद्यालयों की संख्या भी पर्याप्त मात्रा में बढ़ी है।

दोष

आधुनिक शिक्षा पद्धति में गुण हैं तो दोषों की मात्रा भी कम नहीं। इस शिक्षा-पद्धति का सबसे बड़ा दोष इसकी वर्तमान परीक्षा-प्रणाली है। आज छात्र को वर्ष भर की शिक्षा की योग्यता का निर्णय वार्षिक परीक्षा द्वारा किया जाता है। इस कारण अधिकांश छात्र पूरे वर्ष गम्भीरता से अध्ययन नहीं करते, बल्कि परीक्षा समीप आने पर कुछ चुने हुए प्रश्नों के उत्तर रट कर परीक्षा उत्तीर्ण कर लेते हैं। परीक्षा उत्तीर्ण करना मात्र ही छात्रों का उद्देश्य रह गया

है, विषय विशेष में योग्यया प्राप्त करना नहीं। इसी कारण बाजार में कुंजियों और गाइड़ों की भरमार हो गई है। फिर छात्र उनको याद भी नहीं करते, बल्कि परीक्षा भवन में साथ ले जाते हैं और परीक्षा में खुलकर नकल करते हैं।

वर्तमान शिक्षा पद्धति का दूसरा दोष यह है कि छात्र जीवन का ध्येय निश्चित किए बिना ही परीक्षाएं उत्तीर्ण करते रहते हैं। उपाधियां एकत्रित कर लेते हैं, सोचते हैं किसी सरकारी, अर्द्ध सरकारी अथवा निजी कार्यालय में नौकरी तो मिल ही जाएगी। वस्तुत: आज की परीक्षाएं माल तैयार करने की ऐसी मशीनें बन गई हैं, जिस माल का बाजार में कोई ग्राहक ही नहीं है। फलत: इसके कारण शिक्षितों में बेकारी बढ़ती जा रही है।

इस शिक्षा पद्धति का अन्य दोष यह है कि विज्ञान, शिल्प और अभियांत्रिकी जैसे विषयों के छात्र की उस विषय की गहराई तक जाना नहीं चाहते; उसका लक्ष्य भी प्रमाण-पत्र प्राप्त करना मात्र रह गया है। शास्त्र विशेष के संपूर्ण सिद्धांतों से भी वे अवगत नहीं होते और व्यावहारिक ज्ञान (प्रेक्टिकल) में भी वे अपूर्ण ही रहते हैं। इसी कारण देखा गया कि अधिकांश पदवीधारी इंजीनियर एक कुशल मिस्त्री से भी कम ज्ञान रखते हैं।

इस शिक्षा पद्धति का एक अन्य दोष यह भी है कि शिक्षित छात्र सफेदपोश तो बनना चाहते हैं, पर हाथ से परिश्रम नहीं करना चाहते। तकनीकी का ज्ञान रखने वाले उपाधिधारी भी चाहते हैं कि कल-कारखानों में काम करते उनके कपड़ों पर बल न पड़े, वे कुर्सी पर बैठे-बैठे आदेश भर देते रहें।

इस शिक्षा-पद्धति का सबसे बड़ा दोष यह भी है कि इसमें अनुशासन, संयम, सदाचार, विनम्रता आदि सद्गुणों की उपेक्षा हो रही है। तथाकथित सेक्यूलरवाद के नाम से विद्यालयों से धर्मशिक्षा को देश-निकाला दे दिया गया है। फलत: अधिकांश छात्रों में अनुशासन का अभाव, असंयम, उद्दण्डता, फैशनपरस्ती आदि दुर्गुण घर करते जा रहे हैं। भारतीय संस्कृति और सभ्यता से इनका परिचय 'न' के बराबर रह गया है। परीक्षा में नकल, बात-बात पर हड़ताल, गुरुजनों का अपमान इसी का दुष्परिणाम हैं।

आधुनिक शिक्षा-पद्धति का एक अन्य दोष यह भी है कि स्वाधीनता के चालीस वर्ष बीतने पर भी शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही है। आज छात्रों के गले में अंग्रेजी का फंदा इतने जोरों के कसा जा रहा है कि छात्रों को रोना

भी अंग्रेजी में ही पड़ता है। हिन्दी तथा भारत की अन्य भाषाओं की दुर्दशा हो रही है। अंग्रेजी में ही विद्यार्थी अधिक मात्रा में अनुत्तीर्ण होते हैं और उसी के पढ़ने पर बल दिया जा रहा है, क्योंकि जीविका या नौकरी का साधन अंग्रेजी बनी हुई है। यह भारत को इक्कीसवीं शताब्दी में ले जाने की नहीं, अपितु सौ साल पीछे धकेलने का षड्यंत्र है। स्वतन्त्रता के पश्चात् दो-तीन शिक्षा आयोग भी बैठ चुके हैं, पर शिक्षा पद्धति में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन भारतीयता के अनुरूप वे भी नहीं कर पाये। आयोग के सदस्यों की चिन्तन पद्धति यूरोप की जूठन मात्र और बासी है

उपसंहार

वस्तुतः यदि हम आज भारत को विश्व के समृद्ध राष्ट्रों की श्रेणी में ले जाना चाहते हैं तो शीघ्रातिशीघ्र हमें इस शिक्षा पद्धति को बदल देना चाहिए। आज शिक्षा का सम्बन्ध केवल नौकरी से ही नहीं जोड़ना है, बल्कि उसे नैतिकता से जोड़ना होता। शिक्षा समाप्ति के बाद छात्र जीविका की चिन्ता से मुक्त हों, यह तो होना चाहिए, पर सबसे बड़ी बात यह है कि वह शिक्षा छात्रों में आत्मविश्वास जगाए। इसके साथ ही परीक्षा-पद्धति में भी ऐसा परिवर्तन होना चाहिए कि छात्र योग्य बनें, मात्र रट्टू नहीं। वे विज्ञान की विविध श्रेणियों की शिक्षा लें, पर हाथ से काम करने से घबरायें नहीं, उससे घृणा न करें। साथ ही उन्हें अपने देश, अपनी संस्कृति और अपनी सभ्यता का पूर्ण ज्ञान तो हो ही, वे उसका आचरण भी करें। अंग्रेजी को एक 'विषय' के रूप में पढ़ाया जाय, उसके स्थान पर हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के माध्यम से शिक्षा दी जाय। अंग्रेजी का प्रमुत्व तो समाप्त होना चाहिए; क्योंकि इससे भारतीयों में मानसिक दासता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रहती है। तभी भारत का कल्याण होगा।

—o—

आज का युवा-वर्ग
(युवा-पीढ़ी)

प्रस्तावना

युवा वर्ग अथवा युवा पीढ़ी का आशय है—आज का भारतीय तरुण-वर्ग। आज जब समाज के विभिन्न पक्षों की चर्चा आती है तो उसमें भारत के तरुणों

की ओर दृष्टि का जाना स्वाभाविक है; कारण युवक सदैव से ही उत्साह, साहस और उमंग के प्रतीक माने गये हैं। कविवर माखनलाल चतुर्वेदी ने अपनी 'जवानी' कविता में युवक वर्ग का ही आह्वान किया है और उसे 'विश्व की अभिमान मस्तानी जवानी' के नाम से सम्बोधित किया है। वास्तव में यौवन का काल ही मस्ती और निश्चितता का होता है। कुछ को छोड़कर अधिकांश तरुणों को आर्थिक चिन्ता नहीं होती, क्योंकि उनकी यह चिन्ता उनके माता-पिता को रहती है। किसी भी देश को संघर्ष में विजय दिलाने में उसके युवा-वर्ग का बड़ा हाथ रहता है। यदि किसी देश को समाप्त करना हो तो उस देश के युवा-वर्ग को पथ-भ्रष्ट कर दो; फिर किसी अन्य साधन की आवश्यकता नहीं। एक विदेशी विद्वान् ने भी कहा है कि—"यदि किसी देश को पराजित करना है तो उसकी युवा-पीढ़ी को 'पथ-भ्रष्ट' कर दो।" इससे स्पष्ट होता है कि किसी भी देश के लिए उसके तरुण-वर्ग का कितना अधिक महत्त्व है।

तरुणों की शक्ति

किसी भी देश में क्रांति का सूत्रपात नवयुवक ही करते हैं। चाहे वह क्रांति राजनीतिक हो, सामाजिक हो, आर्थिक हो या अन्य प्रकार की हो। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास को देखने से भी पता चलता है कि उसमें युवकों का योगदान अत्यधिक रहा है। गाँधी जी भी जानते थे कि तरुणों में अपार उत्साह होता है। अतः उन्होंने भी छात्रों को स्कूल-कालेज छोड़कर स्वाधीनता के युद्ध में कूद पड़ने की प्रेरणा दी थी। उनके आह्वान पर अनेक तरुण पढ़ाई छोड़ स्वाधीनता के संघर्ष में कूद पड़े थे। अमर हुतात्मा पण्डित चन्द्रशेखर 'आजाद', भगतसिंह, राजगुरु, अशफाकउल्ला खाँ ने अपनी भरी जवानी में ही देश के लिए फांसी की रस्सी को हँसते-हँसते चूम लिया था। स्वामी विवेकानन्द ने भी यौवन में ही भारत के उत्थान के लिए देश-विदेश का भ्रमण किया और विशेषकर तरुण-वर्ग को ही भारत की पीड़ित-दलित जनता की सेवा करने की प्रेरणा दी। युवाशक्ति के इसी महत्त्व को जानते हुए आज के भारतीय राजनीतिक दलों ने भी अपनी युवाशाखाएं स्थापित कर रखी हैं तथा अपने आन्दोलनों में उनको वे आगे रखते हैं।

युवाओं का यह उत्साह और उमंग यदि उचित दिशा में लगाया जाय, उसे रचनात्मक और विधायक कार्यों में लगाया जाय, तो देश का कायाकल्प हो सकता है। पर यदि उसे उचित दिशा न मिले तो वही विनाश भी उपस्थित

कर सकता है । युवा-वर्ग की उस उमंग को उचित दिशा न दे पाने की हानियो को आज हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं । वास्तव मे आज के तरुणवर्ग में उत्साह तो है, साहस भी है, पर उसका सदुपयोग कैसे किया जाए, यह उसको भी पता नहीं । आज वह लक्ष्यहीन हो चुका है ।

आज की स्थिति

आज के तरुण वर्ग के सम्बन्ध में समाचार पत्रों में जो समाचार प्रकाशित होते रहते हैं, उनसे तो लगता है कि वे अपनी सारी शक्ति को अधिकांश विनाश के कार्यों में ही लगा रहे हैं। रेल या बसों में बिना टिकट चलना और टिकट मांगने पर चालक या संवाहक (कंडक्टर) को पीटना या बस को ही आग लगा देना उनके लिए सामान्य सी बात हो गई है । परीक्षा भवन में कोई निरीक्षक यदि उन्हें नकल नहीं करने देता तो उसकी पिटाई तो वे करते ही हैं; कभी-कभी तो उसके प्राण भी ले लेते हैं । पश्चिमी उत्तर प्रदेश में तो कालेज के एक प्राचार्य को एक छात्र ने इसीलिए मार दिया कि उसने उसे नकल करते पकड़ लिया था । नारी-रक्षा जिस देश का धर्म है, उसी में अनेक तरुण रावण और दुःशासन बनकर कितनी ही सीताओं का अपहरण कर रहे हैं और कितनी ही द्रौपदियों का शील हरण कर रहे हैं ।

यह दोष किसका है ? यह यूरोपीय सभ्यता के अन्धानुकरण का और तरुणों को स्वतंत्रता के नाम पर स्वच्छन्दता देने का है । दूसरी ओर शिक्षा से सदाचार को बहिष्कृत करने का यह कुपरिणाम है । आज के तरुणों व तरुणियों में सरल जीवन और उच्च विचार के स्थान पर फैशन परस्ती और अधिकाधिक सुखोपयोग की वृत्ति घर कर गई है । संयम के बांध को तो वे तोड़ ही चुके हैं । उनके आराध्य अब श्रीराम और सीता न होकर चलचित्रों के अभिनेता तथा अभिनेत्रियां हो चुकी हैं ।

इधर कुछ वर्षों से तरुणों में विशेषकर कालेजों में पढ़नेवाले छात्र-छात्राओं में गांजा, चरस और स्मैक का ऐसा दुर्व्यसन प्रारम्भ हुआ है, जो उनके जीवन को नष्ट करने में लगा है । स्मैक के कारण हजारों तरुण-तरुणियों का जीवन नरक बनता जा रहा है । भले घर नष्ट होते जा रहे हैं ।

इस सारी स्थितिको देखकर और सुन-सुनकर मन में रह-रहकर प्रश्न उठता है कि आज की युवा पीढ़ी किधर जा रही है ? क्या ये उसी भारत के

भविष्य निर्माता हैं, जो कभी विश्व गुरु कहलाता था ! क्या कभी यथार्थ में श्रीराम, श्रीकृष्ण, योगी शंकर, राणा प्रताप और शिवाजी जैसे महापुरुष उत्पन्न हुए थे ? अगर यह रोग बढ़ता गया तो क्या भारतीय संस्कृति और सभ्यता बची रह जायेगी ?

फिर भी निराशा नहीं

उक्त कथन का यह आशय कदापि नहीं कि आज की सारी युवा पीढ़ी ही पथभ्रष्ट हो चुकी है । जिस प्रकार काँटों में भी फूल खिलते हैं और कीचड़ में भी कमल उत्पन्न होते हैं, इसी प्रकार तरुणवर्ग में अनेक होनहार और सच्चरित्र, युवक हैं। उन पर देश को गौरव है । आज भी अनेक युवक विज्ञान में शिल्प में आगे बढ़े हैं। क्या हम उस तरुण वैज्ञानिक को भूल सकते हैं, जिसके बनाये हथगोले से हम अपने देश की रक्षा विगत युद्ध में कर सके ।

उपसंहार

सार यह है कि आज की सारी युवा पीढ़ी ही बुरी भी नहीं और सारी अच्छी भी नहीं । ऐसे युवकों की भी कमी नहीं जो सरल, विनम्र, मेघावी और सच्चरित्र हैं । आवश्यकता है, उन्हें संगठित करने की और उचित दिशा देने की । यदि उन्हें उचित दिशा मिल जाय और वे अपने कर्त्तव्य को पहचान जाएं तो वे अपने सुन्दर भविष्य के निर्माण के साथ ही राष्ट्र का गौरव भी बढ़ाने में समर्थ हो सकते हैं ।

—o—

राष्ट्रीय एकता

प्रस्तावना

स्वाधीनता के चालीस वर्ष बीत जाने के पश्चात् भी आज भारत में विघटनकारी शक्तियों का जो नग्न ताण्डव हो रहा है, उसके कारण देश के कर्णधारों को और प्रत्येक विचारवान् नागरिक को राष्ट्रीय एकता की चिन्ता सताने लगी है । कारण राष्ट्र की प्रगति, विकास और समृद्धि के लिए राष्ट्र के जनों में एकता की परम आवश्यकता है; इससे ही राष्ट्र पर आये संकटों के बादल सहज ही छंट सकते हैं ।

राष्ट्रीय एकता की बात करने से पूर्व हम देख लें कि राष्ट्र का स्वरूप क्या है ? और राष्ट्रीयता क्या है ? क्योंकि राष्ट्र और राष्ट्रीयता की पहचान के बिना राष्ट्रीय एकता की बात करना निरी मूर्खता है, आत्म-प्रवंचना है ।

राष्ट्र का स्वरूप

राष्ट्र का निर्माण तीन तत्त्वों से होता है। भूमि, जन और जन की संस्कृति। किसी भी राष्ट्र के निर्माण के लिए एक प्राकृतिक भूखण्ड का होना आवश्यक है। हमारे देश भारत का भी एक प्राकृतिक भूखण्ड है। (सन् 1947 में उसके पूर्व और पश्चिम के भाग को काटकर अलग देश बना दिया गया है) जो उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में रामेश्वर तक विस्तृत है। इसमें अनेक पर्वत हैं पठार हैं, मैदान हैं, नदियाँ और नाले हैं।

राष्ट्र का दूसरा तत्त्व है, वहाँ निवास करने वाला जन-समूह। वह जन उस धरती के बरदान स्वरूप अन्न का, जल का और वायु का सेवन करता है। भारतीयों को भी इस भूखण्ड से ये वरदान प्राप्त हैं। वह इतिहास के पूर्व काल से यहाँ निवास करता आया है। भूखण्ड के साथ वहाँ के जन का सम्बन्ध आत्मीयता का होना चाहिए। हमारे पूर्वजों ऋषियों ने इसके साथ अपना सम्बन्ध माता का रखा है, न कि केवल मिट्टी और पत्थरों के एक निर्जीव ढेर का। अथर्ववेद में कहा गया है—"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः", भूमि मेरी माता है और मैं इसका पुत्र हूं। प्रभु श्रीराम ने भी "जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" कहकर मातृभूमि के महत्त्व को स्पष्ट किया है।

राष्ट्र का तीसरा तत्त्व है - उसमें रहने वाले जनों की एक सस्कृति। संस्कृति का अर्थ है—समाज की अत्यन्त परिमार्जित स्थिति। संस्कृति ही किसी भी राष्ट्र की आत्मा है। जैसे आत्मा या प्राण के बिना शरीर निर्जीव होता है, ऐसे ही संस्कृति के बिना राष्ट्र भी निर्जीव होता है। भारत की जीवन्तता उसकी श्रेष्ठ संस्कृति के कारण ही है। भारत के जनों की एक संस्कृति है, जो विभिन्न प्रान्तों की भाषा, भूषा और खान-पान अलग होने पर भी एक है। यहाँ के मूल राष्ट्रीयजनों-हिन्दुओं की संस्कृति और सभ्यता की एकता उसके सोलह संस्कारों में, तीर्थाटन में, धार्मिक और आध्यात्मिक भावनामें पदे-पदे लक्षित होती है। राष्ट्र में रहने वाले जनों की राष्ट्र के प्रति ममत्व की भावना ही राष्ट्रीयता कहलाती है। यह भूमि मेरी माँ है, मैं इसका पुत्र हूं; यह मेरी पुण्य भूमि है, इसकी संस्कृति ही मेरा प्राण है। यहाँ के महापुरुष, यहाँ का इतिहास, यहाँ की प्रकृति मेरे हैं; इस भावना के सुदृढ़ होते ही व्यक्ति उसके लिए प्राण तक त्यागने के लिए तत्पर हो जाता है।

आज की स्थिति में राष्ट्रजनों में राष्ट्रीय एकता की अत्यन्त आवश्यकता सभी अनुभव करते हैं, पर इसे करे कौन ? पहले जैसे बताया जा चुका है; इस देश में हिन्दू इतिहास के पूर्वकाल से ही रहते आये हैं। हिन्दू संस्कृति ही भारतीय संस्कृति के नाम से विश्व में विख्यात है। कालान्तर में यहाँ शक,हूण, कुषाण आदि आये, पर वे नाम शेष हो गए। पुन: आठवीं शताब्दी में मुसलमान आये, वे आक्रान्ता थे। वे अपने साथ इस्लाम को लेकर आये। उन्होंने तलवार के बल से यहाँ राज्य भी स्थापित किये और भारत के ओर-छोर तक तलवार के ही बल पर हिन्दुओं को मुसलमान भी बनाया; वे भारतीय संस्कृति में एकाकार न हुए। इस्लाम उन्हें इसकी इजाजत भी नहीं देता। उन्होंने आठ सौ वर्ष शासन किया। फिर आये यूरोप के फिरंगी व्यापारी। उन्होंने एक ओर अंग्रेजी राज्य की स्थापना की तो दूसरी ओर ईसाईयत का प्रचार भी किया। फलतः भारत में आज हिन्दू, मुसलमान और ईसाई है। सर्वाधिक संख्या हिन्दुओं की ही है। फिर भी अंग्रेजों के उत्तराधिकारी कांग्रेसी सत्ताधारियों ने अपने स्वार्थ के लिए 'सेक्युलर स्टेट' का और 'मिश्रित' संस्कृतिका नारा लगाया। दुष्परिणाम एक ओर भारत का विभाजन तो था ही; स्वाधीनता के पश्चात् भी बोटों की राजनीति के कारण खिचड़ी राष्ट्रीयता की बात करनी आरम्भ कर दी। मुसलमान तो राष्ट्र की मुख्यधारा से पहले ही दूर थे; ईसाइयों ने भी यूरोपीय समाज से नाता जोड़ते हुए अपनी अलग पहचान बनाई। अपने अलग अधिकार मांगे। फलतः राष्ट्रीयता की शुद्ध भावना लुप्त हुई और राष्ट्रीय एकता भी खटाई में पड़ गई।

आज जब भी कभी इस एकता की बात सत्ताधारियों द्वारा कही जाती है तो केवल लीपा-पोती ही की जाती है। क्या यह सत्य नहीं है कि यहाँ के मुसलमान और ईसाब जब तक भारत को मातृभूमि और पुण्यभूमि नहीं मानते, यहाँ की पवित्र नदियों, तीर्थों और त्यौहारों से अपना नाता नहीं जोड़ते, तब तक एकता की बड़ी-बड़ी बातें खोखली हैं। यदि नहीं तो क्यों आज भी होली पर, रामलीला की सवारी के अवसर पर, गणेशोत्सव की शोभा यात्रा पर मुसलमानों द्वारा आक्रमण किये जाते हैं और दंगे भड़कते हैं ? क्यों उत्तर पूर्वी सीमा पर ईसाई अलग राज्यों की मांग करते जा रहे हैं ? क्यों ये दोनों सम्प्रदाय उर्दू और अंग्रेजी को यहाँ बनाये रखना चाहते हैं ? दोनों जातियों में कुछ अपवादों को छोड़कर शेष कट्टरपन्थी ही हैं।

इधर हिन्दुओं का ही एक पंथ—सिक्ख पंथ भी आज अलगाव की बात करने लगा है तो तमिलनाडू के द्रविडमुन्नेत्र कड़गम वाले हिन्दी के आधिपत्य का झूठा नारा लगाकर भारत माँ की एकता को तोड़ना चाह रहे हैं। यह अत्यन्त चिन्ताजनक और भयावह स्थिति हैं।

उपसंहार

अत: हम यदि सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय एकता चाहते हैं तो हममें ऊपरी मन से नहीं, अपितु अपने अन्तर मन से भारत राष्ट्र की एकता के लिए प्रयत्न करना चाहिए और वह सांस्कृतिक ऐक्य से ही सम्भव होगी, अन्यथा नहीं।

—०—

परिवार-नियोजन

प्रस्तावना

एक सरकारी खोज के अनुसार भारत में इस समय एक वर्ष में लगभग एक करोड़ तीस लाख शिशु जन्म लेते हैं। इस गति से तो आगामी बीस वर्षों में ही भारत की जनसंख्या लगभग एक अरब हो जाएगी। इस समय भी अकेले उत्तर प्रदेश में इंग्लैण्ड के बराबर जनसंख्या है। भारत में प्रतिवर्ष आस्ट्रेलिया की कुल आबादी के बराबर नये शिशु उत्पन्न हो रहे हैं। वैज्ञानिक निष्कर्ष तो और भी भयभीत करने वाले हैं। एक विज्ञानवेत्ता के शब्दों में, "जनसंख्या यदि इसी गति से बढ़ती रही तो लगभग 300 वर्षों में मनुष्य को पृथ्वी पर खड़े होने का स्थान भी नहीं मिल पायेगा।" इसी भयंकर कल्पना से भयभीत हुए आज के प्राय: सभी देश जनसंख्या वृद्धि पर रोक लगाने के भरपूर प्रयास कर रहे हैं। परिवार-नियोजन ऐसा ही एक प्रयास है, जिससे जनसंख्या की वृद्धि रुक सकती है।

परिवार-नियोजन का अर्थ है—योजनानुसार परिवार-निर्माण करना। नि:सन्देह इससे परिवार का (और फलस्वरूप देश का भी) कल्याण होता है। अतएव इसके लिए भूतपूर्व स्वास्थ्य मंत्री श्रीराजनारायण द्वारा प्रदत्त 'परिवार-कल्याण' नाम एकदम सार्थक है।

सरकारी प्रयास—प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत तत्सम्बन्धी शिक्षा और साधनों का प्रचार-प्रसार करने, कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने एवं नये-नये साधनों का अन्वेषण करने-कराने पर लाखों रुपया व्यय किया गया। विभिन्न स्थानों पर परिवार नियोजन केन्द्र तथा 19 अनुसंधानशालाएं खोली

गई तथा नि:शुल्क चिकित्सा-शिविरों का आयोजन किया गया। द्वितीय पंच-वर्षीय योजना में धनराशि करोड़ों में व्यय करके प्रचार-प्रसार ही नहीं किया गया, अपितु एक अलग विभाग भी बनाया गया। 19 फरवरी सन् 1959 ई० में दिल्ली में अन्तर्राष्ट्रीय परिवार-नियोजन सम्मेलन किया गया, जिसमें 22 देशों के 7000 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस दिशा में सर्वाधिक मात्रा में कार्य किया गया आपत् काल (1975-76) में। स्वर्गीय प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी के बीस सूत्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत इसको सर्वाधिक बल मिला—संजय गाँधी के पांच सूत्रीय कार्यक्रम से। पवित्र उद्देश्य और कर्मठता के बावजूद भी यह सारा प्रयास अफसरशाही की बर्बरता, हिंसा और प्रतिहिंसा का रूप बन गया था। सत्ता की अतिशय सख्ती, दमनचक्र, हिंसा और अत्याचारों का परिणाम हुआ—सत्ताधारी का पतन और नई सत्ता (जनता सरकार) की प्रतिष्ठापना। नई सत्ता ने इस विषय में स्वेच्छा, जन-मत, नैतिकता और सुझाव या पथ प्रदर्शन पर जोर दिया है। फलत: परिवार कल्याण या नियोजन कार्य-क्रमों की गति मन्द पड़ गई। हाँ, जनसामान्य 'निर्भय' अवश्य हो गया है। सारांश में कह सकते हैं कि गत वर्षों से ही परिवार-नियोजन हेतु अनेक प्रयास किये जाते रहे हैं—या तो कागजी या फिर दमनात्मक; दोनों ही एकांगी हैं।

परिवार नियोजन के लिए क्या करें ?

सर्वप्रथम हमें परिवार नियोजन के मार्ग की सभी बाधाओं को दूर करना होगा। इस सम्बन्ध में सरकार और जनता दोनों को वास्तविकता को दृष्टि में रखते हुए कार्य करने होंगे। शिक्षा प्रसार के लिए हमें प्रौढ़ शिक्षा, स्त्रीशिक्षा और विद्यालीय शिक्षा सभी में परिवार नियोजन सम्बन्धी शिक्षा देनी होगी। भारत के वर्तमान नागरिक (प्रौढ़) और भारत के भावी नागरिक (आज के विद्यार्थी) सभी को यौन शिक्षा के आवश्यक तत्वों का ज्ञान प्रदान करके नगरों और ग्रामों सभी में अधिकाधिक यौन शिक्षा का प्रसार करना होगा। सरकार और सामाजिक संस्थाएं यह कार्य कर भी रही हैं। यह राजकीय नियम शीघ्राति-शीघ्र बनाना चाहिए कि कोई भी व्यक्ति एक या दो सन्तानों से अधिक की उत्पत्ति न करे। साथ ही साथ शिक्षालयों में ब्रह्मचर्य शिक्षा का प्रबन्ध करके; समाज में अल्प अवस्था के विवाह बन्द करके तथा कम से कम सन्तानोत्पत्ति करके भी इस समस्या को रोका जा सकता है। परिवार-नियोजन सम्बन्धी

अनेक नवीन आविष्कारों का प्रयोग और अन्वेषण करके, अधिकाधिक कार्य-कर्ताओं और चिकित्सकों को इस क्षेत्र में लगाकर एवं उनकी सेवाए ग्रहण करके यह कार्य किया जा सकता है।

उपसंहार

परिवार नियोजन हमारे आज के जीवन की अनिवार्य आवश्यकता तथा देश की प्रगति का अविभाज्य अंग है। अतएव हमें तन, मन, धन से इस कार्य में अभी से जुट जाना है। व्यक्ति और परिवार, देश और राष्ट्र सभी के वर्तमान और भावी समृद्धि और सुख शांति के लिए परिवार नियोजन ही एक मात्र रामबाण औषध है, जिसका हमें अधिकाधिक मात्रा में प्रयोग और अनुसरण करना है।

—०—

रक्षा-बन्धन

प्रस्तावना

भारतीय जीवन में पर्वों या त्योहारों का बड़ा महत्त्व है। हिन्दुओं के अनेक त्योहार है। उनमें चार त्योहार बहुत ही महत्त्व के हैं; जिनमें से 'रक्षा बन्धन' एक विशेष त्योहार माना जाता है।

रक्षा-बन्धन का पर्व श्रावण मास की पूर्णिमा को मनाया जाता है। श्रावण की पूर्णिमा को मनाये जाने के कारण इसे 'श्रावणी' पर्व के नाम से भी पुकारा जाता है। इसका एक पुराना नाम 'ऋषि-तर्पण' भी है। इसे 'राखी' या 'सलूनों' भी कहते हैं। प्राचीनकाल में वर्षा ऋतु में वर्षा की अधिकता के कारण राजा, व्यापारी, संन्यासी आदि देशाटन नहीं करते थे और प्रायः अपने-अपने स्थानों पर रहते थे। चातुर्मास्य में ऋषि-मुनि भी नगरों या गाँवों में आते थे। लोग उनकी सेवा में उपस्थित होकर उसके उपदेशामृत का पान करते थे। फिर श्रावण की पूर्णिमा को पवित्र नदियों में स्नान कर नया यज्ञोपवीत धारण किया जाता था। यज्ञादि का विधान होता था तथा वेदारम्भ भी होता था। यज्ञ की समाप्ति पर राजा लोग प्रजा सहित आश्रमाध्यक्ष, ब्राह्मणों की पूजा करते थे। आश्रमाध्यक्ष अपने यजमानों की कलाई में एक पीले रंग का रक्षा-सूत्र अभि-मंत्रित करके बांधते थे। कालान्तर में—वह सूत्र ही 'रक्षा-बन्धन' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

मध्यकालीन रूप

काल-क्रमानुसार इस रीति में कुछ परिवर्तन हुआ। ब्राह्मणों के साथ-साथ बहनें भी रक्षा-बन्धन की अधिकारिणी हो गई थीं। बहनें प्रायः अपने भाइयों के हाथों में ही रक्षा-बन्धन करती थीं। कभी-कभी अन्य व्यक्ति भी किसी महिला द्वारा राखी बांधे जाने पर अपने को उस स्त्री मुंह बोला का भाई समझने में अपने गौरव का अनुभव करता था। उस काल में इस प्रथा का बड़ा महत्त्व रहा। रक्षा-बन्धन करवाने वाले व्यक्ति अपने प्राणों को भी संकट में डालकर राखी की पवित्रता की रक्षा करते थे। इतिहास इस बात का साक्षी है कि हुमायूं ने चित्तौड़ की महारानी कर्मवती की राखी प्राप्त करके अपने सैनिकों के विरोध करने पर भी गुजरात के मुसलमान शासक के दांत खट्टे किये थे।

आधुनिक रूप

आजकल प्रातःकाल से ही ब्राह्मण अपने यजमानों को राखी बांधने के लिए निकल पड़ते हैं। वे यजमानों के हाथ में राखी बांधकर उनसे दक्षिणा प्राप्त करते हैं। बहने भी राखी बांधकर अपने भाइयों से दक्षिणा या उपहार प्राप्त करती हैं। घरों में तरह-तरह के पकवान बनते हैं। मिष्टान्न वितरण होता है। सारा दिन उल्लास में बीतता है।

उपयोगिता

यह त्योहार भाई-बहन के पवित्र स्नेह का द्योतक है। भारत का हिन्दू समाज ही विश्व में ऐसा समाज है, जिनमें बहन-भाई के सम्बन्ध इतने पवित्र और अटूट हैं। अन्य समाजों के व्यक्ति इसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। स्त्रियां इसी बहाने अपने मायके चली जाती हैं तथा अपनी बाल्यकाल की सखियों से मिलने का अवसर प्राप्त कर लेती हैं। झूला, गाना तथा आमोद-प्रमोद इस पर्व को मानने के लिए अत्यन्त सुन्दर साधन है। बहनें भाइयों के हाथ पर राखी बांधती हैं और मिठाई खाने को देती हैं; भाई बहन की मान-मर्यादा की रक्षा का उत्तरदायित्व निभाने का भार ग्रहण करके उत्सव के महत्त्व को निभाता हुआ बहन को कुछ दक्षिणा देकर प्रसन्न करता है। देश के उत्तरी भाग में इस उत्सव को उमंग और उल्लास के साथ मनाया जाता है।

तैयारी

रक्षा बन्धन पर्व की तैयारी में कई दिन पूर्व से बाजार सज जाते हैं।

दुकानों पर रंग-बिरंगी, चिल्लेदार आदि अनेक प्रकार की राखियां बिकनी प्रारम्भ हो जाती हैं। दुकानों पर राखियां खरीदने वालों की भीड़ रहती है। राखी के दिन हलवाइयों की दुकानें भी तरह-तरह की मिठाइयों से सजी होती हैं। उन पर भी खरीदारों की भीड़ रहती है।

उपसंहार

राष्ट्रीय चेतना तथा अपनी श्रेष्ठ सामाजिक परम्पराओं को जीवित रखने के लिए इस प्रकार के त्यौहारों की अत्यधिक उपयोगिता है। वस्तुतः इस युग में, जिसमें स्वार्थ भावना ही बलवती हो रही है, रक्षा-बन्धन जैसे पर्व ही मानवता व प्रेम का दिव्य संदेश दे सकते हैं और मनुष्य जीवन को उल्लास से परिपूर्ण कर उसे स्वार्थ त्याग के लिए प्रेरित कर सकते हैं। अतः प्रत्येक व्यक्ति को अपने जातीय त्यौहारों को पूर्ण उत्साह से मनाना चाहिए।

—०—

विजय दशमी

(दशहरा)

प्रस्तावना

उत्सव मनाने की प्रथा प्रत्येक सभ्य जाति में अति प्राचीन काल से चली आ रही है। उत्सव या पर्व मनुष्यों को असीम आनन्द, उत्साह, नवस्फूर्ति तथा चेतना देते हैं। भारतवर्ष धर्म-प्रधान देश है। यहाँ पर प्रत्येक पर्व में किसी न किसी रूप में धर्म-भावना अवश्यमेव देखने को मिलती है। विजय दशमी एक ऐसा पर्व है, जिसका धार्मिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक महत्त्व है। यह पर्व आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि को समस्त भारत में बहुत ही श्रद्धा, समारोह और उत्साह से मनाया जाता है।

क्षात्र धर्म का प्रतीक

जब यातायात के आधुनिक सुलभ और सुरक्षित साधन नहीं थे, तब वर्षा ऋतु में वर्षा की अधिकता के कारण प्रायः सभी वर्गों के लोग अपने-अपने कार्यों को स्थगित कर देते थे तथा अपने ही घरों पर रहा करते थे। संन्यासी-वर्ग पर्यटन त्यागकर एक ही स्थान पर 'चातुर्मास्य' किया करता था। व्यवसायी वैश्य भी नदियों में बाढ़ के कारण वर्षा से पण्य-सामग्री खराब

हो जाने के भय के कारण यात्रा स्थगित कर देते थे। क्षत्रिय वर्ग युद्ध-स्थलों से लौटकर अपने देश में विश्राम करता था। क्षत्रिय वर्षा ऋतु में शक्ति-संचय करने के लिए शारीरिक व्यायाम पर ही विशेष बल दिया करते थे तथा साथ-साथ अन्य प्रकार के खेल-कूदों के द्वारा भी मन बहला लिया करते थे। विजयदशमी पर्व के आते ही पुन: अस्त्र-शस्त्रों को तैयार करके युद्ध योजनाओं में संलग्न हो जाते थे। इस दिन वे अस्त्र-पूजन और सीमोल्लघन करते थे। इसलिए दशहरा क्षत्रियों का अथवा क्षात्र-तेज का प्रतीक त्योहार कहा गया है।

सिंहावाहिनी दुर्गा भवानी ने भी नवरात्रों में ही महिषासुर, शुम्भ-निशुम्भ चण्ड-मुण्ड और रक्तबीज आदि असुरों का वध किया था। यह भी कहा जाता है कि इसी दिन मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ने दस शीश वाले राजा रावण का वध करके लंका पर विजय प्राप्त की थी, (पर अब यह निश्चित हो गया है कि इस दिन श्रीराम ने लंका पर विजय के लिए प्रस्थान किया था।) अत: विजय प्राप्ति की उदात्त आकांक्षा के कारण ही यह तिथि विजयदशमी के नाम से प्रसिद्ध हो गई है।

मनाने का ढंग

स्वतन्त्रता से पूर्व देशी राज्यों में यह त्योहार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था। शस्त्रागारों की सफाई के साथ अस्त्र-शस्त्रों को भी साफ किया जाता था और इनका पूजन होता था। आज भी सेना की विशेष टुकड़ियों दशहरे के उत्सव पर शस्त्रों की पूजा करके अभ्यास के लिए अपने शस्त्रास्त्रों को ठीक करती हैं।

उत्तर भारत में महिलाएं इस दिन प्रातःकाल से ही घरों की सफाई, लीपा पोती करती हैं, फिर स्नानादि के अनन्तर नये वस्त्र धारण करती हैं। पकवान बनते हैं, भगवान् श्रीराम की मूर्ति बनाकर दशहरे का पूजन होता है। इष्ट-मित्रों के साथ भोजन करके संध्या को उत्सव देखने जाते हैं।

रामलीला का प्रदर्शन

दशहरा के निमित्त नवरात्रों में रामलीला के प्रदर्शन का भी उत्तर भारत के प्रत्येक गाँव और नगर में प्रचलन है। यह रामलीला किसी भी दिन आरम्भ हो; परन्तु दशहरे के दिन रावण-वध का अभिनय अवश्य होता है। रावण;

कुम्भकर्ण तथा मेघनाद के बड़े-बड़े पुतले बनाकर उनमें विभिन्न प्रकार की आतिशबाजी रख दी जाती है। संध्या समय जब रावण-वध का अभिनय कर के पुतले जलाए जाते हैं तो रंग-बिरगी चिंगारियां उनमें से निकलती हैं और जोर के धमाके होते हैं। इसके प्रदर्शन से लोगों के मन में राम के आदर्शों के प्रति अनुराग पैदा होता है।

दुर्गा-पूजा

बंगाल-प्रान्त में इस उत्सव को 'दुर्गा-पूजा' के रूप में मनाया जाता है। नवरात्रों के नौ दिन नव-दुर्गाओं के पर्व के नाम से समस्त हिन्दुओं में प्रख्यात हैं। अतः भारत के प्रायः सभी हिन्दू परिवारों में नौ दिनों तक दुर्गा-पूजा होती है तथा अष्टमी या नवमी को कुमारी (कन्या) पूजन होता है। बगाल में इसका विशेष महत्त्व है। प्रत्येक बंगाली दुर्गा-पूजन में अपना योग देता है। अष्टमी को दुर्गा की पूजा विशेष रूप से होती है और नवमी को दुर्गा के सामने भैंसों और बकरों का बलिदान किया जाता है। यह प्रथा दुर्गा जी के महिषासुर, शुम्भ-निशुम्भ और चण्ड-मुण्ड राक्षसों के वध का स्मरण कराती है। दशमी को दुर्गा की मूर्तियों का नदी, तालाब या सागर के जल में विर्सजन कर दिया जाता है।

उपयोगिता

रामलीला प्रदर्शन से कोमल हृदय बालकों को अति सरलता से माता-पिता की आज्ञा-पालन, गुरु-भक्ति, भ्रातृ-प्रेम एवं वीरत्व आदि की उच्च शिक्षा प्राप्त हो जाती है। रावणादि राक्षसों की दुर्दशा को देखकर लोगों के हृदय में अनाचार तथा दुराचार से घृणा होती है तथा सत्य के प्रति आस्था जग जाती है। लीला के प्रदर्शन से वीर पुरुषों के चरित्र आँखों के सामने आ जाते हैं, जिनके स्मरण से सर्व साधारण में भी वीर भावनाएं जागृत हो जाती हैं और हर्षोल्लास, प्रेम तथा सम्मिलन का भाव जागृत हो जाता है।

इन त्योहारों के द्वारा जातीय परम्परा और जातीय गौरव के प्रत्यक्षीकरण से जाति के उत्थान में बड़ी सहायता मिलती है। प्रत्येक जाति अपने जातीय त्योहारों से ही प्रेरणा, चेतना और उल्लास प्राप्त करती है। अतः ऐसे पर्वों को पूर्ण उत्साह से मनाना चाहिए।

—o—

दीपावली

'तमसो मा ज्योतिर्गमय' —वेद

प्रस्तावना

भारतवर्ष त्यौहारों का देश माना जाता है। यहाँ प्रतिमास कोई न कोई त्यौहार या पर्व आता ही रहता है। त्यौहार राष्ट्रीव जीवन में एक नया उल्लास और आशा लेकर आते हैं। नित्य प्रति की नीरसता से जब मानव मन थक जाता है, तब जीवन की उदासीनता दूर करके त्यौहार उसे एक नई स्फूर्ति प्रदान करते हैं। ज्योति का पर्व दीपावली भी ऐसा ही एक महापर्व है। यह उत्सव भारतीय ऐश्वर्य, समृद्धि, श्री और शोभा का प्रतीक है।

दीपावली का पर्व कार्तिक मास की अमावस्या को बड़े ही उत्साह और हर्ष के वातावरण में मनाया जाता है। यह उत्सव प्रतिवर्ष नयी उमंग और नया उत्साह, नया आदर्श और नई आशा लेकर आता है। जनता बहुत समय पहले ही इस दिन की प्रतीक्षा करने लगती है। इस समय तक खेतों का सारा अन्य किसान के घर में आ जाता है। उसका मन आशाओं और आकांक्षाओं से भरा रहता है। अन्न के रूप में ही धन-लक्ष्मी और सौभाग्य लक्ष्मी किसान के घर आती है। प्राचीनकाल में व्यापारी समुद्र पार जाते थे और अनेक देशों की यात्रा के बाद दीपावली पर अपने घर वापिस आकर अपने कुटुम्बियों से मिल-कर आनन्दोत्सव मनाते थे। घर में लक्ष्मी का पदार्पण होता था। अतः दीपावली गृहस्थ जीवन का एक समृद्धि-सौभाग्यपूर्ण त्यौहार बन गया है।

पौराणिक प्रसंग

दीपावली अपने चारों ओर अनेक त्यौहारों को समेटे हुए है और इसके साथ अनेक पौराणिक गाथाएं भी गुथी हुई हैं।

कहते हैं कि प्राचीन काल में प्राग्ज्योतिषपुर में नरकासुर नाम का एक दुष्ट राजा राज्य करता था। वह अपने बल पराक्रम से अनेक राजाओं को पराजित करके उनकी कन्याओं को छीन ले गया और अपने कारागार में बंदी बनाकर डाल दिया। तब भगवान कृष्ण ने उसे युद्ध में पराजित किया। दुरा-चारी नरकासुर के मारे जाने पर सारे देश में दीप जलाकर आनन्द मनाया गया।

दीपावली का उल्लास

यह त्योहार भारत के सभी प्रान्तों मे बड़े ही उल्लास तथा उत्साह से मनाया जाता है। लोग अपने-अपने घरों और दुकानों को सजाते हैं। द्वारों पर 'शुभ दीपावली' 'स्वागतम्' 'लक्ष्मीजी सदा सहाय' आदि लिखते हैं। देवी-देवताओं के चित्रों से घर की शोभा बढ़ाते हैं। बाजारों में चहल-पहल बढ़ जाती है। खिलौने वालों की, चित्र-विक्रेताओं की, पटाखे बेचने वालों की दुकानें खूब सजी रहती हैं। सबसे अधिक सजावट और भीड़ हलवाइयों की दुकानों पर रहती है। धनी और निर्धन सभी में एक नया उत्साह दिखाई देता है। घर सजाने को मिट्टी के खिलौने बाजारों में बिकते हैं। धन त्रयोदशी के दिन बर्तनों की दुकानों पर विशेष भीड़ रहती है। इस दिन प्रत्येक गृहस्थ बर्तन लेने की कामना करता है। अगले दिन नरक चतुर्दशी या छोटी दीवाली होती है और इससे अगले दिन दीपावली का मुख्य पर्व होता है। जिसमें रात में जलते हुए असंख्य दीपक अमावस्या की अंधेरी रात को पूर्णिमा से भी अधिक प्रकाशपूर्ण कर देते हैं।

लक्ष्मी-पूजा का पर्व

दीपावली धन-धान्य, ऐश्वर्य और समृद्धि की देवी लक्ष्मी की पूजा का दिन है। कहते हैं कि इसी दिन क्षीरसागर से लक्ष्मी का जन्म हुआ था। दीपावली के अवसर पर ही व्यापारियों का नया वर्ष आरम्भ होता है। बही-बस्ते बदले जाते हैं, पुरानी उधार चुका दी जाती है। आगे आने वाले वर्ष की स्वागत कामना में रात को गणेश और लक्ष्मी की पूजा होती है। सभी लोग अपने-अपने घरों में, दुकानों में श्रद्धा और भक्ति से लक्ष्मी की पूजा करते हैं। दीप जलाकर फूल, खील और मिठाइयां लक्ष्मी को अर्पित की जाती हैं। मित्रों और सम्बन्धियों को भी मिठाई दी जाती है। किसान लोग धान, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि अन्न के आने की खुशी यह पर्व मनाते हैं। भगवान् को भोग लगाकर नये अन्न को प्रयोग में लाते हैं। बच्चे रात में फुल-झड़ियों और पटाखे जलाकर हृदय का उल्लास प्रकट करते हैं।

महाराष्ट्र में इस दिन नये अन्न से पहले कुछ कड़वी चीज खाई जाती है।

गोवा में इस दिन चिउड़ा और मिठाई खाने की प्रथा है, जिसमें सभी इष्ट-मित्र सम्मिलित होते हैं। दीपावली भारतीय समाज का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण उल्लासमय त्यौहार है। यह पर्व धन त्रयोदशी से प्रारम्भ होकर भैयादूज के दिन समाप्त होता है।

वस्तुतः ज्योति का यह पर्व अत्यधिक आनन्द देने वाला तथा अन्धकार पर प्रकाश की विजय का प्रतीक होता है।

—o—

होली

प्रस्तावना

मनुष्य स्वभाव से ही उत्सव-प्रिय प्राणी है। वह अपने जीवन का प्रत्येक क्षण आनन्द एवं सुख में बिताना चाहता है। "उत्सव प्रियाः मानवाः" यह महाकवि कालिदास ने भी कहा है। त्यौहार मानव के इसी हर्षोल्लास की भावना के परिचायक हैं। त्यौहारों से मानव जीवन की उदासी और निराशा दूर हो जाती है और मन में एक नया उत्साह व उमंग भर जाती है।

हिन्दुओं के चार प्रसिद्ध त्यौहारों में होली रंग और उमंग का अनुपम पर्व है। यह उत्सव शीत काल की समाप्ति और वसन्त के आगमन पर फाल्गुन मास की पूर्णिमा को उल्लास और उत्साह से मनाया जाता है। होलिकोत्सव का प्रारम्भ यद्यपि अष्टमी से हो जाता है, तो भी दो दिन इसके विशेष होते हैं। पूर्णिमा को होलिका दहन होता है, और दूसरे दिन—प्रतिपदा को रंग (फाग) खेला जाता है।

यह उत्सव क्यों मनाया जाता है? इस सम्बन्ध में अनेक मत हैं, पर मुख्य मत यह है कि यह ऋतु पर्व है। भारत में वसन्त एक बहुत सुहानी ऋतु होती है। जो प्रकृति में विकास और उमंग का एक भाव भर देती है। इन दिनों लता-पादपों पर नई-नई कोंपलें आ जाती हैं। वनों-उपवनों में रंग-बिरंगे फूल खिल उठते हैं। जिससे यहाँ रहने वालों में भी एक नई उमंग और नये जीवन का आनन्द छा जाता है। होली के आगमन से समाज के ऊच-नीच का भाव एक

दूसरे के बीच से उठ जाता है। सभी एक दूसरे के साथ अपनत्व की भावना लेकर स्नेह से गले मिलने के लिए लालायित हो उठते हैं। होली का रंग सभी के हृदयों से मनोमालिन्य को धोकर उन्हें नये प्रेम और अपनत्व के बन्धनों में बांध देता है। इस त्यौहार को सभी एक होकर बड़े चाव से मनाते हैं।

पौराणिक कथा

होली के साथ एक प्राचीन कथा का सम्बन्ध जुड़ा है। कहते हैं कि पहले हिरण्यकशिपु नाम का अहंकारी और नास्तिक विचारों का राजा था। उसका पुत्र प्रह्लाद ईश्वर-भक्त और बड़े ही धार्मिक विचारों का बालक था। प्रह्लाद का पिता उसे भगवान् की भक्ति से रोकता था, किन्तु बालक ने अपना निश्चय नहीं बदला। अनेक प्रयत्न करने पर भी जब हिरण्यकशिपु प्रह्लाद का कुछ नहीं बिगाड़ सका तो उसने प्रह्लाद को अपनी बहिन होलिका की गोदी में बिठाकर आग में जला देने का प्रयत्न किया। भक्त प्रह्लाद तो जलती आग से बच गया; किन्तु उसे गोद में लेकर बैठने वाली राक्षसी होलिका जलकर भस्म हो गई। इसी प्रसन्नता के उपलक्षय में प्रतिवर्ष भारतीय जनता होली मनाती है। किसी चौराहे में लकड़ियों का एक बड़ा ढेर एकत्रित करके जल, कुमकुम, चावल, पुष्प और पतासों आदि से उसका पूजन किया जाता है और तब उसमें आग लगाई जाती है। इसी दिन किसान गेहूं और चने के बूट लाकर उन्हें आग में भूनकर खाते हैं, जिसे होलक कहते हैं।

रंग क्रीडा

होली का दूसरा दिन 'दुलैंडी' कहलाता है। इस दिन खूब राग रंग होता है। बालक, युवक वृद्ध और नारियां प्रातः ही रंग की पिचकारियां और गुलाल लिए निकल पड़ते हैं और सब प्रकार का भेद-भाव भूलकर एक-दूसरे पर रंग डालकर और गुलाल लगाकर हर्ष प्रकट करते हैं, नाच-गाना होता है। परस्पर गले मिलते हैं तथा स्नेह सम्बन्ध की मिठाइयां बंटती हैं। प्रीति-भोज होते हैं। यह दिलों को मिलाने वाला दिन होता है, इससे नया स्नेह-सम्बन्ध जुड़ता है। इस दिन शत्रु भी अपनी शत्रुता भुलाकर आपस में एक दूसरे के गले लग जाते हैं। जीवन में एक बार फिर नई आशाएं, नई उमंगे लहलहा उठती हैं। होली

की इस उमंग ने भक्तों के हृदय को भी तरंगित किया। तभी तो मीराबाई ने कहा हैं—

फागुन के दिन चार होली खेल मान रे
सील सन्तोष की केसर घोली प्रेम प्रीत पिचकार रे ।।
उड़त गुलाल लाल भयो अंबर बरसत रंग अपार रे ।।

कुरीतियाँ और गलत धारणाएँ

कुछ लोग इस शुभ दिन गांजा, भांग, सुलफा तथा शराब पीतें हैं, परन्तु यह न तो शुभ है और न हर्ष मनाने का उचित ढंग ही। होली भारतीय संस्कृति का एक पवित्र त्यौहार है। अत: हमें इस दिन को एक पवित्र, मंगलमय और आनन्दमय त्यौहार के रूप ही मनाना चाहिए।

—o—

स्वतंत्रता दिवस

(पन्द्रह अगस्त)

प्रस्तावना

भारत का इतिहास अति पुराना है। इस देश ने संसार के अनेक घटनाचक्रों तथा उथल-पुथल को देखा है। सभ्यताओं का विकास और ह्रास देखा है। इस देश पर आक्रमणकारियों ने लूटमार करके अपने राज्य स्थापित किये। हजारों वर्ष तक इसमें प्राचीन वैभव एवं सम्पन्नता को नष्ट करने में आक्रान्ताओं ने कोई कसर नहीं छोड़ी। अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता को अक्षुण्ण रखने के लिए भारतीय जनता का प्रयास बना रहा। समय-समय पर संघर्ष होते रहे, पर आक्रान्ता शासक आतंक और शोषण करके अपना प्रभाव बनाये रखने में सफल रहे।

सात सौ वर्ष से अधिक समय तक आक्रान्ता मुगल शासकों ने अपनी शक्ति और अत्याचारों से यहाँ शासन जमाये रखा और लगभग दो सौ वर्षों तक व्यापारी बनकर आये विदेशी अंग्रेजों ने बड़ी चालाकी से भारतीयों की आपसी फूट का लाभ उठाकर तथा लुटे-पिटे भारत के जन-जीवन को मरहम लगाने का जाल

फैलाकर इस पर राज्य किया । इस बीच भी मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए बलिदान देने की भावना की ज्योति सतत जगी रही । परिणामस्वरूप असंख्य बलिदान इस पवित्र देश की भूमि पर हुए । देश-भक्त क्रान्तिकारी वीरों ने अपने प्राण गंवाए, अपना सब कुछ नष्ट कर दिया, यातनाएं सहन कीं, अपनी भरी जवानी जेलों के सीखचों के पीछे काट दी । क्यों ? इसलिए कि—

पराधीनता दुख महा सुखी जगत स्वाधीन ।
सुखी बसत शुक वन विषै कनक पींजरे दीन ।।

स्वाधीनता-संग्राम

स्वाधीनता की इस भावना के कारण असहयोग आंदोलन, सत्याग्रह, स्वदेशी का प्रयोग, नमक आन्दोलन, किसानों का जागरण, मजदूरों का योगदान; विद्यार्थियों और सरकारी कर्मचारियों का अंग्रेजी सत्ता को उखाड़ने का प्रयास; सभी कुछ भारत के कोने-कोने से उठा और अंग्रेजों ने बौखलाकर देश के सच्चे स्वाभिमानी लोगों को कुचलने की पूरी कोशिश की, फिर भी स्वन्त्रता की मांग रुकी नहीं ।

द्वितीय महायुद्ध के समय एक ओर अंग्रेजों की शासन शक्ति दुर्बल हुई तो दूसरी ओर भारत की ललकार प्रबल रूप में एक महती शक्ति का परिचय दे रही थी । अन्ततः क्लेमैण्ट एटली ने भारत को स्वतंत्र करने का फैसला किया । साथ ही अंग्रेज अपनी कूटनीति से बाज नहीं आये और उन्होंने भारत का विभाजन करवाने का षड्यन्त्र रच लिया । जिससे देश में साम्प्रदायिक झगड़े हों और अंग्रेज फिर भारतीयों की आपसी फूट में बन्दर बाँट का स्वांग रचकर भारत को दास बनाये रखें, किन्तु ईश्वर की इच्छा अब भारत के भाग्य को पलटने और गौरव को बढ़ाने की थी । फलतः अंग्रेज स्वतंत्रता को रोकने में तो असफल रहे, लेकिन जाते-जाते देश को दो भागों में विभक्त कर ही गए ।

स्वतन्त्रता दिवस

पन्द्रह अगस्त सन् 1947 का दिन भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा । इसी दिन हमारे पुरातन गौरव की पुनः स्थापना हुई । देश में अपनी सरकार बनी, अपना झण्डा लालकिले पर फहराया गया । प्रथम प्रधान-मन्त्री के रूप में पंडित जवाहर लाल नेहरू ने देश की राजधानी दिल्ली में

'इण्डिया गेट' पर देश की आजादी के उमड़ते हुए विशाल जनसागर को सम्बोधित करते हुए जब कहा—"अब हम स्वतंत्रा जनता हैं और अपनी आजादी को कायम रखेंगे," तो आकाश प्रसन्नता और उल्लास से भरे नारों से बहुत देर तक गूंजता रहा। यह राष्ट्रीय दिवस राष्ट्र-जीवन में चेतना और जागरण लाने तथा उन्नति की ओर अग्रसर होने का दिन बन गया। तब से हम प्रति वर्ष इस दिन को सारे देश में अपूर्वउत्साह और उमंग के साथ मनाते हैं।

'स्वतन्त्रता दिवस' का यह उत्सव समस्त भारत के नगर-नगर और ग्राम-ग्राम में मनाया जाता है। इस अवसर पद सरकारी कार्यालयों, कारखानों, विद्यालयों और घरों पर राष्ट्रीय ध्वज फहराया जाता है। प्रभात फेरियां निकलती हैं और सभाएं होती हैं। देश-भक्ति और वीरता के गीत गाये जाते हैं। जन-नेता जनता को उसका कर्त्तव्य-बोध कराते। जनता प्रतिज्ञा करती है कि हम देश के लिए जियेंगे और देश के लिए मरेंगे।

भारत की राजधानी दिल्ली में इस उत्सव को विशेष उत्साह और हर्ष से मनाया जाता है। देश के प्रधानमन्त्री लालकिले की प्राचीर पर ध्वजारोहण करते हैं और देश की जनता को स्वतन्त्रता दिवस का सन्देश देते हैं।

यह उत्सव हमें नया उत्साह और नई प्रेरणा देता है। यह हमें राष्ट्र के प्रति हमारे कर्त्तव्यों का स्मरण करता है और हमें देश को समृद्ध बनाने तथा स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखने की प्रेरणा देता है।

—o—

गणतन्त्र दिवस

(छब्बीस जनवरी)

प्रस्तावना

भारतीय स्वाधीनता संग्राम के अग्रणी नेता और प्रसिद्ध देशभक्त लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने घोषण की थी—'स्वतन्त्रता मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है और मैं उसे लेकर रहूंगा।' उनके जीवन में तो नहीं, पर उनकी मृत्यु के कई वर्ष पश्चात् उनका स्वप्न साकार हुआ। 15 अगस्त 1947 को भारत स्वतन्त्र हो गया।

भारत स्वतन्त्र तो हो गया, पर वह स्वतन्त्रता अपूर्ण थी। कारण, शासन अपना होते हुए भी शासन-विधान अंग्रेजों का बनाया हुआ था। इस कमी को देखकर देश के कर्णधारों ने नया संविधान बनाया और 26 जनवरी 1950 को उसे देश पर लागू कर दिया। उसके अनुसार देश को 'सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य' घोषित किया गया। तभी से यह दिन गणतन्त्र-दिवस के रूप में मनाया जाता है।

छब्बीस जनवरी ही क्यों ?

नवीन संविधान के अनुसार 26 जनवरी को ही गणतन्त्र दिवस रखने का एक ऐतिहासिक कारण है। स्वाधीनता संग्राम के दिनों 26 जनवरी सन् 1929 को लाहौर में रावी नदी के तट पर कांग्रेस अधिवेशन में पंडित नेहरू की अध्यक्षता में पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पारित हुआ था। तब प्रत्येक भारतीय ने यह प्रण कर लिया था कि शीघ्रातिशीघ्र हम पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करके रहेंगे। उसी दिन से छब्बीस जनवरी का दिन हमारे लिए राष्ट्रीय पर्व बन चुका था। प्रतिवर्ष इस दिन भारत फेरियां निकलती थीं, ध्वज अभिवादन होता था और राष्ट्रीय गीत गाये जाते थे। 'स्वाधीनता-दिवस' की उसी ऐतिहासिक घटना और भावना को सुरक्षित रखने के लिए ही जन-नायकों ने 26 जनवरी को ही गणतंत्र राज्य की स्थापना की।

आशा और स्फूर्ति का संचारक

गणतन्त्र दिवस का यह पर्व पूर्णतया राष्ट्रीय पर्व है। सभी नागरिक इसे उत्साहपूर्वक मनाते हैं। 26 जनवरी को देश के प्रत्येक कोने में उल्लास और हर्ष छा जाता है। प्रभात फेरियां निकाली जाती हैं, सभी सरकारी तथा निजी स्थानों पर राष्ट्रीय ध्वज फहराये जाते हैं, लोग उनका अभिवादन करते हैं और राष्ट्रीय गीत गाते हैं। सभी नागरिक दीपावली की भांति अपने-अपने घरों; दुकानों और कार्यालयों को रंग-बिरंगे बिजली के लट्टुओं और झंडियों से सुसज्जित करते हैं।

दिल्ली में समारोह का रूप

दिल्ली भारत की राजधानी है। दिल्ली का गणतंत्र-दिवस समारोह दर्शनीय होता है। प्रातःकाल होते ही लोग 'इण्डिया गेट' की ओर चल देते हैं।

क्योंकि विशेष समारोह वहीं पर होता है। निश्चित समय पर राष्ट्रपति अपनी सवारी पर बैठकर 'विजय चौक' पर पधारते हैं, राष्ट्रीय ध्वज का अभिवादन करते हैं और जल, थल तथा वायु सेनाओं का अभिवादन स्वीकार करते हैं। तदनन्तर राष्ट्रपति वीर सैनिकों तथा विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले जनों को अलंकरणों से विभूषित करते हैं। सनाओं के वाद्य-वृन्द इस अवसर पर मधुर ध्वनि से जनता को मोह लेते हैं। इसके उपरान्त जल, स्थल तथा वायु सेनाओं की टुकड़ियाँ नगर की प्रमुख सड़कों पर पथ-संचलन करती हुई लाल किले में पहुंचती हैं। युद्ध में काम आने वाले विभिन्न प्रकार के शस्त्रास्त्रों का प्रदर्शन भी इस अवसर पर होता है। इसके पीछे भारत के विभिन्न प्रांतों की झांकियां चलती हैं। वायु सेना के अनेक वायुयान अपने अद्‌भुत कौशल का प्रदर्शन भी करते हैं। दिल्ली में सभी प्रान्तों के सांस्कृतिक कार्यक्रम लोक नृत्यादि प्रदर्शित किये जाते हैं। इनसे हमें भारत की एकता का ज्ञान होता है। भारत की विभिन्नता में भी एकता छुपी है। सायंकाल सरकार की ओर से राष्ट्रपति भवन में प्रतिष्ठित नागरिकों को भोज दिया जाता है। इसी प्रकार भारत के सभी प्रदेशों में वहाँ के राज्यपाल महोदय का अभिवादन होता है तथा अपने अपने प्रान्तों में गणतन्त्र दिवस का पर्व हर्ष और उल्लास से मनाया जाता है।

गौरव का दिन

इस दिन भारत का प्रत्येक नागरिक देश के पवित्र संविधान की मर्यादा सुरक्षित रखने के लिए जीवन का बलिदान करने की कामना करता है। यह राष्ट्रीय पर्व देश के गौरव की वृद्धि करता है। इस पर्व के पीछे हमारे देश के त्याग बलिदानों का इतिहसा छुपा है। भारतीय जनता के लिए यह अत्यन्त शुभ दिन है, जिसे मनाकर हम कृतकृत्य हो जाते हैं। वस्तुतः जन-गण-मन का गणतन्त्र दिवस हमारे गौरव का महान दिन है।

—o—

विद्यालय का वार्षिकोत्सव

प्रस्तावना

उत्सवों की ओर मनुष्य की स्वाभाविक रुचि होती है, क्योंकि उनसे उसे आनन्द, उत्साह और स्फूर्ति मिलती है तथा उनका मनोरंजन होता है। इसी

कारण छात्रों के जीवन में विद्यालय के वार्षिकोत्सव का भी बड़ा महत्त्व रहता है। इससे छात्रों के जीवन में स्फूर्ति आ जाती है। इससे उन्हें अपनी कार्य-कुशलता और विभिन्न कार्य-कलापों में योग्यता के प्रदर्शन का अवसर मिलता है तथा उन्हें पारितोषिक भी प्राप्त होते हैं। हमारे विद्यालय का उत्सव भी सदैव अत्यधिक आकर्षक, आनन्द-दायक तथा उत्साहवर्द्धक होता है।

समय और साज-सज्जा

इस वर्ष हमारे विद्यालय का उत्सव फरवरी मास की 20 तारीख को बड़ी धूमधाम से मनाया गया था। विद्यालय के प्रांगण में चारों ओर कनातें तानी गई थीं। तथा शमियाने लगाकर मंडप बनाया गया था। मंडप रंग-बिरंगी झंडियों से सुसज्जित था। भूमि पर बेल-बूटेदार कालीन बिछे थे। पश्चिम की ओर एक उच्च मंच पर सभापति महोदय के लिए सुन्दर कुर्सी थी और पार्श्व में दोनों ओर दो-दो अन्य कुर्सियां थीं। इसके पीछे दो बड़ी-बड़ी मेजों पर पारितोषिक की वस्तुएं तथा वैजयन्ती (ट्राफी) आदि सजा दी गई थीं। दक्षिण की ओर आमन्त्रित सज्जनों के बैठने के लिए प्रबन्ध था तथा दूसरी ओर विद्यार्थियों के लिए बैठने का स्थान था। सभापति के मंच से लेकर मुख्य द्वार तक गलीचे व बीच-बीच में लाल वस्त्र बिछे हुए थे। शामियाने के अन्दर ध्वनि विस्तारक का प्रबन्ध था तथा एक 'ध्वनि विस्तारक' मुख्य द्वार पर लगा दिया गया था, जिससे सड़क पर आने जाने वाले व्यक्ति भी विद्यालय के उत्सव का परिचय प्राप्त कर सकें।

दिन के चार बजे से ही आमन्त्रित व्यक्तियों का आगमन प्रारम्भ हो गया था। मुख्य द्वार पर आगन्तुक महानुभवों का स्वागत किया जाता तथा उन्हें यथोचित स्थान पर बिठा दिया जाता था। थोड़े ही समय में मंडप खचाखच भर गया। अभ्यागतों के आगमन से विद्यार्थियों में नवीन स्फूर्ति तथा चेतना का संचार हो रहा था। प्रत्येक विद्यार्थी अपने आपको आदर्श रूप में स्थित करने का प्रयत्न कर रहा था।

सभापति महोदय का स्वागत

साढे चार बजे के लगभग सभापति महोदय पधारे। प्रधानाचार्य जी ने अन्य अध्यापकों सहित मुख्य द्वार पर सभापति जी का स्वागत किया। बालचर

दल ने उनके स्वागत में बैंड बजाया। उनके पंडाल में प्रविष्ट होते ही अन्य सभासद् खड़े हो गये तथा चारों ओर से करतल ध्वनि होने लगी। सभापति जी के बैठते ही सभी आमंत्रित सज्जन तथा विद्यार्थी शांतिपूर्वक बैठ गये। तदनन्तर प्रधानाचार्य जी ने सभापति जी का परिचय देकर पुष्पमाला से उनका अभिनन्दन किया। समस्त पंडाल पुनः कर-तल ध्वनि से गूंज उठा।

कार्यक्रम

इसके पश्चात् रंजन का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। सर्वप्रथम विद्यार्थियों ने ईश-प्रार्थना की। तदनन्त कुछ विद्यार्थियों ने शारीरिक व्यायाम के अद्भुत प्रदर्शन किये, तत्पश्चात् 'बीमार का इलाज' एकांकी का प्रदर्शन किया गया। अनन्तर कुछ विद्यार्थियों ने उत्तम निबन्ध पढ़े तथा कुछ ने सुन्दर गीत गाये। इन सभी कार्यक्रमों में दर्शकों ने अच्छी रुचि ली तथा विद्यार्थी-वर्ग की दक्षता की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

धन्यवाद

रंजन के कार्यक्रम के पश्चात् पारितोषिक वितरण आरम्भ हुआ और समस्त सभामंडप करतल ध्वनि से बार-बार गूंजने लगा। सभापति महोदय प्रत्येक पुरस्कार विजेता से हाथ मिलाते, उसकी प्रशंसा करते तथा उसे उत्साहित करते थे। पुरस्कार वितरण के बाद सभापति जी ने अपने संक्षिप्त भाषण में विद्यालय तथा विद्यार्थियों की बड़ी प्रशसा की और अध्यापक वर्ग की योग्यता, कार्य-निपुणता और सफलता की मुक्तकंठ से प्रशंसा की। सभापति महोदय के भाषण के बाद मुख्याध्यापक जी ने अध्यक्ष जी तथा निमन्त्रित व्यक्तियों का हार्दिक धन्यवाद किया। इस भांति हमारे विद्यालय का वार्षिकोत्सव बड़ी धूम-धाम से सम्पन्न हुआ। चिरकाल तक मेरे मन में इस उत्सव स्मृति बनी रहेगी।

—०—

वसन्त ऋतु

प्रस्तावना

भारत प्रकृति नटी की क्रीडास्थली है। यहाँ प्रकृति नित्य नव्य और भव्य रूप में उपस्थित रहती है। प्रकृति की शोभा को बढ़ाने में ऋतुओं का योग महत्त्वपूर्ण है। अन्य देशों में ग्रीष्म, वर्षा तथा शीत तीन ऋतुएं होती हैं, किन्तु भारत ही एक ऐसा देश है, जहाँ छहों ऋतुएं अपने सम्पूर्ण श्रृंगार से उसकी शोभा को अत्यधिक बढ़ा देती हैं। इनमें सबसे श्रेष्ठ मादक, सुन्दर और आकर्षक ऋतु है—वसन्त ऋतु। इसे ऋतुराज और कुसुमाकर भी कहते हैं।

प्रकृति में परिवर्तन

मानव जीवन की भांति प्रकृति भी परिवर्तनशील है। जिस प्रकार मनुष्य जीवन में भिन्न-भिन्न काल आते हैं, उसी प्रकार प्रकृति भी शैशव, यौवन और वृद्धावस्था की स्थिति को प्राप्त करती है। वसन्त प्रकृति का यौवन है। वसन्त आया और प्रकृति खिल उठी। वृक्षों पर नव-पल्लव अंकुरित हो गए और कली खिलकर पुष्प बन गई।

चारों ओर उल्लास का वातावरण

वसन्त-ऋतु को मधु ऋतु भी कहते हैं। तभी तो वसन्त के आने पर प्रकृति में माधुर्य, मादकता और सौन्दर्य भर जाता है। शिशिर की कड़ी ठण्ड के पश्चात् प्रकृति खिल उठना चाहती है। प्रसिद्ध अंग्रेजी कवि 'शैले' ने कहा है "यदि शिशिर आयेगा तो क्या वसन्त दूर रहेगा ? नहीं, नहीं। वह तो शिशिर का अनुगामी है।" अवश्य ही शीत ऋतु का अन्त वसन्त के आगमन की घोषणा करता है—

> मधु मनोज्ञता से प्रमुदित मलयानिल से शोभित दिगन्त।
> सूचित कर देता है तुरन्त, शिशिर शीत का हुआ अन्त॥

वसन्त में प्रकृति नववधू की भांति शोभायमान हो जाती है। कोयल कूकने लगती है। चारों ओर फूल खिल उठते हैं। उनकी सुगन्ध वातावरण में छा जाती है।

रक्त, पीत, श्वेत सुमन लखकर है पुलकित मन ।
झूम उठे दिग् दिगन्त आ गया फिर से वसन्त ।।

× × ×

आकृष्ट हो रहे हैं मिलिन्द, मंजरित हो गये हैं रसाल ।
करते हैं नवशोभा प्रदान, कोमल किसलय दल हरे लाल ।।

वसन्त के आते ही आमों पर बौर आ जाते हैं । पुष्पों से मधु टपकने लगता है । बागों में भंवरों के उल्लासमय गीत और तितलियों के नाच प्रारम्भ हो जाते हैं । वनों में पलाश के लाल-लाल फूल शोभित होने लगते हैं । पीली सरसों की शोभा तो बहुत ही निराली होती है । धरती ने मानों पीले फूलों की साड़ी पहनी हो । उसकी शोभा से आकृष्ट हो अनंग भी मुग्ध हो जाता है और वसुधा-वधू का अंग-अंग पुलकित हो उठता है ।

"फूली सरसों ने दिया रंग ।
मधु लेकर आ पहुंचा अनंग ।
वधू-वसुधा पुलकित अंग-अंग ।"

स्फूर्ति और बलिदानों की प्रेरक

वसन्त ऋतु त्याग और बलिदान की भी प्रेरक ऋतु है । इसी ऋतु में गुरु गोविन्द सिंह के अबोध बच्चे देश और धर्म की बलिवेदी पर न्यौछावर हो गये थे । वीर 'हकीकत' ने अपने जीवन-पुष्प को धर्म की वेदी पर अर्पित कर दिया था । आज भी चमकौर दुर्ग की मिट्टी उन वीर शहीदों के रंग से रंगी मालूम देती है और नवयुवकों में स्फूर्ति भरने के लिए गीत गाती प्रतीत होती है—

मधु ऋतु आई फागुन की फिर लेकर नई बहार,
जब-जब वसन्त ऋतु है आती बलिदानों की याद दिलाती
एक नई शक्ति का है कराती वीरों में संचार ।

प्रकृति का नवीन रूप

वसन्त पंचमी को मेले लगते हैं । पंजाब में प्रचलित लोकगीत वसन्त-बहार का रंग बिखेर देते हैं । लोग हर्षोल्लास में गाते हैं—

मेरा रंग दे बसन्ती चोला,
मेरा रंग दे बसन्ती चोला, माये, रंग दे बसन्ती चोला ।"

यह फूलों का त्योहार प्रति वर्ष आता है। मानों हुतात्माओं के बलिदान पर प्रकृति अपनी श्रद्धा प्रकट करने के लिए ऐसा सुन्दर रूप अपनाती है। वसन्त पचमी के दिन बंगप्रदेश, उत्कल, असम तथा बिहार के कुछ भागों में लोग विद्या और कला की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती की पूजा-उपासना करते हैं। इस पर्व पर वासन्ती रंग के सरसों के फूलों से घर-बाहर सज जाते हैं और वासन्ती रंग के वस्त्र रग कर प्रकृति के रूप व कार्य के साथ मिलकर प्रसन्नता प्रकट करते हैं।

उपसंहार

वसन्त ऋतु जिन रंग-बिरंगे फूलों से प्रकृति को सजाती है, उन्हीं रगों को भारत की जनता होली के पर्व पर एक-दूसरे पर उंडेल देती है। वसन्त का पीला रंग खेतों में फूली हुई सरसों की फसल पर छा जाता है जहाँ तक दृष्टि जाती है, वासन्ती परिधान में प्रकृति अपना रंग जमाकर देखने वालों के हृदय को हठात् आकर्षित करती है। सुखद वसन्त ऋतु फूलों से प्रकृति के यौवन का शृंगार करती प्रतीत होती है। इस ऋतु का प्रभाव होली के उत्सव में दिखाई देता है। जिसमें प्रकृति के साथ मनुष्य भी मस्ती से झूम उठते हैं। कवि 'पद्माकर' के शब्दों में—

कूलन में केलिन में कछारन में कुंजन में,
क्यारिन में कलित कलीन किलकत है।
कहै पद्माकर पराग हू में, पौन हू, में,
पानन में पीकन में, पलाशन पगन्त हैं।
कछार में, दिशा में, दुनी में देश देशन में,
देखो दीप दीपन में, दीपत दिगन्त है।
बीथिन में ब्रज में नवेलिन में बेलिन में,
बनन में बागन में बगर्यो बसन्त है।

—०—

वर्षा ऋतु

प्रस्तावना

मनमोहिनी प्रकृति के अनेक रूप हैं। अपने इस रूपों से वह मानव-मन को हर्षित करती है, उमंग भर देती है और नवीन स्फूर्ति से प्रेरित करते हैं। प्रकृति के इन रूपों में वर्षा-ऋतु का रूप विशेष आनन्दप्रद और मनभावन है। वसन्त यदि ऋतुओं का राजा है तो वर्षा ऋतुओं की रानी है। वर्षा को 'चौमासा' भी कहते हैं, क्योंकि इसका आरम्भ आषाढ़ मास में हो जाता है और यह आश्विन तक रहती है। जिस प्रकार कठिन तपस्या, कठोर संयम तथा त्याग से किसी व्यक्ति को महत्ता, गौरव और श्री आदि प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार वसुन्धरा ग्रीष्म सूर्य के असह्य आतप को सहन कर के ही वर्षा के वरदान को प्राप्त करती है।

वर्षा का आगमन

जब संसार के प्राणी ग्रीष्म ऋतु की विकरालता से व्यथित हो, आकाश की ओर टकटकी लगाकर बादलों के दर्शनों के लिए तड़पते हैं, सूर्य अग्नि का रूप धारण किये रहता है, जेष्ठ मास में आँधी के बड़े-बड़े बवंडर आते हैं तथा चारों ओर गर्म रेत उड़ती रहती है, तब प्राणियों की व्यथा से व्यथित मेघ की गर्जन सुनाई पड़ती है। आँधी के साथ-साथ बड़ी-बड़ी बूंदे टप-टप करके गिरने लगती हैं और बड़े जोर से मेघ बरसने लगता है। आकाश धूल रहित हो जाता है। वृक्ष हरे हो जाते हैं, बच्चे जल-क्रीडा करते हैं, वायु में शीतलता छा जाती है, प्राणियों में एक नया उत्साह और नयी उमंग भर जाती है। "रजः प्रशान्तं सहिमोऽद्य वायुः नभःप्रकीर्णोऽम्बुधरो विभाति।" कभी नन्हीं-नन्हीं बौछार पड़ती है तो कभी घनघोर वर्षा होती है। महाकवि तुलसीदास जी के शब्दों में—

> "वर्षा काल मेघ नभ छाये,
> गरजत लागत परम सुहाये।"
> दामिनी दमक रही घन मांही,
> खल की प्रीति यथा थिर नांही।

वर्षा काल में कभी बादल सघन होकर वर्षा की झड़ी लगा देते हैं, तो सूर्य-देव के दर्शन दुर्लभ हो जाते हैं। कभी दिन में अंधेरा छा जाता है तो कभी सूर्य प्रकट हो जाता है। "कबहुं दिवस मह निविड़ तम, कबहुंक प्रगट पतंग।" कभी-कभी फुहारें, कभी रिमझिम-रिमझिम बूंदें और कभी घोर वर्षा के विभिन्न रूप इन दिनों में बड़े ही मनोरम प्रतीत होते हैं।

वर्षा में प्रकृति का रूप

वर्षा के कारण प्रकृति का रूप निखर जाता है और आकाश में इन्द्रधनुष की सतरंगी आभा मन को लुभा देती है। जिधर दृष्टि डालिए उधर ही हरी मखमल जैसी कोमल घास से आच्छादित पृथ्वी दृष्टिगोचर होती है। रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि 'देव' के शब्दों में—

कवि देव घटा उनई जु नई वन भूमि भई दल-दूकन सों।
रंगराति हरी लहराति लता झुक जाती समीर के झूंकन सों।

वर्षा ऋतु में पपीहे की 'पी-पी' और मोर का नाच बरबस हृदय को आकृष्ट कर लेते हैं। वनों, पहाड़ों, घाटियों और उद्यानों की शोभा तो सहस्रगुणी हो जाती हैं। खेतों में मकई, ज्वार, बाजरा, तिल और धान की फसलें लहलहा जाती है।

उमंग की जननी

वर्षा में रात्रि का अन्धकार घना हो जाता है। चन्द्रमा और तारे दिखाई नहीं पड़ते। वर्षा की झड़ी लगती है और घनघोर घटाएँ उमड़-उमड़ कर आकाश में छा जाती हैं। यह ऋतु प्रत्येक के हृदय में मस्ती, उमंग, आनन्दमयी स्फूर्ति का संचार कर देती है। हिंडोले पर झूमती हुई तरुणियों और बालिकाओं के कोमल, सुमधुर कण्ठ से मल्हार राग और सरस गीत गूंजने लगते हैं। कहीं मल्लयुद्ध है तो कहीं कूद-फाँद; कहीं हारमोनियम और तबला और कवि महोदय कविता में मग्न दिखाई देते हैं।

लाभ

भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है। यहाँ वर्षा ऋतु विशेष महत्त्व रखती है। अच्छी वर्षा हो जाती है, तो दोनों रबी और खरीफ की फसलें अच्छी हो जाती

हैं। इस प्रकार इस भूखण्ड की समृद्धि, स्वाथ्य और प्रसन्नता इसी ऋतु के कारण हैं। वर्षा के कारण पशुओं के लिए चारा मिल जाता है। तालाब, नदी नालों में पानी भर जाता है जो सारे वर्ष मनुष्यों के काम आता है। ग्रीष्म का प्रचण्ड ताप दूर हो जाता है, ऋतु सुखद और स्वास्थ्यवर्द्धक हो जाती है। गाँवों का जीवन वर्षा द्वारा बहुत प्रभावित होता है।

दोषों की जननी

ऐसी सुन्दर सुखद वर्षा ऋतु भी कुछ दोषों के कारण दुःखद होती है। वर्षा के कारण अनेक विषैले कीट-पतंग और जीव-जन्तु उत्पन्न हो जाते हैं, जो मनुष्यों को बड़ी हानियाँ पहुंचाते हैं। इसी प्रकार बाढ़ आने से नदियों का रूप उग्र और भयंकर हो जाता है। इसके कारण अनेक मनुष्य, पशु और खेत नष्ट हो जाते हैं। फिर भी यह ऋतु आनन्द और अन्न-धन से समृद्ध करने के कारण स्वागत योग्य है। यही वास्तव में जीवन दात्री है।

—०—

समाचार-पत्र

(जनजागरण और समाचार-पत्र)

प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज के बिना अकेले नहीं रह सकता। समाज में एक दूसरे से परिचित होने और उन परिचितों के सम्बन्ध में जानने की लालसा उनके मन में सदैव बनी रहती है। आज के वैज्ञानिक युग में समस्त विश्व ही एक समाज बन गया है। अतः आज का मनुष्य अपने इस विश्व-समाज की गति-विधियों की नित्य नवीन जानकारी चाहता है। 'समाचार-पत्र' मनुष्यों की इसी जिज्ञासा की पूर्ति करते हैं। नवीन समाचारों के जानने के इच्छुक-जन पत्रों पर ऐसे झपटते हैं, जैसे भूखे रोटी पर झपटते हैं।

व्यापक प्रचार

आज समाचार पत्रों का प्रसार एवं प्रचार दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। सभी विद्यालयों, कार्यालयों तथा पुस्तकालयों में समाचार पत्र आते हैं।

दुकानदार तथा कारखाने वाले भी अपने ग्राहकों की सुविधा के लिए समाचार पत्र मँगाते हैं। भारत में हिन्दी, अंग्रेजी तथा प्रादेशिक भाषाओं के पत्रों की लाखों प्रतियाँ नित्य प्रति निकलती हैं।

प्रकाशन की प्रक्रिया

समाचारों पत्रों के प्रकाशन एवं सम्पादन का कार्य अत्यन्त कठिन होता है। भिन्न-भिन्न स्थानों के समाचार प्राप्त करने के लिए अनेक संवाददाता रखने पड़ते हैं और कई स्थानों पर कार्यालय खोलने पड़ते हैं। भाषण तथा आकाशवाणी के कार्यक्रमों की रिपोर्ट लेने के लिए आशुलिपिक रखने पड़ते हैं। वे तुरन्त ही सब समाचारों की रिपोर्ट सम्पादक मंडल को देते हैं। समाचार एजेंसियों के माध्यम से भी समाचार प्राप्त होते हैं। सम्पादक लोग उनमें काट छाँट तथा सुधार करके छापने के लिए भेजते हैं। प्रेस में रातों रात कई लाख की संख्या में समाचार-पत्र छप जाते हैं और प्रातः ही उनका वितरण आरम्भ हो जाता है। समाचार-पत्र का वितरण विभाग अलग होता है। वह अपने अभिकर्त्ताओं, बाहर के ग्राहकों तथा अन्य स्थानों पर समाचार पत्रों को भेज देता है। बहुत से समाचार-पत्र बेचने वाले हॉकर नियत घरों में समाचार-पत्र दे जाते हैं। बाहर के अखबार रेल, मोटर, डाक तथा, हवाई जहाज आदि द्वारा भेजे जाते हैं।

भारत में पत्रकारिता

समाचार पत्र का जन्म सर्वप्रथम यूरोप में 11वीं शताब्दी में हुआ। भारत में राजाराममोहन राय तथा उनके सहयोगियों के प्रयत्न से सन् 1812 ई० में 'बंगाल गजट' सर्वप्रथम प्रकाशित हुआ। इसके बाद तो दिनों दिन इनका विस्तार होता गया। फल यह हुआ कि अंग्रेजी के साथ-साथ भारतीय भाषाओं में भी पत्र प्रकाशित हुए। लोकमान्य तिलक ने 'मराठा' और 'केसरी' लाला लाजपतराय ने 'पंजाब केसरी' तथा महात्मा गांधी ने 'हरिजन' तथा 'यंग इण्डिया' पत्र प्रकाशित किये। जिन समाचार पत्रों को आज हम इतना उन्नत और सुन्दर देखते हैं वह उनकी वर्षों की साधना का फल है। आज समाचार पत्र सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, साहित्यिक और आर्थिक सभी क्षेत्रों का एक आवश्यक अंग बन गये हैं।

समाचार पत्रों के विषय

समाचार पत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार के समाचार होते हैं। इसके प्रथम पृष्ठ पर देश-विनेश के मुख्य समाचार प्रकाशित होते हैं तथा शेष समाचार अन्य पृष्ठों पर होते हैं। इन पत्रों में नौकरी, शिक्षा, विवाह, सिनेमा तथा अन्य प्रकार के विज्ञापन भी होते हैं। देश-विदेशों के खेलों, मैचों तथा प्रतियोगिताओं आदि के भी समाचार इसमें होते हैं। इसी प्रकार सोने, चाँदी, गेहूं, चना आदि के बाजार भाव होते हैं। एक पृष्ठ पर सम्पादकीयक विचार भी होते हैं, मुख्य-मुख्य अवसरों पर समाचार पत्रों के विशेषांक भी निकलते हैं। प्रत्येक रविवार को एक परिशिष्ट निकलता है, जिसमें साहित्यिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और सामयिक समस्याओं पर विशेष लेख और कविताएँ आदि प्रकाशित होती हैं। इस प्रकार समाचार पत्र को विश्व की गतिविधियों का अधिक से अधिक परिचायक बनाने की चेष्टा रखकर उसे मनोरंजक तथा जन-प्रिय बनाने का और जन-जागरण का अग्रदूत बनाने का विशेष ध्यान रखा जाता है

जन-जागरण का माध्यम

समाचार पत्र जन-जागरण का महत्वपूर्ण माध्यम है और साथ ही जनता को शिक्षित करने तथा दिशा निदश करने वाले भी हैं। एक पाश्चात्य लेखक ने उन्हें 'जनता का विश्वविद्यालय' कहा है तो अन्य ने उसे "शक्ति का चतुर्थ स्तम्भ" कहा है। भारत में स्वाधीनता की भावना का प्रचार करने में समाचार पत्रों ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया। शासन के अन्याय और अत्याचारों के विरुद्ध जनमत समाचार पत्र ही प्रकट करते हैं, जन-भावना को व्यक्त करने और जन-भावनाओं को आन्दोलित करने में समाचार-पत्र प्रमुख भूमिका निभाते हैं। बड़े से बड़े षड्यन्त्रों का भंडाफोड़ इन्हीं के द्वारा होता है। अमेरिका का 'वाटरगेट कांड' महाराष्ट्र का 'अंतुले कांड' मीनाक्षीपुरम् का 'मुस्लिम षड्यन्त्र' 'बोफर्संतोपें और जर्मन पनडुब्बीकांड'. को प्रकट करने का श्रेय समाचार पत्रों को हा हैं।

लाभ (महत्त्व)

समाचार पत्रों से समाज को अत्यधिक लाभ है। देश-विदेश की राज-नीतिक, सामाजिक, आर्थिक आदि घटनाओं की नवीनतम जानकारी तथा ज्ञान वृद्धि के अनेक तत्त्व समाचार पत्रों से प्राप्त होते हैं। समाचार-पत्र

सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक अन्धविश्वासों, सामाजिक अत्याचारों तथा भ्रष्टाचारों को रोकने का सबल साधन हैं। वे विद्वानों, कलाकारों, चित्रकारों तथा भाषाविदों की प्रतिभा के विकास के सच्चे सहायक हैं। समाचार-पत्रों की शक्ति असीम है। इससे निरंकुश शासक भी डरते हैं। इसीलिए इन्हें शक्ति का चतुर्थ स्तम्भ कहा जाता है। नेपोलियन इसी कारण कहता था—"मैं लाखों संगीनों की अपेक्षा तीन विरोधी समाचार-पत्रों से डरता हूं।"

उर्दू कवि अकबर 'इलाहाबादी' के शब्दों में—

खीचों न तीर कमान, न तलवार निकालो।
जब तोप मुकाबिल हो तो अखबार निकालो॥

हानियाँ

कुछ समाचार पत्रों के पूंजीपति मालिक समाचार पत्रों के माध्यम से अपने स्वार्थों को प्रश्रय देते हैं। कुछ समाचार-पत्र साम्प्रदायिक होने के कारण फूट डालते हैं और जनता की विचार-धारा को संकुचित करके उन्हें गलत मार्ग पर भी प्रेरित कर देते हैं, पर ऐसे पत्र बहुत कम हैं।

वस्तुतः समाचार-पत्रों के प्रकाशन में जनहित और राष्ट्रहित का ध्यान ही सर्वोपरि होना चाहिए; तभी वे सच्चे अर्थों में जन जागरण के अग्रदूत कहला सकते हैं।

—o—

आकाशवाणी (रेडियो)

प्रस्तावना

मनुष्य की बुद्धि का पार किसने पाया है? प्रारम्भ से ही मनुष्य अपने जीवन को सुखी और आनन्दमय बनाने के लिए सतत प्रयत्नशील रहा है। आज हमें जो सौ-सौ सुख सुविधाएं प्राप्त हो रही हैं, वे मनुष्य की बुद्धि का ही परिणाम है। आज मनुष्य इतने सुख पा रहा है कि पृथ्वी पर स्वर्ग की कल्पना साकार हो गई है। विज्ञान के नित्य नवीन आविष्कारों से मानव ने जिस उन्नति को प्राप्त किया है, उसे देखकर आश्चर्य होता है। मनोरंजन और ज्ञान

के अनेक साधनों का आविष्कार भी विज्ञान की देन है। मनोरंजन के अनेक साधनों में रेडियो (आकाशवाणी) भी एक प्रमुख साधन है।

रेडियो का आविष्कार

वैज्ञानिक युग के महान् आविष्कार वायरलैस और रेडियो के आविष्कार का श्रेय इंग्लैंड के प्रसिद्ध वैज्ञानिक मारकोनी को है। इसके लिए बड़े-बड़े नगरों में ध्वनि प्रसारण केन्द्र स्थापित किए जाते हैं। जहाँ से बिजली के माध्यम से नाना प्रकार के संगीत, वाद्य, समाचार आदि को ध्वनि-प्रसारक यंत्र द्वारा आकाश में फैलाया जाता है। आकाश में फैली हुई ध्वनि तरंगों को घरों में लगा रेडियो सैट पकड़ लेता है।

रेडियो का चमत्कार

आज हम इच्छानुसार किसी भी स्थान का कार्यक्रम एक ही रेडियो पर सुन सकते हैं। उसका कारण यह है कि रेडियो में ऐसे बल्ब लगे होते हैं, जो जिस मीटर पर जो भी कार्यक्रम होता है, उसे उसी संख्या के अनुसार प्रसारित कर सकते हैं। इसी प्रकार कुछ रेडियो जो निश्चित स्थानों के हैं, उनसे केवल उन्हीं स्थान के कार्यक्रम ही सुने जा सकते हैं और कुछ रेडियो विश्व के किसी भी स्थान पर होने वाले कार्यक्रम को सुना सकते हैं।

लाभ

रेडियो के आविष्कार द्वारा आज विश्व के सुदूरवर्ती राष्ट्र एक दूसरे के इतने समीप आ गए हैं कि तत्क्षण एक-दूसरे के दुख-सुख में अपना हर्ष और विषाद प्रकट कर सकते हैं। विश्व बन्धुत्व और सामाजिक एकता की माला में राष्ट्र-कुसुमों को पिरो देना रेडियो की ही देन है। भारत में गाँधी जी की और अमेरिका में राष्ट्रपति कैनेडी की हत्या हुई और उसी क्षण समस्त विश्व की आँखों में आँसू झलक आए। ईरान में खुमैनी का कट्टर साम्प्रदायिक शासन नित्य पचासों लोगों को गोली मार रहा है, अफगानिस्तान में रूसी फौजें उतर गई हैं,पोलैंड में आपत्काल की घोषणा हो गई है, रूस में सखारोव ने अनशन कर दिया है, पंजाब में उग्रवादी अकाली जरनैलसिंह भिंडराँवाले के अनुयायी निरपराध निरीह हिन्दुओं की नित्य प्रति हत्या कर रहे हैं, धर्म स्थानों को अपवित्र

और नष्ट कर रहे हैं, आदि समाचारों को इतनी शीघ्रता से विश्व में प्रचारित करने का एक-मात्र साधन रेडियो ही है। विश्व की क्षण-प्रतिक्षण की घटनाओं का लेखा-जोखा रेडियो के माध्यम से सभी देशों को शीघ्रता से प्राप्त हो जाता है।

रेडियो ज्ञान वर्द्धन, मनोरंजन और नवीनतम समाचारों के जानने का श्रेष्ठ साधन है। दिन भर परिश्रम करके व्यक्ति शारीरिक और मानसिक थकान अनुभव करता है, सहसा उसके कानों में जब रेडियो से प्रसारित कोई मधुर गीत पड़ता है तो उसकी सारी थकान दूर हो जाती है। उसका जीवन सरस और मधुर हो जाता है। रेडियो से गीत, नाटक, प्रहसन, आलोचना, कहानी; समाचार, कृषि तथा ऋतु सम्बन्धी जानकारी आदि सभी प्रकार के कार्यक्रम प्रसारित होते हैं। इतना ही नहीं महिलाओं, बच्चों, युवकों तथा सामाजिक और राष्ट्रीय पर्वों सम्बन्धी कार्यक्रम भी इससे प्रसारित होते हैं। भारत और विभिन्न देशों में होने वाले हॉकी तथा क्रिकेट के मैचों का आँखों देखा हाल खेल-प्रेमी बड़े चाव से रेडियो से ही सुनते हैं। आज व्यापारिक विज्ञापन का साधन भी रेडियो बन चुका है। इससे एक ओर मनोरंजन तथा ज्ञान वृद्धि होती है तो दूसरी ओर कला का प्रसार और विकास भी होता है; साथ ही देश की विविधता में भी एकता की भावना की वृद्धि भी होती है।

रेडियो का भविष्य

रेडियो की सीमा यहीं समाप्त नहीं हो जाती है। विज्ञान के इस चमत्कार का एक और आश्चर्यजनक रूप है—टेलीविजन या दूरदर्शन। इसके द्वारा हम बोलने वाले की आकृति को भी देख सकते हैं। यह प्रयोग सफल सिद्ध हो चुका है, इतना ही नहीं उसने तो आकाशवाणी को भी पीछे छोड़ दिया है। फिर भी रेडियो की उपयोगिता में किसी को सन्देश नहीं, क्यों कि उसका क्षेत्र दूरदर्शन की अपेक्षा अधिक विस्तृत तथा व्यापक है।

—o—

दूरदर्शन (टेलीविजन)

प्रस्तावना

मानव आदि काल से ही सुख और आनन्द का अभिलाषी रहा है। सुख-साधनों को बढ़ाने के लिए वह प्रारम्भ से ही नित्य नवीन आविष्कार कर रहा है। विज्ञान ने तो भौतिक सुविधाओं की वृद्धि में आश्चर्यजनक योग दिया है। आज का विज्ञान जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रविष्ट हो चुका है। मनोरंजन और ज्ञान के क्षेत्र में उसने जो नवीन आविष्कार किये हैं, उनमें दूरदर्शन या टेली-विजन मुख्य है। यूरोपीय देशों में इसका प्रचार कई वर्षों से है, पर भारत में कुछ ही वर्षों से इसका प्रचार हुआ है। अब तो पूरे देश में दूरदर्शन केन्द्रों का जाल सा फैल चुका है।

महाभारत में लिखा है कि कौरवों और पाँडवों के युद्ध के अवसर पर उसकी समस्त घटनाओं और संवादों को संजय ने अपनी दिव्य दृष्टि से देखकर हस्तिनापुर में बैठे ही महाराज धृतराष्ट्र को सुनाया था। सम्भवतः दूरदर्शन का पहला रूप वही था। आधुनिक युग में टेलीविजन के सर्वप्रथम निर्माण का श्रेय स्काटलेंड के श्री बेयर्ड को दिया जाता है। उन्होंने 1926 में इसका आविष्कार किया। अब तो इसका पूर्ण विकास हो चुका है। इस वैज्ञानिक देन से मीलों दूर के दृश्य घर बैठे-बैठे देखे जा सकते हैं और शब्द व ध्वनियां सुनी जा सकती हैं। आज इसकी उपयोगिता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यूरोपीय देशों के लोग घरों में रेडियो सेट की जगह टेलीविजन सेट रखना अधिक पसन्द करते हैं। भारत के उन बड़े नगरों में जहाँ दूरदर्शन कार्यक्रम पहुँच सकता है, लोग टेलीविजन यन्त्र रखने लगे हैं। राजधानी तथा अन्य महानगरों में तो इसकी बहुतायता हो गई है। अब तो रंगीन टेलीविजन भी आ चुका है।

'टेलीविजन सेट' देखने में 'रेडियो सेट' जैसा ही होता है, परन्तु वह ऐसा सेट है, जिसमें एक पर्दा भी लगा रहता है। इस पर्दे पर आप भाषण करते हुए दूरस्थ वक्ता के और गाते हुए गायक के दर्शन कर सकते हैं तथा नाटक के अभिनय का आनन्द उठा सकते हैं। दूरदर्शन केन्द्र पर यदि कोई फिल्म चलाई जा रही हो तो पूरे चित्रपट का घर बैठे ही आनन्द प्राप्त किया जा सकता है।

टेलीविजन-स्टूडियो और कैमरा

टेलीविजन में ध्वनि और प्रकाश दोनों से सम्बन्धित प्रसारण किया जाता है। ध्वनि व्यवस्था रेडियो स्टूडियो के समान ही हो है, परन्तु दृश्य व्यवस्था, दृश्य को ग्रहण करने और प्रसारित करने की मशीनरी बहुत विशाल और अधिक पेचीदा होती है। दूरदर्शन केन्द्र में एक मंच होता है, जिस पर वक्ता, कलाकार आदि काम करते हैं, दृश्य होते हैं, 'फ्लड लाइटों' का प्रबन्ध होता है। वहाँ की व्यवस्था फिल्म स्टूडियो के समान होती है, परन्तु टेलीविजन कैमरा फिल्म के कैमरे से भिन्न होता है।

सामान्य धारणा यह है कि कैमरा वह यन्त्र है जो फोटो खींचे, परन्तु टेलीविजन कैमरा फोटो नहीं खींचता। टेलीविजन कैमरा किसी भी दृश्य को विद्युत् की तेजी-मन्दी में बदलता है। तेजी-मन्दी की तरंगें ही दृश्य का विद्युत्मय स्वरूप हैं।

इन विद्युत् तरंगों को एम्पलिफायरों द्वारा परिवर्द्धित और अधिक शक्तिशाली बनाकर ट्रांसमिटिंग एरियल द्वारा आकाश में प्रसारित किया जाता है। दृश्य की इन विद्युत् तरंगों के साथ-साथ ध्वनि की विद्युत् तरंगों का भी प्रसारण हो रहा होता है। ध्वनि की विद्युत् तरंगों का प्रसारण और उनका प्रग्रहण रेडियो जैसे ही ध्वनि के रूप में सुना जाता है।

अन्य प्रक्रिया

आकाश में गति करती हुई ये तरंगें घर में लगाए 'टेलीविजन सेट' के एरियल एंटीना पर टकराती हैं और उसे प्रभावित करती हैं। यह प्रभाव टेलीविजन सेट पर पहुँचता है। टेलीविजन सेट में एक पुर्जा होता है, जिसे 'कैथोड-रे-ट्यूब' कहते हैं। इस ट्यूब में भी एक तरफ इलैक्ट्रोन गन लगी होती है और सामने दूसरी तरफ पर्दा लगा होता है। यही वह पर्दा है, जिस पर हम उसके चित्र देखते हैं।

इलैक्ट्रोनगन द्वारा पर्दे पर "स्क्रीनिंग" की प्रक्रिया होती है, अर्थात् यह गन पर्दे पर इलैक्ट्रोन की बौछार करती है, ठीक उसी प्रकार पंक्तिवार और प्रगृहीत विद्युत तरंगों के अनुसार कम या ज्यादा होती है, और इस बौछार के अनुसार पर्दे का कोई बिन्दु कम चमकता है और कोई ज्यादा। भिन्न-भिन्न

स्थानों पर प्रकाश की भिन्न-भिन्न मात्रा पैदा होने लगती है और तब हम वही दृश्य देखने लगते हैं जो स्टूडियो के कैमरे के सामने होता है। दृश्य के सा-साथ ध्वनि भी सुनाई देती है।

उपयोगिता

दूरदर्शन या टेलीविजन श्रेष्ठ उपयोगी यन्त्र है। यह सभी जानते हैं कि कानों से सुनी हुई बात की अपेक्षा आँखों से देखी हुई घटना का प्रभाव मन पर अत्यधिक होता है। दूरदर्शन में ध्वनि के साथ ही दृश्य भी प्रत्यक्ष हो जाते हैं; अतः उसका प्रभाव दर्शकों पर अधिक होता है।

आज हम टेलीविजन पर नाटक, चल-चित्र, गीत, विविध नृत्य नेताओं के भाषण, गणतन्त्र दिवस के दृश्य, विश्व की प्रमुख घटनाएं और भी अन्य कार्य-क्रमों को देख सकते हैं। छात्रों को निभिन्न विषयों के पाठ को पढ़ाने और कृपकों को कृषि सम्बन्धी नवीनतम जानकारी टेलीविजन के माध्यम से दी जा रही है। इसी प्रकार देश-विदेश में होने वाले अनेक प्रकार के खेलों, उत्सवों आदि का सीधा प्रसारण भी दूरदर्शन पर दिखाई देने लगा है। दुर्घनाओं, तूफान, बाढ़ आदि के प्रभाव को भी दूरदर्शन से देखा जा सकता है। अब तो टेलीविजन पर विज्ञापनों का प्रसारण भी प्रारम्भ हो गया है, जिससे वस्तु निर्माताओं और उपभोक्ताओं दोनों को लाभ होता है। दूरदर्शन राष्ट्रीय एकता, समाज-सुधार का और विश्व मैत्री का उत्तम साधन बन सकता है।

दूरदर्शन का प्रचार भारत में अभी बड़े-बड़े नगरों तथा कुछ छोटे नगरों में हुआ है। वह दिन दूर नहीं जब समस्त भारत में रेडियो के समान ही इसका प्रचार व प्रसार हो जाएगा और तब जन साधारण इसके लाभों से लाभान्वित हो सकेगा।

—o—

चल-चित्र (सिनेमा)

प्रस्तावना

आज का युग विज्ञान का युग है। आज के मानव जीवन पर विज्ञान अपने पूर्ण प्रभाव के साथ छा गया है। विज्ञान के क्षेत्र में जितसे आविष्कार इस युग

में हुए हैं, उतने विश्व के इतिहास में पहले कभी नहीं हुए थे । जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जिसमें विज्ञान ने अपना प्रभाव न डाला हो । मनोरंजन के क्षेत्र में विज्ञान की सबसे बड़ी देन चल-चित्र है । यह मनोरंजन का सबसे सुन्दर, सुलभ और सस्ता साधन है ।

लोक-प्रियता

चल-चित्रों ने आज हमारे जीवन को पर्याप्त रूप में प्रभावित किया । इसकी लोक-प्रियता निरन्तर बढ़ती जा रही है । मनोरंजन का सस्ता साधन होने के कारण धनी-निर्धन और बाल-वृद्ध, युवक-युवती सभी के लिए यह मनोरंजन की एक प्रिय वस्तु बन गया है । यद्यपि इसका निर्माण रंग-मंच पर खेले जाने वाले नाटकों के अनुसार ही होता है, फिर भी अपनी स्वाभाविकता के कारण इसने आज नाट्य-कला को पछाड़ दिया है । इसलिए देश में रंग-मंचीय नाटकों का वह स्थान नहीं रहा, जो आज चल-चित्र का है । सिने-चित्रों में आकाश में गरजते मेघों की छटा, ऊँचे-ऊँचे पर्वतों और वेगवती सरिताओं के दृश्य दर्शक के सामने वास्तविक रूप में दिखाई देते हैं । हरे-भरे खेतों के दृश्य, अकाल से प्यासी मरती भूमि, आकाश में ऊंचे उड़ते वायुयान, अमीरों के वैभवशाली भवन तथा गरीब की दीपक-हीन, अन्धकारपूर्ण पर्णकुटी दर्शक के सामने अपने यथार्थ रूप में चल-चित्रों में आ खड़ी होती है ।

लाभ

चल-चित्रों ने मानव को अनेक प्रकार से लाभ पहुँचाया है । यह मनोरंजन का सुलभ साधन है । दिन भर का थका व्यक्ति अपनी आय में से थोड़े से पैसे खर्च करके तीन घण्टे तक अपना मनोरंजन कर सकता है । जब पर्दे पर घटनापूर्ण विविध दृश्यों तथा हाव-भावों से युक्त अभिनय देखा जाता है और साथ मधुर संगीत के साथ रसपूर्ण गीत सुने जाते हैं, तो दर्शक का मन एक नए लोक में पहुँच जाता है । मनुष्य अपने दिन भर के कष्टपूर्ण जीवन से कुछ देर के लिए ही सही मुक्ति पा जाता है ।

सिनेमा केवल मनोरंजन की ही वस्तु नहीं, समाज-सुधार तथा शिक्षा के क्षेत्र में भी इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है । मानव मस्तिष्क पर अमूर्त की अपेक्षा

मूर्त का अधिक प्रभाव पड़ता है। छात्रों को विद्यालय में इतिहास तथा भूगोल जैसे विषय ही बड़े रूखे लगते हैं, परन्तु चित्रपट पर ये ही विषय सरल, सुबोध तथा मनोरंजक बन जाते हैं। वृत्त (डाक्यूमेंट्री) चित्रों द्वारा कृषकों को कृषि के वैज्ञानिक उपाय बताए जा सकते हैं, जनता को सड़क पर चलने के नियम बताये जा सकते हैं, गृहणियों को शिशुपालन तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी बातें सिखाई जा सकती हैं। इनसे विभिन्न प्रान्तों की प्रथाओं, तीज-त्यौहारों की भी सुन्दर जानकारी हो सकती है।

समाज-सुधार के क्षेत्र में तो सिनेमा एक बहुत ही उपयोगी वस्तु सिद्ध हो सकता है। विधवा-विवाह, दहेज प्रथा का अभिशाप, अस्पृश्वता, अशिक्षा, जाति-भेद आदि विषयों को लेकर बनाए गए चित्रों ने समाज के पुराने विचारों की जड़ें हिला दी हैं। कुछ चित्रों ने मन्त्रियों और विधायकों के भ्रष्टाचार, स्वार्थ और अवसरवादित का अच्छा भंडाफोड़ किया है। समाज-सुधार की कोई भी समस्या इसके द्वारा जितनी सरलता से सुलझ सकती है, उतनी किसी अन्य उपाय से नहीं। इसी प्रकार व्यापार के प्रचार की दृष्टि से भी चित्र-पट का अपना विशेष स्थान है। सिनेमा में दिया गया किसी वस्तु का विज्ञापन एक साथ ही सैकड़ों दर्शकों की आँखों के सामने आता है, जिससे उस वस्तु का प्रचार होकर उसकी बिक्री बढ़ती है।

हानि

सिनेमा से समाज को जहाँ अनेक लाभ होते हैं, वहाँ इसकी हानियाँ भी कम नहीं हैं। इससे दर्शकों के स्वास्थ्य और धन की हानि तो होती ही है; किन्तु सबसे अधिक दुष्प्रभाव इसका चरित्र पर पड़ रहा है। चल चित्रों से अश्लील और कामोत्तेजक चित्रों के कारण आज नवयुवक समाज का ढाँचा बिल्कुल ही हिल गया है। सिनेमा के भद्दे चित्रों, गदे गानों, नग्न प्रदर्शनों, तड़क भड़क वाली वेषभूषा, मार-धाड़, खिचड़ी भाषा आदि का भी समाज पर बहुत ही दूषित प्रभाव पड़ रहा है। चोरी, हत्या, लूट-पाट वाले चित्रों से छात्रों व तरुणों का चरित्र गिर रहा है। चलचित्र निर्माता धन कमाने के लालच में तथा कथित 'हिट' 'बाक्स आफिस' और उद्देश्यहीन चित्रों का निर्माण करके राष्ट्र के लिए विष की बेल बो रहें हैं।

उपसंहार

चल-चित्र जनता के विचारों पर प्रभाव डालता है। अतः इसका उपयोग राष्ट्र-निर्माण की दृष्टि से ही होना चाहिए। आज ऐसे चित्रों की आवश्यकता अधिक है, जो स्वस्थ मनोरंजन दें और जिनसे नागरिकों में श्रेष्ठ भावनाएं जगे।

—०—

विज्ञान : वरदान या अभिशाप

प्रस्तावना

वर्तमान युग विज्ञान का युग है। आज मानव-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञान का प्रभाव देखा जा सकता है। विज्ञान ने मनुष्य के लिए सैंकड़ों नये-नये आविष्कार देकर जीवन को अधिक सुखी बनाया है और इससे विकास की गति भी तीव्र हो गई है। यों तो रामायण और महाभारत में भी अनेक दिव्य अस्त्रों और वैज्ञानिक चमत्कारों का वर्णन मिलता है, पर उस समय के समस्त आविष्कार ऐसे लुप्त हो गए हैं, मानों उनका कभी कोई अस्तित्व ही नहीं था। वर्तमान विज्ञान का इतिहास दो-ढाई सौ वर्षों से अधिक का नहीं है, पर इतने अल्प समय में इसने भौतिक सुख और ऐश्वर्य वृद्धि में अत्यधिक योग दिया है। विज्ञान आज भी नवीन से नवीन उपयोगी आविष्कारों के करने में संलग्न है।

वरदान

यदि वैज्ञानिक विकास के लाभकारी पक्ष को देखें तो निःसंकोच इस बात को सभी स्वीकार करेंगे कि इसकी सहायता से मनुष्य ने अपनी समृद्धि कई गुणा बढ़ा ली है। भाप, बिजली तथा अणु-शक्ति को वश में करके मनुष्य ने अपनी प्रगति को पंख लगा दिए हैं। इससे बड़े-बड़े कल-कारखाने अधिक मात्रा में उत्पादन करते हैं, जिनसे करोड़ों मनुष्यों व अनेकों देशों की आर्थिक स्थिति सुधरी है। आज विज्ञान हमारे जीवन में इतना घुल-मिल गया है कि उसके बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। विज्ञान ने समय और स्थान की दूरी को मिटा दिया है। इसकी कृपा से महीनों का काम दिनों में और दिनों का घण्टों में किया जा सकता है। इसकी सहायता से मानव चन्द्रतल पर

पदार्पण कर चुका है। समुद्र तल के तथा अन्तरिक्ष के ग्रहों, नक्षत्रों के रहस्य को भी विज्ञान ने खोल दिया है। रेल, मोटर, हवाई जहाजों ने यात्रा को सुगम बना दिया है। टेलीफोन, रेडियो, टेलीविजन आदि से संवाद-प्रेषण में शीघ्रता तथा मनोरंजन के क्षेत्र में सुलभता प्राप्त हुई है। कपड़ा सीने की मशीन, हाथ पर बंधी घड़ी, समाचार भेजने के यन्त्र हमारे जीवन को कितना प्रभावित कर रहे हैं, इसे सब जानते हैं। अब तो मनुष्य को ऋतु के कोप से घबराने की भी जरूरत नहीं रही है। बिजली के प्रभाव से भयंकर गर्मी में घर को आसानी से ठण्डा और सर्दी के मौसम में गर्म किया जा सकता है। चल-चित्रों ने मनोरंजन को सर्व सुलभ बना दिया है। चिकित्सा के क्षेत्र में भी विज्ञान ने असीम प्रगति की है। इससे अनेक असाध्य रोगों पर विजय प्राप्त हो गई है। शल्य क्रिया के द्वारा हृदय बदला जा सकता है और सद्यःमृत व्यक्ति की आँखें अन्धे को लगाकर उसे भी दृष्टि मिल रही है।

विज्ञान ने मनुष्य के शारीरिक श्रम को भी घटा दिया है। पहले जिस काम को पूरा करने के लिए उसे कई दिन जी तोड़ परिश्रम करना होता था, उसी काम को वह वैज्ञानिक यन्त्रों की सहायता से थोड़े से समय में पूरा कर लेता है। आज यन्त्रों की सहायता से मनुष्य खेतों में अधिक अन्न उपजाता है। इसी प्रकार देश की खाद्य-समस्या का समाधान करने में विज्ञान ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। जापान आदि देशों में रोबोट (यन्त्र मानव) कई मनुष्यों का काम कर उत्पादन की गति को तीव्र कर रहे हैं। उपग्रहों के आविष्कारों से प्राकृतिक सम्पत्ति के दोहन और संवाद-प्रेषण में सुगमता आई है। कम्प्यूटरों (संगणक यन्त्रों) की सहायता से आज कार्य की गति तीव्र हुई है और उसमें पूर्णता आई है।

अभिशाप

विज्ञान वरदान होने के साथ ही अभिशाप भी है। विज्ञान ने कितने विनाशकारी शस्त्र दिए हैं, इसका पता किसी सीमा तक 1945 के द्वितीय महायुद्ध के जापान के हीरोशिमा तथा नागासाकी पर गिराए गए परमाणु बमों से पता चलता है। उनके विस्फोट से उन नगरों का नामोनिशान मिट गया। पल भर में लाखों आदमी, पेड़-पत्ते सब जलकर भस्म हो गए। लोहे के मोटे-

मोटे स्तम्भ तथा शिलाएं पिघलकर लावा बन गईं। विज्ञान ने इतने भयंकर परमाणु बम तथा हाइड्रोजन बमों का निर्माण कर लिया है कि कुल पांच बम इस सृष्टि को मिटाने में सक्षम हैं। बड़े राष्ट्रों के पास उनके भंडार हैं। शत्रु को नीचा दिखाने के लिए बड़े राष्ट्रों ने जहरीली गैसों का भी निर्माण किया है। शत्रु-सेना की ओर यह गैस छोड़ी जाएगी और इसकी एक साँस लेते ही सैकड़ों सैनिक काल के ग्रास बन जायेंगे। इसके अलावा कुछ विनाशक रसायन भी तैयार किए गए हैं जो शत्रु देश में महामारी फैला सकते हैं, उस देश की फसल तथा वातावरण को विषाक्त बना सकते हैं, जिससे लोग अधिक संख्या में मर जायेंगे। अब तो अन्तरिक्ष युद्ध का भय भी विज्ञान के कारण बढ़ गया है। इसके कारण आज मनुष्य भयभीत है।

उपसंहार

हमें प्रयास करना है कि दुनिया की दशा पुनः हिरोशिम और नागासाकी जैसी न हो। इसके लिए हमें मानव में आध्यात्मिक गुणों का विकास करना होगा। जो आनन्द त्याग में है, किसी की भलाई में है, वह स्वार्थपूर्ण सुख में नहीं मिलता। संसार का प्रत्येक मत या धर्म मानव कल्याण को सर्वोपरि मानता है। हम पवित्र स्थानों पर शान्ति और कल्याण के लिए दौड़ते हैं, किन्तु मन में बैठे चोर को नहीं निकालते। विज्ञान का जन्म सृष्टि के विकास के लिए हुआ है, विनाश के लिए नहीं। यदि हम पुनः सत्य, न्याय, सहानुभूति, संवेदना, प्रेम आदि दिव्य भावनाओं के साथ विज्ञान का समन्वय कर सकें तो वह मानवता तथा विश्व के लिए अधिक कल्याणकारी सिद्ध हो सकेगा। अन्यथा एक दिन मानव-सभ्यता सदा के लिए नष्ट हो जायेगी। अतः विज्ञान को लोक मंगलकारी कार्यों में ही लगाना चाहिए, मानव के विनाश में नहीं।

—o—

प्रातः कालीन भ्रमण

प्रस्तावना

"पहला सुख नीरोगी काया", इस उक्ति के अनुसार शरीर का नीरोग व स्वस्थ रहना ही सबसे बड़ा सुख है, क्योंकि स्वस्थ शरीर से ही व्यक्ति सभी प्रकार के कर्त्तव्यों का निर्वाह कर सकता है और आनन्द भी पा सकता है। जो

व्यक्ति स्वस्थ और नीरोग रहते हैं, वे स्वभाव से प्रसन्न देखे जाते हैं और उनका मन भी उद्यम करने में लगता है। इसके विपरीत जो रोगी या अस्वस्थ रहते हैं, उनका स्वभाव भी चिड़चिड़ा हो जाता है और मन भी काम करने में नहीं लगता। शरीर को नीरोग व स्वस्थ रखने का सबसे अमूल्य सरल और उपयोगी साधन है—प्रातः भ्रमण। प्रातःकालीन वातावरण में जो रमणीयता है, वह अतुलनीय है। मनुष्य के लिए वह अमृत का काम करता है। साथ ही प्रातः भ्रमण स्वयं में एक व्यायाम भी है।

प्रकृति-नटी का श्रेष्ठतम रहस्य उषा काल में ही प्रकट होता है। उस रहस्य का आनन्द पाने का सौभाग्य प्रातःभ्रमण के व्यसनियों को ही मिल सकता है। देर तक सोते रहने वाले क्या जान सकते हैं कि प्रातः उषा अपने सुनहरे आँचल से आकाश के ओर-छोर को कैसे स्वर्णाभ बना देती है? मलयानिल किस प्रकार अद्भुत आनन्द प्रदान करता है और कैसे पत्तों में सिहरन उत्पन्न कर देता है?

आनन्द का वायुमण्डल

प्रातः कालीन भ्रमण वास्तव में उपयोगी और आनन्ददायक होता है। प्रातः मन्द-मन्द शीतल वायु चलती है; उषा का उदय हो रहा होता है; पक्षी कल-रव करते हैं, फूल खिल उठते हैं, उन पर भौंरे गूंजने लगते हैं। इस वातावरण में भ्रमण से शरीर को स्फूर्ति, शान्ति और आनन्द मिलता है। गर्मियों में लग-भग चार-पाँच बजे और सर्दियों में पाँच-छह बजे का समय प्रातःकाशीन भ्रमण के लिए उपयुक्त है।

प्रातः भ्रमण कैसे करें?

प्रातः भ्रमण सदा किसी रमणीय स्थान पर करना चाहिए, ताकि चित्त प्रसन्न रहे। पहाड़ी स्थान की ओर घूमने जाना, सुन्दर बगीचे में घूमना, जहाँ रंग-बिरंगे फूल खिल रहे हों या किसी नदी या झील के किनारे घूमना श्रेष्ठ रहता है, क्योंकि जितनी स्वच्छ और मस्त हवा इन स्थानों पर मिलती है, अन्यत्र उसका मिलना दुर्लभ है। आजकल बड़े-बड़े नगरों में जहाँ हरियाली, नदी व झील का मिलना कठिन है, वहाँ खुली चौड़ी सड़क पर, जिसके दोनों ओर पेड़ लगे हों घूमना उत्तम है। प्रातः भ्रमण के समय वस्त्र एकदम चुस्त न

पहनें। अत्यधिक चुस्त कपड़े नुकसान देते हैं। अब सैर करने निकल पड़िए; परन्तु आपका मन किसी प्रकार की चिन्ता में न उलझा हो, वरना सब व्यर्थ है। चिंता चिता से बढ़कर होती है। सैर में यदि कोई मित्र भागीदार रहे, जिसके साथ आप निश्चित होकर, खुलकर हंस सकें तो अच्छा है। इससे फेफड़ों को शुद्ध वायु मिलेगी तथा वे बलशाली बनेंगे। भ्रमण के लिए चलते समय कभी कमर झुकाकर न चलें, बल्कि सीना तानकर चलें, ताकि शरीर में कुछ गर्मी पैदा हो और साँस भी तेजी से चलें। साँस कभी भी मुँह से न लें। नाक से साँस लेना अधिक उपयोगी है।

उपयोगिता

आलस्य मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। यदि प्रात:काल आलस्य त्यागकर आप घूमने निकलेंगे तो इसके अनगिनत लाभों का कुछ ही दिनों में स्वत: अनुभव करेंगे। इस समय न तो किसी प्रकार का शोर आपकी शान्ति भंग करेगा और न ही मोटर कारों, बसों और फैक्ट्रियों का धुआँ ही आपका दम घोटेगा। प्रकृति आपका पूरी तरह साथ देगी। पक्षियों का कलवर सुनकर और नन्हें-नन्हें फूलों को खिलते देखकर मन करता है कि हम भी आकाश की ऊँचाई को छू लें। प्रात: भ्रमण में शारीरिक स्वास्थ्य लाभ ही नहीं होता, वरन् इससे मानसिक बल भी मिलता है। बुद्धि में तीव्रता आती है और चिन्तनशक्ति का विकास होता है; अन्वेषण क्षमता बढ़ती है। प्रात: भ्रमण द्वारा मनुष्य की विवेक शक्ति भी निखर उठती है।

प्रात:काल का भ्रमण एक नि:शुल्क औषध है, जिसे सृष्टि निर्माता ने समान रूप से धनी और निर्धन सबके लिए दिया है। यह स्वास्थ्य निर्माण करने का सर्वोत्तम उपाय है। इसके निरन्तर अभ्यास से निश्चित ही शरीर सुन्दर और बलिष्ठ बनता है। शरीर में स्फूर्ति भर जाती है और मन दिन भर काम में लगता है। शरीर में स्फूर्ति होगी तो आलस्य दूर भागेगा; आलस्य कोसों दूर होगा तो निश्चय ही आयु बढ़ेगी। भ्रमण द्वारा प्रकृति के प्रति अनुराग का भी संचार होता है। भला सुन्दर खिले फूलों को देखकर उनकी ओर किसका मन आकर्षित न होगा ?

उपसंहार

एक विचारक ने कहा है "Early to bed and eraly to rise, makes

a man healthy, weathy, and wise" अर्थात् जल्दी सोकर उठने वाला व्यक्ति स्वस्थ्य, सम्पन्न व बुद्धिमान् होता है। प्रातः शीघ्र उठने पर शौचादि से निवृत्त होकर भ्रमण किया जा सकता है। महात्मा गाँधी जी ने अपनी आत्म-कथा में लिखा है कि उन्होंने किसी पुस्तक में प्रातःभ्रमण के लाभ पढ़कर नियमित रूप से प्रातः व सायंकाल घूमना प्रारम्भ कर दिया। इससे व्यायाम न करने और खेल न खेलने के अभाव में भी उनका स्वास्थ्य बना रहा।

अतः शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक विकास के अभिलाषियों को प्रातः भ्रमण अवश्य करना चाहिए।

—o—

स्वास्थ्य-रक्षा

प्रस्तावना

वैज्ञानिक चरमोत्कर्ष के आधुनिक युग में मनुष्य जीवन को सुविधा पूर्ण बनाने वाले नये-नये साधनों के निर्माण में व्यस्त है; पर कभी उसने सोचा है कि इन सभी साधनों से अधिक उपयोगी और अनिवार्य साधन कौन-सा है? जिसके अभाव में इन सभी साधनों का निर्माण तथा इन साधनों से प्राप्त होने वाले सुख-भोग भोगना असम्भव है। यह सर्वाधिक उपयोगी साधन है—"हमारा शरीर।" शेष सभी साधनों का उपयोग तभी सम्भव है, जबकि शरीर स्वस्थ्य हो। शरीर की स्वस्थता निर्भर करती है—स्वास्थ्य-रक्षा पर। महाकवि कालि-दास के अनुसार—'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्; अर्थात् संसार में कर्त्तव्य-पालन के लिए पहला साधन (स्वस्थ) शरीर ही है।

स्वास्थ्य-रक्षा आवश्यक

अंग्रेजी में कहावत है Health is wealth (अर्थात् स्वास्थ्य ही धन है) शरीर ही यदि स्वस्थ नहीं तो स्वस्थ मन की कल्पना व्यर्थ है। अस्वस्थ मन अस्वस्थ विचारों का आश्रयस्थल है जो मनुष्य को अविवेकी, अकर्मण्य, क्रोधी और विचार शून्य कर देता है। तभी तो कहा गया है—'पहला सुख नीरोगी काया' अर्थात् सबसे बड़ा सुख स्वस्थ शरीर है। आत्मा की पवित्रता शुद्धता एवं स्वच्छता उसके निवास (शरीर) की स्वस्थता और स्वच्छता पर निर्भर

करती है; अतः उसे स्वच्छ और शुद्ध रखना अत्यावश्यक है। स्वास्थ्य रक्षा के
प्रमुख साधन हैं—व्यायाम, संतुलित और नियमित भोजन, स्वच्छता, संयमपूर्ण
जीवन तथा ब्रह्मचर्य पालन।

व्यायाम

व्यायाम स्वास्थ रक्षा का प्रथम और प्रमुख साधन है। जिस प्रकार किसी
मशीन से बहुत समय तक काम न लेने से उसमें जंग लग जाता है और वह
उपयोगी नहीं रह जाती, ठीक उसी प्रकार शरीर रूपी यंत्र भी काम न लेने पर
अनुपयोगी हो जाता है। इस यंत्र को आजीवन उपयोगी रखने का मुख्य साधन
है—व्यायाम। व्यायाम द्वारा शरीर में रक्त-संचार होता है, मांसपेशियों में
बल आता है और इन्द्रियाँ शक्ति-सम्पन्न होती हैं। शरीर की शिथिलता, मन
और मस्तिष्क की निष्क्रियता दूर होती है, शरीर सुगठित होता है, बुद्धि का
विकास होता और मन पर संयम रहता है।

व्यायाम नित्य और नियमित रूप से करना चाहिए। व्यायाम की मात्रा
धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिए और थकान अनुभव होते ही छोड़ देना चाहिए।
भोजन के पहले या एकदम बाद भी व्यायाम वर्जित है। ब्राह्ममुहूर्त या प्रातः
काल में शुद्ध और खुली हवा में व्यायाम करना अत्यन्त लाभकारी होता है;
व्यायाम के पश्चात् स्नान अनिवार्य है।

स्वच्छता

स्वास्थ्य रक्षा का दूसरा नियम है—स्वच्छता। शुद्ध और स्वच्छ वायु का
सेवन आयु वृद्धि की औषध है। शारीरिक स्वच्छता, परिधानों की (वस्त्रों की)
स्वच्छता; घर और आस-पास के वातावरण की स्वच्छता तथा पीने के जल की
स्वच्छता, स्वास्थ्य रक्षा के लिए अनिवार्य है। अस्वच्छ होने की अवस्था में
पानी को पहले उबालकर स्वच्छ कर लेना चाहिए और तभी इसका सेवन
करना चाहिए।

शुद्ध भोजन

स्वास्थ्य रक्षा का तीसरा नियम है—पौष्टिक, संतुलित एवं स्वास्थ्यकर
भोजन। भूख लगने पर तथा नियत समय पर ही भोजन करना चाहिए।
भोजन सादा, सुपाच्य तथा पौष्टिक होना चाहिए। शारीरिक प्रकृति और ऋतु

के अनुसार ही भोजन करना चाहिए। घी, दूध, फल, सब्जियों आदि का प्रयोग भोजन में पौष्टिकता लाता है। गरिष्ठ और तले हुए पदार्थों का उपयोग कम कम करना चाहिए। शराब, अफीम, चरस, गाँजा, आदि नशीले द्रव्यों से बच-कर रहना चाहिए। वे स्वास्थ्य के शत्रु हैं।

निद्रा

स्वास्थ्य रक्षा का चौथा नियम है—निद्रा। गहरी और शान्त निद्रा से शरीर की थकावट दूर होती है, मस्तिष्क स्वस्थ रहता है और चेतना जागृत होती है। निद्रा तो स्वास्थ्य की सहचरी है, अतः सदाचारी और संतोषी व्यक्ति को स्वयं ही समय पर निद्रा आ जाती है। महाकवि 'प्रसाद' निद्रा को अत्यन्त प्यारी वस्तु बताते हुए लिखते हैं 'घोर दुख के समय भी मनुष्य को यही सुख देती है।' शरीर स्वस्थ हो तो काँटों पर भी नींद आ जाती है, वरना तो फूलों की सेज भी सुख नहीं दे पाती।

ब्रह्मचर्य

स्वास्थ्य रक्षा का पाँचवाँ मूल मंत्र है—ब्रह्मचर्य। अर्थात् मन, वचन और कर्म से समस्त इन्द्रियों का संयम, जो स्वास्थ्य रक्षा का मूल आधार है। अथर्व वेद के अनुसार ब्रह्मचर्य रूपी तपोबल से ही विद्वान् लोगों ने मृत्यु को जीता है:—

"ब्रह्मचर्येण तपसा देवाः मृत्यु मुपाघ्नत।"

मन और इन्द्रियों के संयम तथा वीर्यरक्षा से स्वास्थ्य बढ़ता है। अतः ब्रह्म-चर्य का पालन करना उचित है।

उपसंहार

"स्वस्थ्य शरीर में ही स्वस्थ मन का निवास होता है;" एक जग प्रसिद्ध कहावत है। यदि हम स्वस्थ रहेंगे तो हमारा चित्त सदा प्रफुल्लित रहेगा, तन में स्फूर्ति और मन में उत्साह और आत्मविश्वास रहेगा। इस प्रकार हम न केवल अपना जीवन सुखी बनायेंगे, अपितु अपने राष्ट्र को शक्तिशाली, उन्नत और समृद्ध बनाने में भी अपना सहयोग दे सकेंगे। अतः अपने स्वास्थ्य की रक्षा का सदैव ध्यान रखना चाहिए।

—o—

चाँदनी रात में नौका विहार

प्रस्तावना

सूर्य अपनी किरणों को समेट चुका था । रात्रि की कालिमा धीरे-धीरे बढ़ने लगी थी । चाँद पेड़ों की झुरमुटों से झाँक रहा था । उसकी धवल किरणें पत्तियों से छन-छनकर भूमि पर पड़ रही थीं ।

मैं अपने कुछ सैलानी मित्रों के साथ होटल के बरामदे में बैठकर बातचीत में मग्न था । तभी एक मित्र ने कहा—अरे ! क्या बातें ही करते रहोगे ? देखो, आज कितना सुरम्य वातावरण है ! चन्द्र की शीतल व निर्मल किरणें हृदय को कितना आनन्द दे रही हैं ? क्यों न इस समय नौका-विहार किया जाए ? सभी मित्रों को यह प्रस्ताव बहुत ही अच्छा लगा और कुछ ही देर बाद हम नैनीताल की सुन्दर झील में नौका विहार के लिए चल पड़े । नौका किराये पर ली और उसका लंगर खोल दिया । नौका मन्द-मन्द गति से पाल रूपी पंख फैलाकर हंसनी के समान जल पर तैरने लगी ।

प्रकृति की शोभा

उस दिन पूर्णिमा थी । चन्द्र अपने पूर्ण यौवन पर था । उसकी अमल-धवल किरणें दशों दिशाओं में फैल रही थीं । अमल-धवल चन्द्र-प्रकाश में भूमि ऐसे लग रही थी, मानो वह चाँदी से मढ़ गई हो । गुप्त जी के शब्दों में—

चारु चन्द्र की चंचल किरणें खेल रही हैं जल थल पर ।
स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है अवनि औ अम्बर तल पर ।।
पुलक प्रकट करती है धरती हरित तृणों की नोकों से ।
मानों झूम रहे हों तरु भी मन्द पवन के झोंकों से ।।

उस समय ताल में पड़ा चन्द्र का प्रतिबिम्ब ऐसा लग रहा था; मानों चन्द्र उसके शीतल जल में स्नान कर रहा हो। कहीं रात्रि की नीरवता को भंग करती हुई किसी पक्षी की आवाज गूंज उठती थी । वायु मन्द-मन्द चल रही थी । वातावरण में अपूर्व शांति थी । हाँ, पतवार की छप-छप उसको भंग कर देती थी । मैंने सोचा इस वातावरण में यदि कोई गीत गाए तो कितना अच्छा हो ! हमारा मित्र सुभाष अच्छा गायक था, मैंने उसे एक गीत गाने को कहा ।

सुभाष का कंठ अत्यन्त मधुर व सुरीला था। उसने सुमित्रानन्दन पंत का "भारत माता ग्राम वासिनी" गीत गाना प्रारम्भ किया। गीत के स्वरों से, स्वरों के उतार-चढ़ाव से वातावरण मादकता से भर गया। चारों ओर निर्मल चाँदनी, ऊपर चन्द्र तारों से भरा आकाश, नीचे सरोवर का स्वच्छ जल, नौका की मन्थर गति और सुभाष का मधुर गीत, सबने मिलकर उस समय एक स्वर्गीय आनन्द की सृष्टि कर दी।

आकाश का सौन्दर्य

उस समय आकाश ऐसा लग रहा था, मानो वह एक स्वच्छ सरोवर हो और चाँद उसमें एक सुन्दर श्वेत कमल हो और तारे असंख्य कुमुद हों। चन्द्र का कलंक ऐसा लग रहा था, मानो मधुप मत्त होकर अरविन्द का मधुर-रसपान कर रहे हों। आकाश में कभी बादल का कोई श्वेत खण्ड दिखाई देता तो ऐसा लगता जैसे कोई सुन्दरी अपने घूंघट को उठाकर निहार रही हो। अहा! वह चित्रकार कितना महान् है, जो इस प्रकार के रम्य चित्रों रचना करता है। उस चित्रकार की महत्ता के प्रति मेरा मस्तक स्वाभाविक ही नत हो गया।

उपसंहार

सरोवर की चंचल लहरों के साथ हमारी नौका बहुत दूर तक निकल चुकी थी। नदी का दूसरा तट पास ही आ रहा था। तट पर लगे फूलों की सुगन्ध से वातावरण सुगन्ध-परिपूर्ण हो रहा था। दूर पर्वत माला पर खड़े वृक्षों की शोभा भी उस चाँदनी रात में अद्भुत दृश्य उपस्थित कर रही थी। विरही चकवे का स्वर कभी-कभी उस शान्त वातावरण में एक वेदना-सी भर देता था। रात्रि जैसे-जैसे बढ़ रही थी, चाँद की चाँदनी वैसे-वैसे अधिक चमक रही थी, इस प्रकार प्रकृति की उस शोभा में नौका-विहार करते हुए बहुत समय बीत चुका था। समय कब बीत गया, पता ही न चला। अब हमने अपनी नौका को विपरीत दिशा में मोड़ दिया और वह धीरे-धीरे तट की ओर आने लगी। कुछ ही देर में नौका सरोवर के किनारे लग चुकी थी। बहुत समय होने से थकावट के कारण हमारी पलक, नींद से बोझिल होने लगी थीं। जब हम नौका से उतरे और प्रकृति की उस सुन्दरता को मन में संजोए अपने होटल लौट आए।

आज भी जब कभी मैं अपने जीवन के बीते क्षणों की याद करता हूं तो मेरी दृष्टि विशेष रूप से जीवन के उस मोहक बिन्दु पर जा टिकती है, जिसकी स्मृति उस रात की नौका-विहार से जुड़ी हुइ है ।

—o—

अनुशासन

प्रस्तावना

आज के युग में छात्र वर्ग और समाज के जीवन को लेकर चलने वाला सर्वाधिक चर्चित विषय है—अनुशासन । व्यक्ति, समाज व राष्ट्र की उन्नति का मूलाधार शासन ही है । आपत् काल के दिनों में तो यह वाक्य सर्वत्र लिखा मिलता था, 'अनुशासन ही देश को महान् बनाता है ।'

अनुशासन का आशय

'अनु' पूर्वक 'शास्' धातु से अनुशासन शब्द बना है । इसका सरल-सा अर्थ है—किसी नियम-समूह का पालन करना या गुरुजनों और पथ-प्रदर्शकों के नियंत्रण में जीवन बिताना । शास्त्रीय, सामाजिक और राष्ट्रीय व्यवस्था का पालन अनुशासन है । इसी प्रकार मन की समस्त वृत्तियों को नियंत्रण में रखना भी अनुशासन ही है । वास्तव में अनुशासन एक तत्त्व है जो जीवन के सभी क्षेत्रों को अपने में समेट लेता है । अनुशासन के दो रूप हैं—आन्तरिक अनुशासन व बाह्य अनुशासन । अपनी श्रेणी में या किसी सभा में शान्त रहना समूह में चलते हुए पंक्तिबद्ध होकर चलना, रेल या बस के लिए टिकट लेते हुए पंक्ति में रहना, राज्य के नियमों का पालन करना आदि अनुशासन के बाहरी रूप हैं । अपनी इन्द्रियों व मन को नियन्त्रण में रखना आन्तरिक अनुशासन होता है ।

अनुशासन के लाभ

आज समाज व राष्ट्र को अनुशासन की सर्वाधिक आवश्यकता है । अनुशासन से जीवन व्यवस्थित होता है । इससे नियमित कार्य करने की प्रेरणा मिलती है । अनुशासन ही व्यक्ति में शिष्टता और विनय लाता है । इसी से व्यक्ति अपनी

शक्ति का दुरुपयोग नहीं होने देता तथा अपने कर्त्तव्य के प्रति अधिक जागरूक रहता है। अनुशासित व्यक्ति के प्रत्येक कार्य नियमबद्ध होते हैं। वस्तुतः जो व्यक्ति समाज या घर में, बाजार में, कार्यालय में तथा सभा आदि में वहाँ के नियमों के नियन्त्रण में चलता है, वही सुखी रहता है। अनुशासन यदि देखना हो तो सेना का देखना चाहिए। जहाँ प्रत्येक सैनिक अपने नायक की आज्ञा का पालन बड़ी तत्परता से करता है, इसी से उसे विजय-श्री प्राप्त होती है। भारत की अनेक समस्याओं में आज प्रमुख समस्या अनुशासन-हीनता ही है, यों भी कहा जा सकता है कि अनुशासन-हीनता के कारण ही अन्य समस्याएँ उठी हैं। नियम या नियन्त्रण में रहना कोई पसन्द नहीं करता। ऐसी आपा-धापी मची है कि व्यक्ति स्वयं भी गिर रहा है और राष्ट्र को भी पतन की ओर ले जा रहा है।

देश की उन्नति के लिए देशवासियों का अनुशासित होना परम आवश्यक है। अनुशासन के मामले में भारत अन्य देशों से काफी पीछे हैं। यहाँ के नागरिक, छात्र, बाबू, मजदूर सभी उद्दंड हो रहे हैं। किसी भले आदमी की पगड़ी उछालना, सम्मेलन में हुल्लड़बाजी करना और सीटी बजाना, किसी मैच में, बस में या रेल में बेटिकट घुस जाना तथा रोकने पर झगड़ा करना, स्कूलों व कॉलेजों में किसी सामान्य-सी बात को लेकर छात्रों का हड़ताल कर देना, अपने अध्यापकों का कहना न मानना व उन्हें निरादृत करना आदि अनुशासनहीनता के अनेक उदाहरण हैं। इसी प्रकार शिष्टाचार का पालन न करना, नारी वर्ग का सम्मान न करना, गुरुजनों का मान न करना, भारतीय आदर्शों का खिल्ली उड़ाना आदि बातें भी अनुशासनहीनता ही हैं, जो आज छात्रों तथा अन्य तरुणों के लिए सामान्य-सी बन गई हैं।

अनुशासनहीनता से हानि

अनुशासनहीनता का हमारे राष्ट्र के जीवन पर घातक प्रभाव पड़ रहा है लोग जरा-सी बात को लेकर झगड़ा कर बैठते हैं। छात्र जरा-सी बात पर रुष्ट होकर, बाबू लोग मामूली बात को लेकर और मजदूर सामान्य-सी माँग को लेकर प्रदर्शन, घेराव व हड़ताल कर बैठते हैं और गुस्से में सार्वजनिक सम्पत्ति को नष्ट कर देते हैं। इसका क्या दुष्परिणाम होता है ? इससे व्यक्ति समाज

और राष्ट्र की आर्थिक और नैतिक दोनों प्रकार की हानि होती है। हम जानते ही हैं कि कुछ वर्ष पूर्व देवी इन्दिरा ने अनुशासनहीनता के नाम पर ही राष्ट्र में अपात्काल की घोषणा की थी। उस समय बाहरी दृष्टि से लोगों में अनुशासन दिखाई दिया, पर क्या वह वास्तविक अनुशासन था ? नहीं, वह तो आतंक था। अनुशासन अच्छी वस्तु है, पर वह डंडे के जोर से नहीं, अपितु हृदय के अन्दर से आना चाहिए। आत्मानुशासन ही अनुशासन का श्रेष्ठ रूप है।

उपसंहार

यदि हम अपने देश की उन्नति चाहते हैं तो हमें अनुशासनहीनता को त्याग कर अनुशासन अपनाना होगा; क्योंकि अनुशासन ही देश की उन्नति की पहली सीढ़ी है। राष्ट्र का प्रत्येक व्यक्ति जब अनुशासन में रहेगा, तभी यह राष्ट्र विश्व के उन्नत राष्ट्रों की श्रेणी में गिना जाएगा।

—०—

विद्यार्थी और अनुशासन

प्रस्तावना

सृष्टि के रचियता ने जिस सृष्टि की रचना की है, वह इतनी नियम पूर्वक चलती है कि उसके एक-एक क्षण का परिवर्तन निश्चित समय पर होता है। सूर्य और चन्द्रमा का चमकना, दिन और रात का होना, पेड़-पौधों पर फल-फूल लगाना आदि। ये सब कार्य इतने नियमित और निश्चित समय पर होते हैं, जिन्हें देखकर आश्चर्य होता है। सृष्टि का समस्त कार्य एक निश्चित नियन्त्रण या 'अनुशासन' के अधीन चल रहा है। अनुशासन शब्द का अर्थ ही शासन (आदेश या नियन्त्रण) के अनुसार चलना है। अनुशासन एक व्यापक तत्त्व है, जो जीवन के सभी क्षेत्रों को अपने में समा लेता है। इसके अभाव में जीवन व्यवस्थित रीति से नहीं चल सकता। अनुशासन के दो रूप हैं—बाह्य और आन्तरिक। शास्त्रीय, सामाजिक तथा शासकीय नियमों का पालन करना, गुरुजनों के उपदेश और आदेश को मानना बाह्य अनुशासन है। मन की समस्त

वृत्तियों पर और इन्द्रियों पर नियंत्रण आन्तरिक अनुशासन है। यह अनुशासन का श्रेष्ठ रूप है। ठीक इसी प्रकार जब मनुष्य नियन्त्रित जीवन व्यतीत करता है तो दूसरों के लिए आदर्श व अनुकरणीय बन जाता है। यद्यपि जीवन में पग-पग पर अनुशासन का बड़ा भारी महत्त्व है, तथापि विद्यार्थी-जीवन में इसकी सबसे अधिक आवश्यकता होती है। विद्यार्थी को अपने भावी जीवन के निर्माण की तैयारी करनी होती है, जो बड़ी कठोर साधना है। इसके लिए विद्यार्थी को अनुशासित जीवन व्यतीत करना अनिवार्य है। अनुशासन ही विद्यार्थी-जीवन की आधारशिला है। अनुशासन में रहने वाला बालक ही देश का सभ्य नागरिक बन सकता है और वही स्वयं को, अपने परिवार को तथा स्वदेश को उन्नत बनाने में सहयोग दे सकता है।

ब्रह्मचर्य अवस्था में अनुशासन का पाठ

भारत के प्राचीन ऋषियों और आचार्यों ने जीवन को चार भागों में बाँटा था और इनमें से प्रथम ब्रह्मचर्य आश्रम को जीवन का मूल आधार माना था। इसमें विद्यार्थी भावी जीवन के निर्माण के लिए कठोर साधना करता था। गुरु का अपना चरित्र बड़ा ही प्रभावशाली और अनुकरणीय होता था। विद्यार्थी उन्हीं के संरक्षण में रहकर पूर्ण अनुशासन से जीवन व्यतीत करना सीखता था। उसका अपने आहार-विहार, परिधान, निद्रा आदि सब पर पूर्ण नियन्त्रण रहता था। बालक के मन रूपी हीरे को साधना-यन्त्र द्वारा तराशा और चमकाया जाता था, ताकि बड़ा होकर वह समाज को प्रकाश दे सके, उसे उचित मार्ग पर ले जा सके। यही कारण था कि उस समय का विद्यार्थी सच्चरित्र, गुरु में अटूट श्रद्धा रखने वाला और बड़ों की आज्ञा का पालन करने वाला होता था और अपने भावी जीवन में राष्ट्र की उन्नति में महत्त्वपूर्ण योग देता था।

अनुशासन की आवश्यकता

आज समाज का जब चारों ओर से घोर नैतिक पतन हो रहा है, उसमें भ्रष्टाचार का बोलबाला है, ऐसी दशा में आन्तरिक अनुशासन और व्यवस्था की कल्पना तभी साकार हो सकेगी, जब हमारे हृदय में परिवर्तन हो और

हृदय परिवर्तन का श्रेष्ठ संमय विद्यार्थी-जीवन है। विद्यार्थी का मन एक सुन्दर पुष्प है, जिसे साधना रूपी धूप और विचार रूपी जल देकर पूर्ण विकसित करना होता है, ताकि उसकी सुगन्ध से सारा समाज सुगंधित हो जाये। यदि यह पुष्प अनुशासनहीनता की दलदल में पड़ गया तो निश्चित ही इसकी दुर्गन्ध से सब परेशान हो उठेंगे।

आज छात्रों की अनुशासनहीनता देश के लिए एक ज्वलन्त समस्या है। विद्यालय में उद्दण्डता दिखाना, शिक्षकों का अपमान करना और परीक्षा में नकल करना और कराना; रोकने पर निरीक्षकों को पीटना या उनकी जान ले लेना; बसों, रेलों में बिना टिकट यात्रा करना, छात्राओं के साथ छेड़खानी करना उनकी अनुशासनहीनता के नमूने हैं। अतः विद्यार्थियों के चरित्र-निर्माण के लिए नैतिक शिक्षा पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। देश में वर्तमान शिक्षा-व्यवस्था त्रुटिपूर्ण है। छात्र को अपना भविष्य अंधकारमय दिखाई देता है, फलस्वरूप वह हिंसा और तोड़-फोड़ पर उतारू हो जाता है। देश के विद्यार्थी में अनुशासन की पुनः स्थापना के लिए शिक्षा-पद्धति में परिवर्तन किया जाना चाहिए, ताकि उसमें विश्वास पैदा हो और वह एक सभ्य नागरिक के रूप में समाज के सामने आये। हमारे देश में प्रजातंत्र शासन व्यवस्था है, जिसमें सत्ता प्रजा के हाथों में होती है उसे ही राष्ट्र निर्माण के लिए भावी नीतियों का निर्धारण करना है। इसके लिए अनिवार्य है कि आज का विद्यार्थी अनुशासित होकर आगे बढ़े, ताकि उसमें सच्चरित्रता, धैर्य, साहस, उत्साह, विश्वास तथा कर्त्तव्यपरायणता की भावना जागे। सहयोग की भावना भी विद्यार्थी में विकसित करनी हैं, ताकिं वह केवल निजी विकास की बात ही न सोचे, बल्कि पूरे समाज को अपने साथ लेकर आगे बढ़ने को तत्पर रहे।

सैनिक अनुशासन को सदा से ही आदर्श अनुशासन माना गया है, परन्तु उसका मूल आधार भय और दण्ड व्यवस्था होते हैं। प्रजातन्त्र की सफलता के लिए जनता में उच्च स्तर का अनुशासन होना जरूरी है। अतः विद्यार्थी-जीवन में ही व्यक्ति में उनकी नींव पड़ जानी चाहिए। छात्रों में इस अनुशासन की स्थापना भय या कठोर दण्ड व्यवस्था से नहीं, अपितु उनके हृदय में सोये हुए सद्विचारों को जगाकर की जा सकती है।

अनुशासन की क्षमता

अनुशासन जीवन को इतना आदर्श बना देता है कि अनुशासित व्यक्ति दूसरों की अपेक्षा कुछ विशेष दिखाई पड़ता है। संसार में वह कुछ विशेष कर सकने की क्षमता रखता है। उसका सब ओर सम्मान होता है तथा सफलता उसके चरण चूमती दिखाई देती है। अनुशासनहीन मनुष्य संसार में लेशमात्र भी सफल नहीं होता, बल्कि वह अपने पतन के साथ ही साथ समाज का भी विनाश करता है। अनुशासित जीवन ही वास्तविक जीवन है, अनुशासनहीनता मौत है। आज के अधिकांश छात्रों में इसका अभाव दिखाई दे रहा है। जरा-जरा-सी बात के लिए वाहनों को तोड़ना, विद्यालय भवन की हानि करना, शिक्षकों का घेराव करना, परीक्षा में नकल करना, बिना टिकट यात्रा करना, छात्राओं को अपमानित करना आदि वे अपनी शान समझते हैं। अतः उन्हें इसे त्याग कर अनुशासन में रहना ही होगा।

उपसंहार

यदि आज के छात्र, जो देश के भावी कर्णधार हैं, अपने को अनुशासित रख लेंगे तो इसमें उनका अपना भी कल्याण होगा तथा वे अपने समाज व राष्ट्र का भी कल्याण कर सकेंगे।

—o—

आदर्श विद्यार्थी

प्रस्तावना

भारत के प्राचीन मनीषियों ने जीवन को सुव्यवस्थित ढंग से चलाने के लिए उसे चार भागों में विभाजित किया था—(क) ब्रह्मचर्य आश्रम, (ख) गृहस्थ आश्रम, (ग) वानप्रस्थ आश्रम, (घ) संन्यास आश्रम। ब्रह्मचर्य आश्रम में बालक पच्चीस वर्ष की अवस्था तक ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए गुरु के संरक्षण में अपने जीवन को संवारता था। ब्रह्मचर्य-आश्रम ही विद्यार्थी-जीवन कहा जाता है। यही समय बालक के भावी जीवन की आधारशिला माना गया

है। जीवन का यह समय एक नन्हें बढ़ते हुए पौधे के समान है, जिसे चाहे जिधर मोड़ दे सकते हैं। यदि छात्र वास्तव में अपना भविष्य स्वर्णिम बनाना चाहते हैं; तो उन्हें शिक्षण काल में ही आदर्श गुणों को ग्रहण करना चाहिए।

भविष्य-निर्माण-काल

विद्यार्थी-जीवन मनुष्य के भविष्य-जीवन का निर्माण काल है। इस समय अध्ययन में लगा रहना ही वह अपना परम ध्येय मानता है, उसे किसी प्रकार की चिन्ता भी नहीं रहती। विद्यार्थी का शाब्दिक अर्थ है—विद्या का अभि-लाषी। इस समय उसका उद्देश्य मात्र विद्या प्राप्त करना ही नहीं, वरन् शारीरिक, मानसिक, आत्मिक सब प्रकार की उन्नति करना है। इन सबके लिए कठोर परिश्रम, सच्ची लगन, सच्चरित्रता तथा एकाग्रचित्तता आवश्यक है। एक आदर्श विद्यार्थी में निम्नलिखित गुण अवश्य होने चाहिए :—

सच्चरित्रता

आदर्श विद्यार्थी का चरित्र श्रेष्ठ होना चाहिए। चरित्र पर जीवन के प्रारम्भ से ही ध्यान देना जरूरी है। समाज में मनुष्य को तभी आदर मिलता है, जबकि उसका चरित्र श्रेष्ठ हो। यदि किसी मनुष्य के पास विद्या का अपार भण्डार हो, मगर चरित्र की आभा उसमें न हो तो समाज उसे सदा हेय दृष्टि से देखता है। उसे सादा जीवन और उच्च विचार वाले सिद्धान्त को सदा अपने सम्मुख रखना है। विद्यार्थी को आत्मसंयमी भी होना चाहिए। आत्मसंयम सफलता की कुंजी है। एक सुभाषित में कहा गया है कि विद्यार्थी को काम (इच्छा), क्रोध, लोभ, स्वाद (चाट आदि की लालसा), शृंगार (भड़कती वेष-भूषा और बनावट, सजावट) कौतुक (सिनेमा आदि) तथा अति निद्रा को त्याग देना चाहिए।

कामं क्रोधं तथा लोभं स्वाद शृंगार कौतुके।
अति निद्राऽति सेवा च विद्यार्थी अष्ट वर्जेत्॥

विनम्रता

"विद्या ददाति विनयम्।" विद्या मनुष्य को नम्र बनाती है, उसे झुकना सिखाती है। जब आम के पेड़ पर फल लगते हैं, तब उसकी टहनियाँ स्वतः झुक जाती हैं, इसी प्रकार विद्या व्यक्ति को विनम्र बनाती है। नम्रता से ही योग्यता

आती है। विनम्रता से व्यक्ति की प्रतिष्ठा बढ़ती है। 'लघुता से प्रभुता मिले', इसीलिए कहा गया है। आदर्श विद्यार्थी को विनम्र होना चाहिए। उसे अपने गुरु, माता, पिता और बड़ों का कहना मानना चाहिए। जो विद्यार्थी विद्यालय के नियमों का पूरा-पूरा पालन करता है तथा अपने सहपाठियों से स्नेह और सहयोग का व्यवहार करता हो, वही एक अच्छा नागरिक बनता है। अपनी गलती को स्वीकार करना और उसमें सुधार करना और गलती होने पर बड़ों के रोष के सिर झुकाकर स्वीकार करना आदर्श विद्यार्थी के आवश्यक गुण हैं।

परिश्रम

विद्या ग्रहण करना सरल काम नहीं, वरन् लोहे के चने चबाना है। आलसी और सुखार्थी को विद्या नहीं मिलती इस लिए विद्यार्थी को सदा कठोरतम परिश्रम और निरन्तर अभ्यास द्वारा विद्या ग्रहण करने के लिए तत्पर रहना चाहिए। जो विद्यार्थी अपना मन विद्या अध्ययन में ही लगायेगा, सफलता उसके चरण चूमेगी। "उद्योगिनं पुरुष सिंहमुपैति लक्ष्मीः।"

सद्गुणों को अपनाना

बुरी आदतें बुरे साथियों की संगति से पनपती हैं। यदि छात्र को सुन्दर भविष्य बनाना है तो उसे कुसंगति से दूर रहना चाहिए। अपने लिए इस संसार में सभी आते हैं, परन्तु सच्चे अर्थो में जीता वही है जो दूसरों के भले की सोचे। अतः छात्रों को अपने सहपाठियों के हित के लिए तत्पर रहना चाहिए और उनके साथ स्नेह-भाव से रहना चाहिए।

आदर्श विद्यार्थी को अहंकार से सदा बचना चाहिए। अहंकार विद्यार्थी को आगे नहीं बढ़ने देता। उसे मधुरभाषी और सत्यवादी होना जरूरी है। शिक्षा विद्यार्थी को स्वावलम्बी और तपस्वी बनाती है; उसमें धीरज पैदा करती है। समय अमूल्य धन है, वह कभी लौट कर नहीं आता, यह जानकर आदर्श छात्र समय का सदुपयोग करता है। आज का विद्यार्थी ही कल का देश का कर्णधार है, वह देश की आशा है, समस्त मानवता का उसे कल्याण करना है। इसी महान् उद्देश्य को सामने रखकर आगे बढ़ने वाला विद्यार्थी वास्तव में मानवता का सेवक होगा।

आदर्श-छात्र का कर्त्तव्य

एक आदर्श विद्यार्थी का सबसे बड़ा कर्त्तव्य विद्या ग्रहण करना ही है। उसे अपने महत्त्वपूर्ण क्षण विद्यार्जन में ही लगाने चाहिएं। पर इसका अर्थ यह भी नहीं कि वह 'किताबी कीड़ा' ही बना रहे। अवसर निकालकर छात्र को नियमित रूप से खेल या व्यायाम में भाग लना चाहिए तथा पत्र-पत्रिकाओं और श्रेष्ठ-साहित्य का अध्ययन करना चाहिए। इसमें बौद्धिक विकास के साथ ही शारीरिक विकास भी हो जाता है। अपने सभी कार्यों को नियमित समय पर नियम पूर्वक करना भी आदर्श छात्र के गुण हैं।

उपसंहार

व्यक्ति देश के साथ जुड़ा है। इसी प्रकार आज का विद्यार्थी भी देश के निर्माण कार्यों एवं प्रगति में भविष्य के उत्तरदायी नागरिक के रूप में जुड़ा है। यदि विद्यार्थी परिश्रम, अनुशासन, योग्यता, सच्चरित्रता, नम्रता आदि आदर्श गुणों को ग्रहण करके अध्ययन में रत रहेगा तो निश्चित ही वह सुनागरिक बनेगा तथा जीवन में उसे सफलता मिलेगी। अपने साथ ही वह अपने समाज और राष्ट्र का भी हित कर सकेगा।

—o—

विद्यार्थी और फैशन

प्रस्तावना

जीवन के चार आश्रमों में ब्रह्मचर्य आश्रम प्रथम है। इसे ही विद्यार्थी जीवन भी कहा जाता है। 'विद्यार्थी' शब्द का अर्थ है—विद्या प्राप्ति का अभिलाषी व्यक्ति। विद्यार्थी जीवन विद्याध्ययन, चरित्र-निर्माण तथा शारीरिक और मानसिक शक्तियों के विकास के लिए ही होता है।

विद्यार्थी का कर्त्तव्य

विद्यार्थी का मुख्य कर्त्तव्य अपनी समस्त शक्तियों और समस्त चित्तवृत्तियों को विद्याध्ययन में लगाना ही है। छात्र का कर्त्तव्य है कि वह पढ़ने के समय

एकाग्र मन से पढ़े और खेल के समय उत्साह से खेले भी। जिससे उनकी बुद्धि के साथ ही शरीर का भी विकास हो। विद्याध्ययन के काल में भौतिक सुखों की इच्छा विघ्न बनकर आती है। इसीलिए कहा गया है कि—

सुखार्थिनः कुतो विद्या कुतो विद्यार्थिनः सुखम्।
सुखार्थी चेत् त्यजेत् विद्या विद्यार्थी चेत् त्यजेत् सुखम्।

अर्थात् सुख चाहने वाले को विद्या की चाह नहीं करनी चाहिए। उसे अनेक प्रकार की इच्छाओं, स्वाद, श्रृंगार, कौतुक (तमाशा) आदि से दूर रहना चाहिए। उसे चरित्र निर्माण पर ही मुख्य ध्यान देना चाहिए, जो व्यक्ति का वास्तविक सौंदर्य होता है।

आज का विद्यार्थी

किन्तु खेद से कहना पड़ता है कि आज का विद्यार्थी चरित्र-निर्माण और स्वास्थ्य की चिन्ता नहीं करता। अब वह पूर्णतः 'सुखार्थी' हो गया है। वह अब विद्या का अर्थी—ज्ञान प्राप्ति का अभिलाषी न होकर, विद्या की "अर्थी ढोने वाला" हो गया है। विद्याध्ययन तो एक कठोर तप है, सतत साधन है, पर वह उसके वश का रह नहीं गया है। दो घण्टे भी जमकर वह पढ़ नहीं सकता। आज उसे इस बात की चिन्ता नहीं कि वह सरल रहन-सहन और उच्च विचारों वाला हो, या लोग उसे आदर्श छात्र कहें। वह तो चाहता है कि सहपाठी और अन्य व्यक्ति उसे सुन्दर और चुस्त (स्मार्ट) कहें। इसके लिए 'फैशन' की ओर भागता है।

फैशन की परिभाषा

फैशन क्या है ? यही कि पुरानी वेश-भूषा को त्यागकर नया-सा पहनावा पहनाना। नई से नई बातों को अपनाना। सजने-संवरने का नया ढंग और नई वस्तुओं को अपनाना। अपने को अन्यों से कुछ भिन्न दिखाना ही ही फैशन है। बोल-चाल, उठना-बैठना आदि में भी कुछ नवीनता—सामान्य से भिन्नता—ही फैशन बन रहा है। आज वैसे तो समाज के समस्त तरुण वर्ग पर फैशन का भूत सवार है, पर छात्र वर्ग इसका अधिक ही दीवाना हो गया है। आज के छात्रों को स्वस्थ और सच्चरित्र बनने की इतनी चिन्ता नहीं, जितनी फैशनेबुल बनने की।

नई होड़

अपने बालों को नये-से-नये ढंग से संवारने की तरह-तरह के सुगंधित तेल लगाने की; क्रीम, पाउडर व शैम्पू के प्रयोग की, बढ़िया-से-बढ़िया चमकदार और बहुमूल्य वस्त्रों की, विशेष 'काट' से बनाकर पहनने की या यूरोपीय वेष-भूषा धारण करने की छात्रों में होड़ सी लगी है। न केवल छात्र, अपितु छात्राएं भी फैशन में पीछे नहीं। वे तो फैशन की पुतली बनकर ही कालेज के अन्दर बाहर मंडराती फिरती हैं। अब तो विभिन्न फैशन के वस्त्रों के धारण के साथ ही शरीर का नग्न प्रदर्शन भी फैशन बन गया है। इसके साथ ही सिगरेट पीना, मादक द्रव्यों का सेवन करना, हिप्पियों के से बाल रखना, चल-चित्र गृहों में, क्लब घरों में या नृत्य गृहों और कॉफी घरों में जाना तथा फिल्मी पत्रिकाओं का अध्ययन भी विद्यार्थियों के फैशन में आ गया। देखा जाए तो आज के छात्रों का अधिकांश समय इस फैशन परस्ती में ही नष्ट हो रहा है।

फैशन के दुष्परिणाम

छात्रों में बढ़ती हुई इस प्रवृत्ति के अनेक दुष्परिणाम हो रहे हैं। इससे छात्रों में अध्ययन के स्थान पर यौन-आकर्षण बढ़ रहा है, नैतिकता के भाव नष्ट हो रहे हैं और उच्छृंखलता बढ़ रही है। अहंकार, हल्कापन और आलस्य उनमें आ रहे हैं। कालेज लॉन में, कॉफी घरों के बाहर, किसी रेस्ट्राँ के पास निरुद्देश्य खड़े होकर गप्पे हाँकते हुए छात्रों का समूह नित्य ही देखने को मिलता है। इससे उनके विद्याध्ययम में निश्चित ही बाधा आ रही है।

इसका दुष्परिणाम अनुत्तीर्ण होने या तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण होने के रूप में विद्यार्थियों को ही नहीं भोगना पड़ता, अपितु उसके माता-पिता पर भी बोझ पड़ता है। उनका व्यय-भार अनावश्यक रूप से बढ़ जाता है और फिर उन्हें अनैतिक ढंग से भी कमाई करनी पड़ती है, जो अन्ततः उनको अशान्त ही करती है।

विद्याध्ययन तो एक कठोर तप है। इसके लिए कठिन परिश्रम, त्याग और सहिष्णुता की आवश्यकता पड़ती है। विद्याध्ययन में सुखाभिलाषा, विलासिता और फैशन बाधक होते हैं। इसके विपरीत सरल जीवन, उच्च विचार और परिश्रम शीलता अध्ययन में सहायक होते हैं।

उपसंहार

यदि छात्रों को अपनी दुरवस्था से छुटकारा पाना है तो उन्हें फैशन का मोह छोड़ना पड़ेगा, नये-नये फैशन को प्रचलित करने वाले चल-चित्र और पत्र-पत्रिकाओं पर भी नियंत्रण करना होगा। छात्र-छात्राओं को सादी और स्वच्छ वेश-भूषा धारण करने के लिए प्रेरित करना होगा। घरों के वातावरण में भी सादगी लानी होगी। तभी छात्र-छात्राएँ फैशन के भूत से बच सकेंगे। नहीं तो पतन निश्चित है।

—०—

शिक्षा में खेलों का महत्त्व
(जीवन में खेलों का महत्त्व)

प्रस्तावना

जीवन में मनुष्य को उन्नति के लिए निरन्तर संघर्ष करना पड़ता है। सफलता उसी से मिलती है, पर संघर्ष के लिए पूर्ण सक्षम वही होता है जो शारीरिक और मानसिक दृष्टि से स्वस्थ होता है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए व्यायाम अनिवार्य साधन है और खेल व्यायाम का ही एक लोकप्रिय अंग है।

खेलों से विकास

एक कहावत है कि "स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है।" एक अच्छे खिलाड़ी में साहस, उत्साह और मिलकर काम करने की क्षमता होती है। खेलों में नियमित रूप से भाग लेने वाला विद्यार्थी स्वस्थ, फुर्तीला तथा अच्छे व्यक्तित्व का धनी होता है। जो व्यक्ति अपने छात्र जीवन में खेलों से घबराता है, अपने बाद के जीवन में वह जिन्दगी से दूर भागने लगता है। ऐसे लोग नित्य नये रोगों के शिकार होते हैं। जो माता-पिता अब तक खेलों का विरोध किया करते थे, उन्होंने भी खेलों के महत्त्व को जान लिया है और अपने बालकों को ऐसे विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने को भेजते हैं, जहाँ शिक्षा के साथ खेलों को भी समुचित स्थान दिया जाता है। केवल पुस्तकों के ज्ञान से

बालक सर्वांगीण विकास सम्भव नहीं होता। खेलों से ही संतुलित मन और मस्तिष्क का विकास सम्भव है। खेलों से व्यायाम होता है, मनोरंजन भी होता है, स्वस्थ प्रतियोगिता की भावना जगती है, सहयोग से काम करने की भावना जन्म लेती है और व्यक्ति की सृजनात्मक शक्ति का विकास भी होता है।

खेलों द्वारा अनुशासन

खेलते समय सभी खिलाड़ियों को खेल के नियमों का पालन करना होता है। जो खिलाड़ी नियमों को भंग करते हैं उन्हें या तो मैदान से बाहर कर दिया जाता है; नही तो प्रतिद्वन्द्वी दल को उसका लाभ मिलता है। इस प्रकार कुछ नियमों से बंध कर खेलने से छात्रों में अनुशासनप्रियता जागृत होती है, जो जीव में सफल होने की पहली सीढ़ी है। अनुशासित राष्ट्र ही तेजी से प्रगति करते हैं और शीघ्र ही सम्पन्नता के शिखर पर पहुँचते हैं। अनुशासन; स्वास्थ्य और मनोरंजन का अच्छा साधन होने के कारण आज खेलों को भी शिक्षा में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जा रहा है।

असफलता में दृढ़ता

भोजन और हवा के बिना जैसे जीवन नहीं चलता, ठीक उसी तरह खेल और व्यायाम के बिना जीवन में जड़ता आ जाती है। खेल मनुष्य में साहस; उत्साह और धैर्य उत्पन्न करते हैं। खेल के मैदान में उतरा हुआ व्यक्ति कभी अपनी असफलता पर निराश होकर शान्त नहीं बैठता। वह अपनी पराजय को भी हँस कर स्वीकार करता है, वह उससे पाठ सीखता है और पुनः विजय प्राप्त करने के लिए संघर्ष करता है खिलाड़ी क्षुब्ध होना नहीं जानता। पराजय उसके लिए अवरोध नहीं, बल्कि नई चुनौती होती है, इससे उसके संकल्प में दृढ़ता आती है।

मानवीय गुणों का विकास

खेलों से केवल शरीर को बल नहीं मिलता, वरन् व्यक्ति में अनेक मानवीय गुणों का विकास होता है। जीवन के मानवीय पक्ष में प्रेम; सहयोग सहनशीलता का अपना महत्त्व है। खेल बालक में अनायास ही इन गुणों को निखारते हैं। खेल ही खेल में बालक सहयोग के महत्त्व को समझ लेते हैं।

भारत में खेलों को अब तक हीनता दृष्टि से देखा जाता था। यह मान्यता बन चली थी कि जिस बालक का ध्यान खेलों में बंट गया, वह बिगड़ जायेगा, इसलिए माता-पिता बच्चे को खेल के मैदान से दूर रखने का प्रयास करते थे। 'खेलोगे कूदोगे होओगे खराब' यह उचित शायद इसीलिए प्रचलित हुई होगी; किन्तु अब स्थिति धीरे-धीरे बदल रही है।

उपसंहार

अब केन्द्रीय सरकार और देश की प्रान्तीय सरकारों ने इस समस्या को गंभीरता से लिया है। अधिकतर राज्यों ने शारीरिक शिक्षा को विद्यालयों में अनिवार्य विषय घोषित कर दिया है। खेलों और विभिन्न प्रकार के व्यायाम का सही ढंग से प्रशिक्षण देने के लिए सभी विद्यालयों में खेल-शिक्षकों की नियुक्ति होती है। खेलों को शिक्षा में समुचित स्थान मिलने से सामाजिक जीवन का स्तर बड़ा उन्नत, सुव्यवस्थित और सुन्दर होगा। खेल और शिक्षा का जीवन में साथ-साथ होना हर प्रकार से लाभप्रद है। इससे छात्रों का स्वास्थ्य तो सुधरेगा ही उन्हें राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में भी कुछ कर दिखाने का सामर्थ्य जगेगा। अतः छात्रों को खेलों में अवश्य ही भाग लेना चाहिए।

—o—

पुस्तकालय से लाभ

प्रस्तावना

पुस्तकालय पद 'पुस्तक+आलय' इन दो शब्दों के योग से बना है। इसका सामान्य अर्थ है—पुस्तकों का भण्डार गृह। वस्तुतः अध्ययन के लिए जहाँ विभिन्न विषयों की अनेक पुस्तकों का संग्रह हो, उसे ही 'पुस्तकालय' कहते हैं। एक विद्वान् ने पुस्तकालय को प्राचीन साहित्य-साधकों का समाधि-मन्दिर कहा है। यथार्थ में पुस्तकालयों में ही प्राचीन साहित्यकारों के साहित्य की अमूल्य निधि सुरक्षित मिलती है। रस्किन ने अच्छी पुस्तकों को 'ज्ञान, विचार, भावना

कल्पना तथा कला का राजकीय कोष' कहा है। युग-युग से संचित उत्तम विचार सुन्दर कल्पनाएं तथा घटनाएं पुस्तकों में ही सुरक्षित रहती हैं।

पुस्तकालय की उपयोगिता

शरीर को स्वस्थ और सक्रिय रखने के लिए जैसे उत्तम भोजन की आवश्यकता होती है, इसी प्रकार मस्तिष्क के विकास के लिए उत्तम पुस्तकों की आवश्यकता होती है। सभी विषयों की सभी पुस्तकों का संग्रह स्वयं कोई नहीं कर सकता; निर्धन और मध्यम वित्त के लोग तो कभी कर ही नहीं सकते। अतः उनकी ज्ञान-पिपासा शान्त करने के लिए सबसे अच्छा स्थान पुस्तकालय ही होता है। पुस्तकालय एक ऐसी संस्था है, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति बिना भेदभाव के प्रवेश पा सकता है तथा उस संस्था के नियमों का पालन करते हुए ज्ञान और मनोरंजन का लाभ प्राप्त कर सकता है। वर्तमान सामाजिक अवस्था के अनुसार तो पुस्तकालयों की आवश्यकता अनिवार्य है। जो अध्ययन करेगा, उसी को पता रहेगा कि कहाँ क्या हो रहा है?

'काव्य-शास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम्' के अनुसार सामान्य ज्ञान, राजनीतिक चेतना, साहित्यिक रुचि की संतुष्टि और मनोविनोद पुस्तकालयों में प्राप्त पुस्तकों से ही हो सकता है।

दो विभाग

पुस्तकालयों में प्रायः दो विभाग होते हैं। एक 'पुस्तकालय' और दूसरा 'वाचनालय।' पुस्तकालय में केवल पुस्तकें होती हैं, वहाँ से उन्हें संस्था के नियमानुसार लिया जा सकता है। वाचनालय में विभिन्न प्रकार की साप्ताहिक पाक्षिक, मासिक और त्रैमासिक पत्र-पत्रिकाएं होती हैं। यहाँ उन पत्र-पत्रिकाओं को अथवा पुस्तकों को शान्तिपूर्वक बैठकर पढ़ने की सुविधा भी होती है। इसके अध्ययन से ही व्यक्ति को चिन्तन की नई सामग्री मिलती है, नवीन विचारों का निर्माण होता है और दृष्टि भी व्यापक बनती है।

विविध पुस्तकों का संग्रह

पुस्तकालय में प्रत्येक विषय की पुरानी से पुरानी और नई से नई पुस्तकें सरलता से मिलती हैं। एक ही विषय पर लिखी हुई अनेक लेखकों की विभिन्न

कृतियाँ पुस्तकालय में ही मिल सकती हैं। यहाँ कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, इतिहास धर्म, दर्शन, विज्ञान, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, वाणिज्य, शिल्प, कला-कौशल आदि अनेक विषयों की पुस्तकें संगृहीत होती हैं। अतः अपनी रुचि के अनुसार पाठक यहाँ पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं। जो छात्र अथवा व्यक्ति किसी विषय पर अनुसन्धान करना चाहते हैं, उनके लिए सबसे अच्छा स्थान पुस्तकालय ही है। यहीं उनके एक ही विषय की पुरातन से पुरातन और नवीन से नवीनतम अनेक पुस्तकें प्राप्त हो जाती हैं। साथ ही अध्ययन के लिए उपयुक्त शान्त वातावरण भी यहाँ प्राप्त होता है।

पुस्तकें : अच्छी मित्र

अवकाश के समय जब कोई हमारा साथी नहीं होता, तब पुस्तकें ही हमारी अच्छी मित्र और साथी बनकर हमारा मनोविनोद करती हैं; ज्ञानवर्धन करती हैं और समय का सदुहयोग कराती हैं। तभी तो कहा गया है—

"good books are the best friend"

देश में पुस्तकालय

अध्ययन-अध्यापन तथा ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार के लिए पुस्तकालय अत्यन्त उपयोगी हैं। इसी कारण आज विद्यालयों, महाविद्यालयों में 'पुस्तकालयों' की स्थापना अनिवार्य हो गई है। देश के महानगरों या छोटे नगरों में अनेक सार्वजनिक पुस्तकालय भी स्थापित हैं। महानगरों में तो बसों में चलते-फिरते पुस्तकालयों की भी व्यवस्था है। जिनसे लोग नाम मात्र का चन्दा देकर और कुछ रक्षा-धन जमा करके आवश्यकतानुसार पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।

प्राचीन भारत में भी पुस्तकालयों को बहुत महत्त्व दिया जाता था। तक्षशिला, नालन्दा और बलभी के विश्वविद्यालयों में मीलों लम्बे जगत् प्रसिद्ध पुस्तकालय थे, जो यवन आक्रान्ताओं द्वारा जलाकर नष्ट कर दिये गए।

उपसंहार

आज विज्ञान, शिल्प और विविध कलाओं का तीव्र विकास हो रहा है। उसका ज्ञान अतिरिक्त पुस्तकों के अध्ययन से ही प्राप्त हो सकता है। अतः हमें नवीन पुस्तकालयों की स्थापना कर उनका अधिक से अधिक उपयोग करना

चाहिए। ये ही तो हमें अज्ञान से ज्ञान की ओर तथा अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जा सकते हैं।

—०—

भाग्य और पुरुषार्थ

(दैव दैव आलसी पुकारा)

प्रस्तावना

भारतीय मनीषियों ने जीवन का लक्ष्य बताया है—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। इन सबको उन्होंने 'पुरुषार्थ' नाम दिया है। बिना परिश्रम या उद्यम के इनकी प्राप्ति नहीं हो सकती, अतः इसका नाम 'पुरुषार्थ' उचित ही है। मनुष्य को अपने लक्ष्य की प्राप्ति बिना पुरुषार्थ के कभी नहीं होती।

कभी जंगल में भटकने वाला, गुफाओं में निवास करने वाला और पत्तों से तन ढकने वाला मनुष्य आज एक समृद्ध संस्कृति और उन्नत सभ्यता का स्वामी है। कैसे? यह सब उसके परिश्रम का ही फल है। वही मानव जीवन में निरन्तर सफलता प्राप्त करता है जो उद्यमी होता है, कर्म में विश्वास रखता है। एक समय था, तब मनुष्य प्रकृति का दास था। वन के फल-फूल खाकर वह अपनी उदरपूर्ति करता था, परन्तु आज मनुष्य प्रकृति का दास नहीं, अपितु स्वामी है। उसने जल, स्थल, नभ सब पर अपने अपराजेय साहस का सिक्का जमा दिया है। जीवन में विलास और ऐश्वर्य की सारी सुविधाएं उसके अथक परिश्रम का ही सुफल है। मानव-सभ्यता का लम्बा इतिहास उसके असीम साहस और पुरुषार्थ की कथा है। भागीरथ के अथक परिश्रम का ही सुफल गंगा माता है, जो त्रिताप-नाशिनी है। निर्धन परिवार में उत्पन्न लालबहादुर शास्त्री तथा चमार के घर उत्पन्न रूस का सर्वेसर्वा स्टालिन अपने पुरुषार्थ के बल पर ही महान् बने। उद्योग की महत्ता को बताते हुए प्राचीन नीतिकारों ने कहा है—

"उद्यमेनैव सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः॥"

अर्थात् जीवन के सभी कार्य परिश्रम से ही सिद्ध होते हैं, कोरे मनोरथ से नहीं। सोये हुए सिंह के मुख में अपने आप हिरण प्रवेश नहीं करते। (बलवान् होते हुए भी उसे पेट भरने के लिए परिश्रम करना ही पड़ता है।

परिश्रम और साहस का ही यह फल है कि धरती का मानव चन्द्रमा की सैर कर आया है। मंगल और शुक्र ग्रहों तक उसने अपने उपग्रहों को सफलता से भेजा है तथा वहाँ की स्थिति और वातावरण का ज्ञान पाने को उत्सुक है।

यद्यपि लक्ष्य को पाने में व्यक्ति को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, पर साहसी, वीर एवं परिश्रमी मनुष्य जीवन संग्राम में आने वाली हर कठिनाई से जूझते हुए अपनी सफलता के लिए मार्ग प्रशस्त कर लेते हैं।

भाग्यवादी की स्थिति

भाग्यवादी मनुष्य आलस्य के कारण सदा कष्ट में डूबा रहता है। अपना दोष वह भाग्य के माथे डालता है। आने सिर पर असफलता की जिम्मेदारी लेने से कतराता है—'दैव-दैव आलसी पुकारा।' 'भाग्य की रेखा अमिट है।' कहकर वह परिश्रम करने से छुटकारा पाना चाहता है। वह जब स्वयं अपना ही उद्धार करने में असमर्थ रहता है तो समाज का क्या कल्याण करेगा ?

अजगर करे न चाकरी पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गये सबके दाता राम ।।

आलसी सदा इसी महामन्त्र को जपता रहता है। भाग्यवादी व्यक्ति श्रम नहीं कर सकता। जीवन की किसी परीक्षा में वह खरा नहीं उतरता। भाग्यवादी में स्वाभिमान भी नहीं होता। वह सदा दूसरों के टुकड़ों पर पलता है। फलतः जीवन में असफल होकर दुःख भोगता है।

हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से, केवल भाग्य का सहारा लेने से कुछ नहीं मिलता। यदि भाग्य में है तो वह भी तभी मिलेगा, जब व्यक्ति पुरुषार्थ करेगा। जैसे एक चक्र से रथ नहीं चल सकता, ऐसे परिश्रम के बिना भाग्य भी सफल नहीं होता:—

"यथा ह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत् ।
एवं पुरुषकारेण बिना दैवं न सिध्यति ।।"

परिश्रम का महत्त्व

परिश्रम का जीवन में व्यापक महत्त्व है। सफलता का आधार ही श्रम है। परिश्रम के महत्त्व को जापान ने समझा और उसे जीवन में अनिवार्य स्थान दिया। यह देश अणुबम का शिकार हुआ था। आज उसने न केवल परिश्रम द्वारा अपने पुराने घावों को भरा है, बल्कि समृद्धि की ओर भी द्रुत गति से बढ़ रहा है। परिश्रम मानव जीवन का सुन्दर आभूषण है। जो समाज इस आभूषण को त्याग देता है, उस पर दुर्भाग्य और विनाश के काले बादल छा जाते हैं। भाग्यवादी मनुष्य स्वयं अपना शत्रु होता है। वह न स्वयं उन्नति करता है और न ही दूसरे को आगे बढ़ने देता है। परिश्रमी समाज का हितैषी होता है। आज परिश्रम के बल पर ही चिकित्सा के क्षेत्र में चमत्कारी प्रगति कर मनुष्य मौत को चुनौती दे रहा है। कृषि, यातायात, उद्योग इन सब क्षेत्रों की उन्नति में उसके पसीने की बूंदे चमक रही हैं। मनुष्य से परिश्रम ने शक्ति के अथाह स्रोत परमाणु को खोज लिया है। संसार में इतने विकास और परिवर्तन का श्रेय मनुष्य के श्रम को ही है।

कर्म का प्रधानता

भारतीय ऋषि-मुनियों का कहना है कि मानव का भाग्य उसके पूर्व जन्म के कर्मों का ही फल है, उसके अनुसार मनुष्य जैसा कर्म करता है, उन्हीं के अनुसार उसे फल भोगना पड़ता है, उससे वह बच नहीं सकता। भाग्यवाद की यह विचारधारा भी मनुष्य को निरन्तर कर्म करने की प्रेरणा देती है। मनुष्य अपने इस जन्म में पिछले जन्मों के कर्मफल को अवश्य भोगेगा। तुलसीदास जी ने कहा है—

सकल पदारथ हैं जग माँही।
करमहीन नर पावत नाहीं।

इससे तो यही स्पष्ट हुआ कि भाग्य का निर्माण भी कर्म ही करते हैं। अतः व्यक्ति को आलस्य त्याग कर उद्यम करना चाहिए। जीवन में अनेक बार असफलताएं आकर मनुष्य के धीरज को परखती हैं। इसलिए उसे निरुत्साहित हो निष्क्रिय नहीं बैठना चाहिए, बल्कि परिश्रमी बनकर चुनौतियों को निर्भयता से स्वीकार कर साहस पूर्वक जीवन में आगे बढ़ते रहना चाहिए।

उपसंहार

परिश्रम भाग्य से कहीं अधिक शक्तिशाली है। भाग्य दुर्बलों का सम्बल है। परिश्रम ही मानव की सफलता का मूल आधार है। इसके सामने भाग्यवाद नहीं टिक सकता। कर्मठ मनुष्य को ही सदा सफलता की देवी जयमाला पहनाती है। श्री मैथिलीशरण गुप्त का कथन है—

न जिसमें पौरुष हो यहाँ, सफलता वह पा सकता कहाँ?
अपुरुषार्थ भयंकर पाप है, न उसमें यश है, न प्रताप है,
दृढ़ रहो ध्रुव धैर्य धरो, उठो, पुरुष हो पुरुषार्थ करो, उठो।

—०—

परोपकार

प्रस्तावना

'पर+उपकार' इन दो शब्दों के योग से परोपकार शब्द बना है। 'पर' अर्थात् अपने से भिन्न अन्य जनों का हित करना ही परोपकार का भाव है। बिना कुछ प्रतिदान की इच्छा की जिस पवित्र भावना से मनुष्य दूसरों का हित करता है, उसे ही परोपकार कहते हैं। संसार में मनुष्य जीवन बड़े पुण्य से मिलता है। अतः इस जीवन की सफलता परोपकार करने में है। जिन मनुष्यों में यह दिव्य गुण होता है, वस्तुतः वे ही मनुष्य कहलाने के अधिकारी हैं तथा जिनमें यह गुण नहीं वे पशु-तुल्य हैं। मनुष्य और पशु में यही अन्तर होता है कि पशु पर-हित की भावना से परे रहता है। उसके लिए परोपकार के कोई महत्त्व नहीं, वह जो कुछ करता है, अपने लिए करता है। यदि कोई मनुष्य बहुत लोभी और स्वार्थी हो तो वह पशु से भी अधिक नीच होता है। जब मनुष्य बुद्धि और चिन्तन-शक्ति का अधिकारी है तो निश्चित ही उससे कुछ विशेष व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। हमारे देश के ऋषियों ने तो भगवद् भजन से भी अधिक महत्त्व परोपकार को दिया है। उनके विचार से जिसने अपना जीवन मानव-कल्याण के लिए अर्पित किया, वास्तव में उसी का जीवन सार्थक कहलायेगा—

वृक्ष कबहुं नहिं फल भखैं नदी न संचै नीर।
परमारथ के कारनै साधुन धरा शरीर।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने "पर हित सरिस धर्म नहिं भाई" अर्थात् परोपकार के समान दूसरा कोई धर्म नहीं है, कहकर, परोपकार की महिमा गाई है। दूसरों के लिए अपना सर्वस्व त्याग देना ही सबसे बड़ा धर्म व पुण्य है।

प्रकृति में परोपकार के गुण

परोपकार के लिए त्याग की भावना हमें प्रकृति के कण-कण में दिखाई देती है। ईश्वर ने फल-फूल, चाँद-तारे, सूरज, जल, वनस्पति इन सबका निर्माण मनुष्य के भले के लिए ही किया है। सूर्य हमें अनवरत प्रकाश और ऊर्जा देता है, जिसके बिना पृथ्वी पर हम जीवन की कल्पना ही नहीं कर सकते। धरती माता दोनों हाथों से अनाज लुटाती है, ताकि उसके बालक भूखे न रहें। विशाल पेड़ हारे-थके यात्री के लिए अपने नीचे सदा छाया किए रहते हैं, ताकि कोई आकर चैन से सुख की नींद सोये या विश्राम करें। फलों के असंख्य पेड़ अपने फल हमें निःस्वार्थ भाव से देते हैं। प्राणी जगत् को जीवित रखने के लिए वायु प्राण देता है। मेघ धरती पर पानी वर्षा कर आनन्द लुटाते हैं, परन्तु क्या इन सबने कभी परोपकार के बदले कुछ माँगा ? कदापि नहीं। परोपकारी दोनों हाथों से अपना सर्वस्त ही दूसरों के हित के लिए लुटा देता है, किन्तु बदले में कुछ पाने की अभिलाषा नहीं रखता।

पण्य और पाप

महर्षि वेदव्यास जी ने धर्म के सार को एक वाक्य में व्यक्त किया है :—

"परोपकारः पुण्याय पापाय पर पीडनम्।"

अर्थात् यदि जीवन में आप पुण्य कमाना चाहें तो परोपकार कीजिए और यदि पापों का संचय करना चाहते हैं तो दूसरे प्राणियों को दुख दीजिए।

जीवन की सार्थकता

हमें ईश्वर ने जो मानव जन्म दिया है, उसकी सार्थकता इसी में निहित है कि हम अपने स्वार्थ से परे हटकर दूसरे की हित की बात सोचें। ईश्वर ने प्रकृति के सहारे इस ससार का भरपूर कल्याण किया। यह सबसे बड़ा परोपकारी है। वह प्राणियों को सदा सब वस्तुएँ खुले मन से देता है, लेकिन बदले

में कभी कुछ नहीं लेता। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम दूसरों के आँसुओं का आदर करना सीखें, जो दीन और असहाय हैं, उनकी करुण पुकार सुनकर उनका दुःख दूर करें। सैकड़ों भूखे हैं, उन्हें अन्न देना है, तन ढाँपने के लिए वस्त्र देना है। कई शिशु जो पूरी तरह से आँख भी नहीं खोल पाते, भूख से तड़पते हुए सर्दी से ठिठुरते हुए प्राण त्याग देते हैं, उन्हें संरक्षण देना होगा। अपने पापी पेट के लिए कोई अपने सम्मान को विवश होकर दाव पर न लगावे इसके लिए चौकस रहना है। रोगी को औषध देना, अशिक्षतों के लिए शिक्षा की व्यवस्था करना, प्यासे को पानी पिलाना, अन्धे को मार्ग दिखाना, भयभीत की भय से रक्षा करना आदि परोपकार के ही रूप हैं। जीने का सबको समान अधिकार है। ईश्वर सबको एक सा बनाता है। शक्तिशाली का कर्त्तव्य निर्बल की सहायता करना है, ताकि वह हँसना सीख सके।

परोपकार के उदाहरण

हमारे जीवन में परोपकारी व्यक्तियों के असंख्य उदाहरण मिलते हैं। ऋषि दधीचि ने विश्व कल्याण के लिए देवताओं द्वारा उनकी अस्थियाँ माँगने पर निःसंकोच उनकी बात मान ली और योग द्वारा प्राण त्याग कर अस्थियाँ दान कर दीं, उन अस्थियों से वज्र बना और उससे वृत्रासुर का वध हुआ। राजा शिवि ने कपोत की रक्षा के लिए कपोत के भार के बराबर माँस अपने शरीर से काटकर बाज को दे दिया। भामाशाह ने अपने पूर्वजों द्वारा अर्जित समस्त सम्पत्ति महाराणा प्रताप के चरणों में अर्पित कर दी, ताकि उससे सैनिकों का संग्रह कर वे राष्ट्र रक्षा कर सकें।

उपसंहार

जितना अधिक परोपकार का आदर्श लेकर मनुष्य अपने कर्म का चिन्तन करेगा और उस कार्य रूप में परिणत करेगा, वह श्रेष्ठ मनुष्य माना जाएगा। परोपकार करने से हृदय को आनन्द मिलता है और मन को अपार संतोष प्राप्त होता है। अतः मनुष्य को अपने सामर्थ्य के अनुसार परोपकार अवश्य करना चाहिए। क्योंकि—

'सफलं जीवितं तस्य परेभ्यः यस्य जीवनम्।'

—o—

समय का सदुपयोग

प्रस्तावना

एक मूर्तिकार ने मूर्ति बनाई और दर्शकों के देखने के लिए उसे बाजार के चौक में रख दिया। देखने वालों की एक बहुत बड़ी भीड़ एकत्र हो गई। जब मूर्ति के ऊपर से पर्दा हटाया तो लोगों ने देखा कि उसका मुख बालों से ढका है और सिर का पीछे का भाग बिल्कुल गंजा है। जब मूर्तिकार से इसका रहस्य पूछा गया तो उसने बताया कि यह 'समय की मूर्ति' है। यदि व्यक्ति इसे आते ही इसके सामने का बाल पकड़ लेता है तो वह आगे निकल जाता है, पर सिर गंजा होने के कारण यह पीछे से पकड़ा नहीं जा सकता।

जीवन की सफलता का रहस्य : समय का सदुपयोग

वास्तव में जीवन की सफलता का रहस्य इसी में है कि समय को उसके आगे के बालों से पकड़कर वश में कर लिया जाए। जो व्यक्ति समय के इस मूल्य को नहीं जानता, वह अपने जीवन में कभी सफल नहीं हो सकता, चाहे उसके पास कितनी ही बड़ी सामर्थ्य क्यों न हो? समय के मूल्य को पहचानना ही समय का सदुपयोग है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में ऐसी घड़ियां आती हैं, जिन पर उसके भाग्य का बनना या बिगड़ना निर्भर करता है। उन क्षणों में यदि मन जरा-सा हिचकिचाया या डरा तो जीवन का सब कुछ समाप्त हो जाता है।

आलस्य और प्रमाद के कारण व्यक्ति काम को आगे के लिए छोड़ देता है, पर जो काम एक बार दूसरे समय के लिए छोड़ा, वह सदा के लिए गया। यदि आज के काम को आज ही कर दिया जाए तो कल और आगे बढ़ने का अवसर मिल सकता है। 'वर्तमान' सबसे अच्छी घड़ी है, 'भूतकाल' तो मर चुका है और 'भविष्य' का अभी कुछ पता नहीं। तब मानव-जीवन के लिए सबसे बड़ा वर्तमान ही है। जिन लोगों ने आज का काम कल पर छोड़ा वे पीछे रह गये। उनसे पीछे रहने वाले समय के साथ-साथ चलते रहे और आगे बढ़ गये।

समय किसी के साथ नहीं चलता, वह अपनी गति से सदा आगे बढ़ता रहता है। समय का उचित उपयोग ही जीवन की सफलता की कुंजी है। यदि हम अपने जीवन के बीतने वाले एक-एक क्षण का ठीक से उपयोग न कर सकें तो संसार का बड़े से बड़ा कार्य भी हमारे लिए सरल हो सकता है। संसार के जितने भी महान् व्यक्ति हुए हैं, सबने पहले समय के मूल्य को पहचान कर ही आगे कदम बढ़ाया था और अन्त में प्रतिष्ठा के उच्च शिखर पर चढ़ने में सफल हो गये थे। नेपोलियन की महती विजय के मूल्य में समय का ही हाथ रहता था। अर्थात् वह अनुकूल समय को पहचानता था और कभी भी आलस्य में उसे हाथ से नहीं जाने देता था। 'पाँच' मिनट के मूल्य को न पहचानने के कारण ही आस्ट्रिया वाले नेपोलियन के सामने हार गए थे। वाटरलू के युद्ध में नेपोलियन की हार का मुख्य कारण 'पाँच मिनट' ही थे। उसके साथी ग्रूशी के आने में पाँच मिनट की देर हो गई थी और उसी विलम्ब ने नेपोलियन को बन्दी बनवा दिया था।

एक खरगोश और कछुवे में दौड़ लगाने की शर्त हुई। दोनों ने दौड़ प्रारम्भ की। एक ही छलांग में खरगोश आधे रास्ते पर पहुँच गया और बाकी मार्ग पूरा करने का काम आगे के लिए छोड़ पेड़ की शीतल छाया में आराम लेने के लिए लेट गया। उसे नींद आई और वह मीठे सपनों में खो गया। जब नींद खुली तो देखा कि समय बहुत बीत चुका है। सोचा, कछुआ अभी लक्ष्य तक नहीं पहुँचा होगा। अब उसने, दूसरी बार छलांग लगाई और अपने निश्चित स्थान पर पहुँच गया। जब वह वहाँ पहुँचा, तो उसकी लज्जा का और आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा, क्योंकि धीरे-धीरे घिसटने वाले कछुए ने बिना एक क्षण भी आराम किए समय के साथ-साथ चलकर वह तेज चलने वाले खरगोश को हरा दिया था। समय के सदुपयोग का यह उदाहरण कितना सुन्दर है!

समय रुकता नहीं

आज का दिन घूमने में खो दिया तो कल भी वही बात होगी और फिर अधिक सुस्ती आएगी। इसलिए आज जिस काम को करना चाहते हो, उसको आज ही कर लेना चाहिए। 'कल' तो कभी आता ही नहीं। कबीर जी ने कहा है—

काल करै सो आज कर, आज करै सो अब।
पल में परलै होयगी, बहुरि करैगो कब॥

यदि रेल चलाने वाला ड्राइवर अपने मार्ग पर आने वाले प्रत्येक अन्तिम मिनट की देर करता चले, तो उसको अपने अन्तिम स्टेशन तक पहुँचने में हो सकता है कि घंटों की देर हो जाए और यह भी सम्भव है कि उसकी इस देर के कारण मार्ग में ही कोई दुर्घटना हो जाए।

किसी काम को आगे के लिए स्थगित कर देने का तात्पर्य है—प्रायः उसे सदा के लिए छोड़ देना। 'अब करने ही वाला हूं का मतलब होता है, नहीं करने वाला हूं।' कहा भी है 'आषाढ़ का चूका किसान और डाल का चूका बंदर कहीं का नहीं रहता।' इसीलिए जो व्यक्ति आलस्य-वश किसी कार्य से चूक जाता है, कभी भी फिर उस अवसर को नहीं पा सकता, क्योंकि—'गया वक्त फिर हाथ आता नहीं।' समय निकल जाने पर पश्चाताप ही हाथ आता है। तब वह कहता है—

उड़ गया मेरा समय जैसे विहंगम,
और खाली हाथ जीवन रह गया।

इस बात को ध्यान में रखकर उन्नति के अभिलाषी व्यक्ति को ठीक समय पर ही काम पर जुट जाना चाहिए।

उपसंहार

समय हाथ में तभी आ सकता है, जब हम अपने को नियमित कर डालें। प्रत्येक कार्य के लिए कार्यक्रम बना लें और फिर उस पर अटल होकर आगे बढ़ें। यदि कार्यक्रम बनाकर दीवार पर टांग भी दिया और उसके अनुसार आचरण नहीं किया, तो वह व्यर्थ है, उसका कोई महत्त्व नहीं। समय का सदुपयोग रंक को राजा और समय का दुरुपयोग राजा को भिखारी बना देता है। अतः समय के मूल्य को पहचानना ही जीवन की सबसे बड़ी सफलता है।

तभी तो कहा गया है—

का बरसा जब कृषि सुखानी।
समय चुके पुनि का पछतानी॥

—o—

सच्चरित्रता
(सदाचार)

"आचार: परमोधर्म: श्रुत्युक्त:स्मार्त एव च।"

प्रस्तावना

आज का युग अर्थ-प्रधान युग है। इसमें व्यक्ति की श्रेष्ठता का माप दंड धन है। अत: व्यक्ति धन के पीछे पागल हुआ फिरता है। इसके लिए कोई भी ऊँच-नीच काम ऐसा नहीं जो वह नहीं करता, किन्तु धन ही तो श्रेष्ठ नहीं ? उससे भी श्रेष्ठ है—स्वास्थ्य। बहुत बड़े-बड़े धनपति हैं, सब सुख-सुविधाएँ हैं; पर दो रोटी और पाव भर दूध भी नहीं पचा सकते। बेचारे नित्य बीमार रहते हैं। बड़े-बड़े वैद्यों, डक्टरों के इलाज से भी रोग नहीं जाता। स्वास्थ ठीक रहने से धन तो कमाया जा सकता है, पर धन से स्वास्थ तो नहीं खरीदा जा सकता ?

किन्तु स्वास्थ्य से भी एक श्रेष्ठ और महत्त्वपूर्ण वस्तु है—चरित्र। चरित्र के सामने स्वास्थ्य भी कुछ नहीं। और पैसा ? पैसा तो हाथ का मैल है। अंग्रेजी में एक उक्ति है, जिसका भाव है कि—"धन गया तो कुछ नहीं गया, स्वास्थ्य गया तो कुछ गया और यदि चरित्र गया तो सब कुछ ही नष्ट हो गया।" सच्चरित्रता के सामने धन और स्वास्थ्य का भी कोई मूल्य नहीं।

चरित्र का महत्त्व

सच्चरित्रता या सदाचार ही वस्तुत: जीवन का सार है। 'चरित्र है मूल्य जीवन का, सुचरित है प्रभा धन की।' संसार की बड़ी से बड़ी सम्पत्ति, महान् साम्राज्य, कोई भी लौकिक वस्तु चाहे उसका कितना मूल्य क्यों न हो, चरित्र के सामने उसका कोई भी मूल्य नहीं। हम विद्वान् की महत्ता स्वीकार करते हैं; शक्तिशाली से भयभीत रहते हैं और धनी के सामने उसकी प्रशंसा करते हैं; किन्तु यदि ये सच्चरित्र नहीं तो हम उनका आदर व विश्वास नहीं करते।

सदाचार या सच्चरित्रता का आशय

सच्चरित्रता या सदाचार अनेक गुणों के समुच्चय का नाम है। सत्य आचरण, श्रेष्ठ व्यवहार, अच्छा चाल-चलन, इन्द्रिय-संयम, उदारता, पवित्रता,

नम्रता, प्रेम, मन, वचन और की एकता, लोभ का अभाव, ईमानदारी आदि गुण इसके अन्दर आते हैं। जिस व्यक्ति में ये गुण आते हैं, वही सच्चरित्र या सदाचारी कहा जाता है। 'सत्+आचार' से सदाचार शब्द बनता है, जिसका अर्थ ही श्रेष्ठ आचरण है। मन, वचन और कर्म से सदाचार का पालन करने वाला व्यक्ति ही महात्मा और पूज्य होता है। सदाचारी व्यक्ति पराई स्त्री को माता के समान, पराए धन को मिट्टी के ढेले के समान और सभी प्राणियों को अपने समान ही समझता है। वह सब में अपनी ही आत्मा के दर्शन करता है।

बड़ी से बड़ी सम्पत्ति, बड़े से बड़ा साम्राज्य, सब प्रकार का मान-सम्मान या कोई भी बहुमूल्य लौकिक वस्तु ये सब सच्चरित्रता के सामने तुच्छ हैं। विद्वान् की विद्वता, शक्तिशाली की शक्ति, धनी का धन चरित्र से ही शोभित होते हैं। बिना सुचरित्र के उनकी विद्या, बल और धन का कोई मूल्य नहीं।

सच्चरित्रता वह धन है, जिसके सामने अन्य धन-सम्पत्ति, ऐश्वर्य सब तुच्छ है। संसार के समस्त सुख-वैभव सच्चरित्र व्यक्ति का चरण चुम्बन करते हैं। अपनी सच्चरित्रता के बल पर जन-मन पर उसका अधिकार होता है। एक निर्धन सच्चरित्र पर करोड़ों धनवान् दुश्चरित्रों को न्यौछावर किया जा सकता है। दुराचारी ब्राह्मण से सदाचारी शूद्र श्रेष्ठ होता है। "आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः" अर्थात् दुराचारी व्यक्ति को तो वेद भी पवित्र नहीं करते।

सच्चरित्र होना सरल भी है और कठिन भी। इसके लिए व्यक्ति को अनवरत साधना करनी होती है। वह सावधानी से अपने गुणों को संचय करता है—अपने गुणों को छिपाता है—परन्तु पुष्प की सुगन्धि क्या कहीं छिपती है? ऐसे सच्चरित्र व्यक्ति सदा समाज में सम्माननीय होते हैं।

कुछ उदाहरण

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम सदाचार की प्रत्यक्ष मूर्ति थे। आद्य-शंकराचार्य का जीवन-चरित्र किसके लिए अनुकरणीय नहीं? जिन्होने अपने आदर्श चरित्र के बल पर वेदों का पुनरुद्धार करके जगद्गुरु की पदवी प्राप्त की। महाराणा प्रताप और शिवाजी भी ऐसे चरित्रवान् महान् पुरुष हुए, जिन्होंने अपने चरित्र से इतिहास के पृष्ठों को उज्ज्वल कर दिया। शिवाजी के जीवन की वह घटना किसे याद नहीं होगी? जब उसके सामने सैनिकों ने एक

अत्यन्त सुन्दरी मुगल तरुणी को प्रस्तुत किया और मन में सोचा कि छत्रपति इसे महारानी बनायेंगे—परन्तु शिवाजी ने उसे देखकर कहा—'यदि मेरी माता भी इतनी सुन्दर होती तो मैं भी इतना सुन्दर होता।' इस उक्ति में उनके चरित्र का दिव्य तेज झलकता है। महाराणा प्रताप ने भी मुगल सरदार की पत्नी को इसी प्रकार आदर के साथ उसके पति के पास पहुँचाया था। इसी प्रकार चैतन्य महाप्रभु, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द आदि महात्मा अपनी सच्चरित्रता के बल पर ही समाज का उद्धार कर सके।

उपसंहार

सच्चरित्र व्यक्ति बाह्य दृष्टि से भले ही दीन रहे, परन्तु सबके मन-मन्दिर में उनके सद्गुणों की मूर्ति सदा रहती है। युग उनके चरण-चिह्नों पर चलता है। वे जिसे ज्ञान का प्रकाश देते हैं, समाज उस पर चलकर अपने लक्ष्य तक पहुँचता है। अतः जीवन में सदाचार रूपी धन का संचय अवश्य करना चाहिए।

—o—

स्वावलम्बन

प्रस्तावना

स्वावलम्बन शब्द 'स्व+अवलम्बन' शब्दों के योग से बना है। 'स्व' का अर्थ है—'अपना' तथा 'अवलम्बन' का अर्थ है—'सहारा'। बिना किसी दूसरे की सहायता की अपेक्षा रखे अपने ही भरोसे काम करने का नाम स्वावलम्बन है। इसी को आत्मनिर्भरता भी कहते हैं।

मनुष्य का शरीर पञ्च भौतिक है। अतः भौतिक आवश्यकताएँ उसे सताती ही हैं। उसे पेट भरने के लिए अन्न, तन ढकने के लिए वस्त्र और सिर छुपाने के लिए घर की आवश्यकता होती है। इन सामान्य आवश्यकताओं के अतिरिक्त स्वास्थ्य, मनोरंजन, साज-सज्जा को भी उसकी अन्य आवश्कताएँ हैं। फिर मनुष्य मननशील या विचारशील प्राणी भी है। अतः विभिन्न प्रकार की विद्याओं में और ज्ञान में उसकी रुचि रहती है। आशय यह है कि उसकी अनेक भौतिक, मानसिक और आत्मिक इच्छाएँ होती हैं और वह उन्हें पूरा करना

चाहता है; पर उसकी ये आवश्यकताएँ कब पूरी होती हैं ? तब, जबकि वह उनकी पूर्ति के लिए स्वयं प्रयास करता है। मनुष्य प्राणी जब तक शैशव में रहता है, तभी तक माता-पिता या अभिभावक उसका पालन-पोषण करते हैं। उसके पश्चात् तो अपनी उन्नति के लिए उसे स्वयं ही प्रयत्न करना पड़ता है। जब व्यक्ति अपनी सफलता के लिए स्वयं प्रयत्नशील हो जाता है, तब वह सफल होकर ही रहता है।

स्वावलम्बन : एक गुण

वस्तुत: जीवन में सफलता पाने के लिए सबसे प्रमुख गुण स्वावलम्बन ही है। जिस व्यक्ति में आत्मनिर्भरता की भावना होती है, वही समस्त कार्यों को सरलता से कर पाता है। कर्त्तव्य-मार्ग में आने वाली विघ्न-बाधाओं का सामना करने का साहस स्वावलम्बी व्यक्ति को ही होता है। उसी में दृढ़ इच्छा शक्ति और आत्म-विश्वास की भावना होती है। ज्ञान, विज्ञान, कला-कौशल, व्यापार, राजनीति, नौकरी आदि सभी क्षेत्रों में वे ही व्यक्ति आगे बढ़ पाते हैं, जो स्वावलम्बी हों। स्वावलम्बियों के लिए जीवन में कुछ भी पाना असम्भव नहीं। एक साधारण सैनिक से जीवन आरम्भ कर एक दिन फ्रांस का सर्वेसर्वा बनने वाला नेपोलियन कहा करता था कि 'असम्भव' शब्द मूर्खों के कोष में होता है। संसार में धन, विद्या, मान, गौरव आदि की प्राप्ति स्वावलम्बी ही कर सकता है। सूर्य अपने प्रकाश से अन्धकार को दूर करता है, सबको गर्मी देता है, वह इसके लिए किसी अन्य का आश्रय नहीं लेता। वह अपने ही सामर्थ्य से सब कुछ करता है। अत: उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता; इसके विपरीत चन्द्रमा अपने प्रकाश के लिए सूर्य पर निर्भर रहता है, इसलिए सदा घटता-बढ़ता रहता है।

सफलता रूपी मोती उसी के हाथ लगते हैं, जो स्वावलम्बी है और कर्म रूपी समुद्र में डुबकी लगाता है। कहा भी है—

जिन ढूंढ़ा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ।
मैं बावरी बूडन डरी रही किनारे बैठ॥

परावलम्बन : बड़ा दोष

जो व्यक्ति काम के लिए दूसरों पर निर्भर रहते हैं, या अन्यों का आश्रय

ग्रहण करने हैं, वे जीवन में सफल नहीं हो सकते। दूसरों की सहायता की प्रतीक्षा में वे अपनी शक्ति, अपना समय और धन नष्ट कर देते हैं। परावलम्बी व्यक्ति में स्वय कुछ भी करने का सामर्थ्य शेष नहीं रह जाता। वह अपने को सब प्रकार से अयोग्य समझकर प्रतिक्षण दूसरों का ही मुँह ताकता रहता है। इस कारण वह जीवन की दौड़ में पिछड़ जाता है। वह निरुद्यमी और आलसी हो जाता है। कई व्यक्ति तो इतने पराश्रित हो जाते हैं कि वे सेवक न होने पर घड़ा पास में होने पर भी पानी नहीं पी पाते और प्यासे ही रह जाते हैं। नगरों में आधे घण्टे के पैदल मार्ग को तय करने के लिए लोग घण्टों तक बस की प्रतीक्षा में खड़े रह जाते हैं, पर पाँवों को कष्ट देने से घबराते हैं। कहते हैं कि लखनऊ के एक नवाब तब तक जूते नहीं पहन सकते थे, जब तक कि सेवक उन्हें उनके सामने सीधा करके न रख देता था। जब अंग्रेजों ने उसके महल को घेर लिया तो वे सेवक द्वारा जूते न रखे जाने के कारण भाग जाने में असमर्थ रहे और पकड़े गए। वस्तुतः परावलम्बन बहुत बड़ा दोष है। यह आलस्य का ही दूसरा रूप हैं और आलस्य शरीर में स्थित मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। "आलस्यो हि मनुष्याणां शरीरस्थो महारिपुः।"

उन्नति का आधार

आज हमें विद्या, विज्ञान, शिल्प, कला-कौशल में जितने राष्ट्र उन्नत दिखाई देते हैं, यह उनके स्वावलम्बन या आत्म-निर्भरता का ही परिणाम है। सब जानते हैं कि जापान द्वितीय महायुद्ध में जर्जर हो गया था। पर स्वावलम्बन के ही गुण के कारण आज वह शिल्प तथा उद्योग-धन्धे में विश्व का अग्रणी राष्ट्र बन गया है।

संसार में जितने भी महापुरुषों के नाम हम सुनते हैं, वे भी स्वावलम्बन से ही महान् बने। शिवाजी एक साधारण दरबारी के पुत्र होकर इसी गुण के प्रभाव से हिन्दु-पद-शाही की स्थापना कर सके। बुन्देला वीर छत्रसाल भी अपने पिता चम्पतराय के मरने के पश्चात् इसी गुण से बुन्देलखण्ड में स्वतंत्र बुन्देला राज्य की स्थापना कर सके। अमेरिका के सोलहवें राष्ट्रपति अब्राहिम लिंकन साधारण बढ़ई से स्वावलम्बन के कारण ही उच्च पद को प्राप्त कर सके।

उपसंहार

स्वावलम्बन या आत्म-निर्भरता का यह गुण वस्तुतः श्रेष्ठ गुण है। इसको अपनाने से सफलता व्यक्ति के चरण चूमती है। इसी को अपने पैरों पर खड़ा होना कहते हैं। 'अपना हाथ जगन्नाथ' लोकोक्ति इसी गुण के महत्त्व को स्पष्ट करती है। अतः जीवन में सफलता के इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति को स्वावलम्बन के इसी गुण को अपनाना चाहिए। अंग्रेजी की एक प्रसिद्ध लोकोक्ति है—

"God help those who helps them selves"

—०—

भारतीय संस्कृति

प्रस्तावना

'सम्' पूर्वक 'कृ' धातु से 'क्तिन्' प्रत्यय लगाने पर 'संस्कृति' शब्द का निर्माण होता है। 'संस्कृति' का अभिप्राय—मन और आत्मा का संस्कार। मन और आत्मा के संस्कार के लिए मानव समाज ने जो 'सम्यक् कृति' की है, वह भी संस्कृति हुई। मनुष्य प्रारम्भ से ही अपनी स्थिति में निरन्तर सुधार करता आया है। उसके रहन-सहन, खान-पान, वेष-भूषा आदि में प्रारम्भिक अवस्था की अपेक्षा आज अत्यधिक विकास हो चुका है, इसे सभ्यता कहा जाता है। मनुष्य केवल भौतिक परिस्थितियों में ही सुधार करके संतुष्ट नहीं होता। शरीर के साथ मन और आत्मा भी हैं। मन और आत्मा के विकास और उनकी संतुष्टि के लिए मनुष्य ने जो प्रयत्न किया—वही संस्कृति है।

संस्कृति की उपयोगिता

संस्कृति मानव मन के अज्ञान को दूर करती है, चित्त के भ्रम को और अज्ञान जनित अन्धकार को दूर करती है, ज्ञान-ज्योति का प्रकाश करती है, सद्वृत्ति की स्थापना करती है और दुर्गुणों को नष्ट करती है। संस्कृति निर्मल मन को आनंद देती है और शक्ति देती है; संस्कृति मानव, राष्ट्र और विश्व का उपकार करती है। संस्कृति के बिना कोई भी सुख-शान्ति प्राप्त नहीं कर सकता। संस्कृति

ही मानव की कल्याणकारणी, जीवन संचालिका और अन्तःकरण को सुखी करने वाली होती है। संस्कृति ही मानवों में विश्वबन्धुत्व की भावना भरकर लोक-कल्याण करती है। भारतीय संस्कृति इन सभी विशेषताओं से युक्त होकर विश्व संस्कृतियों के तारामण्डलों में सूर्य की ज्योति के समान दीप्त हो रही है।

भारतीय संस्कृति की विशेषता

भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीनतम संस्कृति है। यूनान, मिश्र और रोम की संस्कृतियों से भी यह अति उन्नत और पुरानी है। वे सभ्यताएं काल के कराल गाल में समा गई हैं, किन्तु भारतीय संस्कृति अनेक संकटों को झेलते हुए आज भी प्राचीन रूप में जीवित-जागृत है।

"यूनान मिश्र रोमां सब मिट गए जहां से।
बाकी मगर है अब भी नामो निशां हमारा।"

हम भारतीयों को अपनी इस श्रेष्ठ संस्कृति पर गर्व है।

भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं—

धार्मिक भावना—भारतीय संस्कृति धर्म प्रधान है। धर्म भाव ही मनुष्यों को पशुओं से भिन्न करता है। जिन नियमों में समाज का धारण होता है और जिनसे इहलौकिक तथा पारलौकिक सुख की प्राप्ति होती है, उसे ही धर्म कहते हैं। मनु महाराज ने धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, धी, (प्रज्ञा), विद्या और अक्रोध दश-लक्षणात्मक धर्म माना है।

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीः विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्॥

सदाचार भावना—सदाचार ही मनुष्यों को पशुओं से अलग करता है। 'आचारः परमो धर्मः, कहकर हमारे यहाँ सदाचार को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है। ब्रह्मचर्य धारण करना, सात्विकता, शील, विनम्रता, मन-वचन-कर्म की एकता. इन्द्रियों और मन का संयम सदाचार के अन्तर्गत आते हैं।

इसी प्रकारः—

'मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्व भूतेषु यः पश्यति स पण्डितः॥'

पराई स्त्री को मां के समान मानना, पराए धन को मिट्टी के ढेले के समान समझना और सभी प्राणियों को अपने ही समान मानना यह भी सदाचार का ही अंग है और यह भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता है। इन भावनाओं से मन का समस्त क्लेश दूर होता है और मानव में देवत्व के गुण आते हैं।

आध्यात्मिक भावना—भारतीय संस्कृति में भौतिक पक्ष की अपेक्षा आध्यात्मिक पक्ष को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है। हमारी संस्कृति आत्मा को अजर-अमर मानती है। शारीरिक सुखों की अपेक्षा इसमें आत्मिक सुख को महत्त्व दिया है। उपनिषदों में कथाओं के माध्यम से आत्मा के रहस्य को समझाया गया है और कहा गया कि आत्मा को ही सुनना चाहिए ; आत्मा को ही जानना चाहिए और आत्मा का ही ध्यान रखना चाहिए। आत्मज्ञान ही सब ज्ञानों में श्रेष्ठ है। इसी को ब्रह्म-विद्या भी कहा गया है। अत्यधिक भौतिक सुखों से अशान्त और त्रस्त मानवता को भारतीय संस्कृति की आध्यात्मिक भावना ही सुख देने में समर्थ है, अन्य कोई भावना नहीं। आत्मा में रमण करने वाले को जो सुख है, वह सुख धन और तृष्णाओं के पीछे भागने में नहीं है।

सन्तोषामृत तृप्तानां यत्सुखं शान्त चेतसाम्।
कुतस्तद् धन लुब्धानामितश्चेतश्चधावताम्॥

अन्य विशेशताएं

उक्त विशेषताओं के साथ ही **पुनर्जन्म** की **भावना, मोक्ष प्राप्ति की भावना**—अर्थात् तपस्या द्वारा जन्म-मरण के बन्धन से छूटकर आत्मा का परमात्मा में विलीन हो जाने की भावना भारतीय संस्कृति की एक विशेषता है। इसी प्रकार **अभयत्व की भावना**भी भारतीय संस्कृति की अन्य विशेषता है। निर्भय मनुष्य ही विलक्षण और अलौकिक कार्य कर सकता है, किन्तु भीरु कुछ नहीं कर सकता। 'यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु' इसीलिए कहा गया है।

जीव मात्र में ईश्वर की भावना भी हमारी संस्कृति की विशेषता है।ईश्वर संसार के कण-कण में समाया है—जीव ईश्वर का अंश है:—

'ईश्वर अंश जीव अविनाशी ।
चेतन अमल सहज सुख राशी ।'

अनेकता में एकता की भावना भारतीय संस्कृति की महत्त्वपूर्ण विशेषता है। वह ईश्वर एक है, ज्ञानी उसको अनेक नामों से पुकारते हैं, "**एकं सद्विप्राःबहुधा वदन्ति** ।" यह भावना अनादि और दिव्य है । इसी कारण मानव-मानव में प्रेम सहयोग और परोपकार की भावनाएं पनपी हैं, तथा सहिष्णुता को जन्म मिला है ।

'वसुधैव कुटुम्बकम्' अर्थात् समस्त संसार एक परिवार है। भारतीय संस्कृति की इस उदात्त भावना ने मानव को मानव से प्रेम करना सिखाया है। इसी प्रकार :—

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भाग् भवेत् ॥

यह प्रार्थना हमारी दिव्य संस्कृति का प्राण है। इसी के आधार पर यह आज तक टिकी है। हमें गर्व है कि हम इस श्रेष्ठ संस्कृति के उत्तराधिकारी तथा पुजारी हैं। प्राणपण से भी हम इसकी रक्षा करेंगे ।

—o—

हिन्दी का एक आधुनिक महाकवि

(जयशंकर प्रसाद)

प्रस्तावना

आधुनिक हिन्दी काव्य में छायावाद और रहस्यवाद के कवियों में श्री जयशंकर प्रसाद का स्थान सर्वोच्च है। उनका काव्य अपने युग की चेतना से परिपूर्ण है। उन्होंने दर्शन व मनोविज्ञान की पृष्ठभूमि पर अपने काव्य की रचना की है। वे रस को ही काव्य की आत्मा मानने वाले कवि थे। यद्यपि उनके काव्य में सभी रसों का वर्णन है; पर शृंगार, करुण व शान्त रस की अधिकता उसमें है। आनन्द में उनके काव्य तत्त्व की समाप्ति हुई है। प्रसाद जी अपने काव्य के द्वारा

जन जीवन में सांस्कृतिक चेतना स्थापित करना चाहते थे, जिसमें वे सफल रहे।

परिचय—श्री जयशंकर प्रसाद का जन्म काशी के एक प्रसिद्ध वैश्य कुल में विक्रम संवत् 1946 में हुआ था। इनके पिता का नाम देवी प्रसाद था। इनके दादा शिवरत्न 'सुंघनी साहू' के नाम से विख्यात थे। इनके पिता बड़े ही साहित्य प्रेमी थे। प्रसाद जी ने विद्यालय में जाकर बहुत कम शिक्षा ग्रहण की। उनकी अधिकांश शिक्षा घर पर ही हुई। संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी की शिक्षा इन्होंने घर पर रहकर ही प्राप्त की। दर्शन में रुचि होने के कारण इन्होंने उपनिषद्, दर्शन, बौद्ध व शैव साहित्य का गहन अध्ययन किया। इससे इनके ज्ञान में वृद्धि हुई। छोटी अवस्था में ही इनके पिता का देहान्त हो गया। कुछ वर्ष बाद उनके बड़े भाई भी—जो दुकान सम्भालते थे—चल बसे। अब व्यापार का भार इन पर ही आ गया। ये दुकान पर जाते, किन्तु वहाँ जाकर कविताएं लिखा करते। वैसे प्रसाद जी प्रकृति से गम्भीर, शिष्ट एवं उदार थे। साहित्य साधना करते हुए उनका देहान्त 15 नवम्बर सन् 1931 (विक्रमी सं० 1994) को हो गया।

रचनाएं—यद्यपि प्रसाद जी ने काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानियां, निबन्ध आदि भी लिखे हैं, किन्तु मुख्यतः वे कवि ही थे। चित्राधार, करुणालय, महाराणा का महत्त्व, प्रेम-पथिक, कानन कुसुम, झरना, लहर, आँसू और कामायनी इनकी काव्य-रचनाएं हैं। इनमें 'कामायनी' आधुनिक हिन्दी-साहित्य का श्रेष्ठ महाकाव्य है। यह प्रसाद की कीर्ति का अमर आधार है। प्रसाद जी ने खड़ी बोली में इस की काव्य रचना की है। भाव, भाषा, अलंकार व छन्दों का अनोखा समन्वय उनके इस काव्य में हुआ है।

काव्यगत विशेषताएं—प्रसाद जी मूलतः सौन्दर्य और प्रेम के कवि थे। सौन्दर्य का सूक्ष्म चित्रण इनके काव्य में हुआ है। 'आँसू' काव्य की ये पंक्तियां देखिए—

जो घनी भूत पीड़ा थी मस्तक में स्मृति सी छाई।
दुर्दिन में आँसू बनकर वह आज बरसने आई॥

+ + +

शशि मुख पर घूंघट डाले आंचल में दीप छिपाये।
जीवन की गोधूली में कौतूहल से तुम आये॥

प्रकृति के सौन्दर्य का चित्रण करने में प्रसाद जी को अपूर्व सफलता मिली है। आलम्बन (स्वतन्त्र) और उद्दीपन के रूप में उन्होंने प्रकृति का वर्णन किया है। कहीं प्रकृति में मानवता (चेतना) का भी उन्होंने आरोप किया है। प्रभात के सौन्दर्य का चित्रण करने वाले इस गीत का हिन्दी-साहित्य में विशेष स्थान है—

बीती विभावरी जाग री !
अम्बर पनघट पर डुबो रही तारा घट उषा नागरी।
खग कुल कुल-कुल सा बोल रहा, किसलय का आंचल डोल रहा।
लो यह लतिका भी भर लाई, मधु मुकुल नवल रस गागरी॥

प्रसाद जी के काव्य में आन्तरिक भावों का भी बड़ा मनोरम चित्रण हुआ है। 'कामायनी' में लज्जा भाव का चित्रण करते हुए वे कहते हैं –

वैसे ही माया में लिपटी अधरों पर अंगुली धरे हुए।
माधव के सरस कुतूहल का आँखों में पानी भरे हुए।
नीरव निशीथ के लतिका-सी तुम कौन आ रही हो बढ़ती ?
कोमल बांहें फैलाये-सी आलिंगन का जादू पढ़ती।

प्रसाद जी के काव्य में शृंगार रस का सुन्दर ही वर्णन हुआ है, पर उसमें मर्यादा का उल्लंघन नहीं हुआ है, वासना की गन्ध उसमें नहीं है। कामायनी में श्रद्धा के सौन्दर्य का वर्णन इन शब्दों में किया गया है—

नित्य यौवन छवि से दीप्त, विश्व की करुण कामना मूर्ति।
स्पर्श के आकर्षण से पूर्ण, प्रकट करती ज्यों जड़ में स्फूर्ति॥

रीतिकालीन कवियों ने नारी को वासना की मूर्ति माना, पर 'प्रसाद' जी ने उसके प्रति अत्यधिक श्रद्धा व्यक्त की है—

नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में ;
पीयूष स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में॥

अपने काव्य में प्रसाद जी ने आदर्श और यथार्थ का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया है। उन्होंने कहा है—

जिसे तुम समझते हो अभिशाप जगत की ज्वालाओं का मूल।
ईश का वह रहस्य वरदान, इसे तुम कभी न जाना भूल॥

दुःख की पिछली रजनी बीच, विकसता सुख का नवल प्रभात ।
एक पर्दा यह झीना नील छिपाये है जिसमें सुख गात ।।

प्रसाद जी दार्शनिक कवि थे । उनके दर्शन का मूल समरसता एवं लोक-कल्याण की भावना है । वे अपने काव्य के द्वारा इसी आनन्द भाव की प्रतिष्ठा करना चाहते थे । कामायनी के उपसंहार उन्होंने लिखा है —

समरस थे जड़ या चेतन सुन्दर साकार बना था ।
चेतनता एक विलसती, आनन्द अखण्ड घना था ।।

वास्तव में प्रसाद जी का हृदय मानव-कल्याण की भावना से भरा था । तभी तो कामायनी से श्रद्धा मनु से कहती है—

औरों को हँसते देखो मनु, हँसों और सुख पाओ ।
अपने सुख को विस्तृत कर लो सबको सुखी बनाओ ।।

प्रसाद जी को अपने देश भारत और भारतीय संस्कृति के प्रति अनन्य अनुराग था । उसकी श्रेष्ठता से अभिभूत होकर उन्होंने कहा—

'अरुण यह मधुमय देश हमारा,
जहाँ पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा ।

उपसंहार

प्रसाद जी के काव्य में भारतीय संस्कृति, दर्शन एवं इतिहास का संगम है। उसमें पुरातन और नवीन की मनोवैज्ञानिक ढंग से व्याख्या की गई है । उनके काव्य में प्रबन्धात्मकता व गीतितत्त्व दोनों का समन्वय हुआ है । उन्होंने संस्कृत निष्ठ भाषा का प्रयोग किया है । वस्तुतः प्रसाद जी हिन्दी के उत्कृष्ट साहित्कार थे । भारतीयों को उन पर गर्व है ।

—o—

मेरा प्रिय कवि

(भक्त सूरदास)

प्रस्तावना

भक्तिकाल काव्य की श्रेष्ठता की दृष्टि से हिन्दी-साहित्य का स्वर्ण काल कहलाता है । इस काल के कवियों में प्रमुख कृष्ण भक्त सूरदास जी का नाम

स्वर्णाक्षरों में अंकित है। काव्य के रसिकों और कृष्ण भक्ति के प्रेमियों दोनों को समान रूप से उनकी रचनाओं से आकृष्ट किया है। साहित्य-सरोवर में आवागाहन करते हुए जब से मेरा इन भक्त-कवि से परिचय हुआ है, तभी से वे मेरे प्रिय कवि बन गए हैं।

जन्म—सूरदास का जन्म विक्रम संवत् 1535 में वैशाख शुक्ल पंचमी को सीही में सारस्वत ब्राह्मण कुल में हुआ था। वे जन्म से ही अन्धे थे। यौवन में ही इन्हें वैराग्य हो गया था और ये आगरा-मथुरा के बीच गौघाट पर रहने लगे थे तथा एक अच्छे महात्मा और संगीतज्ञ के रूप में प्रसिद्ध थे। यहीं इनकी भेंट पुष्टि मार्ग के प्रवर्तक महाप्रभु बल्लभाचार्य से हुई। ये उनके शिष्य बन गये। उन्हीं की प्रेरणा पर इन्होंने श्रीकृष्ण की लीलाओं का गान किया। इनकी मृत्यु पारसौली में हुई थी।

रचनाएं—यद्यपि सूरदास के लिखे लगभग चौबीस ग्रन्थ माने जाते हैं, पर उनमें तीन ही प्रसिद्ध हैं। वे हैं—सूरसागर, सूरसारावली और साहित्य-लहरी। इनमें भी सर्वाधिक प्रसिद्ध और श्रेष्ठ ग्रन्थ हैं—सूरसागर। इसमें लगभग दस सहस्र पद हैं, जो कि विषय के अनुसार अलग-अलग बारह स्कन्धों में विभक्त हैं। सूर के काव्य और भक्ति सम्बन्धी पदों को विनय, वात्सल्य और श्रृंगार इन तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है।

विनय—सूरदास के विनय सम्बन्धी पदों में श्रीकृष्ण के प्रति अनन्य निष्ठा दीनता और भक्त का सरल और विनीत आग्रह देखने को मिलता है। श्रीकृष्ण ही सूर के सर्वस्व हैं, अन्य कोई नहीं। इस भाव को प्रकट करते हुए वे कहते हैं—

मेरा मन अनत कहाँ सुख पावे।
जैसे उड़ि जहाज को पंछी पुनि जहाज पै आवे॥
कमल नयन को छांड़ि महातम और देव को ध्यावै।
परम गंग को छांड़ि पियासो दुर्मति कूप खनावै॥
जिन मधुकर अंबुज रस चाख्यो क्यों करील फल खावै।
'सूरदास' प्रभु कामधेनु तजि छेरी कौन दुहावै॥

अपनी दीनता और प्रेमपूर्ण आग्रह को प्रकट करते हुए वे भगवान् से कहते हैं—

आज हौं एक एक करि टरि हौं ।
कै हम ही कै तुम ही माधव;
आपुन भरोसे लरिहौं ।

वात्सल्य—सूरदास की सबसे बड़ी सफलता भगवान् श्रीकृष्ण की बाल-लीलाओं के वर्णन में है । उनका वात्सल्य (बाल) वर्णन इतनी सरल, सजीव तथा सरस है कि उसकी समता कोई अन्य नहीं कर सकता । शिशु की विभिन्न चेष्टाओं, उसके सौंदर्य और मातृ-हृदय की भावनाओं का जितना सूक्ष्म; स्वाभाविक और हृदयग्राही वर्णन सूरदास ने किया है, उतना अन्य कोई क्या कर सकेगा ?

माँ की वात्सल्य भावना का एक उदाहरण देखिए—

यशोदा हरि पालने झुलावै ।
हलरावै दुलराइ मल्हावै जोइ सोइ कछु गावै ।।
मेरे लाल को आउ निंदरिया काहे न आनि सुवावै ।
तू काहे नहिं बेगि सी आवै तो को कान्ह बुलावै ।।
कबहु पलक हरि मूंद लेत हैं, कबहुं अधर फरकावै ।
सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि करि-करि सैन बतावै ।।
इहि अन्तर अकुलाइ उठे हरि जसुमति मधुरै गावै ।
जो सुख 'सूर' अमर मुनि दुरलभ सो नंद भामिनी पावै ।।

बालकों की स्पर्धा-भावना का एक रूप इस पद में देखें—

मैया कबहिं बढ़ेगी चोटी ।
किती बार मोहि दूध पिवत भई यह अजहूं है छोटी ।
तू तो कहत बल की बेनि ज्यों ह्वै है लाँबी मोटी ।
काढत गुहत नहावत ओंछत नागिन सी भुंई लोटी ।

चोरी पकड़े जाने पर उसे छुपाने की बाल-चातुरी का एक उदाहरण देखिए—

मैया मैं नहिं माखन खायो ।
ख्याल परै ये सबै सखा मिलि मेरे मुख लपटायो ।
देखि तू ही छींके पर भाजन ऊंचे धरि लटकायो ।।
तू ही निरखि नान्हें कर अपने मैं कैसे करि पायो ।।

मुख दधि पोंछ कहत नन्द नन्दन दोना पीठि दुरायौ ।
डारि सांट मुसुकाइ तबहिं गहि सुत को कंठ लगायो ॥

शृंगार—जिस प्रकार सूर का वात्सल्य वर्णन अद्वितीय है, उसी प्रकार उनका शृंगार वर्णन भी श्रेष्ठ है । सूर ने श्रीकृष्ण और राधा के प्रेम का विकास पूर्णतः मनोवैज्ञानिक भाव-भूमि पर दिखाया है । उसके संयोग और वियोग दोनों पक्ष सुन्दर हैं, पर वियोग-वर्णन और भी उत्तम बन पड़ा है । वियोग सम्बन्धी उनके पदों में सरलता और मार्मिकता दोनों हैं । देखिए—

निसि दिन बरसत नैन हमारे ।
सदा रहति पावस ऋतु हम पै जब ते स्याम सिधारे ।
दृग अंजन नहिं लागत कबहूं उर कपोल भए कारे ।
कंचुकि नहिं सूखति सुनु सजनी उर बिच बहत पनारे ॥

कला पक्ष—सूरदास का भाव-पक्ष जितना सुन्दर है, उनका कलापक्ष भी उतना ही श्रेष्ठ है । सूर काव्य के कला पक्ष की एक विशेषता है, उनके पदों की गेयता । उनके पदों का गान करते हुए सहृदय भावुक जन झूम उठते हैं । सूर की अन्य विशेषता यह है कि वे एक ही विषय या भाव को अलंकारों की सहायता से अनूठे ढंग से अनेक रूप में उपस्थित कर सकते हैं । सूर काव्य की भाषा ब्रजभाषा है, जो कि अत्यन्त कोमल, सरस, सरल और प्रवाहपूर्ण है । सूर की इन्हीं विशेषताओं के कारण प्रसिद्ध गायक तानसेन ने कहा था—

किधौं सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर ।
किधौं सूर को पद लग्यो, तन मन धुनत शरीर ॥

—o—

हिन्दी का एक उपन्यासकार

(मुंशी प्रेमचन्द)

प्रस्तावना

"आज समाज को ऐसे नये साहित्य की आवश्यकता है, जिसमें उच्च चिन्तन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौन्दर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो," जीवन की

सच्चाइयों का प्रकाश हो; जो हममें गति, संघर्ष और बेचैनी पैदा करे, सुलाए नहीं, क्योंकि अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है।" सन् 1936 ई० में लखनऊ में सम्पन्न हुए 'अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ' के प्रथम अधिवेशन में अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए प्रेमचन्द जी ने ये शब्द कहे थे।

जनता के आत्मतेज से युक्त ऐसे ही चेतनापूर्ण साहित्य को लेकर प्रेमचन्द जी हिन्दी साहित्य क्षेत्र में अवतीर्ण हुए थे। वे हिन्दी-कथा-साहित्य के युग प्रवर्तक कलाकार थे। उनसे पहले हिन्दी में तिलस्मी, जासूसी और ऐय्यारी उपन्यासों की धूम थी। उन्होंने ही सर्वप्रथम उपन्यास-साहित्य को तिलस्म की भूल-भुलैया से निकाल कर जन-जीवन के यथार्थ धरातल पर लाकर खड़ा किया था, अवास्तविक घटनाओं के माया जाल से उसे मुक्त कर उसका सम्बन्ध मानव-चरित्र से जोड़ा था। भूत और भविष्य की मोहक कल्पनाओं से हटाकर वर्तमान के कटु सत्य से उसका नाता जोड़ा था। प्रेमचन्द जी ने पहली बार साम्राज्य-वादी, सामन्तवादी शोषण व्यवस्था से पीढ़ित निर्धन भारत की पद-दलित और अभिशप्त जनता का साथ सच्चाई और निडरता से दिया था। उन्होंने भारत की सामान्य जनता—किसान, मजदूर और मध्यम वर्ग के विचारों, आकांक्षाओं, सुख-दुःख, आशा-निराशा, जय-पराजय को सबसे अधिक स्वर दिया। अपने समय की ज्वलन्त, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं को वाणी देकर अपने उपन्यासों को उन्होंने उस युग का 'महाकाव्य' बना दिया।

परिचय—युग-चेतना के इस महान् कलाकार का जन्म विक्रमी संवत् 1937 (अर्थात् सन् 1880 ई0) को काशी के समीप एक छोटे से गाँव लमही में एक कायस्थ परिवार में हुआ था। उनका जन्म का नाम धनपतराय था।

शैशव से ही इन्हें अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में पिता के मरने पर सारी गृहस्थी का भार भी इन्हीं पर आ गया था, प्रेमचन्द जी गाँव में रहते और पढ़ने काशी जाते थे। हाई स्कूल परीक्षा उत्तीर्ण कर वे कालेज में प्रविष्ट हुए। पाठ्य-क्रम के अतिरिक्त उन्हें कहानी व उपन्यास पढ़ने का बड़ा शौक था। इण्टर परीक्षा में उत्तीर्ण होकर वे एक स्कूल में अध्यापन कराने लगे। पश्चात् राजकीय शिक्षा विभाग में सब-डिप्टी-इन्सपेक्टर हो गए।

देश में असहयोग आन्दोलन छिड़ने पर उसके प्रभाव में आए। नौकरी छोड़कर वे उस आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने लगे। अब उन्होंने लेखन को ही

व्यवसाय बना लिया। पहले वे 'नवाबराय' नाम से ही उर्दू में लिखते थे। बाद में 'जमाना' पत्र के सम्पादक मुंशी दयानारायण 'निगम' ने उन्हें 'प्रेमचन्द' नाम दिया। तबसे वे इसी नाम से प्रसिद्ध हो गए और इसी नाम से लिखने लगें।

व्यक्तित्व—प्रेमचन्द जी हृदय के बड़े दृढ़ थे। निरन्तर कठिनाइयों से संघर्ष करते हुए भी उन्होंने आह न की। संघर्षों से निराश न हुए। अपने विचारों को निर्भीक व निःसंकोच रूप से इसी कारण दूसरों के सामने रख सके। ऐसे असाधारण व्यक्तित्व वाले प्रेमचन्द देखने में बिल्कुल साधारण, सरल और विनम्र थे। सामान्यतः वे एक भारतीय ग्रामीण की वेश-भूषा में ही रहते थे। भीतर व बाहर कहीं भी उनमें दिखावे की भावना न थी।

रचनाएं—प्रेमचन्द जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। अपनी विचारधारा और अपनी आवाज को जनता तक पहुँचाने के लिए उन्होंने उपन्यास लिखे, कहानियाँ लिखीं, नाटकों की रचना की, नि बन्ध लिखे और पत्र निकाले। अन्य भाषाओं की अच्छीं कृतियों के अनुवाद भी किए। प्रेमा, वरदान, प्रतिज्ञा, सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, गबन, निर्मला, कर्मभूमि, कायाकल्प, गोदान और मंगलसूत्र (अपूर्ण) प्रेमचन्द जी के उपन्यास हैं। उन्होंने प्रायः तीन सौ कहानियाँ लिखी हैं जो 'मानसरोवर' के आठ भागों में प्रकाशित हैं। प्रेम की वेदी, कर्बला और संग्राम उनके नाटक हैं। हड़ताल, चाँदी की डिबिया आदि अनुवाद हैं। 'कुछ विचार', 'कलम और तलवार' आदि निबन्ध व जीवनी हैं। 'जागरण' और 'हंस' पत्रिकाओं का सम्पादन भी उन्होंने किया।

प्रेमचन्द के उपन्यास

उपन्यास की परिभाषा करते हुए प्रेमचन्द जी ने लिखा है—"मैं उपन्यास को मानव-जीवन का चित्र मात्र समझता हूं। मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है।" प्रेमचन्द जी के उपन्यास इस परिभाषा पर खरे उतरे हैं। उनमें उन्होंने जन-सामान्य के सुख-दुःख, आचार-विचार, रहन-सहन, आशा-आकांक्षा, भाव-भाषा को सजीव रूपमें उपस्थित किया है। झोपड़ियों से लेकर महलों तक, भिखारी से लेकर महन्तों तक, कुल-वधुओं से लेकर वेश्याओं तक, रोटियों के एक-एक टुकड़ें के लिए बिलखते हुए निर्धन मानव प्राणियों से लेकर मखमली सेज पर सोने वाले रईसों तक;

गाँव से लेकर नगरों तक समाज का कोई भी वर्ग ऐसा नहीं जिसका वर्णन उन्होंने न किया हो। इन उपन्यासों में उन्होंने अपने युग की सभी महत्वपूर्ण सामाजिक. धार्मिक. आर्थिक और राजनैतिक समस्याओं का चित्रण किया है।

'सेवासदन' में उन्होंने वेश्याओं की समस्या पर प्रकाश डाला है। प्रेमाश्रम में जमींदारों व किसानों का संघर्ष दिखाया। 'रंगभूमि' में उन्होंने नए उद्योग-धन्धों से उत्पन्न समस्याओं पर प्रकाश डाला है। 'गबन' में व्यक्ति के अपने को बड़ा सिद्ध करने से होने वाली और अपनी वास्तविकता को छुपाने से होने वाली हानियों पर प्रकाश डाला गया है। 'कर्म-भूमि' में अछूत आन्दोलन और लगान बन्दी की समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। 'निर्मला' में अधेड़ उम्र में होने वाले बेमेल विवाह की समस्याओं को लिया गया है। 'कायाकल्प' में पुनर्जन्म सम्बन्धी कुछ धारणाएं हैं और 'गोदान' में किसान और महाजन के संघर्ष को उन्होंने वाणी दी है।

कथावस्तु, पात्र और चरित्र-चित्रण. कथोपकथन्, देशकाल और उद्देश्य की दृष्टि से प्रेमचन्द का उपन्यास-साहित्य श्रेष्ठ है। उनके उपन्यासों के कुछ पात्र तो अत्यन्त सजीव और अविस्मरणीय है। सेवा-सदन की 'सुमन', रंगभूमि का 'सूरदास' और गोदान का 'होरी' इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

उपसंहार

वस्तुतः प्रेमचन्द जी के उपन्यासों की सबसे बड़ी विशेषता मानव-चरित्र की व्याख्या ही है। इससे पूर्व के उपन्यासों में वह विशेषता न थी। उन्होंने अपनी कला का निर्माण जीवन के चित्रण में किया, जिसमें वे पूर्णतः सफल रहे हैं। यर्थाथ रूप में वे इस युग के कलाकार थे।

—o—

मेरी प्रिय पुस्तक

(रामचरित मानस)

प्रस्तावना

जब से मनुष्य ने लिखने की कला का विकास किया है, तब से आज तक जिन-जिन पुस्तकों की रचना हुई है,वे असंख्य हैं। विश्व की विभिन्न भाषाओं में

एक से बढ़कर एक पुस्तकों का निर्माण हुआ और आगे भी होगा। हिन्दी-साहित्य का भण्डार भी अनेकों पुस्तकों से भरा हुआ है। उनमें कुछ को मैं चाव से पढ़ता हूँ, किन्तु उनके भी जिसे मैं अपना सर्वप्रिय ग्रंथ कहता हूँ और जिसे अनेक बार पढ़ने पर भी मन तृप्त नहीं होता, वह ग्रंथ है—गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित—'रामचरित मानस'। भारतीय संस्कृति, नीति, सदाचार, गृहस्थ धर्म का यह एक विश्वकोष है।

विषय

'रामचरित मानस' में गोस्वामी तुलसी ने मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के लोक-विश्रुत चरित्र का वर्णन किया है। भगवान् श्री राम के पावन चरित्र का वर्णन सर्वप्रथम आदि कवि बाल्मीकि ने अपनी पुस्तक 'रामायण' में किया है। उसके पश्चात् अनेक पुराणों, महाभारत, नाटकों और काव्यों में भी उस कथा का वर्णन किया गया है। 'अध्यात्म रामायण' और 'अद्भुत रामायण' में भी श्रीराम की कथा का वर्णन है। गोस्वामी जी ने भी महर्षि बाल्मीकि और अन्य लेखकों की रचनाओं का आश्रय लेकर 'रामचरित मानस' की रचना की है। मानस के प्रारम्भ में ही उन्होंने इस ओर संकेत करते हुए कहा है—

नाना पुराण निगमागम सम्मतं यत्,
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ॥
स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा,
भाषा निबन्धमति मञ्जुल मातनोति ॥

रामचरित मानस में सात काण्ड हैं। जो क्रमशः इस प्रकार हैं- बालकाण्ड, अयोध्या काण्ड, अरण्य काण्ड, किष्किन्धा काण्ड, सुन्दर काण्ड, लंका काण्ड तथा उत्तर काण्ड। 'बालकाण्ड' में 'मानस' की रचना की भूमिका और श्रीराम के जन्म के सम्बन्ध में अनेक कथाएं हैं। इनमें शिव-पार्वती का विवाह और नारद मोह सम्बन्धी प्रसंग पर्याप्त रोचक हैं। श्रीराम के जन्म व शैशव की चर्चा इसी में है। 'अयोध्या काण्ड' में श्रीराम व सीता के विवाह उनके अभिषेक की तैयारी और वन-गमन की बात है। 'अरण्य काण्ड' में श्रीराम का चित्रकूट में निवास व सीता-हरण की घटना मुख्य है। 'किष्किन्धा काण्ड' में राम-सुग्रीव की मैत्री व बालि वध की घटनाएं मुख्य हैं। 'सुन्दर काण्ड' अपने नाम के समान ही सुन्दर और

रोचक है। इसमें महावीर हनुमान के पराक्रम का विशद वर्णन है। पवनसुत हनुमान का समुद्र लंघन, लंकिनी वध, सुरसा के मुख में प्रवेश, सीता का अन्वेषण, विभीषण से भेंट, सीता जी से वार्तालाप और लंका दहन की घटनाएं अत्यन्त ही रोमांचक तथा रोचक हैं। 'लंका काण्ड' में श्रीराम और रावण-युद्ध का और राम की रावण पर विजय का वर्णन है। 'उत्तर काण्ड' में श्रीराम का अयोध्या वापिस लौटना, भरत का उद्विग्नता और पश्चात् राम-राज्य की व्यवस्था का वर्णन है।

भाव पक्ष और कला पक्ष —'रामचरित मानस' तुलसी का ही नहीं, हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। आदर्श और भावना की दृष्टि से यह विश्व-साहित्य की सर्वश्रेष्ठ रचना कही जा सकती है। भक्ति, काव्य और नीति की त्रिवेणी इसमें बह रही है। समाज-धर्म, आचार-धर्म और राजनीति का इसमें समन्वय हुआ है। ज्ञान, भक्ति, कर्म का मेल इसमें है। द्वैत, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत का प्रतिपादन इसमें है तथा संस्कृत और लोक भाषा (हिन्दी) का समन्वय इसमें है। मानस में महाकाव्य के सभी लक्षण हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम इसके धीरोदत्तानायक हैं। शृंगार, वीर और शांत इन तीन प्रमुख तथा अन्य रसों का इसमें वर्णन हुआ है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों वर्गों की सिद्धि का आदर्श इसमें है। 'मानस' का कथा-सौष्ठव तथा प्रसंगानुकूल संवाद, उत्कृष्ट भाव-व्यंजना, वस्तु-व्यापार वर्णन में लेश मात्र भी कहीं शिथिलता नहीं है। जनक-वाटिक में राव व सीता का मिलन, राम-वन-गमन, दशरथ-मरण, चित्र-कूट में राम-भरत मिलन, लक्ष्मण के मूर्छित होने पर श्रीराम का विलाप आदि प्रसंग तो इस काव्य में ऐसे मर्मस्पर्शी हैं कि जिनको बार-बार पढ़ने पर भी तृप्ति नहीं होती। मानव के हर्ष, शोक, करुणा, द्वेष, क्षोभ, चिन्ता, क्रोध आदि हार्दिक भावों का कवि ने इसमें बड़ा ही सजीव, स्वाभाविक, रोचक और हृदयग्राही चित्रण किया है।

चरित्र-चित्रण की दृष्टि से भी रामचरित मानस श्रेष्ठ ग्रंथ है। इसके सभी पात्रों का चरित्र महान् है। वे अलौकिक होते हुए भी लौकिक हैं। वे हमारे ही समान सुख-दुःख का अनुभव करने वाले और संवेदनशील हैं। श्रीराम का मर्यादा पूर्ण उदात्त चरित्र हमारे हृदय में एक आदर्श की सृष्टि करता है और हमें उनके चरणों में झुकने को विवश कर देता है। कौशल्या, सुमित्रा, भरत;

हनुमान आदि का निर्मल चरित्र व्यक्ति को नवीन प्रेरणा हैं।

रसों का वर्णन भी इसमें सुन्दर है। श्रृंगार का वर्णन भी गोस्वामी जी ने बहुत ही सुन्दर और संयमित किया। जैसे कि--

कंकन किंकनि नूपुर धुनि सुनि। कहत लखन सन राम हृदय गुनि॥
मनहु मदन दंदुभी दीन्हीं। मनसा विश्व विजय कहुं कीन्हीं॥

वियोग श्रृंगार का एक मार्मिक चित्र भी देखें—

मन-क्रम-वचन चरण अनुरागी। केहि अपराध नाथ हौं त्यागी॥
अवगुन एक मोर मैं माना। बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना॥

अलंकार, छन्द, शैली और भाषा की दृष्टि से भी मानस बहुत उत्तम रचना है। धनुष-यज्ञ के प्रसंग पर सीता के सौन्दर्य और भावों को व्यक्त करने वाले उत्प्रेक्षा अलंकर की एक छटा देखिए—

प्रभुहि चितै पुनि चितई महि। राजत लोचन लोल॥
खेलत मनसिज मीन जुग। जनु विधु मंडल डोल॥

उपसंहार

सारांशत: 'रामचरित मानस' एक सर्वश्रेष्ठ काव्य ग्रंथ, धर्म ग्रंथ, नीति-शास्त्र और सदाचार-शास्त्र भी है। इसी कारण यह पुस्तक आज हिन्दू समाज के कुटिया से लेकर महलों तक रहने वालों में समान रूप में आदरणीय है। यह ग्रंथ परम आनन्द के साथ-साथ सन्तप्त जनों को मानसिक शान्ति भी प्रदान करता है।

—०—

एक लोकप्रिय खेल : क्रिकेट

(क्रिकेट पर इतना अधिक बल क्यों ?)

प्रस्तावना

आजकल भारत में राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय अनेक प्रकार के खेल प्रचलित हैं। उनमें क्रिकेट का खेल अत्यन्त लोकप्रिय हो रहा है। इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया वेटस्इण्डीज, पाकिस्तान और भारत में क्रिकेट का बड़ा नाम है। इन देशों में

लोग क्रिकेट के इतने दीवाने हैं कि मैच होने पर खाने-पीने की सुध-बुध भूलकर खेल देखने के लिए खेल के मैदान में डटे रहते हैं। जो लोग खेल के मैदान में नहीं जा सकते वे भी ट्रांजिस्टर, रेडियो या दूरदर्शन पर आँखों देखा हाल (रनिंग कमेंट्री) सुनने में व्यस्त रहते हैं। दुकान पर, सड़क पर, विद्यालयों में सर्वत्र क्रिकेट-प्रेमी लोग गणना (स्कोर) सुनने के चक्कर में रहते हैं।

क्रिकेट का आरम्भ

क्रिकेट का यह खेल सर्वप्रथम यूरोप में—विशेषकर इंग्लैण्ड में प्रारम्भ हुआ। इसके पश्चात् जहाँ-जहाँ ब्रिटिश सरकार ने अपने उपनिवेश बनाए, वहाँ इस खेल को अपने साथ ले गए। वहाँ के उच्च वर्ग, शासक वर्ग को अपने साथ करने के लिए उनका यह अच्छा शस्त्र सिद्ध हुआ। रूस, अमेरिका तथा अरब देशों में इसका प्रचलन नहीं है। भारत में भी यहां के राजाओं, नवाबों और उनके राजकुमारों ने ही इस खेल को पहले पहल अपनाया। अभी कुछ वर्ष तक— देशी राज्यों की समाप्ति के पश्चात् भी उन्हीं के उत्तराधिकारियों का इस खेल पर एकाधिपत्य था। गायकवाड़, नवाब पटौदी आदि ऐसे ही खिलाड़ी हैं। अब तो विद्यालयों और महाविद्यालयों के विद्यार्थियों में यह खेल पर्याप्त लोकप्रिय हो रहा है और बड़े-बड़े नगरों में तो कुछ सामान्य जन भी इसमें रुचि ले रहे हैं। कपिलदेव, श्रीकांत, रवि शास्त्री आदि इस वर्ग के खिलाड़ी हैं।

खेलने के प्रकार

क्रिकेट का खेल एक बहुत बड़े अण्डाकार मैदान में खेला जाता है। इसमें एक निश्चित दूरी पर दोनों ओर तीन-तीन विकिट भूमि पर गाड़ दिए जाते हैं। खेल विकिट के दोनों ओर खेला जाता है। इस खेल में दो दल होते हैं। प्रत्येक दल में ग्यारह-ग्यारह खिलाड़ी होते हैं। खेल को खिलाने वाले दो निर्णायक भी होते हैं, जिन्हें अंग्रेजी में 'एम्पायर' कहते हैं। खेल प्रारम्भ होने से पूर्व दोनों दलों के प्रमुख (कप्तान) खेल मैदान के मध्य के भाग में आते हैं। वहाँ एक सिक्का उछाल कर 'टॉस' किया जाता है। टॉस जीतने वाला दल पहले आरम्भ करता है।

क्रिकेट का मैच प्रायः पाँच दिन तक दो पारियों में खेला जाता है। अब तो एक दिवसीय मैचों की भी धूम मचने लगी है। दोनों दलों को दो-दो

पारियों में खेलना होता है। विकिट के पास खड़े होने वाला खिलाड़ी विकिट कीपर कहलाता है। विकिट कीपर और खेलने वाले खिलाड़ियों के हाथों में मोटे-मोटे दस्ताने और पाँवों में घुटने तक मोटे-मोटे पैड बंधे होते हैं, जिससे कि काठ की गेंद की चोट से उनकी रक्षा हो सके।

खेल प्रारम्भ होने पर एक ओर का गेंद फेंकने वाला, जिसे 'बाउलर' कहते हैं, एक निश्चित रेखा के पास आकर गेंद फेंकता है, दूसरी ओर विकिट के पास खड़ा बल्लेबाज उस गेंद को अपने बल्ले से दूर फेंकता है। उधर गेंद फेंकने वाले दौड़कर गेंद पकड़ना चाहते हैं तो इधर बल्लेबाज एक विकिट से दूसरी विकिट तक दौड़ते हैं। इस प्रकार वे जितने बार गेंद आने तक दौड़ते हैं, उसे 'दौड़' या 'रन' कहते हैं। यदि इसी दौड़ के मध्य विपक्षी गेंद से विकिट को गिरा देता है तो दौड़ने वाला—जिसने गेंद पर चोट की होती है—'रन-आउट' माना जाता है। कभी गेंद पर बल्ले की चोट लगने के अनन्तर विपक्षी खिलाड़ी यदि गेंद को बीच में ही पकड़ लेते हैं तो खेलने वाला 'कैंच-आउट' माना जाता है। गेंद फेंकने वाला अपनी ओर से प्रायः छह बार गेंद फेंकता है, इसे एक 'ओवर' कहते हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि एक ओवर में भी कोई दौड़ नहीं होती, उसे 'मिडन-ओवर' कहते हैं। एक ओवर पूरा होने पर विकिट रक्षक दूसरी ओर चला जाता है और तब गेंद फेंकने वाला दूसरी ओर से गेंद फेंकता है।

कभी ऐसा होता है कि खिलाड़ी गेंद को बल्ले से मैदान में उछाल कर खेल के मैदान से बाहर कर देता है और विपक्षी उसे पकड़ नहीं पाते तो उसे खिलाड़ी का चौका (चार दौड़) मान लिया जाता है। कभी ऐसा भी होता है कि गेंद मैदान में उछाल लिए बिना ही खेल सीमा से पार हो जाती है तो उसे छक्का (छह दौड़) कहा जाता है। खिलाड़ी कुछ दौड़ बना कर खेल से बाहर (आऊट) होते रहते हैं। कोई-कोई खिलाड़ी ऐसे भी होते हैं जो सौ दौड़ भी बना लेते हैं। उसे 'शतक' कहा जाता है।

क्रिकेट के खेल में जब एक दल के दस खिलाड़ी खेल चुकते हैं, तब पारी समाप्ति की घोषणा होती है। कभी-कभी खेलने वाले 'दौड़ों' की संख्या अधिक होने पर पहले क्रम से ही खेलते हैं। खेल की अवधि समाप्त होने पर जिस पक्ष के 'दौड़ों' की संख्या अधिक होती है, वह विजयी माना जाता है। कभी

निश्चित अवधि में यदि दोनों पारियों में किसी कारण से खेल नहीं खेला जाता तो मैच 'अनिर्णीत' समाप्त हो जाता है। कभी-कभी ऐसी भी स्थिति आती है कि एक दल इतनी अधिक 'दौड़ें' बना लेता है कि विरोधी दल को दूसरी पारी भी एक ही साथ खेलनी पड़ती है, जिसे 'फालो आन' कहते हैं। यदि वह दल तब भी पहले दल के समान दौड़ नहीं बना पाता तो उसे 'पारी से हार' कहा जाता है। खेल खेलते हुए किसी भी दल की संख्या अधिक होने पर और कुछ खिलाड़ियों के शेष रहने पर भी यदि कोई दल विजयी हो जाता है तो उसे उतने ही विकिट से विजयी घोषित किया जाता है, जितने खिलाड़ी शेष रह गए हों।

क्रिकेट से पक्षपात

यह खेल बड़ा ही रोचक और रोमांचक है, पर साथ ही बड़ा ही व्यय-साध्य और समय को नष्ट करने वाला भी है। हॉकी, फुटबाल आदि का मैच एक ही दिन में और कुछ ही घण्टों में समाप्त हो जाता है, पर क्रिकेट का मैच पाँच दिन तक प्रातः 8 से सायं 4 बजे तक होता रहता है। फिर आकाशवाणी तथा दूरदर्शन में अधिकारी भी इसके साथ अनावश्यक पक्षपात करके इसकी कमेंट्री भी प्रसारित करते हैं। रात्रि को भी खेल की मुख्य झलकियां दिखाते हैं, तथा अन्य रोचक कार्यक्रमों को रोक देते हैं। इस प्रकार इस पागलपन की वृद्धि में योग देते हैं। फिर और भी तो खेल हैं। हॉकी, फुटबाल, टेनिस, भारतीय खेल कबड्डी और खो-खो। उनकी ओर तो दूरदर्शन वालों का इतना ध्यान नहीं जाता। भारत जैसे विकासशील देश का इसमें रम जाना अच्छा नहीं। क्योंकि हम देखते हैं कि जब मैच होते हैं, दफ्तरों के बाबू, अधिकारी काम छोड़ खेल के मैदानों में आ डटते हैं। छात्र पढाई छोड़ देते हैं और अन्य काम करने वालों का ध्यान भी इसी ओर रहता है, वे सारे दिन रेडियो, ट्रांजिस्टर या दूरदर्शन पर मैच की टिप्पणी सुनने में ही लगा देते हैं। काम की कौन कहे ? पता नहीं दूरदर्शन और आकाशवाणी के अधिकारी तथा प्रसारण-मन्त्री इस अनावश्यक पक्षपात से कब छुटकारा पायेंगे और इस खेल के कारण होने वाले समय के नाश से जनता को बचायेंगे ? अमेरिका और रूस जैसे समृद्ध राष्ट्रों में यह खेल नहीं चलता तो भी वे खेलों में अग्रणी हैं। ओलम्पिक खेलों में इसकी प्रतियोगिता नहीं होती तो भी ओलम्पिक खेल हो जाते हैं।

उपसंहार

वस्तुतः भारत जैसे विकासशील देश को इस खेल के लिए इतना अधिक समय नष्ट करने की आवश्यकता नहीं । इससे देश के विकास की गति अवरुद्ध हो जाती है । अतः यहाँ क्रिकेट के स्थान पर अल्प व्यय-साध्य और अल्प समय में खेले जाने वाले हॉकी, फुटबाल आदि खेलों को और कबड्डी, खो-खो आदि भारत के परम्परागत खेलों को ही अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए ।

—०—

नारी और नौकरी

(नारी-जागरण)

प्रस्तावना

नर और नारी गृहस्थ रूपी गाड़ी के दो चक्र हैं । जैसे एक ही चक्र से रथ नहीं चल सकता, ऐसे ही अकेला पुरुष या अकेली नारी इस गाड़ी को खींच नहीं सकती । ये दोनों परस्पर पूरक हैं । पत्नी को अर्द्धांगिनी इसीलिए कहा गया है । इतना ही नहीं, प्राचीन काल में भारत में पत्नी के बिना यज्ञ अपूर्ण माना जाता था । तभी तो श्री राम ने अश्वमेध यज्ञ में सीता की अनुपस्थिति में उनकी स्वर्ण-प्रतिमा रखी थी । हमारे समाज के मनीषियों ने इस बात को अच्छी प्रकार समझा था । अतः प्राचीन काल में ही उन्होंने नारी को पुरुष के समान ही महत्त्व दिया था । मनु महाराज ने कहा है—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यते अफलास्तत्र सर्वाः क्रियाः ।

अर्थात् जहाँ नारी का सम्मान होता है, वहाँ देवताओं का निवास होता है और जहां नारियों का सम्मान नहीं होता, वहाँ सभी कार्य निष्फल हो जाते हैं ।

इसी कारण प्राचीन समय में नारी ज्ञान, विज्ञान, धर्म, दर्शन, कला-कौशल और वीरता आदि के सभी क्षेत्रों में अग्रणी थी । गार्गी, मैत्रेयी जैसे ब्रह्मवादिनी नारियाँ यहीं थीं, अनसूया, सीता, सावित्री, अरुन्धती जैसी साध्वी और तपस्विनी नारियां भी यहां थीं । बालकों के समान ही बालिकाएं भी आश्रमों में अध्ययन करती थीं । दुर्भाग्य से मध्य-काल में पुरुष नारी को हीन समझने लगा । वह

पुरुष की दासी और भोग्यवस्तु मानी जाने लगी और उसे शिक्षा से भी वंचित किया गया । इसके कई कारण थे, पर कुछ भी हो, नारी की अधोगति प्रारम्भ हो गई, उसका जीवन पुरुषों की कठोर व्यवस्था में बीतने लगा । परदा प्रथा, अशिक्षा तथा अन्य अनेक रूढ़ियां इसी का परिणाम हैं, जिनके दर्शन आज भी गाँवों में अत्यधिक मात्रा में हो जाते हैं ।

समय में परिवर्तन

समय ने फिर करवट ली। एक ओर देश में अंग्रेजी राज्य के साथ पाश्चात्य विचारों और अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार आरम्भ हुआ तो दूसरी ओर समाज में नारी-शिक्षा और नारी-जागृति की लहर चली । राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, पंडित श्रद्धाराम फिल्लौरी, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, पंडित मदन-मोहन मालवीय आदि ने समाज सुधार के साथ ही स्त्री-शिक्षा का प्रचार भी आरम्भ किया । फलतः नारियों में शिक्षा की रुचि जागृत हुई और शिक्षा का तीव्रता से प्रसार होने लगा। नगरों में विद्यालयों और महाविद्यालयों में छात्राओं की संख्या बढ़ने लगी। गाँवों में भी कन्याओं को शिक्षा दी जाने लगी। इससे जहाँ नारियों में जागृति आई, वहीं वे ज्ञान-विज्ञान, कला-कौशल के प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़ने लगीं । फलतः नारी का क्षेत्र घर से बाहर भी हो गया। नारी अध्यापिका, डॉक्टर, परिचारिका, लेखिका, वकील बनने लगी और अनेक प्रबुद्ध महिलाएं राजनीति में भी भाग लेते लगीं । साहित्य क्षेत्र में श्रीमती महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, राजनीति के क्षेत्र में सरोजिनी नायडू, विजय लक्ष्मी पंडित, इंदिरा गांधी, समाज सेवा के क्षेत्र में कस्तूरबा, दुर्गाबाई देशमुख आदि का नाम आज प्रसिद्ध है ।

स्वतन्त्रता के पश्चात् तो नारी-शिक्षा की तीव्र प्रगति हुई । फलतः देश के गांवों में भी कन्याओं को शिक्षा दी जाने लगी । आज नगरों में तो चिकित्सा, विज्ञान और सैन्य शिक्षा भी कन्याएं ले रही हैं ।

नारी और नौकरी

देश के स्वतन्त्र होने के साथ ही भारत के संविधान में नारी को समान अधिकार मिले तो एक अन्य दौड़ प्रारम्भ हुई । वह थी—नारी की नौकरी

की दौड़ । आज यह दौड़ इतनी तीव्रता से हो रही है कि कोई सरकारी, अर्द्ध-सरकारी, निजी, व्यावसायिक कार्यालय या औद्योगिक क्षेत्र ऐसा नहीं, जहाँ महिलाएं क्लर्क के रूप में, टाइपिस्ट के रूप में, स्टेनों के रूप में या किसी विषय में दक्ष अधिकारी के रूप में नौकरी न कर कर रही हों । बैंकों में, सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में, यहाँ तक की छोटी-छोटी औद्योगिक इकाइयों में भी आज महिलाएं नौकरी कर रही हैं । इनके अतिरिक्त अध्यापन, चिकित्सा, परिचर्या, विमान-बाला, सेना और पुलिस के क्षेत्र में अनेक महिलाएं सेवारत हैं ।

नौकरी के गुण और दोष

नौकरी करने से जहाँ नारी में कुछ आत्मविश्वास जगा है, उसने अपनी और अपने परिवार की आर्थिक स्थिति में सुधार किया है, वहीं कुछ दोष भी इसके साथ ही आए हैं । जिससे नारी एक नाना प्रकार के बन्धन से मुक्त हो दूसरे प्रकार की दासता में फंसने लगी हैं ।

नारी को प्रकृति ने ही सुन्दरता, कोमलता और विश्वास करने की भावना दी है । वह कार्यालयों में प्रायः बन ठन कर ही जाती है । अतः वहां काम करने वाले पुरुष—चपरासी, क्लर्क और अधिकारी—उन्हें ललचाई दृष्टि से देखते हैं । अवसर-अनवसर उनके पास जाकर बैठते हैं या उन्हें अपने पास बुलाते हैं। इससे यह होता है कि प्रायः नारी उनके चंगुल में आ जाती हैं और वह अपनी पवित्रता की रक्षा नहीं कर पाती । तब उसका जीवन दीनता-पूर्ण हो जाता है । यद्यपि सर्वत्र ऐसा नहीं होता, पर अधिक मात्रा में हो जाता है । कुछ स्थान और कुछ नौकरियां ऐसी अवश्य हैं, जहाँ ऐसा डर प्रायः नहीं हो सकता । अध्यापन क्षेत्र में यह भय नहीं के बराबर है; परिचर्या के क्षेत्र में कुछ कम है, पर अन्य स्थानों पर अधिक है ।

आज जबकि परिवारों की आर्थिक स्थिति कठिन से कठिनतर हो रही है । और कहीं-कहीं तो—पैसा होने पर भी विलासिता की भूख बढ़ती जा रही है नारी को नौकरी से रोका तो नहीं जा सकता, किन्तु नारी को सोचना होगा कि वह इस दौड़ में कहाँ तक दौड़े ? कारण, केवल पवित्रता की रक्षा की बात ही नहीं, परिवार के संचालन और बच्चों की देख-भाल और उनकी शिक्षा-

दीक्षा की भी समस्या इससे बढ़ती जा रही है। जहाँ पति-पत्नी दोनों ही नौकरी में होते हैं, वे अपने बच्चों की देख-भाल और शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था ठीक प्रकार नहीं कर पाते, क्योंकि माता की देख-रेख और स्नेह के अभाव में बच्चे प्रायः जिद्दी, अनाड़ी और कर्त्तव्य के प्रति उपेक्षा वृत्ति रखने वाले हो जाते हैं।

उपसंहार

अतः नारी को इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए अनिवार्य स्थिति में ही नौकरी करनी चाहिए। परिवार में कमाने वाला यदि कोई है तो नारी को घर में ही और बच्चों की देख-रेख से ही अवकाश नही मिल सकता। थोड़ी आय से ही वह परिवार को सुख दे सकती है।

—o—

प्रौढ़ शिक्षा

"सामूहिक निरक्षरता न केवल पाप है, प्रत्युत भारत के लिए लज्जा जनक बात भी है।"

—महात्मा गांधी

प्रस्तावना

भारत को स्वतन्त्र हुए आज इकतालीस वर्ष हो चुके हैं। इन वर्षों में देश में शिक्षा का प्रचार और प्रसार बहुत हुआ है। विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की संख्या तीव्र गति से बढ़ी है। इतना होने पर भी आज भारत की लगभग 70 प्रतिशत जनता निरक्षर है। इसमें अधिक संख्या प्रौढ़ों की है। यह चिन्ता का विषय है। यह सामूहिक निरक्षरता वस्तुतः पाप ही नहीं, अपितु भारत के लिए अत्यन्त लज्जा की भी बात है।

निरक्षरता का यह रोग भारत में नया नहीं, बल्कि शताब्दियों पुराना है। अंग्रेजी के आने से पूर्व मन्दिरों में, मठों में, मस्जिदों में छात्रों को शिक्षा दी जाती थी तथा अनेक अन्य भी छोटे-बड़े विद्यालयों में छात्रों के अध्यापन की व्यवस्था थी।

अंग्रेजों की चालाकी

किन्तु ज्यों ही अंग्रेज भारत में आए और उन्होंने अपना शासन स्थापित किया, उसने यहाँ की पुरानी शिक्षा व्यवस्था को समाप्त कर अंग्रेजी शिक्षा का प्रचलन किया, जिससे कि उसके काम को चलाने के लिए क्लर्क पैदा हों और साथ ही देश में ऐसे वर्ग का निर्माण हो जो शासकों की सभ्यता और संस्कृति को ही श्रेष्ठ माने। इसी कारण उसने भारतीय शिक्षा पद्धति के प्रति घृणा फैलाई। अशिक्षा के कारण जनता अपने अधिकारों को न समझ सकी और अंग्रेजों को गुलामी का शिकंजा कसने का खूब मौका मिल गया।

प्रौढ़ शिक्षा का विचार

"अशिक्षा के महारोग को मूल से ही नष्ट करके स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण किया जा सकता है" यह विचार भारतीय स्वातन्त्र्य-आन्दोलन के साथ ही उदित हुआ। सन् 1937 में भारत के विभिन्न प्रान्तों में रास्ट्रीय दृष्टिकोण वाली सरकारों की स्थापना से साथ ही यहाँ बच्चों में शिक्षा के प्रचार के साथ ही प्रौढ़ों को भी साक्षर बनाने का प्रयास आरम्भ हुआ। 'अशिक्षा का नाश हो', 'अंगूठा लगाना पाप है' आदि नारे गाँवों और नगरों में गूंजने लगे। निरक्षरता दूर करने के लिए प्रौढ़-शिक्षा केन्द्रों, रात्रि पाठशालाओं और पुस्तकालयों की स्थापना की गई। अशिक्षितों में भी इस योजना के प्रति कुछ उत्साह जगा, किन्तु कुछ समय पश्चात् किन्ही परिस्थितियों से यह आन्दोलन मन्द पड़ गया। सन् 1947 में जब देश स्वाधीन हुआ; तभी पुनः प्रौढ़-शिक्षा की और जन नेताओं और समाज सुधारकों का ध्यान आया।

आज भी नगरों और अधिकांश गाँवों में सत्तर प्रतिशत प्रौढ़ लोग ऐसे हैं जो निरक्षर हैं। आज जबकि देश में 'प्रजातन्त्रात्सक शासन प्रणाली' चल रही है और देश की ओर अग्रसर है, इतनी बड़ी जनसंख्या का निरक्षर रहना एक अभिशाप ही है। प्रौढ़ों के निरक्षर रहने से स्वतन्त्र देश की राजनैतिक, सामाजिक धार्मिक, सांस्कृतिक और आर्थिक गति रुक सकती है। अतः प्रौढ़ों के लिए भी अक्षर ज्ञान उतना ही आवश्यक है, जितना कि उनकी सन्तान के लिए है।

विचारणीय बात

प्रौढ़-शिक्षा से वयस्क लोग जहाँ अक्षर-ज्ञान कर पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने योग्य बन सकेंगे, वहीं स्वास्थ्य, आर्थिक स्थिति और गृहस्थ-जीवन को सुधारने में भी वे सफल होंगे और साथ ही देश की राजनीतिक को समझ कर देश के निर्माण और विकास में भी अच्छा योग दे सकेंगे। यह ठीक है कि देश के स्वाधीन होने के साथ प्रौढ़-शिक्षा का आन्दोलन चला, किन्तु उसकी गति बहुत ही मन्द रही। गत चालीस वर्षों में बहुत ही कम प्रौढ़ व्यक्ति साक्षर बन सके।

आवश्यकता

आज प्रौढ़-शिक्षा के लिए रात्रि-पाठशालाओं, नव साक्षरों के लिए उपयोगी और नवीन जानकारी से युक्त पुस्तकों की आवश्यकता है। साथ ही पुरातन कथाओं और विचारों के साथ उन्हें नवीन ज्ञान-विज्ञान से, विशेषकर कृषि, लघु-उद्योग, वाणिज्य तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी ज्ञान से परिचित कराना भी आवश्यक है।

सरकार ने इस दिशा में प्रयत्न आरम्भ किया और इसके लिए देश व्यापी एक वृहत् योजना भी बनाई। 2 अक्टूबर सन् 1978 को गाँधी जी के जन्म दिवस पर इस योजना का पुनः शुभारम्भ किया गया। इसके लिए भारत सरकार ने भारत की स्वयं सेवी सामाजिक संस्थाओं से भी सहयोग देने का आग्रह किया। अनेक संस्थाओं ने इसके लिए पूर्ण सहयोग का वचन दिया, किन्तु कुछ तथा-कथित नेताओं को एक प्रसिद्ध देश भक्त संस्था 'राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ' का योगदान अच्छा नहीं लगा। उन्होंने शोर मचाया कि ये सरकार का करोड़ों रुपये डकार जायेगी। तब इस संस्था ने स्वयं ही केवल सेवा-भाव से यह काम अपने हाथ में ले लिया। आज सरकार के अतिरिक्त संघ तथा अन्य अनेक समाज-सेवी संस्थाओं के सहस्रों कार्यकर्ता प्रौढ़-शिक्षा के लिए कार्य कर रहे हैं।

उपसंहार

यद्यपि यह कार्य कठिन है तो भी हमें विश्वास है कि इसमें लगे लोगों को निःस्वार्थ सेवा-भावना से ही कुछ वर्षों के उपरान्त हमारे देश में प्रौढ़ों की बहुत

बड़ी संख्या साक्षर हो जायेगी। साक्षर होने पर वे सामयिक पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन कर सकेंगे। इस अध्ययन के फलस्वरूप उनमें सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक चेतना जागृत होगी। इससे भारत की सामाजिक और आर्थिक उन्नति में बहुत बड़ा सहयोग मिल सकेगा और देश शीघ्रातिशीघ्र विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में खड़ा हो जायेगा।

—o—

प्रदर्शनी

प्रस्तावना

प्रदर्शनी शब्द का निर्माण 'प्र' उपसर्ग पूर्वक 'दृश्' धातु से 'अन्' प्रत्यय के अनन्तर 'ई' लगाने से होता है। प्रदर्शिनी या प्रदर्शनी का अर्थ है—'प्रकर्ष पूर्वक दिखाने वाली।' प्रदर्शनी में विशेष रूप से दिखाने योग्य कुछ नवीन या प्राचीन वस्तुओं को प्रदर्शित किया जाता है। मनुष्य की यह स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि वह जिन वस्तुओं का निर्माण करता है या मन-भावन और उपयोगी होने के कारण जिन वस्तुओं को लाता है, उनका दूसरों के सामने प्रदर्शन करता है, ताकि लोग उसकी प्रशंसा करें और उसके द्वारा निर्मित वस्तु को खरीद लें। प्रदर्शनी में प्रदर्शित करने के लिए जो भी वस्तुएं रखी जाती हैं, उनमें कुछ न कुछ नवीनता और विचित्रता होती है, जिससे कि वे दर्शनार्थियों के आकर्षण का केन्द्र बन जाती हैं।

प्रतिस्पर्धा

प्रदर्शनी कोई नई वस्तु नहीं है। प्राचीन काल में भारत में जो मेले लगते थे, उसमें शिल्पकार और कलाकार अपने शिल्पों तथा कलाओं का प्रदर्शन करते थे। इससे लोगों को नवीन वस्तुओं की जानकारी होती थी और उन प्रदर्शित वस्तुओं का आदान-प्रदान भी होता था। आज का युग तो प्रदर्शन और प्रतिस्पर्धा का ही है। इसी कारण आज प्रदर्शनी को अधिक बढ़ावा मिलने लगा है। नवीन आविष्कृत वस्तुओं के प्रचार का और इनके विक्रय का यह उत्तम साधन है।

प्रदर्शनी के प्रकार

प्रदर्शनियों का आयोजन विभिन्न संगठित संस्थाओं के द्वारा या सरकार के द्वारा होता है। इनमें कला, शिल्प, कृषि, उद्योग, पुस्तकों, पशुओं आदि की प्रदर्शनियों लघुस्तर पर या वृहत् स्तर पर आयोजित होती हैं। चित्रकार अपने चित्रों की प्रदर्शनी लगाते हैं तो डाक-चित्रों के संग्रहकर्त्ता डाक-टिकटों की प्रदर्शनी लगाते हैं। पुस्तक-विक्रेता विविध प्रकार की पुस्तकों का प्रदर्शन करते हैं। ये प्रदर्शनियां लधु स्तर पर होती है, किन्तु विज्ञान, उद्योग, शिल्प, कला-कौशल आदि से सम्बन्ध प्रदर्शनियां वृहत् स्तर पर होती हैं।

दिल्ली की प्रदर्शनियां

दिल्ली भारत की राजधानी है। यहाँ वर्ष में प्रायः अनेक प्रकार की प्रदर्शनियाँ लगती रहती हैं। यहाँ प्रदर्शनियों के लिए पुराने किले के समीप 'प्रगति मैदान' में उनके लिए स्थायी व्यवस्था कर दी गई है, जिसमें समय-समय पर अनेक छोटी-बड़ी प्रदर्शनियों का आयोजन हो चुका है और भविष्य में भी होता रहेगा।

प्रगति मैदान में जो प्रदर्शनियां अब तक हुई हैं, उनमें कई बड़ी प्रसिद्ध और सफल हुई हैं। भारत सरकार की ओर से यहाँ सन् 1956 में एक वृहत् अंतर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी हुई थी। जिसमें संसार के प्रायः सभी देशों के उद्योग-मंडप स्थापित थे। इनमें शिल्प, विज्ञान और उद्योग सम्बन्धी छोटी वस्तु से लेकर बड़ी से बड़ी वस्तुओं का बहुत ही अच्छा प्रदर्शन था। इसी मैदान में बाद में एक अन्तर्राष्ट्रीय 'कृषि प्रदर्शनी' भी हुई थी। यहाँ रेल शताब्दी के अवसर पर एक 'रेल मेला' भी लगा था, जिसमें भारत में रेल के प्रचलन से लेकर सौ वर्ष की रेलवे की प्रगति की झांकी दिखाई गई थी।

उद्योग और व्यापार सम्बन्धी प्रदर्शनियों का आयोजन अब 'ट्रेड फेयर अथारिटी आफ इण्डिया' नामक एक अधिकरण के द्वारा होता है। इसका लक्ष्य भारत और विदेश में प्रदर्शनियों का आयोजन कर भारतीय माल के निर्यात में वृद्धि करना है। इससे देश की आर्थिक समृद्धि में बड़ा सहयोग मिलता है। इस संस्था ने दिल्ली के प्रगति मैदान में 1977 में 'एग्रो एक्सपो 77 (राष्ट्रीय कृषि मेला) तथा 1978 में 'राष्ट्रीय उद्योग मेला' लगवाया। वे दोनों प्रदर्शनियाँ बहुत

सफल रहीं । 'राष्ट्रीय कृषि मेले' को तो देश के लाखों लोगों ने देखा और अनेक व्यापारिक संस्थाओं ने तथा कृषि कार्य करने वालों ने उससे लाभ उठाया । इसी संस्था ने भारतीय 'अन्तर्राष्ट्रीय औद्योगिक मेला 1979' (इंड फेयर आफ इण्डिया 1979) का आयोजन किया । इसका उद्देश्य विश्व की औद्योगिक और व्यापारिक प्रगति को देखकर उनसे सीखना और भारतीय उद्योग-व्यापार की वृद्धि करना था । सन् 1980 में उससे भी बड़ी प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था, जो अति सफल रही । इसी प्रकार 1982 के नवम्बर मास में 'भारत अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेला' नामक प्रदर्शनी भी लगी । इस वर्ष 1988 में भी उसी स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेला लगा है ।

लाभ

प्रदर्शनियों के अनेक लाभ होते हैं । इनमें जहाँ एक ओर नई आविष्कृत और उत्पादित वस्तुओं की बिक्री बढ़ने से आर्थिक विकास होता है, वहीं अन्य देशों के नवीन यंत्रों और शिल्पों का ज्ञान होता है । उन्हें देखकर अपने देश के वैज्ञानिक, शिल्पी और अभियांत्रिक भी वैसे ही यंत्रों के निर्माण में रुचि लेते हैं । इससे देश में नये उद्योग-धन्धों का विस्तार होता है । जनता के लिए रोजगार के नये क्षेत्र खुलते हैं तथा व्यापार का विस्तार होकर आर्थिक उन्नति होती है, जो देश में श्री और समृद्धि लाती है । इन प्रदर्शनियों से न केवल व्यापार में ही वृद्धि होती है अपितु विश्व-बन्धुत्व और विश्व-मैत्री में भी वृद्धि होती है ।

उपसंहार

भारत एक विकासशील देश है । इसके लिए तो आज इस प्रकार की प्रदर्शनियों का और भी अधिक महत्त्व है । अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों से ही हम जान सकते हैं कि हम कहाँ हैं और आगे हमें कहाँ तक जाना है ? वस्तुतः इन प्रदर्शनियों से हम कुछ सीख सकते हैं और सीखकर देश को आर्थिक दृष्टि से सुसमृद्ध कर सकते हैं ।

—०—

प्रजातंत्र और निर्वाचन

प्रस्तावना

मानव समाज ने जब राष्ट्र की कल्पना की होगी तो उस राष्ट्र को सुव्यवस्थित करने के लिए राज्य और शासन-प्रणाली की भी कल्पना हुई होगी। राष्ट्र के समस्त प्रजाजन अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार कार्य करते हुए समाज और राष्ट्र की सेवा करते रहें तथा उनके मार्ग में कोई बाधक न बने, इसके लिए शासन की आवश्यकता अनुभव की गई होगी और तभी अनेक प्रकार की शासन-प्रणालियों का जन्म भी हुआ होगा।

भारत संसार का सबसे प्राचीन राष्ट्र है। ज्ञान-सूर्य का उदय सर्वप्रथम इस देश में ही हुआ था। यहाँ के मनीषियों ने विचार कर शासन की कई प्रणालियाँ निश्चित की थीं। यहाँ सर्वप्रथम वह शासन प्रणाली थी, जिसमें कोई राजा नहीं होता था, बल्कि सब लोग मिलकर ही अपना शासन-प्रबन्ध करते थे। फिर ग्राम-सभा, समिति आदि का निर्माण हुआ, जिनमें प्रजाजन अपना प्रतिनिधि निर्वाचित करते थे। यह गणराज्य प्रणाली थी। महाभारत काल तथा बौद्ध काल में यहां अनेक गणराज्य थे। बहुत समय बाद निर्वाचन को छोड़ दिया और वंश परम्परागत व्यक्ति ही शासक या राजा होने लगे। उस शासन में ही भोज्य, साम्राज्य, महाराज्य आदि भेद रहे। उत्थान-पतन का क्रम चलता रहा, पर वंशानुगत राजा ही यहाँ अंग्रेजों के आने से पूर्व तक राज्य करते रहे। अंग्रेजों के आने के पश्चात् देश में स्वतंत्रता की लहर के साथ ही जनता के राज्य की भावना भी तीव्रता से बढ़ी और देश के स्वाधीन होने के अनन्तर देश में गणतन्त्र की स्थापना हुई। गणतन्त्र को ही प्रजातन्त्र भी कहा जाता है।

शासन प्रणालियों के प्रकार

आज के विश्व में मुख्यतः तीन प्रकार की शासन प्रणालियां प्रचलित हैं। वे हैं—प्रजातंत्रीय शासन-प्रणाली, अधिनायकवादी शासन-प्रणाली और वंशानुगत राजतंत्र प्रणाली। इनमें से वंशानुगत राजतंत्र प्रणाली हमारे पड़ोसी देश नेपाल और भूटान में है। अधिनायकवादी शासन प्रणाली साम्यवादी देशों रूस,

चीन, पोलैंड और युगोस्लाविया में है। अधिनायकवादी शासन पद्धति वाले राष्ट्र यद्यपि अपने कों गणतन्त्रवादी कहते हैं, किन्तु वहाँ एक दल का और उस दल के शक्तिशाली प्रमुख का शासन होता है। प्रजातन्त्रीय शासन प्रणाली ही ऐसी प्रणाली है, जिसमें जनता में ही सत्ता निहित होती है। जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि ही शासक होते हैं। भारत, ब्रिटेन, अमेरिका, जापान आदि देशों में आज यही प्रणाली प्रचलित है। प्रजातंत्र को ही जनतन्त्र या गणतन्त्र भी कहते हैं। 'प्रजाहित के लिए जहां चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा शासन चलाया जाता है, उसे ही प्रजातन्त्र माना जाता है।'

निर्वाचन की आवश्यकता

'निर्वाचन' और 'मताधिकार' प्रजातन्त्र की रीढ़ की हड्डी हैं। जब कहा जाता है कि यहाँ जनता का शासन है तो उसका अभिप्राय होता हैं कि प्रजा द्वारा निर्वाचित जन-प्रतिनिधि उस शासन को चला रहे हैं। वेद में स्वराज्य के सम्बन्ध में एक मंत्र भाग में कहा गया—"**व्यचिष्ठे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये**" अर्थात् हम सब विद्वान् विस्तृत और बहुतों द्वारा पालित स्वराज्य के लिए मिल कर यत्न करेंगे। स्वराज्य या जन राज्य 'बहु+पाय्य' अर्थात् बहुतों की सम्पत्ति से पालित होता है। स्पष्ट है कि बहुतों की सम्मति ही जनता का 'मताधिकार' है। जनता अपने मत (राय अथवा वोट) से प्रतिनिधियों का निर्वाचन करती है।

निर्वाचन या चुनाव प्रजातन्त्र शासन प्रणाली का आवश्वक अंग है। ये चुनाव कहीं चार वर्षो के लिए और कहीं पांच वर्षो के लिए होते हैं। यदि चुनाव में निर्वाचित सरकार कभी निश्चित अवधि के मध्य में ही सदन में विश्वास मत प्राप्त न करने पर पराजित हो जाती है या अपनी किसी नीति को उचित सिद्ध करने के लिए त्याग-पत्र दे देती है तो उस दशा में समय से पूर्व भी चुनाव हो जाते हैं। जिन्हें मध्यावधि-निर्वाचन कहा जाता है।

अनेक राजनीतिक दल

किसी भी देश मे उस देश का शासन चलाने के लिए अलग-अलग नीति रखने वाले लोग होते हैं। इनमें प्रायः समान विचार वाले लोग एक राजनीतिक दल बना लेते हैं। उस दल की एक नीति और कुछ निश्चित सामाजिक और

आर्थिक कार्यक्रम होते हैं, जिनके आधार पर वे काम करते हैं और शासन में आकर उनके माध्यम से देश की व्यवस्था को चलाने की चेष्टा करते हैं।

भारत बहुत बड़ा और विविधताओं से भरा देश है। यहाँ भी अनेक राजनीतिक दल हैं। वर्तमान राजनीतिक दलों में भारतीय जनता पार्टी, जनता दल कांग्रेस (ई), लोकदल, साम्यवादी, मार्क्सवादी साम्यवादी, प्रजातांत्रिक समाज़वादी दलों आदि के साथ ही अनेक क्षेत्रीय दल भी हैं, जो चुनावों में भाग लेते हैं। कुछ लोग स्वतन्त्र रूप से भी चुनाव में भाग लेते हैं। निर्वाचन की व्यवस्था के लिए देश में एक निर्वाचन आयोग है, जिसकी देख-रेख में चुनावों की व्यवस्था होती है। निर्वाचन आयोग मतदाताओं की सूचियाँ बनवाता है; मतदान की तिथि निश्चित करता है और मतदान करवाता हैं; मतों की गणना तथा निर्वाचन प्रतिनिधि की घोषणा करता है।

निर्वाचन की प्रक्रिया

निर्वाचन से पूर्व चुनाव तिथि की घोषणा होती है। जिसमें प्रमुख राजनीतिक दलों के प्रत्याशी और स्वतन्त्र प्रत्याशी नामांकन पत्र भरते हैं। तदनन्तर उनकी जांच होती है और चुनाव के लिए उन्हें चिह्न प्रदान किए जाते हैं। राजनीतिक दलों के चुनाव चिह्न निश्चित होते हैं, जबकि स्वतन्त्रता प्रत्याशियों को कुछ चिह्न में से कोई एक चिह्न दे दिया जाता है। जैसे भारतीय जनता पार्टी का 'कमल', जनता पार्टी का 'हलधर', कांग्रेस (ई) का 'हाथ', साम्यवादियों का 'गेहूं की बाली' आदि चिह्न हैं। इसके पश्चात् चुनाव प्रचार प्रारम्भ होता है। प्रत्याशी घर-घर जाकर या सार्वजनिक सभाओं का आयोजन कर मतदाताओं से मतदान का आग्रह करते हैं। निश्चित दिन पर मतदान होता है। मतदाता अपनी इच्छानुसार किसी दल या व्यक्ति को मत देता है। जिस व्यक्ति को सर्वाधिक मत प्राप्त होते हैं; वही विजयी माना जाता है। फिर जिस दल को बहुमत प्राप्त होता है, उसी दल का नेता प्रधान मन्त्री, मुख्य मन्त्री या पालिका अध्यक्ष बनता है। वह अपने सहयोगियों का चयन कर शासन करता है। नगरपालिकाओं विधान सभाओं तथा लोक सभा से निर्वाचन में यही प्रक्रिया अपनाई जाती है।

उपसंहार

सारांशतः प्रजातन्त्र में निर्वाचन महत्वपूर्ण होते हैं। इसमें जनता को अपने भाग्य-विधाताओं का चयन करना होता है। सुयोग्य, चरित्रवान् तथा कर्त्तव्य-निष्ठ प्रतिनिधियों के हाथ में ही राष्ट्र का भविष्य और अभ्युदय सुरक्षित रहता है। अतः बहुत सोच-विचार कर और स्थायित्व तथा सुशासन के लिए अच्छे दलों तथा सुयोग्य प्रत्याशियों को ही मत प्रदान करना चाहिए।

—o—

महात्मा गाँधी

प्रस्तावना

भारत की पुण्य भूमि महापुरुषों की जन्म-भूमि है। राम, कृष्ण और बुद्ध जैसे महापुरुषों के भारत में गौरव को बढ़ाया है। इस युग के श्रेष्ठ व्यक्ति महात्मा गाँधी ने भी यहीं जन्म लिया और भारत को ही नहीं, अपितु संसार पीड़ित मानवता को सत्य और अहिंसा का अमोध मन्त्र देकर शान्ति का पाठ पढ़ाया। भारत माँ को दासता की कठोर श्रृंखला से मुक्त कराने का श्रेय भी उन्हीं को है।

जन्म तथा बाल्यकाल

गाँधी जी का जन्म 2 अक्टूबर 1869 ई० में गुजरात के पोरबन्दर नामक स्थान में हुआ। इनके पिता कर्मचन्द गांधी राजकोट के दीवान थे।

गाँधी जी बचपन से बड़े शांत और सरल प्रकृति के थे। तेरह वर्ष की अल्पायु में उनका विवाह कस्तूरबा से कर दिया। मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् इनको बैरिस्टरी पास करने के लिए विलायत भेज दिया। सन् 1891 में ये बैरिस्टर बनकर भारत लौटे।

अफ्रीका प्रवास

भारत लौटने पर इन्होंने बम्बई में वकालत प्रारम्भ की। कुछ दिनों बाद एक मुकदमे के लिए इनको दक्षिणी अफ्रीका जाना पड़ा। वहाँ पर इन्होंने

भारतीयों की दयनीय दशा देखी। वहाँ गोरे लोग भारतीयों के साथ पशुओं जैसा व्यवहार करते थे। गाँधी जी ने इस अन्याय के विरुद्ध दक्षिणी अफ्रीका में अहिंसात्मक ढंग से युद्ध छेड़ दिया और नवीन, किन्तु अमोघ सत्याग्रह-अस्त्र को अपनाया। इससे अंग्रेजों को झुकना पड़ा।

भारत में

दक्षिणी अफ्रीका में गाँधी जी जन-प्रिय हो चुके थे। भारत लौटने पर यहाँ की राजनीति भी उनका स्वागत करने के लिए तैयार खड़ी थी। गाँधी जी भारतीय स्वतन्त्रता के वीर सेनानी बन गये और शनैः-शनैः भारतीय राजनीति के अग्रणी बन गए।

सन् 1914 में प्रथम महायुद्ध में भारत को स्वतन्त्रता देने की शर्त पर गाँधी जी ने ब्रिटिश सरकार को सहयोग दिया; किन्तु अंग्रेजों ने भारत को रौलट एक्ट और जलियांवाला काण्ड आदि ही पुरस्कार दिए। इससे गाँधी जी के हृदय को गहरा धक्का लगा।

असहयोग आन्दोलन

अंग्रेजों के वचन-भंग से रुष्ट होकर गाँधी जी ने 1919-1920 में असहयोग आन्दोलनों का श्रीगणेश कराया। इसके पश्चात् तो उन्होंने अनेक आन्दोलन चलाए। वे थे—नमक आन्दोलन, मद्य-निषेध, विदेशी वस्त्र-बहिष्कार, हरिजन-उत्थान आदि। इसके कारण वे अनेक बार जेल गए। सन् 1942 में गाँधी जी ने 'भारत छोड़ो' आन्दोलन आरम्भ किया। भारतीय जनता को 'करो या मरो' का आह्वान मिला। इस पर अंग्रेज सरकार ने भारत के सभी नेताओं के साथ ही गाँधी जी को भी जेल में बन्द कर दिया। जनता में विद्रोह भड़क उठा। जगह-जगह अंग्रेजों का विरोध प्रकट किया जाने लगा। सन् 1945 में द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर सभी नेताओं के साथ गाँधी जी कारावास से मुक्त कर दिए गए।

भारत की स्वतन्त्रता

द्वितीय विश्वयुद्ध में यद्यपि ब्रिटेन की जीत हुई पर युद्ध के कारण वह जर्जर हो गया था। अब वह भारत को अधिक दिन तक दास नहीं रख सकता

था। उसने कूटनीति से भारत का विभाजन कर सन् 1947 की 15 अगस्त को भारत को स्वाधीन कर दिया। गाँधी जी का एक स्वप्न साकार हो गया।

बलिदान

भारत के विभाजन के साथ ही देश में साम्प्रदायिक उपद्रव आरम्भ हो गए। गाँधी जी शान्ति स्थापित करने के लिए जगह-जगह गए और उन्होंने आमरण अनशन किया, किन्तु कुछ व्यक्ति गाँधी जी की मुस्लिम सन्तुष्टीकरण नीति से रुष्ट थे। इस कारण 30 जनवरी, 1948 ई० को एक नासमझ नवयुवक नाथूराम गोडसे ने रिवाल्वर की तीन गोलियों से भारत के महान संत, विश्व की पीड़ित मानवता के एक मात्र सहारे और विश्व के महानतम व्यक्ति को इस संसार से विदा कर दिया।

उपसंहार

गाँधी जी नेता, विचारक और आध्यात्मिक पुरुष थे। वे हमें स्वतन्त्र कर गए, संसार को शान्ति और सत्य का मार्ग बता गए तथा वह भारत की शान्ति नीति को विश्व में फैला गए। उन्होंने शताब्दियों से सोये भारतवर्ष को जागृत किया तथा देश में आत्म-सम्मान की लहर दौड़ाई। उनका रहन-सहन अत्यन्त सीधा-सादा था। वे सत्य तथा अहिंसा के पक्षपाती थे। उनका चरित्र न केवल भारतीयों के लिए अपितु समस्त विश्व के लिए भी अनुकरणीय है। भारतीय युग-युग तक उन्हें स्मरण रखेंगे।

—०—

पंडित जवाहरलाल नेहरू

प्रस्तावना

भारत की स्वाधीनता के लिए और भारत के स्वतन्त्र होने पर उसके नवनिर्माण के लिए जिन महापुरुषों ने अपना जीवन लगा दिया, उनमें पंडित जवाहरलाल नेहरू का नाम अत्यन्त आदर से लिया जाता है।

उनका त्याग, अथक परिश्रम, कर्त्तव्यनिष्ठा और सच्चाई युवकों में नवीन

स्फूर्ति का संचार करती है। राष्ट्र के कर्णधार पंडित नेहरू को समस्त विश्व के नागरिक भी बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखते रहे हैं।

जन्म व शिक्षा

श्री नेहरू जी का जन्म 14 नवम्बर, सन् 1889 को प्रयाग में हुआ। उनके पिता पं० मोतीलाल नेहरू अत्यन्त धनाढ्य और प्रसिद्ध वकील थे। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर में ही दो अंग्रेज अध्यापिकाओं द्वारा हुई। मुंशी मुबारक अली ने उनको उर्दू की शिक्षा दी। धनवान् और पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित पिता ने 14 वर्ष की आयु में ही इन्हें इंग्लैंड भेज दिया। वहाँ पहले प्रसिद्ध हैरो स्कूल में, फिर कैम्ब्रिज विद्यालय में आपने शिक्षा प्राप्त की। पिता की इच्छानुसार सन् 1912 में बैरिस्ट्री पास कर वे भारत लौट आए।

राजनीति में

भारत लौटने पर पंडित जी ने वकालत प्रारम्भ की, किन्तु उसमें उनका मन न लगा। फिर उन्होंने स्वतंत्र देश इंग्लैंड में शिक्षा पाई थी, उन्हें परतंत्र भारत भला कैसे भाता? भारत में राजनीतिक जागृति प्रारम्भ हो चुकी थी। नेहरू जी कांग्रेस के बांकीपुर अधिवेशन में गोपाल कृष्ण गोखले जी के भाषण से बहुत प्रभावित हुए और थोड़े दिनों बाद सक्रिय राजनीति में भाग लेने लगे।

सन् 1919 के रोलेट ऐक्ट, पंजाब के 'मार्शल लॉ' तया 'जलियांवाला बाग' की घटनाजों ने देश में राष्ट्रीय चेतना भर दी थी। पं० जवाहरलाल गाँधी जी से दीक्षा लेकर असहयोग आंदोलन में कूद पड़े और पूरे सत्याग्रही बन गए। सन् 1921 के असहयोग आंदोलन में पहली बार नेहरू जी ने छह मास की जेल की यातनाएं सहीं।

पूर्ण स्वतन्त्रता का नारा

सन् 1929 में जवाहरलाल जी लाहौर कांग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। इस अधिवेशन में उन्होंने सर्वप्रथम पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पारित करवाया। इससे नेहरू जी का सम्मान बहुत ही बढ़ गया। इसके बाद वे अनेक बार कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। 'भारत छोड़ो' आंदोलन में आप 1942 में अन्तिम

बार जेल गए। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर 1945 में आपको मुक्त कर दिया गया है।

भारत के प्रधान मन्त्री

15 अगस्त 1947 को भारत स्वतन्त्र हुआ। भारत स्वतन्त्र होने से पूर्व 1946 में जब अन्तरिम सरकार बनी तो नेहरू जी उसके प्रधानमन्त्री बने थे। भारत के स्वतन्त्र होने पर नेहरू जी ही पुनः प्रधानमन्त्री बने और जीवन पर्यन्त इस पद को सुशोभित करते रहे।

नेहरू जी के प्रधानमन्त्रित्व काल में देश में अनेक महान् एवं प्रशंसनीय कार्य हुए। आर्थिक समस्या, बेरोजगारी की समस्या, शरणार्थी समस्या, भाषाओं और प्रांतों के भीतरी झगड़े, सभी उन्होंने सफलतापूर्वक हल किए। योजना-आयोग की स्थापना हुई और देश की योजना तथा विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाएं बनीं। बड़े-बड़े बाँधों और कारखानों आदि का निर्माण हुआ। नेहरू जी ने भारत की उन्नति के लिए ही नहीं विश्व-शांति के लिए भी अथक कार्य, किया। युद्ध की विभीषिका से राष्ट्रों को मुक्त कराने तथा शान्ति स्थापित करने के प्रयत्न किए।

इतने व्यस्त राजनीति जीवन में भी नेहरू जी की लेखनी चलती रही और साहित्य सेवा होती रही। 'मेरी कहानी,' आपका सर्व प्रिय और सर्वश्रैष्ठ ग्रन्थ है। इसके अतिरिक्त 'भारत की कहानी,' 'विश्व इतिहास की झलक,' 'पिता के पत्र पुत्री के नाम' और 'पुरानी चिट्ठियाँ' आपकी प्रमुख रचनाएं हैं।

जवाहरलाल को बचपन से ही नित्यप्रति व्यायाम और योगासन करने की आदत थी। इसी से वे जीवन भर चुस्त और फुर्तीले रहे। नेहरू जी का दैनिक जीवन अध्यवसाय, परिश्रम और नियम का जीवन था।

उनका देहावसान 27 मई, 9964 को हुआ। इससे भारत शोक सागर में डूब गया। उस दिन जब शव-यात्रा जलुस शांतिवन (समाधि-स्थल) की ओर चला तो अपार जनसमूह शोकाकुल हो अश्रुपूर्ण मुख से उन्हें अन्तिम विदा देने दिल्ली की सड़कों पर उमड़ पड़ा था।

उपसंहार

भारत इस महान् युग-पुरुष को पाकर धन्य हो गया था। ऐसे सर्वगुण

सम्पन्न और लोक-प्रिय नेता के रिक्त स्थान की पूर्ति करना सम्भव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य है। इस सपूत ने विश्व में भारत का मान बढ़ाया। नेहरू जी के जीवन से बाल, युवा और प्रौढ़ सभी त्याग, बलिदान और कर्त्तव्य निष्ठा की शिक्षा और प्रेरणा ले सकते हैं।

—०—

लालबहादुर शास्त्री

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक और सरलता के अवतार स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री स्वतन्त्र भारत के द्वितीय प्रधानमन्त्री थे। वे इस युग के विदेह तथा त्याग व तप की मूर्ति थे। भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉक्टर राधा कृष्णन् के शब्दों में—"वे भारतीय लोकतन्त्र की दृढ़ता के ज्वलन्त उदाहरण थे—वे किसी भी अनुचित या अन्यायपूर्ण बात को सहन नहीं करते थे और न ही लोकतंत्र को इस प्रकार चलने देने को तैयार थे, जिससे लोगों को निर्धनता का जीवन बिताना पड़े।"

श्री लालबहादुर शास्त्री का जन्म 2 अक्टूबर, सन् 1904 ई० को वाराणसी में मुगलसराय नामक स्थान पर हुआ। शास्त्री जी जब केवल डेढ़ वर्षके ही थे, तभी दुर्भाग्य से इनके पिता का स्वर्गवास हो गया। उनकी मृत्यु के पश्चात् इनका परिवार वाराणसी से नौ मील दूर रामनगर में आकर रहने लगा। वहीं इनका लालन-पालन अत्यन्त निर्धनता में कष्टमय स्थिति में हुआ।

शास्त्री जी ने काशी के हरिश्चन्द्र हाईस्कूल से मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की। उन दिनों धनाभाव तो इन्हें इतना था कि गंगापार जाने के लिए नाविक को देने के लिए इनके पास पैसे नहीं होते थे, अतः वे उसे प्रायः तैरकर ही पार जाया करते थे। इसके अनन्तर उन्होंने महात्मा गाँधी द्वारा स्थापित विद्यापीठ से 'शास्त्री' परीक्षा उत्तीर्ण की।

स्वाधीनता संग्राम में

देश-प्रेम की भावना शास्त्री जी में प्रारम्भ से ही विद्यमान थी। महात्मा गाँधी के भाषणों से प्रभावित होकर और उनके आह्वान पर ये सोलह वर्ष की अवस्था में ही स्वतन्त्रता संग्राम में कूद पड़े थे। इन आंदोलन में 'असहयोग आंदोलन' और 'भारत छोड़ो आँदोलन' प्रमुख थे। इन आंदोलनों के कारण शास्त्री जी को अनेक बार कारावास की कठोर यातनाएं सहनी पड़ीं।

प्रशासन में

शास्त्री जी अपनी योग्यता, सरलता, सच्चाई, निष्पक्षता व परिश्रमशीलता के कारण सामाजिक क्षेत्र में तो आगे बढ़े ही, प्रशासन के क्षेत्र में भी वे पीछे न रहे। वे सात वर्ष तक प्रयाग-नगरपालिका के और चार वर्ष तक नगरसुधार मण्डल के अध्यक्ष रहे। स्वाधीनता से पूर्व 1937 में ये उत्तरप्रदेश कांग्रेस के मन्त्री और धारासभा के सदस्य भी रहे। सन् 1947 में भारत के स्वतन्त्र होने पर ये उत्तरप्रदेश मंत्रिमंडल में सभा सचिव बने। अपनी कर्मठता के कारण एक वर्ष बाद ही वहाँ पुलिस व यातायात मन्त्री बन गए।

सन् 1949 में जब नेहरू ने प्रधानमन्त्री के साथ ही कांग्रेस अध्यक्ष पद भी संभाला तो श्री शास्त्री जी कांग्रेस के महामंत्री के रूप में दिल्ली आकर कार्य करने लगे। इनकी कर्त्तव्य-दक्षता से प्रभावित होकर इसके बाद नेहरू जी ने इन्हें केन्द्रीय मंत्रिमंडल का सदस्य बनाया और इन्हें रेल मन्त्री नियुक्त किया। इन्हीं दिनों दक्षिण भारत में हुई रेल दुर्घटना का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेकर इन्होंने मंत्री पद से त्याग पत्र दे दिया; पर इनकी योग्यता और प्रशासन क्षमता के कारण श्री नेहरू ने इन्हें मंत्रिमंडल में ले लिया। इसके पश्चात् इन्होंने संचार व परिवहन मंत्री के रूप में तथा उद्योग व वाणिज्य के रूप में और स्वराष्ट्र मन्त्री के रूप में जनता की बहुत अच्छी सेवा की। बाद में जब नेहरू जी का स्वर्गवास हुआ तो ये सर्वसम्मत्ति से प्रधानमन्त्री चुने गए।

प्रधानमन्त्री के रूप में

प्रधानमन्त्री का पद संभालते ही शास्त्री जी को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। चीन का आक्रमण अभी भी किसी न किसी रूप में जारी

था । कश्मीर व कच्छ को लेकर पाकिस्तान का तनाव बढ़ रहा था, देश में आन्तरिक गड़बड़ी, मूल्यों में वृद्धि, फिर रणकच्छ पर पाकिस्तान का आक्रमण । शास्त्री जी को इनसे जूझना पड़ा; किन्तु उन्होंने बड़े धैर्य से इन कठिनाइयों में देश की नौका खेना जारी रखा ।

रण-कच्छ की मुठभेड़ के बाद युद्ध-विराम का समझौता तो हुआ, किन्तु तभी पाकिस्तान ने अपने घुसपैठिए भेजकर काश्मीर पर आक्रमण कर दिया । शास्त्री जी ने भी अपने वीर सैनिकों को लड़ने का आदेश दिया । दोनों पक्षों में घमासान युद्ध हुआ । उन्होंने भारत की जनता को उत्साह ब प्रेरणा देने के लिए 'जय जवान, जय किसान' का नारा लगाया । उनके अपूर्व नेतृत्व व जनता की संगठित शक्ति तथा सैनिकों के शौर्य से पाकिस्तान ने मुंह की खाई ।

युद्ध समाप्ति के अनन्तर इस झगड़े को सदा के लिए शाँत करने की इच्छा से रूस के प्रधानमंत्री कोसीगन के निमन्त्रण पर पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब से सन्धि वार्ता करने के लिए शास्त्री जी ताशकन्द गए; किन्तु यह भारत का दुर्भाग्य था कि जिस दिन सन्धि पर हस्ताक्षर हुए, उसी रात्रि को हृदयगति बन्द होने से भारत माता का वह 'बहादुर' बेटा चिरनिद्रा में सो गया ।

उपसंहार

शास्त्री जी केवल डेढ़ वर्ष ही प्रधान मंत्री पद पर रहे, पर इतने अल्प समय में ही अपने कार्यों से उन्होंने देश के मस्तक को गौरव से उन्नत कर दिया। वे मर कर भी अमर हो गए ।

वस्तुतः शास्त्री जी का जीवन प्रेरणा का अजस्र स्रोत हैं । सरलता, सच्चाई कर्त्तव्यनिष्ठा और सेवा-भावना से सामान्य व्यक्ति भी देश का कर्णधार बन सकता है; यही शिक्षा उनके जीवन से मिलती है ।

—o—

श्रीमती इन्दिरा गाँधी

जन्म व शिक्षा

श्रीमती इन्दिरा गाँधी स्वतंत्र भारत की तीसरी प्रधानमंत्री रही हैं । इनका जन्म 19 नवम्बर, 1917 को प्रयाग में हुआ था । देश के प्रथम प्रधान मंत्री

पंडित जवाहर लाल नेहरू इनके पिता थे। इनका बचपन का नाम इन्दिरा प्रियदर्शिनी था।

इन्दिरा की प्रारम्भिक शिक्षा गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा स्थापित शांति निकेतन में हुई। अध्ययन बीच में ही छोड़कर इन्हें अपनी बीमार माता श्रीमती कमला नेहरू की सेवा के लिए स्विट्जरलैण्ड जाना पड़ा। दुर्भाग्य से माँ की मृत्यु के कारण ये उनकी स्नेह छाया से वंचित हो गयीं। इसके बाद इनकी शिक्षा समरविले कालेज, आक्सफोर्ड, लन्दन में हुई। जब वे वहाँ से भारत लौटीं तो उनके व्यक्तित्व में निखार आ चुका था।

स्वतंत्रता आन्दोलन में

जिन दिनों इन्दिरा जी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् भारत लौटीं, उन दिनों इनके पिताजी और दादाजी भारतीय स्वाधीनता के लिए संघर्ष कर रहे थे। ये भी उसमें पीछे न रहीं। फलतः सन् 1938 में पहली बार इन्हें तेरह मास के कारावास का दण्ड मिला। इसी बीच एक कांग्रेस कार्यकत्ता फिरोज-गाँधी से इनका परिचय हुआ और ये उनके साथ प्रणय-सूत्र में बंध गईं। फिरोज से इनके दो पुत्र हुए, राजीव व संजय। जिनमें संजय की मृत्यु हो चुकी है और राजीव अब भारत के प्रधान मंत्री हैं। ये सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में भी जेल गयीं।

स्वतन्त्रता के पश्चात्

सन् 1947 में भारत के स्वतंत्र होने पर पंडित जवाहरलाल नेहरू प्रधान मंत्री बने तो इन्दिरा पिता की देखभाल करने के लिए उनके साथ रहने लगीं। पिता के साथ रहने से उन्हें देश-विदेश भ्रमण का और वहाँ प्रसिद्ध नेताओं से मिलने तथा उनसे बातचीत करने का अवसर मिला। साथ ही विभिन्न समस्याओं के समाधान को देखने का अवसर मिला। इससे उनके राजनीतिक ज्ञान में परिपक्वता आ गई। अतः वे सन् 1956 में कांग्रेस की अध्यक्षा तथा सन् 1962 के चीनी आक्रमण के समय नागरिग परिषद् की अध्यक्षा रहीं।

नेहरू जी के मृत्यु के अनन्तर

जब सन् 1964 में पंडित नेहरू का देहावसान हुआ तो श्री लालबहादुर

शास्त्री प्रधानमंत्री बने। उन्होंने इनको अपने मंत्रिमण्डल में 'सूचना तथा प्रसारण' मंत्री बनाया। सन् 1965 में जब भारत-पाक युद्ध के पश्चात् शास्त्री जी का अकस्मात् स्वर्गवास हुआ तो ये प्रधानमंत्री चुनी गयीं।

प्रधानमंत्री चुने जाने के बाद राष्ट्रपति के चुनाव को लेकर कांग्रेस में जो आंतरिक कलह हुआ उसमें इन्होंने अधिकृत प्रत्याशी संजीव रेडी का विरोधकर श्री गिरि को राष्ट्रपति बनवाया और स्वयं 'नई कांग्रेस' की नेत्री बन गयीं। उस समय इन्होंने अपनी धाक जमाने के लिए 'बैंकों का राष्ट्रीयकरण' करवाया तथा राजाओं का 'प्रीवीपर्स' बंद करवा दिया। सन् 1972 के भारत-पाक संघर्ष में बंगला देश का निर्माण करवाया।

आपत्काल की घोषणा

सन् 1972 के चुनाव में ये फिर प्रधान मंत्री चुनी गयीं। तभी श्री राज-नारायण ने इनके चुनाव के विरुद्ध याचिका दायर कर दी। मुकद्दमे में ये चुनाव में भ्रष्टाचार की दोषी पाई गयीं और इनका चुनाव निरस्त कर दिया गया। न्यायालय द्वारा बीस दिन का अवसर दिये जाने पर भी इन्होंने पद से त्यागपत्र न दिया। विरोधी दलों ने जब त्यागपत्र की माँग की तो इन्होंने देश में आपत्काल की घोषणा कर दी और संसद् से चुनाव सम्बन्धी कुछ नये कानून बनवा दिये तथा विपक्षी नेताओं को कारावास में बन्द कर दिया गया। इधर इनके बेटे स्वर्गीय संजय गाँधी ने चार सूत्रीय कार्यक्रम चलाया और इन्होंने बीस सूत्री कार्यक्रम। दोनों का दमन-चक्र चलने लगा। देश एक बड़ी जेल बन गया। सन् 1977 में इन्होंने चुनाव करवाया तो ये और इनकी 'नई काँग्रेस' पराजित हो गई। देश में मोरार जी देसाई के नेतृत्व में 'जनता दल' ने सरकार बनाई।

मध्यावधि चुनाव

जनता सरकार के ढाई वर्ष के शासन में इनके विरुद्ध 'शाह आयोग' बिठाया गया, पर ये धैर्य और साहस से काम करती हुई समय की प्रतीक्षा करने लगीं। इधर कुछ स्वार्थी और महत्त्वाकांक्षी नेताओं जैसे—चौधरी चरणसिंह, राज नारायण, मधुलिमये आदि के कारण 'जनता दल' में फूट पड़ गई। उस समय

इन्दिरा ने बड़ी चतुराई से पहले चौधरी चरणसिंह को प्रधान मंत्री बनने में सहयोग दिया और बाद में 'विश्वास प्रस्ताव' के अवसर पर हाथ खींच लिया था। फलतः देश में मध्यावधि चुनाव हुए। उसमें इन्दिरा जी और उनकी काँग्रेस भारी बहुमत से पुनः विजयी हुई।

पुनः प्रधानमंत्री बनने के पश्चात् श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने देश का नेतृत्व किया, पर उसमें वे पूर्णतः सफल न रहीं। केन्द्र में शासन चाहे स्थिर रहा, पर प्रदेशों में उठा-पटक होती ही रही। मंहगाई और भ्रष्टाचार के साथ ही कानून और व्यवस्था ढीली पड़ गई। इन्दिरा ने समस्याओं को सुलझाने की अपेक्षा उन्हें लटकाने की नीति अपनाई। असम और पंजाब की समस्याएं ऐसी ही थीं। पंजाब में उग्रवाद बढ़ा, भिंडरावाले का आतंक फैला; निरीह जनता की हत्याएं होने लगीं, गुरुद्वारे किलों में बदले तो विवश होकर उन्हें पंजाब में सैनिक कार्यवाही करनी पड़ी। अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर में सैनिक कार्यवाही से उग्रवादी ही नहीं, सभी सिक्ख कुपित हो गये और वे इन्दिरा के शत्रु बन गए। इन्हीं उग्रवादियों की प्रेरणा से 31 अक्टूबर 1984 को इन्दिरा गाँधी के अंगरक्षकों बेअन्त सिंह और सतवन्त सिंह ने उनकी हत्या कर दी।

इन्दिरा की हत्या के साथ ही एक युग का अन्त हो गया। जनता उनकी हत्या से शोकाकुल हो गई। मर कर भी उनका नाम अमर हो गया।

—o—

ग्रामोत्थान

(ग्राम-सुधार)

प्रस्तावना

भारत एक कृषि प्रधान देश है। कृषि ही जीविका का मुख्य साधन होने से यहाँ की अस्सी प्रतिशत से अधिक जनता आज भी गाँवों में ही रहती है। गाँव भारत की मूल इकाई है। भारतीय सभ्यता और संस्कृति का जन्म इन्हीं गाँवों में हुआ है। भारत में लगभग छह लाख गाँव हैं। इनकी तुलना में नगरों की संख्या नगण्य है। कविवर सोहनलाल द्विवेदी का यह कथन उचित ही है कि—

'हे अपना हिन्दुस्तान कहाँ ? वह बसा हमारे गाँवों में ।'

एक समय ऐसा था, जब भारत के गाँवों की दशा बहुत सुन्दर और उन्नत थी। किसान सुखी और सम्पन्न थे । वहाँ घी-दूध की नदियां बहती थीं । धरती अन्न के रूप में सोना उगलती थी । कृषि एवं कुटीर उद्योग ग्रामीण जीवन के प्रमुख आधार थे । जीवन की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति वहाँ सरलता से हो जाती थी । किसानों के साथ ही उनकी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले लुहार, बढ़ई, सुनार, अन्य शिल्पी, व्यापारी, वैद्य, पुरोहित, शिक्षक भी वहाँ रहते थे । वे सभी लोग वहाँ आनन्द और परस्पर मेल-जोल से रहते थे ।

ग्रामों की अवनति

आज वे सभी बातें विपरीत दीख रही हैं। आज भारत के किसान की दशा दयनीय हो रही है। कृषि से उनकी जीविका का निर्वाह नहीं हो रहा। फलतः घबराकर रोजगार की तलाश में वह किसान शहर की ओर भागा चला आ रहा है। भारत के गाँवों की इस दुर्दशा की उत्तरदायी ब्रिटिश सरकार थी। उसने अपने शासन काल में कृषि सुधार और ग्राम-विकास से मुंह मोड़ लिया था उसने अपने आर्थिक लाभ के लिए गाँवों के कुटीर उद्योग को और ग्राम-शिल्प को प्रत्येक सम्भव प्रयत्न से कुचल दिया था। जमींदारों, सूदखोर महाजनों, सरकारी कर्मचारियों ने किसानों का खूब शोषण किया। शिक्षण के अभाव, मद्यपान, मुकद्दमों आदि ने तो उनकी और भी दुर्दशा कर दी। इतना ही नहीं चरित्र का भी लोप हो गया। आशय यह कि गाँवों में मृत्यु, रोग, भूख और आलस्य का वास हो गया है। खेती के साधन भी नष्ट हुए और कृषि का प्राण बैल, भैंस आदि भी नष्ट होने लगीं।

गाँवों की समस्याएं और समाधान

गांवों की मुख्य समस्या ग्रामीणों का अशिक्षित होना और उनकी निर्धनता है। ये दोनों समस्याएं एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं। अशिक्षा के कारण ही गाँवों में अनेक सामाजिक कुरीतियां और अन्धविश्वास पनप गए हैं, इन्हें तभी सफलता से कुचला जा सकता है, जबकि प्रत्येक ग्रामवासी शिक्षित हो। इसके लिए गाँवों में प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च विद्यालयों का निर्माण होना चाहिए।

सरकार भूमि-विकास और किसानों की हालत सुधारने के लिए कई कानून बना रही हैं, खेती की उन्नति की भी नई वैज्ञानिक विधियां विकसित हो रही हैं, सहकारी बैंकों से कृषकों के लिए ऋण की व्यवस्था हो रही है, पर कैसे ? इन्हें समझने के लिए किसान का शिक्षित होना जरूरी है। शिक्षित किसान ही इनका लाभ प्राप्त कर सकता है।

गाँवों की अन्य समस्या पीने के पानी की भी है। भारत में हजारों गाँव ऐसे हैं, जहाँ आज भी जनता को स्वच्छ जल प्राप्त नहीं होता। गाँवों के पोखर व छोटी नदियाँ नष्ट हो रही हैं। इन तालाबों को फिर से खोदकर उन्हें मैले पानी से छुटकारा दिलाना होगा। कई पुराने कुओं को—जिनमें पानी नहीं है या गन्दा है—भरकर उनके स्थान पर नए कुओं का—विशेषकर—नलकूप का —निर्माण करना चाहिए। पीने के पानी के साथ ही सिंचाई के साधन बढ़ने के लिए भी नहरों और नल-कूपों का जाल बिछाया जाना चाहिए।

गाँव में अस्वच्छता की भी समस्या है। प्रायः घरों का कूड़ा-करकट लोग घर के बाहर फेंक देते हैं। घरों का गन्दा पानी बाहर बहता रहता है। इससे दुर्गन्ध उत्पन्न होती है, मच्छर-मक्खी पैदा होते हैं। इसके लिए नालियां और ईटों की पक्की नालियों का प्रबन्ध आवश्यक है, जिससे स्वच्छता बनी रहे।

आज भी हजारों गांवों में वैद्य, डाक्टर या हकीम नहीं हैं। लोग रोगी होने पर बिना औषध के ही मर जाते हैं। अतः गाँवों में निःशुल्क औषधालयों की या चलते-फिरते अस्पतालों की व्यवस्था होनी चाहिए।

गाँवों की उन्नति के कुछ उपाय

गाँवों और कृषि की उन्नति का आधार मुख्यतः—गाय, बैल, भैंस आदि हैं, गाय का दूध स्वास्थ्य का तथा गोबर खाद का आधार है। बैल हल चलाने के लिए अनिवार्य हैं। भले ही आज कुछ बड़े खेतों पर ट्रैक्टर चलने लगे हैं, फिर भी बैलों की उपयोगिता असंदिग्ध है और रहेगी। दूध के लिए भैंसें भी चाहिएं। नगरों में भी दूध गाँवों से ही जाता है। अतः इस पशुधन का विकास व नस्ल सुधार अत्यन्त अनिवार्य है। इनसे एक ओर गाँव वालों को दूध व खाद मिलेंगे वहीं दूसरी ओर दूध बेचने से उनकी अतिरिक्त आय भी होगी।

आजकल खेती के विकास की अनेक नई विधियां विकसित हो रही हैं।

नए कृषि औजारों और वैज्ञानिक विधि से खादों का निर्माण हो रहा है। नए सुधरे बीजों का उत्पादन हो रहा है। खेती के विकास के लिए किसानों को इनका समुचित उपयोग सिखाना चाहिए। इससे एक ओर देश अन्न के मामले में आत्मनिर्भर होगा, दूसरी ओर किसानों को आर्थिक लाभ भी होगा। इसके साथ ही साग-सब्जियों और फलों का उत्पादन वढ़ाना भी आवश्यक है। इन्हें वे स्वयं भी खा सकते हैं और अधिक मात्रा में इनका उत्पादन कर बेच भी सकते हैं।

कृषि की उन्नति में खादों का मुख्य हाथ होता है। खाद का सबसे अच्छा रूप गोवर है। खाद के लिए गाँवों में खेती के आस-पास या खाली भूमि पर ऐसे वृक्षों का आरोपण करना चाहिए जो कि फलों का, चारे का और ईंधन का काम दे सकें, जिससे कि गोबर को जलाने के काम न लाया जाय, बल्कि वह खाद के काम आए।

गाँवों की उन्नति के लिए वहाँ कुटीरोद्योगों व ग्राम-शिल्पों का विकास, यातायात के साधनों और गाँवों को नगर तक जोड़ने वाली सड़कों का विकास तथा बिजली की आपूर्ति भी होनी चाहिए। देश की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक गतिविधियों की नवीनतम जानकारी के लिए वहाँ रेडियो या टेलीविजन और समाचार-पत्रों के पहुँचाने की व्यवस्था भी यथासम्भव होनी चाहिए।

गाँवों में किसानों को विवाह, मुंडन, जनेऊ आदि उत्सवों के अवसर पर या कभी आर्थिक तंगी में महाजनों से भारी सूद पर कर्ज भी लेना पड़ता है। सूद-खोर महाजनों से ग्रामवासियों को छुटकारा देने के लिए गांवों में सहकारी बैंकों की स्थापना होनी चाहिए। जहाँ से वे थोड़े से ब्याज पर ऋण पा सकें। साथ ही उनके माल की बिक्री के लिए सहकारी समितियां भी होनी चाहिए, ताकि बड़े व्यापारी उनका शोषण न कर सकें। गाँवों में आज हजारों की संख्या में बन्धुआ मजदूर हैं। ग्रामों की उन्नति के लिए उनकी मुक्ति भी आवश्यक है। गाँवों में आजकल मुकद्दमेवाजी भी बढ़ती जा रही है। इससे ग्रामवासियों का समय व धन दोनों नष्ट होते हैं। अतः उनके लिए पंचायत व्यवस्था को अधिक

सुसंगठित करना चाहिए; ताकि वे वहीं न्याय प्राप्त कर सकें। उन्हें सत्र न्यायालय और उच्च न्यायालय के चक्कर न लगाने पड़ें।

उपसंहार

वस्तुतः गाँव देश की इकाई हैं। जिस दिन भारत में ग्रामोत्थान हो जाएगा सारे देश का उत्थान हो जाएगा। अतः उनकी उन्नति के लिए पूरा ध्यान देना चाहिए।

—०—

वृक्षारोपण : एक आवश्यकता

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति वन-प्रधान है। यहाँ के ऋषि-मुनियों को वनों से प्यार था तो राजा तथा अन्य लोग भी चौथी उम्र में संन्यास लेकर वनों में ही चले जाते थे। जरा जाइए किसी वन में, जहाँ चारों ओर नाना प्रकार के हरे-भरे वृक्ष हों, अनेक प्रकार की लताएं हों, विभिन्न प्रकार की झाड़ियां हों, फूल उन पर खिले हों, भौंरे मंडरा रहे हों, तितलियां नाच रही हों, पक्षी चहक रहे हों; कितना आनन्द आ जाएगा? वनों के इस मनोहारी दृश्य से मन को कितना अद्भुत सुख मिलता है। कुछ देर के लिए तो हृदय का मैल धुल जाता है। इसलिए हमारे ग्रंथों में वन पवित्र माने गए हैं, वृक्षारोपण पुण्य का कार्य माना गया है तथा वृक्षों का काटना पाप कहा गया है। महाकवि कालिदास ने अपने सुप्रसिद्ध नाटक 'शाकुन्तलम्' में लिखा है कि शकुन्तला मण्डनप्रिय होते हुए भी वृक्षों के स्नेह के कारण उनके पत्ते नहीं तोड़ती थी। "नादत्ते प्रिय मण्डनापि भवतो स्नेहेन या पल्लवम्।" पुराणों में घर बनाने वालों को कहा गया है कि भवन के उत्तर में पलाश, दक्षिण में आम, पूर्व में वट तथा पश्चिम में पीपल का वृक्ष लगाना चाहिए तथा घर के आगे फुलवारी लगानी चाहिए। ऋषि-मुनि इन वृक्षों को देवता मानते थे।

वृक्षों और वनों की आवश्यकता

यह सभी जानते हैं कि विश्व का निर्माण, विकास व रक्षा प्रकृति पर ही निर्भर है और प्रकृति के निर्माण व रक्षा में वनों का—अर्थात् वन के वृक्षों, लता-पादपों, गुल्मों, तृणों का बहुत बड़ा महत्त्व है। पृथ्वी पर मनुष्य के अस्तित्व के लिए वृक्ष अत्यावश्यक हैं; क्योंकि वृक्ष ही मिट्टी के मुख्य रक्षक हैं। वे आँधियों के वेग को रोकते हैं और मिट्टी को उड़ने से बचाते हैं। वृक्ष ही पर्वतों को स्थिर रखते हैं तथा वायु को शुद्ध व शीतल रखते हैं। वनों से पशु-पक्षियों की रक्षा होती है। वन और वृक्ष ही वर्षा के कारण होते हैं। जहाँ वृक्ष अधिक होते हैं, ऐसे पर्वतीय या जंगली स्थानों पर वर्षा अच्छी होती है, किन्तु रेगिस्तान पानी के लिए तरसता रहता है। वर्षा से अन्न उत्पन्न होता है और अन्न से मनुष्य जीवित रहते हैं।

वृक्षों से ही भूमि की उपजाऊ शक्ति कायम रहती है और भूमि का क्षरण रुकता है। विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ हमें इनसे मिलती हैं। अनेक वृक्षों की पत्तियों को घास के रूप में खाकर पशु जीवित रहते हैं। वृक्षों से ही हमें इंधन और भवन निर्माण के लिए काष्ठ मिलता है। रेल, जलयान या वायुयान के निर्माण में वृक्षों से प्राप्त लकड़ी का ही उपयोग होता है। भांति-भांति की दवाइयां, गोंद, कागज, दियासलाई और कई प्रकार के तेल, अनेक प्रकार के स्वादिष्ट व पौष्टिक फलों की प्राप्ति हमें वृक्षों से ही होती है। वृक्षों की छाया ग्रीष्म के ताप से संतप्त जनों को शीतलता प्रदान करती है। इनके फलों की सुगन्ध मन-मस्तिष्क को ताजगी देती है।

वृक्षों का नाश

वृक्षों के उक्त महत्त्व को जानते हुए भी आज हम (सरकार भी)—वृक्षों को काटते जा रहे हैं, नए वृक्ष लगाने की ओर किसी का ध्यान ही नहीं है। परिणाम भी सामने है—रेगिस्तान बढ़ते जा रहे हैं। वृक्षों के काटने से मिट्टी स्थिर नहीं रह पा रही। फलतः पर्वतीय भूमि का क्षरण हो रहा है। नदियों में बाढ़ आ रही है और कहीं वर्षा के अभाव से सूखा पड़ रहा है। यदि यही स्थिति रही तो कुछ वर्षों में ही ईंधन, इमारती लकड़ी, पशुओं के लिए घास और जड़ी-बूटियों के लिए यहाँ हाहाकार मच जायेगा। ठीक समय पर वर्षा

न होगी। वर्षा के अभाव से अन्न न होगा। अन्न के अभाव में मनुष्य जीवित न रहेगा। गाँवों के लोग करोड़ों मन प्राकृतिक खाद—गोबर को— ईंधन के रूप में जला देते हैं और खेत खाद की कमी से अधिक अन्न नहीं दे पाते। वे गोबर को इसलिए जलाते हैं कि ईंधन के लिए वृक्ष नहीं हैं।

वृक्षारोपण आवश्यक

उक्त सभी बातों को ध्यान में रखकर आज वृक्षारोपण की अत्यन्त आवश्यकता है। गाँवों में यदि वृक्षारोपण होगा तो ग्रामवासियों को उनसे ईंधन मिलेगा; फल मिलेंगे और पशुओं के लिए हरा-हरा चारा मिलेगा। हरे चारे से पशु अधिक दूध देंगे। वृक्षों के आरोपण से प्रकृति में शुद्धता व शीतलता आयेगी, जिससे वर्षा होगी, वर्षा से अन्न होगा। वृक्षों व वनों के लगाने से मिट्टी स्थिर रहेगी, भूमि का क्षरण नहीं होगा, पहाड़ों का स्खलन रुकेगा, नदियों में बाढ़ न आयेगी और रेगिस्तान का विस्तार भी रुक जाएगा।

किस प्रकार के वृक्ष लगाएं ?

वृक्ष ऐसे लगाने चाहिएं जो उपयोगी हों। खेतों से बाहर या पर्वतीय भूमि पर इमारती लकड़ी वाले वृक्ष जैसे-शीशम, साल, चीड़, देवदार, बांज, बबूल, तुन आदि के पेड़ लगाए जाएं। खैर, पीपल, बड़, नीम आदि के पेड़ सड़कों के किनारे लगाए जा सकते हैं। घास व कागज आदि के लिए बांस भी लगाया जा सकता है। दियासलाई के लिए सेमल का पेड़ बड़े ही काम का होता है। घरों के आस-पास फलदार पेड़ जैसे आम, आड़ू, अमरूद, पपीता, जामुन, नींबू, कटहल आदि लगाने चाहिएं। इनमें स्वादिष्ट व पौष्टिक फल मिलते हैं और पेड़ों के सूखने पर लड़की भी मिलती है। खेतों की मेड़ों पर नीम, आँवला, शीशम, आदि के पेड़ लग सकते हैं, क्योंकि वे कृषि को हानि नहीं पहुँचाते और उनसे छाया भी पर्याप्त मिलती है।

उपसंहार

अतः देश की उन्नति में वृक्षों के योगदान को देखते हुए अधिक से अधिक संख्या में लगाना होगा और उनकी रक्षा भी करनी होगी। इसी से देश की

सर्व प्रकार से समृद्धि होगी तथा स्वस्थ व सुन्दर प्राकृतिक वातावरण हमें प्राप्त होगा ।

—o—

दहेज-प्रथा

(एक सामाजिक अभिशाप)

प्रस्तावना

हिन्दू समाज विश्व की सभी जातियों में अति प्राचीन और श्रेष्ठ समाज है । समय-समय पर हिन्दू समाज में अनेक उपयोगी प्रथाओं और परम्पराओं ने भी जन्म लिया, जो कभी समाज के लिए वरदान थीं, किन्तु कालान्तर में विकृत और रूढ़िबद्ध होकर वे ही प्रथाएं समाज के लिए अभिशाप बन गयीं हैं । हिन्दू समाज के पारिवारिक जीवन में कलह तथा अशान्ति को जन्म देने वाली 'दहेज-प्रथा' भी उनमें से एक है । इसने हिन्दू समाज की स्वाभाविक रूप से बहने वाली जीवन-धारा को कुटिल, कलुषित और जटिल बना दिया है ।

विवाह और दाय

गृहस्थ आश्रम को जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग मानते हुए उसे हिन्दू-धर्म में सामाजिक तथा धार्मिक मान्यता प्रदान की है। पुरुष तथा स्त्री दोनों के विकास के लिए तथा सामाजिक व्यवस्था को सुगठित चारित्रिक आधार देने के लिए 'विवाह' को एक अनिवार्य 'संस्कार' समझा गया है । इस अवसर पर कन्या को उसके माता-पिता तथा सम्बन्धियों की ओर से उपहार या भेंट देने की प्रथा प्रचलित हुई । संस्कृत में इसे 'यौतुक' या 'दाय' कहते हैं । 'दाय' शब्द के अनेक अर्थों में एक अर्थ कन्या और जामाता को विवाह के समय दिया जाने वाला द्रव्य और उपहार है । 'दाय' से 'दायाद्य' शब्द बना । इसी से 'दायज' शब्द और उसी से 'दहेज' शब्द बना ।

दहेज का कारण

दहेज प्रथा का मूल कारण यह रहा होगा कि कन्या पतिगृह जाकर वंश-

वर्द्धिनी और गृह-लक्ष्मी बनेगी, अन्नपूर्णा बनेगी; अतः उसे रिक्त हस्त भेजना उचित नहीं। फिर इस यौतुक से कन्या अपनी नई गृहस्थी सुचारू रूप से चला सके और साथ ही जामाता का भी उचित सम्मान हो जाए। कालान्तर में कन्या व जामाता को दिए जाने वाले ये उपहार दहेज के रूप में अपने कलेवर का विस्तार करने लगे और आज तो इस प्रथा ने इतना विकराल रूप धारण कर लिया है कि विवाह एक व्यवसाय (सौदा) हो गया है। जिसमें वर के माता-पिता अपने पुत्र के रूप, गुण, विद्या आदि के लिए अगल-अलग भाव निश्चित करते हैं और मन चाहा मूल्य प्राप्त करते हैं।

अभिशाप

दहेज की यह प्रथा आज समाज के लिए एक भयंकर अभिशाप बन गई है। इसके कारण अनमेल विवाह होने लगे हैं; इसके कारण सुरूप, सुशील और गुणवती कन्याओं का जीवन नरक बन जाता है। दहेज के अभाव में ही फूल-सी सुकुमार, शिक्षित व गुणवती कन्याएं अशिक्षित, कुरूप तथा दुश्चरित्र युवकों के पल्ले बांध दी जाती हैं। कहीं सभ्य, सुसंस्कृत और सुशिक्षित कन्याओं के माता-पिता उनके लिए योग्य वर ढूंढ़ने के लिए अपनी सामर्थ्य से भी अधिक व्यय करके जन्म भर ऋण-भार से ग्रस्त हो दुःख भोगते हैं या अल्प शिक्षित और अल्प गुण वाले तरुणों को ही दामाद बनाकर अन्दर-ही-अन्दर घुटते रहते हैं। कहीं ऐसा भी होता है कि अधिक दहेज पाने के लालच से वर के माता-पिता अपने सुशील और सुन्दर बेटे के लिए कुरूप और कर्कशा वधू ले आते हैं। वहाँ पति-पत्नी दोनों का जीवन नीरस और दुःखपूर्ण हो जाता है।

इस दहेज प्रथा के कारण आज अनेक कन्याओं को अपने जीवन से ही हाथ धोना पड़ता है। दहेज कम लाने पर या न लाने पर वधू को ससुराल वाले बात-बात पर ताने देते हैं, कहीं उस पर काम का बोझ अधिक लाद देते हैं। कभी उसे कुलक्षणी और दुश्चरित्र बताने लगते हैं, कभी उसे भूखा-प्यासा रखा जाता है। पति भी उससे बात नहीं करता। तब वह मानसिक वेदना से व्यथित हो पितृ-गृह जाने को विवश होती है। जहाँ उसका भविष्य अन्धकारपूर्ण ही रहता है। कभी-कभी तो कई सास-ससुरों का अपनी वधू के प्रति इतना क्रूरता-पूर्ण व्यवहार हो जाता है कि वधू को आत्म-हत्या के लिए विवश होना पड़ता

है और कहीं ससुराल वाले ही उसके कपड़ों पर तेल छिड़क कर उसे जीवित जला देते हैं। इस प्रकार अनेक निरपराध व निरीह तरुणियाँ दहेज रूपी दानव के पेट में समा जाती हैं। बहुओं को जलाने वाली इस प्रकार की घटनाएं आज देश में अत्यधिक परिमाण में हो रही हैं। जिससे समाज त्रस्त हो उठा है। ऐसी शिक्षित, स्वाभिमानिनी और स्वावलम्बिनी महिलाएं बहुत थोड़ी निकलती हैं, जो इस अन्यय का तलाक आदि से प्रतिकार कर सकें। कारण—आर्थिक पराधीनता और लोक-लाज की भावना ही है।

इस दुष्प्रथा को समाप्त करने के लिए यद्यपि समाज सुधारकों ने अनेक प्रयास किए। किन्तु 'मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की' के अनुसार यह प्रथा सुरसा के मुँह के समान फैलती जा रही है।

उपसंहार

दहेज-प्रथा वास्तव में एक घुन है, जो धीरे-धीरे समाज रूपी वृक्ष को खाता जा रहा है। इस दुष्प्रथा को दूर करने के लिए पर्याप्त वातावरण बनाना पड़ेगा, समाज में नवीन चेतना का विकास करना होगा। इसको दूर करने के लिए एक ओर कन्या पक्ष को अपना मनोबल बढ़ना होगा। दूसरी ओर शिक्षित कन्याओं और शिक्षित युवकों को भी इसका विरोध करना होगा। युवक यदि अपने दहेज के लालची माता-पिता को कहें कि हम दहेज कदापि न लेंगे तो उन्हें बिना दहेज के ही पुत्र के विवाह के लिए विवश होना पड़ेगा।

समाज के विभिन्न संगठनों, धर्माचार्यों और समाज सुधारकों को इस ओर शीघ्रातिशीघ्र प्रयत्न आरम्भ कर देना चाहिए, दहेज-प्रथा के विरोध में वातावरण बनाना चाहिए। ताकि इस पिशाच से समाज को मुक्ति मिले और लाखों कन्याओं तथा उनके माता-पिताओं का जीवन सुखी तथा चिन्ता मुक्त हो जाए।

—o—

अस्पृश्यता-निवारण

(हरिजन समस्या या छुआ-छूत की समस्या)

प्रस्तावना

हिन्दू समाज विश्व के उन्नत समाजों में से एक है। इस समाज का संगठन प्रारम्भ में वैज्ञानिक और सुव्यवस्थित ढंग से हुआ था। समाज के निर्माताओं को उसे गति देने और समाज के सभी सदस्यों को जीविका का साधन देने के लिए उसे गुण, कर्म के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वर्गों में विभक्त किया था। "चातुर्वर्ण्यं मया, सृष्टं गुण-कर्म विभागशः।" इनमें से ब्राह्मण को अध्ययन व यज्ञ-कार्य सौंपा गया, क्षत्रियों को राज्य और रक्षा का कार्य दिया गया, वैश्य को व्यापार और कृषि कार्य सौंपे गए और शूद्र को शिल्प और अन्य वर्णों की सेवा का कार्य सौंपा गया। वे सब मुख, बाहू, उरु तथा चरण आदि एक ही शरीर के विभिन्न अंगों के समान एक दूसरे से पूरक और उपकारक म.ने गए थे।

समाज की यह वर्ण-व्यवस्था आरम्भ में ठीक चली। कालान्तर में प्रथम तीन वर्ण सवर्ण और चतुर्थ वर्ण असवर्ण कहलाने लगा। इनमें भी जो लोग (विशेषकर) सफाई और चमड़े का काम करने लगे, उन्हें अस्पृश्य (अछूत) माना जाने लगा और इनका स्पर्श भी वर्जित कर दिया गया। यहाँ तक कि इनकी छाया तक अपने पर पड़ना पाप माना ज़ाने लगा।

हरिजनों की स्थिति

भारत में अस्पृश्यता की यह समस्या विकट है। कुछ कट्टर लोग उनको अपने से नीच समझते हैं तो कुछ तथाकथित अछूत हितैषी उनकी माँगें गिनवा कर उनको सवर्णों से अलग खड़ा कर देते हैं।

आज इन अछूत या हरिजन कहलाने वाले लोगों की संख्या सात करोड़ से अधिक है। राष्ट्र और समाज के विकास के क्षणों में इतने बड़े वर्ग की उपेक्षा नहीं की जा सकती। भारत में इस्लाम और ईसाइयत के अत्यधिक प्रचार का

कारण भी इस वर्ष की घोर उपेक्षा रही है। इस्लाम के विश्व बन्धुत्व रूप के कारण ही शताब्दियों पहले हमारी उपेक्षा के कारण इसी वर्ग के अधिकांश लोग मुसलमान बने। जिनका दुष्परिणाम हमें देश-विभाजन के रूप में देखना पड़ा।

इस वर्ग की निर्धनता, अशिक्षा और विवशता का लाभ उठाकर समाज के उच्च वर्ग के लोग इनसे मनमानी किया करते हैं। दिन भर परिश्रम करके भी इनको इतना धन नहीं मिलता कि वे अपने बाल-बच्चों तक का पोषण कर सकें। इन्हें समानता का अधिकार भी नहीं है। उच्च वर्ग वाले एक कुत्ते के छू जाने पर इतने नहीं घबराते, जितना इनकी परछाईं मात्र से दूर भागते हैं। इनको कुओं पर ऊँची जाति वालों के साथ पानी भरने का अधिकार नहीं और इनका मन्दिर प्रवेश भी निषिद्ध है। गाँवों में उनके घरों को ही नहीं बल्कि उन्हें भी जीवित जलाया जा रहा है, कहीं उन्हें गोली का निशाना बनाया जाता है, जो मानवीय दृष्टि से अत्यन्त नीच और पाप कर्म है।

अछूतोद्धार के प्रयत्न

अस्पृश्यों के प्रति उच्च वर्ण वालों के इन अत्याचारों को रोकने के प्रयत्न सदा से होते चले आ रहे हैं। भगवान् कृष्ण ने गीता में "शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता: समदर्शिन:' कहकर बताया कि चाहे चांडाल हो या ब्राह्मण सबमें एक ही भगवान् का अंश व्याप्त है। इसी विचार का महात्मा कबीर, रामानुज, गुरुनानक आदि सन्तों ने भी प्रचार किया है। कबीर तो छूआछात के इतने विरोधी थे कि स्वयं अछूत होने पर गर्व का अनुभव करते थे और कहते थे कि हरि के दरबार में जाति-पाति का कोई मूल्य नहीं होता।

'जाति-पाँति पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई।

इन शताब्दी के आरम्भ में ब्राह्म समाज तथा आर्य समाज आदि संस्थाओं ने इस समस्या को सुलझाने का और हरिजनों को समाज में सम्मान-जनक स्थान दिलाने का प्रयत्न किया है। महात्मा गाँधी ने तो इस ओर बड़ा सक्रिय पग उठाया था। उन्होंने अस्पृश्य कहे जाने वालों को 'हरिजन' का नाम दिया और उनके उत्थान के लिए सन् 1932 में 'हरिजन सेवक-संघ' की स्थापना की। दक्षिण में हरिजनों की दशा अत्यन्त शोचनीय होने के कारण उन्होंने सर्वप्रथम दक्षिण को ही संघ का केन्द्र बनावा। उन्हीं के प्रयत्न से पहले पहल ट्रावनकोर

रियासत ने हरिजनों को सार्वजनिक तालावों; कुओं और सार्वजनिक स्थानों को प्रयोग में लाने की आज्ञा दी। गाँधी जी की प्रेरणा से ही अछूतों के लिए अनेक मन्दिरों के द्वार खुल गए। उनके बाद तो जन-जागृति आरम्भ हो गई और इस स्थिति को बदलने के लिए तीव्र प्रयास आरम्भ हो गए।

सरकार का प्रयास

तदनन्तर सरकार ने भी छुआछूत को दण्डनीय अपराध स्वीकार किया और विधान सभाओं, संसद् तथा नौकरियों में उनके स्थान सुरक्षित किए। आज विद्यालयों और महाविद्यालयों में हरिजन छात्रों को निःशुल्क शिक्षण दिया जा रहा है। प्रतियोगिताओं परीक्षाओं में भी कुछ छूट व सुविधाएं दी जा रही हैं। अभी बहुत कार्य करना शेष है।

उपसंहार

अछूतों की समस्या हमारे लिए एक अभिशाश है। अब यह समस्या हमारे राष्ट्रीय और सामाजिक जीवन के लिए भी चुनौती बन गई है। क्योंकि दक्षिण के मीनाक्षी पुरम् और रामनाथ पुरम् को केन्द्र बनाकर मुसलमान उनके धर्मान्तरण कर रहे हैं ओर ईसाई बनाने पर तुले हुए हैं। यदि हमने उन्हें प्रेम से गले न लगाया, उन्हें उनके अधिकार न दिए तो वे भारत के राष्ट्रीय जीवन के लिए भी संकट का कारण बन जायेंगे। अतः हमारा कर्त्तव्य है कि अपने हृदय में मानवीय भावना लाकर और उनमें भी ईश्वरीय ज्योति के दर्शन कर इस बुराई में छुटकारा पायें। इसके लिए अथक परिश्रम करना प्रत्येक हिन्दू का पुनीत कर्त्तव्य है।

—o—

हमारा प्यारा भारतवर्ष

(सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा)

प्रस्तावना

'जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' अर्थात् जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी महान् हैं। जननी की कोख से हम उत्पन्न होते हैं, इसकी गोद में

पलते हैं और खेल-कूदकर बड़े होते हैं। जन्मभूमि तो जननी से भी बढ़कर है। मरने पर जननी त्याग देती है, किन्तु जन्मभूमि हमें अपनी मिट्टी में एकाकार कर लेती है।

हमारी प्यारी जन्मभूमि 'भारतवर्ष' है, यह भरतजन का देश है और वैदिक संस्कृति का उद्गमस्थल है। आर्यों का मूल निवास होने के कारण यह देश आर्यावर्त कहलाया। गंगा, जमुना आदि पवित्र नदियों से सिंचित होने के कारण 'सप्तसिन्धु' कहलाया और हिन्दुओं की भूमि होने के कारण 'हिन्दुस्थान' नाम से भी यह जाना जाता है। यह भोग भूमि नहीं, अपितु कर्म भूमि और त्याग भूमि है। इसके इसी महत्त्व के कारण देवता भी इसमें जन्म लेने को उत्सुक रहते हैं—

गायन्ति देवा किल गीतकानि
धन्यास्तु ते भारत भूमि भागे।
स्वर्गापवर्गास्पद हेतु भूते,
भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्॥

भौगोलिक स्वरूप

हमारा यह पवित्र देश उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक और पूर्व में असम से लेकर पश्चिम में गुजरात तक विस्तृत है। विष्णु पुराण में लिखा है—

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः॥

उत्तर दिशा में हिमालय पर्वत इसके सर पर रजत मुकुट-सा शोभित हो रहा है और दक्षिण में सागर का विमल जल निरन्तर इसके चरण धो रहा है।

प्राकृतिक दृष्टि से भारत—हिमालय का पर्वतीय क्षेत्र, गंगा-सिन्धु का मैदान और दक्षिणी पठार—इन तीन भागों में विभक्त है। भारतवर्ष प्रकृति रूपी नटी का रम्य क्रीडास्थल है। यहाँ के पर्वत, निर्झर, नदियाँ, वन-उपवन और हरे-भरे मैदान शोभा के आगार हैं। इनका सौन्दर्य चित्त को हर लेता है।

भारत भूमि अन्न और जल से परिपूर्ण है। इसका शीतल, मन्द व सुगंधित वायु श्रम को हर लेता है। भारत की विशेषता बताते हुए कवि ने कहा है—

भूलोक का गौरव प्रकृति का लीलास्थल कहाँ ?
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगा जल जहाँ।
सम्पूर्ण देशों से अधिक किसका अधिक उत्कर्ष है।
उसका कि ऋषि भूमि है जो वह कौन ? भारतवर्ष है।

भारत की विशेषता

भारत भगवान् को भी प्रिय है। यह उनका कर्म-क्षेत्र और लीला-क्षेत्र रहा है। अन्य देशों में भगवान् के दूत जन्म लेते हैं, किन्तु भारत में भूमि में वे स्वयं ही अवतार धारण करके आते हैं। हमारे श्री राम जन-जन के मन रमे हुए हैं और श्री कृष्ण ने सबके मनों को आकृष्ट कर लिया है। ज्ञान के सूर्य का उदय सर्वप्रथम भारत में ही हुआ है। कवीन्द्र रवीन्द्र के शब्दों में—"प्रथम प्रभात उदय तव गगने, प्रथम सामरव तब तपोवने।" यहीं से ज्ञान की किरणें अन्य देशों में फैली। वेद, वेदांग, ब्राह्मण-ग्रंथ, उपनिषद् और दर्शनों में उसी ज्ञान-ज्योति के दर्शन होते हैं। कवि प्रसाद' के शब्दों में—

'जगे हम लगे जगाने विश्व, लोक में फैला फिर आलोक।
व्योम-तम-पुंज हुआ तब नष्ट, अखिल संसृति हो उठी अशोक॥

भारत के महापुरुष

धर्मराज युधिष्टिर, सत्यवादी हरिश्चन्द्र, अनुपम वीर भीम और अर्जुन; विक्रमादित्य, प्रताप और शिवाजी आदि न्यायप्रिय व विक्रमशाली वीर इसी देश में हुए हैं। वाल्मीकि, व्यास जैसे मुनियों और वशिष्ठ, विश्वामित्र जैसे ऋषियों की जन्म-भूमि यही है। संस्कृत के महाकवि कलिदास, हिन्दी के महाकवि सूर व तुलसी, तमिल के कवि सुब्रह्मण्य 'भारती', उड़िया के प्रसिद्ध कवि गोपबन्धुदास तथा बंगला के प्रसिद्ध कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के द्वारा इस देश के गौरव की वृद्धि हुई है। भूतकाल में अपने अतुल वैभव और ऐश्वर्य के कारण ही यह देश 'सोने की चिड़िया' कहलाता था।

नदियां और पुरियां

गंगा, यमुना, सिन्धु, सरस्वती, नर्मदा, गोदावरी, कावेरी आदि नदियाँ भारत को सस्य-स्यामल तो रखती हैं, साथ ही वे पुण्यदायिनी व पाप-नाशिनी भी हैं। इन्हीं के तटों पर भारत के अनेक श्रेष्ठ तीर्थ विद्यमान हैं। यहाँ की अयोध्या, मथुरा, मायापुरी, काशी, कांची, अवन्तिका आदि सप्त पुरियां मोक्ष-दायिनी तो हैं हीं, भारत की सांस्कृतिक एकता का भी प्रतिक हैं। यूनान, मिश्र व रोम की प्राचीन संस्कृतियां नामशेष सी हो गई हैं, किन्तु भारतीय संस्कृति आज भी अपने पुरातन रूप में जीवित है।

'यूनान मिस्र रोमां सब मिट गए जहां से।
बाकी बचा है अब तक नामो निशां हमारा।'

उपसंहार

आज भारत स्वतन्त्र है। यह भूतकाल में समृद्ध और गौरवशाली रहा है; वर्तमान इसका संघर्षमय है, पर भविष्य इसका उज्ज्वल है। यद्यपि देश में विकास के कार्य चल रहे हैं तो भी यह आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा है। हमारा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि हम जाति-भेद, प्रान्त-भेद, भाषा-भेद, और वर्ग-भेद भेदों को भूलकर अपनी और अपने देश की समृद्धि के लिए अपनी करोड़ों भुजाओं से कार्य करें, जिससे कि यह विश्व के अन्य राष्ट्रों के समकक्ष हो जाए।

आज देश में जो चरित्रिक ह्रास हो रहा है, नैतिक पतन हो रहा है, उसकी ओर भी हमें ध्यान देना है, ताकि देश का पुरातन गौरव क्षीण न हो जाए। 'मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्' तथा 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की हमारी भावना जीवित रहनी चाहिए। हमारा यह सौभाग्य है कि हम इस भूमि में जन्मे हैं। हम सदा स्मरण रखें कि—

सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा
हम बुलबुले हैं इसकी यह गुलिस्तां हमारा।'

—o—

एक पर्वतीय यात्रा

प्रस्तावना

विद्यालय में ग्रीष्मावकाश हो चुके थे। प्रतिवर्ष के समान इस वर्ष भी मैं किसी पर्वतीय स्थान पर जाने का विचार कर रहा था, सौभाग्य से उसी समय मेरा मित्र गिरीशचन्द्र जुयाल आ गया। उसे देखते ही मैंने कहा—'मित्र ! सोच रहा हूँ, इस बार किसी पर्वतीय स्थान की यात्रा की जाय। क्या तुम मुझे किसी स्थान का परामर्श दे सकते हो ?' वह बोला—मैं आज रात को ही गाँव जा रहा हूँ। तुम भी मेरे साथ चलो। मेरा गाँव गढ़वाल में है। वह भी तो एक पर्वतीय स्थान है। इस बार तुम वहीं क्यों नहीं चलते ?'मेंने कहा-'नेकी और पूछ-पूछ'

यात्रा का प्रारम्भ

मैंने यात्रा के लिए आवश्यक सामान साथ रख लिया और तैयार हो गया। दिल्ली से गढवाल जाने के कई मार्ग हैं। इनमें से प्रसिद्ध है—कोटद्वार का मार्ग। रात्रि को हम मसूरी एक्सप्रेस से चले और अगले दिन प्रातः सात बजे कोटद्वार पहुँच गए। उस दिन वहीं रुककर हमने कण्वाश्रम देखने का विचार किया। प्रातः कृत्य से निवृत्त होकर और कलेवा करके हम कण्वाश्रम पहुँचे।

कण्वाश्रम

कण्वाश्रम कोटद्वार से कुछ मील दूर मालिनी नदी तट पर है। जहाँ एक ओर पर्वतीय उपत्यकाएं हैं तो दूसरी ओर समतल भूमि प्रारम्भ होती है। यहीं आस-पास कभी ऋषि कण्व का आश्रम रहा होगा। इसी आश्रम में ऋषि कण्व ने 'शकुन्तला' का पालन-पोषण किया था, जो दुष्यन्त की पत्नी और भरत की माँ थी। 'मालिनीनदी', 'शकुन्तला की धार' और 'कण्व का डांडा' इसका प्रमाण आज भी देते हैं। यह स्थान अत्यन्त ही रमणीय है। मालिनी का जल यहाँ कल-कल छल-छल करके बहता है। पास ही पर्वत शिखर पर आम्र-निकुंज है। घाटी के दोनों कोने अनेकों वृक्षों और लता-पादपों में हरे-भरे हैं। अनेक प्रकार के फूल यहाँ खिले हुए हैं। यहीं पर 'कण्वाश्रम-समिति' ने एक स्मारक बनवाया है और सुन्दर वाटिका लगवाई है। यहाँ ऋषि कण्व और राजा दुष्यन्त की प्रस्तर

निर्मित सुन्दर प्रतिमाएं स्थापित है। पास ही पर्वत की गोद से झर-झर करता हुआ एक निर्झर बहता है, और उसके साथ ही केले के पौधे तथा अन्य अनेक प्रकार के पुष्पों के पादप मन को मोहित करते हैं। आश्रम के पास ही 'मालिनी वन जन्तु विहार' है जो अत्यन्त सुन्दर है। मध्याह्न तक हम वहाँ से लौट आए। अगले दिन हम गिरीश जुयाल के गाँव पहुँच गए।

गढ़वाल के ग्राम

मेरे मित्र का गाँव द्वारीखाल से आगे चेलूसैंण नामक स्थान के समीप ही है। यहाँ पत्थरों से बने मकान हैं, छतें उनकी तिरछी हैं, ताकि वे वर्षा के पानी को नीचे गिराती रहें। पानी यहाँ प्रायः स्रोतों से या नदियों से कूल (नहर) निकालकर अथवा स्रोतों के पास ही डिग्गी बनाकर भी प्राप्त किया जाता है। पहाड़ी स्थान होने से यहाँ के खेत सीढ़ीनुमा हैं, लम्बाई-चौड़ाई भी उनकी एक सी नहीं, तो भी पहाड़ी बैल इन पर आराम से हल चला लेते हैं। नदियाँ होते हुए भी उनका जल बहुत नीचे होने से खेतों की सिंचाई नहीं हो पाती, अतः सिंचाई के लिए वर्षा पर ही निर्भर रहना पड़ता है। यहाँ के लोग बहुत ही मिलनसार, अतिथि-प्रेमी, परिश्रमी व ईमानदार हैं। यहाँ पुरुषों की अपेक्षा महिलाएं अधिक काम करती हैं। कूटना, पीसना, खेती की गोडाई व निराई, घास व लकड़ी लाना, भोजन बनाना और गोशाला की देख-रेख वे ही करती हैं। उनके कठोर परिश्रमी जीवन को देखकर मस्तक अपने आप ही श्रद्धा से उनके सामने नत हो जाता है।

चेलूसैंण

एक दिन गिरीश मुझें 'चेलूसैंण' नामक स्थान पर ले गया। यह स्थान समुद्र तल से लगभग साढ़े तीन हजार फुट की ऊँचाई पर है। यहाँ थोड़ी सी दुकानें हैं, साथ ही एक प्राथमिक और उच्च विद्यालय भी है। एक सरकारी अस्पताल और डाकघर भी यहाँ है। यह स्थान अब मोटर मार्ग द्वारा कोटद्वार से जुड़ गया है। एक कृषक-सहकारी बैंक भी यहाँ खुल चुका है। दुकानों के आस-पास के गाँवों के लोग अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को खरीदते हैं। प्राकृतिक दृष्टि और स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से यह स्थान अत्यन्त रमणीक और श्रेष्ठ है।

पूर्व की ओर द्वारीखाल तक, पश्चिम की ओर नागदेव के डांडा तक और उत्तर की ओर सिलोगी तक का वातावरण अत्यन्त ही सुन्दर व शान्त है। दूर-दूर तक यहाँ चीड़, बांज, बुरांश और काफल के पेड़ हैं, चारों-ओर हरी-भरी घास पर्वत शिखरों की शोभा को बढ़ाती है। यहाँ विभिन्न प्रकार के पक्षियों का कलरव रंग-रूप मन को मोह लेते हैं। यहाँ की जलवायु भी अति उत्तम और स्वास्थ्य वर्द्धक है। यहाँ से पर्वतराज हिमालय हिममंडित सूर्य की किरणों से सेचमकते दिखाई देते हैं। चेलूसैंण के चारों ओर प्रकृति के अखण्ड साम्राज्य के दर्शन से मैं तो विभोर हो गया। यह स्थल पर्यटन केन्द्र बनने के लिए अति ही उपयुक्त है।

उपसंहार

वापिस लौटते समय हमने 'जयहरी खाल' और 'लैन्सडौन' नामक स्थान देखे। जय हरी खाल भी एक सुन्दर स्थान है यहाँ चारों ओर बॉज, बुरांश व चीड़ के पेड़ हैं। वातावरण शान्त हैं। यहाँ एक कॉलेज और प्रशिक्षण विद्यालय भी है। लैन्सडौन गढ़वाल की छावनी तथा तहसील का मुख्यालय है। ये दोनों स्थान ठंडे हैं, पर पानी की दोनों जगह कुछ कमी है।

लगभग एक मास गढ़वाल के प्रवास के वाद हम दिल्ली आ गये। आज भी उस यात्रा की सुखद स्मृति और वहाँ की प्रकृति की सुन्दर छटा मेरे हृदय में अंकित है।

—o—

रेल-दुर्घटना

प्रस्तावना

मई का महीना था। मैं अपने एक मित्र के विवाह के निमन्त्रण पर रेल से अमृतसर जा रहा था। गाड़ी में बैठते ही एक परिचित सज्जन भी मिल गए। मैंने सोचा एक से दो भले। मई की भयंकर गर्मी के कारण और अत्यधिक भीड़ के कारण दम घुटा जा रहा था। पसीने से सारा शरीर तर हो गया था। थोड़ी देर बाद गाड़ी चली तो हवा के लगने से शरीर को कुछ शान्ति मिली। फिर गाड़ी तीव्र गति से दौड़ने लगी। इधर नींद ने भी अपना प्रभाव डाला और हम

सो गये । हम कितनी देर सोये यह तो पता ही नहीं, पर ज्यों ही एक जोर का झटका लगा तो हम चौंककर उठकर बैठ गए । रात्रि के कोई तीन सवा तीन बजे थे । गाड़ी एक निर्जन स्थान पर खड़ी थी, किन्तु जब आधा घण्टा बीतने पर भी गाड़ी न चली तो हमारी व्यग्रता बढ़ी । मैं जिज्ञासा की भावना से नीचे उतर गया । लोगों से पता चला कि यहाँ से एक किलोमीटर की दूरी पर एक छोटे से स्टेशन पर दो गाड़ियों में भयंकर टक्कर हो गई है और जब तक 'लाइन क्लीअर' नहीं होती है, गाड़ी नहीं चलेगी । इस व्यवस्था में प्रायः पाँच छह घंटे लग सकते हैं । मैंने अपने परिचित सज्जनों को इस दुर्घटना की सूचना दी और उन्हें सामान की देख-रेख के लिए कहकर स्वयं घटना-स्थल की ओर चल पड़ा ।

दुर्घटना का विवरण

वहाँ पहुँचकर मैंने देखा कि स्थिति बहुत ही विकट थी । परस्पर टकराने वाली दोनों गाड़ियों के इंजन बुरी तरह चकनाचूर हो गए । रेल के कुछ डिब्बे भी पूरी तरह टूट चुके थे । केवल पीछे के दो-दो डिब्बे ठीक थे । दोनों गाड़ियों के बहुत से यात्री मर चुके थे, अनेक घायल होकर पीड़ा से कराह रहे थे । कोई हाय पानी! हाय पानी! चिल्ला रहा था; तो कोई महिला हाय! मेरा लाल! पुकार रही थी । चारों ओर श्मशान का सा विचित्र दृश्य उपस्थित था । यह दुर्घटना ऐसे छोटे स्थान पर हुई थी, जहाँ से मुख्य स्टेशन दस बारह मील दूर था, उस स्थान पर न कोई अस्पताल था, और न कोई पुलिस थाना ही । हाँ, गाड़ी में कुछ लोग ऐसे अवश्य थे, जो 'प्राथमिक उपचार' कर सकते थे । उन्होंने 'गार्ड' के डिब्बे से 'फर्स्ट एड बाक्स' उठाया और घायलों की मरहम पट्टी करने लगे । मुख्य रेलवे स्टेशन को इस दुर्घटना की सूचना दी जा चुकी थी । वहाँ से कुछ ही देर में डाक्टर और नर्सें आने वाली थीं ।

घायलों की स्थिति

इधर घायलों की स्थिति बहुत भयंकर थी । उनकी कराहें प्रतिक्षण बढ़ती जा रही थीं । घायलों में से किसी का हाथ टूटा था तो किसी की टांग । किसी का सिर फटा था, तो किसी की आँख ही जाती रही थी । इन सभी दृश्यों में

एक अत्यन्त करुण दृश्य देखने को मिला। मृतकों में एक युवती का शव भी था किन्तु उसके साथ ही उसके वक्ष से चिपटा हुआ एक जीवित शिशु भी था। उस दृश्य को देखकर दैव की निष्ठुरता प्रत्यक्ष हो रही थी।

सहायता कार्य

कोई आधे घंटे बाद डॉक्टरों व नर्सों की टुकड़ी आ पहुँची। पुलिस के सिपाही भी उनके साथ थे। डॉक्टरों ने आते ही सर्वप्रथम उन लोगों का उपचार किया जो बच सकते थे। उन्होंने मामूली चोट खाये हुओं की मरहम पट्टी की। जो गम्भीर रूप से घायल थे, उन्हें तत्काल 'एम्बुलैंस' से अस्पताल भिजवाया। शेष घायलों व मृतकों को अलग-अलग गाड़ियों में बिठाकर पुलिस और डॉक्टरों का दल वहाँ से चला गया।

उपसंहार

सवेरा हो रहा था। मैं भी उस दृश्य को देख भरे मन से धीरे-धीरे लौट कर अपनी गाड़ी में बैठ गया। उस छोटे से स्टेशन पर एक विचित्र शून्यता थी। बचे हुए लोग अपने भाग्य की सराहना करते हुए दुर्घटना के लिए दैव को दोष दे रहे थे। आज भी उस भयंकर दुर्घटना की स्मृति से मेरा रोम-रोम काँप उठता है।

—o—

कमरतोड़ मंहगाई

प्रस्तावना

आजकल घर और बाहर, नगर और ग्राम जहाँ भी लोगों की बातचीत सुनें, यही सुनने को मिलेगा कि 'अब तो निर्वाह होना भी कठिन हो गया है। घर का खर्च पूरा नहीं होता। वस्तुओं के मूल्य इतने बढ़ गए हैं कि क्या बताएं हमारा तो मंहगाई के मारे नाकों में दम है।' निम्न वित्त-वर्ग और विशेषतया मध्यम वित्त-वर्ग की तो इस मंहगाई के कारण कमर टूट गई है। सबसे बड़ी उलझन यह है कि वस्तुओं के मूल्य एक बार जिस सीढ़ी तक चढ़ जाते हैं, उससे

नीचे उतरने का नाम ही नहीं लेते। सरकार की ओर से बार-बार यह घोषणा की जाती है कि वह वस्तुओं के मूल्य को स्थिर करने की चेष्टा कर रही है। किन्तु यह सर्वविदित तथ्य है कि सरकार इस प्रयास में असफल हो रही है। सरकार जिस वस्तु के मूल्य घटाने की चेष्टा करती है, उसके दाम और भी अधिक बढ़ जाते हैं। उदाहरण के रूप में वर्ष 1980 में चीनी 15 रुपये किलो तक पहुँच गई थी, और सरसों का तेल 1987 में 30 रुपये किलो तक तथा वनस्पति 27.00 रुपये किलो तक पहुँच गया है। दूध छह रुपये किलो (और थैलियों का दूध तो सात रुपये किलो हो गया है।) जो मिलता है, उसमें भी मिलावट होती है। मिट्टी का तेल, डीजल तथा पेट्रोल के दाम बढ़ गए हैं। सोफ्ट कोक 32.35 प्रति चालीस किलो हो गया है। चाय का मूल्य 40 से 52 रुपये किलो तक हो गया है। रेल और बसों के किराये भी कई गुना बढ़ गए हैं।

आज अनाज, दूध, सब्जी, कपड़ा, जूते, कोयला, मिट्टी का तेल, सीमेंट, कागज और दवाओं में से कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जिनकी कीमतें आसमान को न छूती हों। कई वस्तुओं के (पैट्रोलियम पदार्थों, मिट्टी का तेल, कोयले तथा गेहूं और चावल के) दाम तो सरकार ने स्वयं ही कई गुणा बढ़ाए हैं। 1960 से ही लेकर 1988 तक मूल्य बढ़ते जा रहे हैं और आगे घटने के कोई अवसर नहीं हैं। राशन की दुकानों पर ही गेहूं 2.14 प्रति किलो, चीनी 5.25 रुपये किलो है। खुले बाजार में ये वस्तुएं इससे भी कई गुणा अधिक मूल्यों पर मिलती हैं। दालों के दाम तो आकाश को छू रहे हैं। साग-सब्जियां भी मंहगाई कि ऊंची सीमा तक पहुँच चुकी है।

बाजार की स्थिति

वस्तुओं के मूल्य अत्यधिक बढ़ जाने के अतिरिक्त कोढ़ में खाज यह है कि वस्तुएं उस बढ़े हुए मूल्य पर भी उपलब्ध नहीं हो पातीं। नियंत्रित मूल्य वाली वस्तुएं या तो बाजार से गायब कर दी जाती हैं, अथवा ग्राहकों को उनकी ऐसी बिगड़ी हुई किस्में दी जाती हैं, जिन्हें मानव तो क्या पशु भी न खा सकें। इस विषय में चीनी, चावल और गेहूं का उदाहरण दिया जा सकता है। 1982 में तो वर्षा से भीगा वह गेहूं जनता को दिया गया था, जिसे पशु भी कठिनाई से खा सकें।। 1987 में वही स्थिति आ गई थी। खुले बाजार में अच्छे गेहूं,

चावल और चीनी ऊंचे मूल्य पर प्राप्त किये जा सकते हैं, किन्तु राशन की दुकान पर उनकी जो किस्में वेची जाती हैं, उनमें कितनी बजरी; रेता और कूड़ा मिला रहता है, उसे देखकर ऐसा लगता है, मानो यह पशुओं के लिए है। स्वार्थी व्यापारी वस्तुओं का चाहे जब कृत्रिम अभाव उत्पन्न कर देते हैं, और उन्हें चोर बाजारी करते हुए ऊंचे मूल्य पर बेचकर अपनी मुट्ठी गरम करते रहते हैं। इधर मकानों के किराये तो बेतहाशा बढ़े हैं। इससे आवास की कठिनाई भी बढ़ी है।

व्यापारियों की मनोवृत्ति

वस्तुओं के मूल्य बढ़ाने के लिए लालची और धूर्त व्यापारी वर्ग प्रतिक्षण आतुर रहता है। उन्हें कोई बहाना मिला कि वस्तुओं के भाव बढ़ जाते हैं। इसका एक सीधा सा उदाहरण नाप-तौल में मीट्रिक प्रणाली तथा मुद्रा में दशमलव प्रणाली के लागू होने के अवसर को लिया जा सकता है, जब व्यापारियों ने दो आने की वस्तु का मूल्य पन्द्रह पैसे कर दिया था तथा तोल में आधा पाव अर्थात् लगभग 112 ग्राम वस्तु देने के स्थान पर 100 ग्राम देने लगे थे। दूसरा परिणाम यह निकला कि ग्राहक-वर्ग पर दुहरी मार पड़ी। उसे पैसे भी अधिक देने पड़े और वस्तु भी कम मात्रा में उपलब्ध होने लगी। तब और आज की स्थिति में बहुत अन्तर है, फिर भी मंडी में माल कम आने के नाम पर, रेल के वैगनों की कमी या ट्रकों की हड़ताल का बहाना लेकर, कभी सरकार का नाम लेकर, कभी रेल-भाड़ा बढ़ाने के नाम पर और कभी बिक्री-कर के नाम पर, कभी मौसम की खराबी के नाम पर व्यापारी ग्राहकों को लूटने से बाज नहीं आते।

दोषी कौन ?

यह सत्य है कि विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था में वस्तुओं के मूल्य कुछ चढ़ते रहते हैं, किन्तु उनमें इतनी वृद्धि नहीं होती, जितनी कि भारत में हो रही है। इसके लिए स्वार्थी व्यापारी वर्ग और सरकार की ढुलमुल नीति दोनों ही दोषी हैं। यह देखा गया है कि सायं काल सरकार घोषणा करती है कि मूल्य नहीं बढ़ेंगे और प्रातः समाचार-पत्रों में उसी वस्तु के मूल्य बढ़े होते हैं। रात के अन्धेरे में ही सरकार भी जनता की जेबें काट लेती है। 'मार्केटिंग इन्सपेक्टरों' का चारित्रिक अधःपतन भी इस स्थिति के लिए उत्तरदायी है, जो रिश्वत लेकर

अपने कर्त्तव्यों की अवहेलना करते हैं। शासक दल भी व्यापारियों से मोटा चन्दा लेकर उन्हें चुपचाप वस्तुओं के मूल्य बढ़ाने की छूट दे रहा है। बढ़ती हुई जन संख्या के अनुपात में उत्पादन का न बढ़ना भी वस्तुओं के मूल्य बढ़ने का एक कारण है। कुछ लोगों की क्रय-क्षमता बढ़ती जा रही है और वे ऊंचे मूल्य पर भी वस्तुएं खरीदने को तैयार रहते हैं। जबकि निम्न आय वाले क्रय-शक्ति के अभाव से दुखी रहते हैं। मंहगाई उनके लिए अभिशाप बन जाती है।

उपसंहार

महंगाई के इस कमरतोड़ चक्र को रोकने के लिए उद्योग और कृषि दोनों ही क्षेत्रों में अधिक से अधिक उत्पादन बढ़ाना आवश्यक है। इसी प्रकार माल की ढुलाई में शीघ्रता लाना भी आवश्यक है। सरकारी अनावश्यक खर्चों में तथा मंत्रियों के ठाट-बाट में कमी करनी होगी। व्यापारियों की मुनाफाखोरी पर प्रतिबन्ध लगाना होगा। मंहगाई को बढ़ाने में सहयोग देने वाले सरकारी निरीक्षकों को दण्ड देना होगा। इसके साथ ही सरकार को भी इस दशा में कठोरता का रुख अपनाकर चोरबाजारी वालों को कड़ा दण्ड देने की व्यवस्था करनी चाहिए तभी इस कमरतोड़ महंगाई से जन सामान्य को छुटकारा मिल सकता है।

—o—

बेकारी की समस्या

प्रस्तावना

आज भारत के सामने अनेक समस्याएं मुंह खोले खड़ी हैं। अनेक सर्वाधिक विकट समस्या है—बेकारी की समस्या। इस समस्या के समाधान के अनेक प्रयत्न होने पर भी यह दिन-प्रतिदिन सुरसा के मुख के समान विकट रूप धारण करती जा रही है।

बेकारों के वर्ग तथा कारण

भारत में बेकारों के दो वर्ग हैं। एक शिक्षित बेकार और दूसरा अशिक्षित

बेकार। इनमें शिक्षित वर्ग में बेरोजगारी का कारण वर्तमान शिक्षा प्रणाली है। शिक्षा की प्रचलित प्रणाली से (जो कि ब्रिटिश राज्य की देन है) छात्रों में न तो कोई स्वतन्त्र चिन्तन-शक्ति उत्पन्न होती है और न उन्हें कोई शिल्प या उद्योग का ही ज्ञान प्राप्त होता है।

विद्यालयों महाविद्यालयों से प्रतिवर्ष लाखों विद्यार्थी विश्वविद्यालय के प्रमाण-पत्र लेकर निकलते हैं और सभी यह चाहते हैं कि उन्हें किसी न किसी कार्यालय में नौकरी मिल जाए, पर सरकारी नौकरियाँ वर्ष में एक प्रतिशत के लिए भी कठिनाई से रहती हैं। उन्हें कोई शिल्प, विज्ञान, प्रविधि अथवा कला का ज्ञान तो होता नहीं, हाथ से काम करने में उन्हें लज्जा आती है, परिणाम-स्वरूप वे सभी बेरोजगार रह जाते हैं। माता-पिता तथा देश दोनों के लिए वे भार बन जाते हैं,

अशिक्षितों में बेकारी का मुख्य कारण है—कुटीर-उद्योगों का विनाश। मशीनों के प्रचलन से आज भारत में बड़े-बड़े कारखाने तो लग गये, पर साथ ही लाखों मनुष्यों का रोजगार भी समाप्त हो गया है। एक मशीन बीस आद-मियों का काम करती है और उसको चलाने के लिए केवल एक व्यक्ति पर्याप्त होता है—इस प्रकार उन्नीस व्यक्ति बेकार हो जाते हैं। अब तो कम्प्यूटरी-करण के कारण बेकारी की समस्या और भी भयंकर हो गई है। फिर कार-खाने की बनी हुई चीज हाथ की बनी हुई चीज से सुन्दर भी होती है और सस्ती भी। अतः कुटीर उद्योग मशीनों के सामने नहीं टिक सके और वे प्रायः लुप्त हो चुके हैं। यही कारण है कि आज सहस्रों शिल्पकार भी अपनी जीविका पूरी तरह नहीं कमा सकते। इनके साथ ही किसानों द्वारा परती भूमि पर खेती या बागवानी न करना भी बेरोजगारी का अन्य कारण है। परती भूमि पर खेती आदि करने से लाखों लोगों को काम मिल सकता है।

बेकारी का एक और बड़ा कारण है—भारत की तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या। यदि सरकार पूर्ण प्रयत्न कर वर्ष भर में नौकरी के कुछ साधन जुटा भी पाती है तो यह बढ़ती हुई जनसंख्या उन सभी प्रयत्नों को विफल बना देती है। इसके साथ ही सरकार की दोषपूर्ण नीतियां भी बेकारी का कारण हैं।

बेकारी दूर करने के उपाय

बेकारी को दूर करने के लिए अनेक उपायों की आवश्यकता है। सबसे पहले तो हमें अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियंत्रण करना होगा। इसका उपाय है—परिवार नियोजन। सरकार ही लोगों को जनसंख्या बृद्धि की हानियाँ बताकर - परिवार नियोजन के लिए प्रेरित कर सकती है, पर इसके लिए जोर जबरदस्ती करना उचित नहीं।

बेकारी को दूर करने का दूसरा उपाय वर्तमान-शिक्षा प्रणाली में आमूल परिवर्तन करना है। छात्रों को विभिन्न विषयों की शिक्षा के साथ ही कुछ चुने हुए व्यवसायों या शिल्पों की भी शिक्षा दी जानी चाहिए, जिससे वे विद्यालयों से शिक्षा समाप्त करने के अनन्तर अपनी जीविका का उपार्जन कर सकें। इस के लिए देश में विभिन्न प्रकार के औद्योगिक-प्रशिक्षण स्कूलों की आवश्यकता है। जिनमें छात्र विभिन्न शिल्पों का प्रयोगात्मक शिक्षण ले सकें।

बेकारी दूर करने का तीसरा उपाय है—कुटीर तथा लघु उद्योगों का पुनः विकास। सरकार को ऐसी योजना बनानी चाहिए, जिससे भारत के मृतप्राय कुटीर-उद्योग नवीन वैज्ञानिक यंत्रों की सहायता से पुनः जी उठें। इसके लिए कुछ क्षेत्र कुटीर-उद्योगों के लिए ही खुले छोड़ देने चाहिएं और कारखानों को उन वस्तुओं के उत्पादन की अनुमति नहीं होनी चाहिए। कुटीर-उद्योगों की उपज को सस्ता बनने के लिए करों में कुछ छूट मिलनी चाहिए और इन उद्योगों को प्रोत्साहन देने के लिए विदेशी माल का आयात बन्द कर देना चाहिए। इसके साथ ही जिन लोगों का सम्बन्ध कृषक परिवार से हैं, वे कृषि साग-सब्जियों और बागवानी के विकास में ही अधिक योग दें। भारत में आज भी ऐसी लाखों एकड़ भूमि है, जो खाली पड़ी है, जिस पर वृक्ष लगाए जा सकते है। ऐसे स्थान पर वृक्ष लगाने से लड़की भी मिलेगी और काफी लोगों का काम भी मिलेगा। इससे एक ओर बेकारी दूर होगी और दूसरी ओर उत्पादन भी बढ़ेगा। इसके साथ ही पशु पालकों को पशु-पालन (गाय, भैंस, बकरी) पालन के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। इससे बेकारी तो दूर होगी ही। लोगों को दूध, मांस, ऊन आदि भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होंगे।

उपसंहार

हमारा विश्वास है कि उपर्युक्त उपायों से देश में बढ़ती हुई बेकारी को दूर किया जा सकता है। यह बात निर्विवाद है कि जब तक बेकारी की समस्या हल नहीं हो जाती, हमारी उन्नति की सभी बातें, विशेषकर समाजवाद लाने की बातें निरर्थक हैं। अतः जनता व सरकार दोनों को पूर्ण प्रयत्न का समाधान करना चाहिए।

—०—

भ्रष्टाचार रोकने के उपाय

प्रस्तावना

आज समाज और राष्ट्र के जीवन में जो समस्याएँ मुंह बाये खड़ी हैं, उनमें भ्रष्टाचार की समस्या भी एक है। यह समस्या आज भयंकर रूप धारण कर चुकी है। यह समस्त सामाजिक जीवन को विष-कीट के समान विषैला और घुन के समान धीरे-धीरे खोखला करती जा रही है। भ्रष्टाचार का अर्थ है—अशुद्ध, अपवित्र और दूषित आचरण। यह शुद्धाचार का विलोम शब्द है। अशुद्ध या दूषित आचरण से शीघ्रातिशीघ्र धवनान् बनने की ओर ऐश्वर्य तथा वैभवपूर्ण जीवन की अभिलाषा से ही भ्रष्टाचार पनपता है। शुद्धाचरण से व्यक्ति, समाज और राष्ट्र जहाँ श्रेष्ठ बनते हैं, उन्नत होते हैं, वहीं भ्रष्टाचार से व्यक्ति समाज और राष्ट्र का पतन होता है।

भ्रष्टाचार का कारण

भ्रष्टाचार के मूल में मनुष्य का अहं भाव, लोभ, स्वार्थपरता, भौतिक सुख-समृद्धि और विलासिता की अभिलाषा है। व्यक्ति के पास जो कुछ है—वह उसी से तृप्त नहीं होता। वह चाहता है कि मेरे पास अधिक से अधिक धन हो, अधिक से अधिक सुखोपभोग की सामग्री हो, मैं समाज में ऐश्वर्यशाली माना जाऊँ। विज्ञान ने सुख के जो साधन दिए हैं, वे सभी मेरे पास हों, कोठी, कार, नौकर-चाकर सब मुझे प्राप्त हों और रातों-रात कुबेर का कोष मेरे पास

आ जाए। फिर मुझे परिश्रम भी अधिक न करना पड़े। इससे व्यक्ति के अहं-भाव की भी पुष्टि होती है। इसी के कारण मनुष्य जीविकार्जन का नीति-संगत शुद्ध मार्ग छोड़कर भ्रष्ट मार्ग का अनुसरण करने लगता है।

भ्रष्टाचार के रूप

बेईमानी, रिश्वखोरी, मिलावट और तस्करी भ्रष्टाचार के मुख्य रूप हैं। आज समाज में कोई पक्ष ऐसा नहीं है, जहाँ इन बुराइयों ने घर न कर लिया हो। बेईमानी तो सर्वत्र दिखाई देती है, मिलावट का काम भ्रष्ट व्यापारी करते हैं और रिश्वत का काम सरकारी या अर्द्ध सरकारी अधिकारियों का, मन्त्रियों का, शासक दल के प्रभावी विधायकों का, संसद् सदस्यों का या शीर्षस्थ नेताओं का होता है। इसी प्रकार रातों-रात धनवान् बनने की इच्छा रखने वाले तथा बड़े अपराधी तस्करी में संलग्न हैं। हाजी मस्तान, सुकुर नरायण आदि इसी श्रेणी के लोग हैं।

सरकारी बाबू और अधिकारी अपने जीवन को अधिक सुख-सुविधापूर्ण और विलासितापूर्ण बनाने के लिए अधिक से अधिक धन-संचय करना चाहते हैं। अतः वे जनता का काम करके नहीं देते। फाइलें जहाँ की तहाँ रहती पड़ी हैं, उन्हें कोई देखता तक नहीं। जब सम्बन्धित व्यक्ति उनके पास काम के लिए जाता है तो कभी परोक्ष रूप में और कभी प्रत्यक्ष रूप में वे उनसे पैसों की (रिश्वत की) मांग करते हैं। वह व्यक्ति भी विवश होकर पैसे (रिश्वत) देकर काम करवाता है। रेल में टिकट का आरक्षण हो, नगरपालिका में नक्शा पास करवाना हो, कहीं से अपना बिल बनवाया हो, थाने में कोई रपट लिखानी हो पुलिस से कोई मदद मांगनी हो, जब तक बाबू या सम्बन्धित अधिकारी की जेब गर्म न कर दी जाए वे टस से मस नहीं होते। बेईमान बाबू, अधिकारी और पुलिस कर्मचारी क्या-क्या काम नहीं करते ? पुलिस के अधिकारी तो मोटी रिश्वत लेकर बड़े से बड़े चोरी, डकैती और हत्या के मामले को भी दबा देते हैं। आय-कर अधिकारी तो व्यापारियों को स्पष्ट कह देते हैं कि इतनी राशि दे दो और हम बिना देखे लेखे पर हस्ताक्षर कर देंगे उनके पास लाखों का काला धन जमा रहता है।

इसी प्रकार व्यापारी रातों-रात धन-कुबेर बनने के लिए मिलावट का

सहारा लेते हैं ? इसी कारण आज बाजार में कोई भी खाद्य वस्तु शुद्ध नहीं मिलती । दूधिया दूध में पानी मिलाता है, सरसों के तेल में घटिया दर्जे के तेल मिलाये जाते हैं । वनस्पति में चर्बी मिलायी जाती है । वनस्पति में गाय की चर्बी मिलाने के कारण दो वर्ष पूर्व कई कम्पनियों के लाइसेंस रद्द कर दिए गए थे । शुद्ध घी में वनस्पति मिला दी जाती है । पिसे मसालों में रंग मिला दिए जाते हैं । काली मिर्च में पपीते के बीज और बादामों में आडू या खुमानी की गुठलियां मिला दी जाती हैं । सीमेंट में मिट्टी पीसकर मिला देना, सोडे में और पिसे नमक में सफेद पत्थर पीसकर मिला देना तो साधारण बात हो गई है। कहाँ तक कहें ? कुछ चिकित्सक भी शुद्ध दवाइयों की जगह नकली दवाइयां ही रोगियों को देते हैं । जिससे रोगी स्वस्थ होने की अपेक्षा और अधिक रुग्ण हो जाता है । मिलावटी दवाइयों की बात नित्य सुनने को मिलती हैं । राजनीतिक नेता भी भ्रष्टाचार पनपाने के दोषी हैं । वे, विशेषकर शासक दल के लोग व्यापारियों से मोटा चन्दा लेते हैं और बेईमानी करने की खुली छूट देते हैं । मन्त्री लोग कितनी रिश्वत-खोरी करते हैं; इसका पता भी सबको है। महाराष्ट्र के एक मुख्य मन्त्री **अब्दुल रहमान अन्तुले** ने भ्रष्टाचार से करोड़ों रुपये विभिन्न ट्रस्टों के नाम से लिए । आन्ध्र के एक मन्त्री के दामाद ने हजारों एकड़ भूमि हड़प ली और हिमाचल के भूतपूर्व **मुख्यमन्त्री रामलाल** के सम्बन्धियों ने करोड़ों रुपयों के जंगल काट लिए । हरियाणा के मुख्यमन्त्री भजनलाल ने अपने दामाद को कुछ ही दिनों में हरियाणा का बड़ा उद्योगपति बना दिया। इस वर्ष (1987) में ही रक्षा-सौदों में प्रधानमन्त्री के निकट सहयोगियों ने ही 40-50 करोड़ रुपये की रिश्वत ली है, जिसे दलाली नाम दिया गया है । यह स्वीडन की बोफर्स कम्पनी की तोपों और जर्मनी की पनडुब्बियों से सम्बन्धित है । सोने तथा विदेशी वस्त्रों, श्रृंगार प्रसाधनों और विद्युत् उपकरणों की तस्करी तो करोड़ों रुपयों की नित्य होती है ।

इतना ही नहीं, शिक्षा के क्षेत्र में भी यह भ्रष्टाचार अपनी जड़ें फैला चुका है, छात्र परिश्रम करके परीक्षा देने के स्थान पर नकल करके उत्तीर्ण होना चाहते हैं । यदि उनके इस मार्ग में कोई निरीक्षक बाधक बनता है तो चाकू, छुरी और पिस्तौल उसे दिखाया जाता है । कई लालची अध्यापक और निरीक्षक भी पैसा

लेकर नकल करवाते हैं। परीक्षा परिषदों और विश्वविद्यालयों के बाबू रिश्वत लेकर क्या-क्या नहीं कर देते; यह सर्वविदित है। अनुत्तीर्ण उत्तीर्ण घोषित कर दिए जाते हैं और द्वितीय श्रेणी वाले प्रथम श्रेणी में आ जाते हैं।

भ्रष्टाचार रोकने के उपाय

आज भ्रष्टाचार की जड़ें बहुत गहरी जा चुकी हैं। समाज इसकी जकड़ से छटपटा रहा है। जब तक यह बीमारी दूर न होगी राष्ट्र का कल्याण न होगा। इसके लिए पहले सरकारी तन्त्र और कानूनों को अत्यधिक कठोर बनाना होगा। पर, कानून बना देने मात्र से कुछ नहीं होगा, उनका दृढ़ता से पालन भी कराना होगा।

किन्तु, सरकारी कानून से ही यह काम न हो सकेगा। इसके लिए तो समाज में नैतिकता और पवित्रता का वातावरण बनाना पड़ेगा। हम यह जानते हैं कि पाप के भय से और पुण्य के लोभ से ही व्यक्ति बुरे कामों से दूर रहता है तथा शुद्ध आचरण करता है। अतः समाज के व्यक्ति-व्यक्ति में, धर्म की और पुण्य की भावना को, मानवता की भावना को जगाना पड़ेगा। जब व्यक्ति सोचेगा कि भ्रष्टाचार पाप है, मिलावट गहन पाप है। जैसे मिलावट की वस्तु खाकर दूसरा मर सकता है, ऐसे ही मैं भी मर सकता हूँ; तभी वह इस पाप कर्म से विरत होगा। मनुष्य में उदार भावना को जगाने में आज समाचार-पत्र, आकाशवाणी और दूरदर्शन भी महत्त्वपूर्ण योग दे सकते हैं। धर्म-गुरुओं और सन्त-महात्माओं को भी इस दिशा में अधिक प्रयत्न करना चाहिए। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' और 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की भावना जब व्यक्ति के हृदय में जग जाएगी और तृष्णा के स्थान पर सन्तोष वृत्ति अधिक बढ़ेगी तो भ्रष्टाचार के स्थान के लिए स्थान ही न रहेगा।

—o—

मेरे जीवनका लक्ष्य

(मेरी अभिलाषा)

प्रस्तावना

ईश्वर ने इस विशाल ब्रह्माण्ड की रचना की है। ईश्वर की यह रचना सोद्देश्य है, निरुद्देश्य नहीं। जब ईश्वर की सृष्टि ही किसी प्रयोजन को लेकर है; भले

ही वह प्रयोजन केवल लीला हो, तो मानव के जीवन का भी कोई न कोई लक्ष्य होना ही चाहिए । मनुष्य प्राणी विश्व का सबसे श्रेष्ठ प्राणी है, क्योंकि वह मनन या विचारपूर्वक कोई भी कार्य करता । श्रेष्ठ मानव जीवन में सर्वप्रथम कोई लक्ष्य या ध्येय निर्धारित करते हैं और तब उस पर चलने के लिए अग्रसर होते हैं । वे ऐसा नहीं करते कि घर से निकले और फिर जिधर भी पैर पड़ गए, उधर ही चल पड़े । इस प्रकार का लक्ष्य-हीन जीवन किसी काम का नहीं रहता । लक्ष्य बनाकर, ध्येय निश्चित कर तब दृढ़ता से उस पथ पर बढ़ने वाला व्यक्ति ही जीवन में सफल होता है ।

मेरा जीवन लक्ष्य

मैं आज एक विद्यार्थी हूँ, पर भविष्य में मुझे क्या बनना है ? इसके लिए मेरे मन में भी कुछ कल्पना है। मैंने भी एक स्वप्न संजोया है, जीवन के लिए एक लक्ष्य निर्धारित किया है। वह ध्येय है—'गुरु' के गौरवपूर्ण पद को प्राप्त करना।

यह सब भली प्रकार जानते हैं कि श्रीराम पिता से भी अधिक पूज्य गुरु वशिष्ठ और विश्वामित्र को मानते थे। सम्राट् चन्द्रगुप्त अपने गुरु आचार्य चाणक्य के चरणों में लोटता था, विश्व विजेता सिकन्दर अपने गुरु अरस्तु के समक्ष घुटनों के बल बैठता था, छत्रपति शिवाजी अपने गुरु समर्थ रामदास जी के सामने और बुन्देल वीर छत्रसाल प्राणनाथ प्रभु के चरणों में झुकते थे। उन गुरुओं ने ही उन्हें कर्त्तव्यबोध कराया था, उनका आत्मिक बल बढ़ाया था, उन्हें अनुशासित भी किया था, जिनसे वे महान् बने ।

इन सब उदाहरणों से प्रभावित होकर मैं भी 'गुरु' बनता चाहता हूं। "शिक्षक ही राष्ट्र का वास्तविक निर्माता है,' इस कथन से भी मुझे अपना जीवन-ध्येय निश्चित करने में सहायता मिली है।

आज की स्थिति

आज देश में स्वार्थ-सिद्ध करने वाले तथाकथित नेताओं की कमी नहीं। अर्थ के लिए अनर्थ करने वाले वैज्ञानिक और अभियन्ता (इंजीनियर) भी बहुत हैं। धन के लिए उचित-अनुचित का विचार त्यागकर कार्य करने वाले और धनवानों के संकेतों पर चलने वाले ज्ञानियों, अधिकारियों, वकीलों और न्याया-

धीशों की भी कोई कभी नहीं । वित्त के लिए सद्वृत्तियों से हाथ खींचने वाले और अपना ही हित चाहने वाले—समाज भले ही नष्ट हो जाए --व्यापारियों और उद्योगपतियों की कमी नहीं । उनके भ्रष्टाचार और अनैतिकता के फल-स्वरूप आज राष्ट्र रसातल की ओर जा रहा है। इस भ्रष्ट्राचार और अनैतिकता का सबसे बड़ा कारण है 'चरित्र का अभाव ।' आज राष्ट्र के सामने अर्थ संकट से भी बढ़कर चारित्रिक संकट है । चरित्र का यह संकट कुशिक्षा का परिणाम है तथा कुशिक्षा आदर्श गुरुओं (शिक्षकों) के अभाव से है ।

अत्यन्त विनम्र शब्दों में मैं अपने गुरुजनों से क्षमा-याचना करता हुआ कहता हूँ कि आज ऐसे अध्यापकों की संख्या बहुत अधिक है, जो केवल जीविकोपार्जन के लिए ही अध्यापक बने हैं । वे अध्यापन को 'वृत्ति' या 'कर्त्तव्य' नहीं मानते। इसी कारण वे अपने छात्रों के सामने न कोई आदर्श रख पाते हैं और न उन्हें उचित शिक्षा ही दे पाते हैं । परीक्षा उतीर्ण करने के लिए छात्रों को कुछ 'गुर' सिखाकर ही वे अपने कर्त्तव्य का इतिश्री मान लेते हैं । इस स्थिति को देख-कर ही मैं केवल मात्र 'अध्यापक' नहीं, अपितु 'गुरु' बनना चाहता हूँ ।

'गुरु' पद पाकर मैं छात्रों को अपने विषय का अध्यापन तो कराऊँगा ही साथ ही गुरु के कर्त्तव्य के अनुसार उनमें चारित्रिक और नैतिक भावनाओं को भी जगाऊंगा । मैं उनके सामने त्याग, प्रेम, परोपकार और सेवा का आदर्श स्थापित करूंगा । मेरी कथनी व करनी में कोई अन्तर न होगा । मैं किसी दुर्व्यसन का शिकार न बनूंगा । मेरा रहन-सहन अत्यन्त सरल तथा स्वच्छ होगा । मैं कबीर के कथन के अनुसार ऐसा गुरु बनूंगा जो शिष्य को बाह्य रूप से ताड़ना देता हुआ भी हार्दिक भावना से उसका मंगल करे ।

'गुरु कुम्हार सिष कुम्भ है, गढ़ि गढ़ि काढ़ै खोट ।
अंतरि हाथ सहार दै, बाहर बाहै चोट ॥

उपसंहार

अपने उक्त ध्येय के प्रति मैं अभी से सावधान हूँ । पाठ्य पुस्तकों के अति-रिक्त अन्य प्राचीन तथा आधुनिक श्रेष्ठ महात्माओं व विद्वानों का प्रवचन सुनता हूँ, नियमित, सात्विक और सरल जीवन बिताता हूँ । दुर्व्यसनों व आधुनिक मनोरंजन के साधनों से, जिनमें अश्लीलता की भावना ही प्रमुख रहती है—

बिल्कुल दूर रहता हूँ। इसी कारण मैं सदा अपनी श्रेणी मे प्रथम रहता हूँ और गुरुजनों का कृपापात्र भी बना रहता हूँ।

ईश्वर से मेरी प्रार्थना है कि वे मुझे इतनी शक्ति व सामर्थ्य दें कि मैं अपने निर्धारित श्रेष्ठ लक्ष्य को प्राप्त कर राष्ट्र के नव-निर्माण में योग दे सकूं। क्योंकि शिक्षक (गुरु) ही तो राष्ट्र का निर्माता होता है।

—o—

यदि मैं प्रधानमंत्री बन जाऊँ ?

प्रस्तावना

'यदि मैं प्रधानमंत्री बन जाऊँ ?' कैसी मधुर कल्पना है ? कितनी उत्तम महत्त्वाकाँक्षा है ! भारत के प्रधानमंत्री का पद ! कितना गौरवपूर्ण और उत्तरदायित्वपूर्ण है। क्या मैं प्रधानमंत्री बन सकता हूँ ? क्यों नहीं ? प्रजानन्त्र है। यहाँ कोई भी उच्च से उच्च पद प्राप्त कर सकता है। जब-कल्पना ही नहीं, स्वप्न ही नहीं, तो उसको साकार करने की इच्छा कैसे जागेगी ? यदि मैं प्रधानमन्त्री बन जाऊं तो अवश्य ही कुछ चमत्कार करके दिखा दूं।

राष्ट्रीय सरकार का निर्माण

आज देश की जो राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति है; देश जो अनेक समस्याओं के घेरे में पड़ा छटपटा रहा है; तब मैं विचार कर रहा हूँ कि यह शुभ अवसर मुझे मिलना ही चाहिए। प्रधानमंत्री बनने पर मैं सर्वप्रथम देश के सभी राजनीतिक दलों का सम्मेलन बुलाकर उन्हें सब प्रकार के मतभेद छोड़ देश के विकास में पूर्ण सहयोग देने को प्रेरित करूंगा। यदि वे मेरी बात को मान लेते हैं तो मैं विपक्षियों में से श्रेष्ठ विचारक व प्रशासन-क्षमता रखने वाले व्यक्तियों को अपने मंत्रिमण्डल में सम्मिलित कर लूंगा। इस प्रकार की सरकार होने से एक तो सब परस्पर कन्धे से कन्धा मिलाकर देश के निर्माण व विकास में योग देंगे और आये दिन विरोधी दलों की ओर से आयोजित होने वाले

'प्रदर्शनों, व हड़तालों' 'दंगों' से राष्ट्र को छुटकारा मिल जायेगा तथा राष्ट्र को अनुभवी लोगों का योग मिल सकेगा।

नई योजना का निर्माण

आज देश में महंगाई, बेरोजगारी, गरीबी और आवश्यक वस्तुओं के अभाव की समस्या भयंकर रूप धारण कर चुकी है। इन सबका एक ही कारण है, उत्पादन की कमी। मैं इसके लिए उत्पादन की तात्कालिक योजना बनाऊंगा। अन्नोत्पादन को प्राथमिकता देकर किसानों को इतनी सुविधा दूंगा कि वे अधिक से अधिक अन्न उत्पादन करें। साथ ही मैं उन्हें अधिक साग, फल और दुग्ध उत्पादन के लिए भी प्रेरित करूंगा। जिससे देशवासियों को आहार की कमी न रहे। इनके साथ ही मैं लघु और कुटीरोद्योगों को प्राथमिकता दूंगा, ताकि एक ओर अधिक से अधिक लोग कार्य पर लगें और दूसरी ओर आवश्यक वस्तुओं का अभाव दूर हो जाए और सबको रोजगार के अवसर भी मिलें।

ऊर्जा-शक्ति का अभाव

देश में कल-कारखानों को चलाने के लिए, छोटे या बड़े उद्योग-धन्धों को चलाने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह पैट्रोलियम व कोयले से मिलती है। मैं देश में पैट्रोलियम की खोज की गति तीव्र कर दूंगा तथा खानों से अधिक से अधिक मात्रा में कोयला निकालने की व्यवस्था करूंगा साथ ही ऊर्जा के अन्य स्रोत परमाणु, सूर्य, गोबर-गैस आदि की शक्ति का भी अनुसंधान तीव्र गति से करवाऊँगा।

हड़तालों पर प्रतिबन्ध

देश में उत्पादन को आये दिन होने वाले 'प्रदर्शनों', 'हड़तालों' व 'बन्दों' से भी धक्का लगता है। मैं दृढ़तापूर्वक हड़तालों को समाप्त करके अगले पाँच वर्ष के लिए इन पर पूर्णतः प्रतिबन्ध लगा दूंगा। साथ ही श्रमिकों में असन्तोष फैलाने वाले छोटे-मोटे कारणों का समाधान तुरन्त कर दूंगा। इसी प्रकार किसी भी मिल-मालिक और फैक्ट्री-मालिक को भी उद्योग में तालाबन्दी न करने दूंगा।

शिक्षा-पद्धति का पुनर्गठन

देश में आज अर्थाभाव से अधिक अभाव चरित्र का है। चरित्र के निर्माण में शिक्षा का महत्वपूर्ण योग होता है। मैं शिक्षा-पद्धति का पुनर्गठन कर एक ओर उसे जीविकोपार्जन से सम्बद्ध करूँगा और दूसरी ओर उसे छात्रों में चरित्र व नैतिक भावनाओं को जागृत करने वाला बनाऊंगा। मैं विश्वविद्यालयों में ऐसे अनुसंधान विभाग खुलवाऊँगा, जहाँ छात्र शिल्प, प्रविधि (टेक्नोलोजी) और विज्ञान सम्बन्धी अन्वेषण अधिक करे, जिससे देश को खनिज सम्पदा व ऊर्जा शक्ति प्राप्त हो और अन्न आदि के उत्पादन में वृद्धि हो।

सेना की सुदृढ़ता

मैं देश की सुरक्षा के लिए सेना के तीनों अंगों को नये-नये आयुधों तथा आवश्यक उपकरणों से सुसज्जित करूँगा और उन्हें विभिन्न प्रकार की जलवायु में रहने का पूर्ण अभ्यस्त कराऊंगा, ताकि वे सुदृढ़ बनकर, शत्रुओं का अभिमान चूर्ण कर सके। इसके साथ ही मैं स्कूलों व कालिजों में सैनिक शिक्षा को अनिवार्य कर दूंगा। ताकि संकट आने पर नियमित सैनिकों के साथ ही प्रशिक्षित नागरिक भी युद्ध का मोर्चा सम्भाल सकें।

विदेश-नीति

मेरी विदेश नीति भी अपने देश के हितों को सामने रखकर अधिक से अधिक शांतिपूर्ण व सहयोग की होगी। मैं ऐसा प्रयत्न करूंगा कि विश्व के सभी समृद्ध राष्ट्र हमारे मित्र बनें; हमें विकास के लिए सहयोग दें, किन्तु कोई हम पर किसी भी प्रकार का दबाव न डाले। विश्व के विशेष कर एशिया के अविकसित राष्ट्रों को मित्र बनाकर यथासम्भव उनके विकास में योगदान करने की इच्छा हमारी रहेगी।

उपसंहार

मैं देशवासियों में भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रति प्यार को जगाऊंगा, ताकि वे अपनी भाषा, वेश-भूषा तथा संस्कारों का आदर करें और उन्हें अपनाएँ। यदि मैं प्रधानमंत्री बन जाऊं तो भारतीय संस्कृति की ध्वजा सर्वत्र फैलाता हुआ अपने राष्ट्र को पूर्ण समृद्धि के पथ पर ले जाऊंगा।

—o—

यदि मैं प्रधानाचार्य बन जाऊं ?

प्रस्तावना

विद्यालय एक परिवार है। परिवार के जैसे अनेक सदस्य होते हैं और उस का एक प्रमुख होता है, इसी प्रकार छात्र व शिक्षक विद्यालय परिवार के सदस्य तथा प्रधानाचार्य उस परिवार का प्रमुख होता है। यह उसका संचालन व नियन्ता है। मेरे मन में भी अभिलाषा जागृत होती है कि शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् क्यों न मैं भी विद्यालय का प्रधानाचार्य बन जाऊं ? यदि संयोगवश मैं प्रधानाचार्य बन गया तो विद्यालय के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयत्नशील हो जाऊंगा।

अनुशासन की स्थापना

आज अपने विद्यालय में सबसे बड़ी समस्या अनुशासन की है। प्रधानाचार्य बनते ही मैं अनुशासन स्थापित करने पर पूरा ध्यान दूँगा। छात्र व शिक्षक समय पर विद्यालय पहुंचें, इसके लिए मैं स्वयं निश्चित समय से पन्द्रह मिनट पूर्व विद्यालय में पहुँचूंगा। मेरे समय से पूर्व पहुँचने पर अन्य शिक्षक भी समय पर पहुँचेंगे, क्योंकि बड़े लोग जैसा आचरण करते हैं, छोटे भी वैसा ही करते हैं। "यद् यदाचरति श्रेष्ठ स्तत्तेवेतरे जनाः।" यदि न पहुँचेंगे तो मैं उन्हें प्रेम से आने का आग्रह करूँगा। जब मैं और मेरे अध्यापक समय पर विद्यालय आयेंगे तो छात्र भी निश्चित ही समय पर आयेंगे। जो छात्र उपस्थिति घंटी पर कक्षा में न होगा, उसकी अनुपस्थिति लगा दी जायेगी। मैं समझता हूं इस प्रकार विद्यालय की उपस्थिति निश्चित और नियमित हो जायेगी।

छात्र प्रायः किसी न किसी बहाने से-कभी पानी के, कभी लघुशंका के और कभी किसी शिक्षक द्वारा बुलाये जाने के बहाने से—श्रेणियों से बाहर निकलकर घूमते रहते हैं। मैं प्रधानाचार्य बनते ही इनकी निगरानी रखूंगा और व्यवस्था करूँगा कि घण्टी समाप्त न हो होने तक कोई छात्र कक्षा से बाहर न आये।

शिक्षकों की ढिलाई

छात्रों का ही नहीं कुछ शिक्षकों का भी स्वभाव बन गया है कि वे जमकर

श्रेणी में नहीं बैठते । वे मॉनीटर को श्रेणी में पाठ पढ़ाने के लिए कहकर किसी अन्य शिक्षक को भी साथ लेकर बातचीत में मग्न हो जाते हैं। अध्यापक की अनुपस्थिति से श्रेणी में कोलाहल होता है, छात्र एक-दूसरे से लड़ते-झगड़ते हैं और गाली-गलौच करते हैं, मेज-कुर्सियां तोड़ते हैं, उन्हें बजाते हैं, या गन्दे फिल्मी गीत गाते रहते हैं । इससे पास वाली श्रेणियों के कार्य में बाधा पड़ती है । मैं ऐसे अध्यापक को आग्रह पूर्वक इस प्रवृत्ति को त्यागने को कहूंगा ।

एक ही गण-वेश

हमारे विद्यालय में निर्धन व धनी सभी प्रकार के छात्र हैं । धनी तो अपनी अच्छी सी वेश-भूषा में आते हैं और निर्धन सामान्य वेश-भूषा में । इससे धनी विद्यार्थियों में अहंभाव रहता है और निर्धनों में आत्म-हीनता की भावना जागती है । यदि मैं प्रधानाचार्य बन जाऊंगा तो सभी छात्रों को एक ही गण-वेश में आना अनिवार्य कर दूंगा । एक जैसे गण-वेश से अनुशासन सुदृढ़ होगा, छात्रों में मैत्री भाव भी अधिक विकसित होगा और किसी भी छात्र में हीन भावना अथवा उच्चता की भावना सम्पन्न न होगी ।

निर्धन छात्रों की सहायता

मैं प्रधानाचार्य बनने पर निर्धन छात्रों को विद्यालय की ओर से पुस्तकें और गण-वेश दूंगा । इसके साथ ही शुल्क-मुक्ति भी उन्हीं को दूंगा जो वास्तव में योग्य, उसके उचित अधिकारी तथा निर्धन होंगे ।

नैतिक और शारीरिक शिक्षा

मैं प्रधानाचार्य बनने पर प्रत्येक मंगलवार को नैतिक शिक्षा का पाठ अनिवार्य कर दूंगा । जिसमें शिक्षक बारी-बारी से छात्रों को धार्मिक व ऐतिहासिक कथा-कहानियों के द्वारा चारित्रिक शिक्षा देंगे । छात्रों के चरित्र की उन्नति करने के लिए—जो शिक्षा का अनिवार्य अंग है—मैं पूर्ण सचेष्ट रहूँगा । इसके साथ प्रत्येक शनिवार को अर्धावकाश के अनन्तर बाल-सभा का आयोजन भी करूँगा, जिसमें छात्र कहानियाँ, कविताएं व चुटकले आदि सुनावें और विभिन्न विषयों पर भाषण देने का अभ्यास भी करें। इससे छात्रों में नैनिकता, सदाचार, विनम्रता तथा विवेक आदि सद्‌गुणों का विकास होगा ।

मैं अपने छात्रों के लिए व्यायाम और खेलकूद भी अनिवार्य कर दूंगा ताकि बौद्धिक विकास के साथ ही उनका शारीरिक विकास भी होता रहे।

उपसंहार

आज विद्यार्थी परीक्षा में नकल आदि के अनुचित ढंग अपनाते हैं। मैं छात्रों में ऐसी भावना भर दूंगा कि वे नकल करें ही नहीं। यदि किसी ने ऐसा दुस्साहस किया तो उसकी इस प्रवृत्ति को दृढ़तापूर्वक दबा दूंगा। प्रभु मुझे यह सु-अवसर दे कि मैं प्रधानाचार्य बनकर अपने विद्यार्थियों और अपने विद्यालय की उन्नति कर सकूं।

—o—

सैनिक की आत्मकथा

जन्म और शिक्षा

मेरा जन्म एक क्षत्रिय परिवार में हुआ है। मेरे पिता सेना में मेजर थे। छठे वर्ष मुझे पाठशाला में प्रविष्ट कराया गया। क्रमशः मैंने दसवीं परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। सैनिक जीवन के महत्व को समझकर, देश-सेवा के उनके अखण्ड व्रत की विशेषता को समझकर मेरे मन में भी सैनिक बनने की इच्छा जागृत हुई। पिताजी ने जब मेरी इस अभिलाषा को जाना तो वे बहुत ही प्रसन्न हुए; किन्तु जब माँ को मेरी इच्छा का पता चला तो उनकी आँखें भर आयीं, पर क्षत्रिय नारी होने के कारण उन्होंने भी मुझे सैनिक बनने की अनुमति दे दी।

सैनिक प्रशिक्षण

माता-पिता की अनुमति प्राप्त कर मैं सेना प्रवेश कार्यालय में गया, वहाँ मेरे अंगों तथा स्वास्थ्य की परीक्षा हुई। सेना में प्रविष्ट होने के योग्य तथा स्वस्थ होने के कारण मुझे सेना में प्रवेश मिल गया। अब मेरा प्रशिक्षण प्रारम्भ हुआ। प्रशिक्षण के लिए मुझे क्रमशः कई छावनियों में भेजा गया। इस काल में कभी मुझे घुटनों के बल रेंगना पड़ा। कभी रस्से पर लटककर कई गज की दूरी तय करनी पड़ी, कभी नकली शत्रु-आक्रमण करने पड़े। भयानक व एकांत जंगल

में कभी अकेले घण्टों पहरा देना पड़ा, इससे हाथों व पाँवों में छाले पड़े तो भी मैंने प्रिय जन्म-भूमि की सेवा-भावना में उन कष्टों को सहा और सभी बाधाओं पर विजय पाई ।

चौकी की रक्षा

प्रशिक्षण पाने पर मुझ में अपूर्व दृढ़ता आ गई थी । पराक्रम बढ़ गया था । तभी सैनिक अधिकारियों ने मुझे भी चीन की सीमा से लगी एक चौकी दंगचांग पर भेज दिया । मैं वहाँ बड़ी सतर्कता से शत्रु की चेष्टाओं का ध्यान रखता और चौकी की रक्षा करता । इससे मेरे अनुभव में भी वृद्धि हुई ।

लाहौर सीमा पर

जब पाकिस्तान ने अपने शस्त्रों और शक्ति के मद में चूर होकर कश्मीर पर आक्रमण किया तो हमारी टुकड़ी को अरुणाचल से लाहौर सीमा पर जाने का आदेश हुआ । मैं तथा मेरे साथी सीमा पर पहुँच गए । शत्रु के पास उस युद्ध में पैंटन टैंक थे । मैंने उन टैंकों को तोड़ कर नाम कमाने का निश्चय कर लिया । मैंने अपनी कम्पनी के कमांडर को अपनी योजना बताई । फलतः शत्रु टैंकों को नष्ट करने का भार मुझे दे दिया गया ।

अगले दिन जिधर से शत्रु सेना के टैंक आगे बढ़ने वाले थे, उस स्थान का मैंने बारीकी से निरीक्षण किया और अपने साथियों को सारी योजना समझाई । हमने मार्ग में बारूदी सुरंग बिछा दी और स्वयं पेड़ों के झुरमुट के पीछे हथगोले लेकर छुपकर बैठ गए, ताकि शत्रु की दृष्टि हम पर न पड़े, किन्तु हम शत्रु को भली प्रकार से देख सकें । कुछ ही देर बाद शत्रु के टैंक आगे बढ़ने लगे, उधर आसमान में शत्रु के विमान भी चक्कर लगा रहे थे । ज्यों ही शत्रु टैंक बारूद की सुरंगों वाले मार्ग से आने लगे कि सुरंगों में विस्फोट होने से टैंक टूटने लगे । इसी समय शत्रु का एक टैंक आया, जिसकी तोप हमारी ओर मुँह करके गोले बरसा रही थी । मुझे जोश आया और प्राणों की चिन्ता न कर किसी तरह रेंगता हुआ उसके मुँह के पास तक पहुँचा और बड़ी सावधानी से हथगोला उसके मुँह में डालकर स्वयं बड़ी फुर्ती से पीछे खिसक गया । हथगोला फटने से टैंक जलने लगा । अब शत्रु का कोई टैंक शेष न रहा था । इस अभियान में मेरा

एक हाथ जाता रहा, किन्तु मुझे इसका कोई दुःख न था।

उपसंहार

सैनिक अस्पताल में निरन्तर चिकित्सा से कुछ मास बाद मैं स्वस्थ हो गया। युद्ध की समाप्ति पर मुझे अपूर्व वीरता प्रदर्शन के उपलक्ष्य में—'महावीर चक्र' मिला। मुझे इस बात का गौरव है कि अपनी मातृभूमि के प्रति अपना कर्त्तव्य निर्वाह करने में मैंने कोई भी कमी नहीं रखी।

—०—

मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना।

(साम्प्रदायिक एकता)

प्रस्तावना

मजहब नहीं सिखाता आपस बैर में रखना ॥
हिन्दी हैं हम वतन हैं हिन्दोस्तां हमारा ॥

उर्दू भाषा के प्रसिद्ध तथा लोकप्रिय कवि स्वर्गीय मुहम्मद इकबाल का यह गीत कभी हर बच्चे, जवान और बूढ़े की जिह्वा पर था। यह वह समय था जब अविभाजित भारत में अंग्रेजों की कूटनीति ने हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता को हवा दी थी। खालसा पंथ को हिन्दुओं से अलग कर देने की चालें चली गईं और मुसलमानों को हिन्दू-काफिर तथा फिरकापरस्त दिखाई देने लगे थे तथा हिन्दू-मुसलमानों को म्लेच्छ कहकर पुकारने लगे थे।

इस कविता से प्रेरणा

'इकबाल' की उक्त पंक्तियों ने साम्प्रदायिकता की आग पर ठंडा पानी डालने की चेष्टा की। मदान्ध स्वार्थी नेताओं को और जनसाधारण को धर्म की वास्तविकता का दिग्दर्शन कराया और उनको समझाया कि संसार को कोई भी धर्म या सम्प्रदाय दुर्भावना तथा घृणा नहीं सिखाता। किसी भी धर्म में दूसरे धर्म के प्रति द्वेष भावना नहीं। संसार का प्रत्येक धर्म सत्य, अहिंसा, प्रेम और भ्रातृभाव की नींव पर खड़ा है। प्रत्येक धर्म चाहे वह हिन्दू धर्म हो, मुस्लिम

धर्म हो अथवा ईसाई धर्म या अन्य कोई धर्म हो। महर्षि दयानन्द, गुरु नानक, मुहम्मद साहब किसी ने भी दूसरे धर्मों की या पंथों की निन्दा नहीं की। उन्होंने सभी प्राणियों में एक ही आत्मा और एक ही ज्योति के दर्शन किए तथा प्राणी मात्र की समता का उपदेश दिया। इन महापुरुषों ने सच्चाई तथा परोपकार के लिए ही तो अपना सर्वस्व होम कर डाला था, फिर उनके अनुयायियों में परस्पर बैर और घृणा की भावना क्यों ?

सभी एक देश के वासी

हम सभी हिन्दू, मुसलमान और ईसाई इस महान् देश के निवासी हैं। शताब्दियों से हम इसी देश में रहते आ रहे हैं। यह हमारी फुलवाड़ी है। हम इसमें स्वतंत्रता पूर्वक विचारने वाले पंछी हैं, इसमें चहचाने वाली बुलबुलें हैं, हम सबको एकत्र रूप से मिलकर, गाकर, हँसकर, खेलकर यहीं रहना है।

सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा।
हम बुलबुलें हैं इसकी,
यह गुलिस्ताँ हमारा ॥

हम सभी हिन्दुस्तानी अर्थात् भारतीय हैं, यह हिन्दुस्तान हम सबका है। यह भारत की माँ अस्सी करोड़ सन्तानों की जननी है। न यह केवल हिन्दुओं की है, न मुसलमानों की और न ही ईसाइयों की, अपितु सबकी माँ है। हम सब भी—

हिन्दी हैं हम वतन हैं,
हिन्दोस्ताँ हमारा ॥

यह हमारा देश, हमारा सुन्दर बगीचा है। इसी कारण, भारत में धर्म निरपेक्ष राज्य के आदर्श को अपनाया गया है। हमारे देश में जनता का राज्य है, न हिन्दू राज्य, न खालसा राज्य, न यवन शासन और न ही अंग्रेजी अधिपत्य है। यहाँ सभी समान हैं, सभी एक हैं, सभी भाई-भाई हैं, सभी भारतमाँ के लाल हैं।

सभी संविधान की दृष्टि में एक समान हैं। सभी का अधिकार समान है, सभी को धार्मिक स्वतन्त्रता है, सभी को विचार स्वातन्त्र्य है, सभी को अपने-अपने इष्टदेव की आराधना का अधिकार है। अगर इस विचार को हम गाँठ

बाँध लें तो देश में आज जो साम्प्रदायिक दंगे हो रहे हैं, वे कभी न होंगें। पूजा के मार्ग भिन्न होते हुए भी सबसे साम्प्रदायिक एकता और भ्रातृभाव कीं वृद्धि होगी। सभी एक ही ईश्वर की सन्तानें हैं। नाम उनके भिन्न-भिन्न हैं ? फिर झगड़े का क्या काम है ? आज दुर्भाग्य से देश के उत्तर-पूर्वी सीमान्त राज्यों में ईसाई साम्प्रदायिकता सिर उठा रही है, उत्तर-भारत और दक्षिण भारत में भी मुस्लिम साम्प्रदायिकता की विभीषिका बढ़ती जा रही है तो पंजाब में हिन्दू समाज का ही अभिन्न अंग खालसापंथ के अनुयायी साम्प्रदायिकता के अंधे होकर उत्पात मचा रहे हैं और क्रूरतापूर्ण हत्याओं तथा तोड़-फोड़ में संलग्न हैं। यह देश की एकता, अखंडता और सुव्यवस्था के लिए बहुत संकट है। इस समय तो हम एक ही ईश्वर की सन्तान हैं, यह भावना और भी दृढ़ता से अपनानी चाहिए।

सभी सम्प्रदाय अच्छे

संसार के प्रत्येक धर्म में अच्छाइयां विद्यमान हैं। प्रत्येक सम्प्रदाय में समान रूप से कल्याण की भावनाएं हैं। प्रत्येक धर्म या सम्प्रदाय प्रेम, देश भक्ति, साहस, वीरता, बलिदान, सत्य, त्याग, मानव-मानव की एकता में एक ही ईश्वर की उपस्थिति और अहिंसा का पाठ पढ़ाता है। प्रत्येक धर्म फले-फूले, प्रत्येक धर्म की उन्नति हो, प्रत्येक धर्म आगे बढ़े। उसकी जड़ें कभी साम्प्रदायिकता के विषय से सिंचित न हों, प्रत्येक धर्म दूसरे का सहयोगी बने, प्रतियोगी नहीं, एक-दूसरे का पूरक बने, प्रतिद्वन्द्वी नहीं, एक-दूसरे के प्रति सहिष्णु बने, असहिष्णु नहीं। तभी समाज और राष्ट्र का कल्याण हो सकता है, क्योंकि—

मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना।
हिन्दी हैं हम वतन है हिन्दोस्ताँ हमारा॥

—o—

करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान

प्रस्तावना

एक बालक था, उसका पढ़ने में मन नहीं लगता था। प्रायः पाठशाला से किसी न किसी बहाने भाग जाता। वह उपवन में खेलता रहता। एक दिन प्यास

बुझाने के लिए पास के पनघट पर गया। पानी पीकर कुछ देर वहीं खड़ा कुएँ का दीवार को देखता रहा। धागों से बने हुए रस्से पत्थर की सुदृढ़ दीवार को छील रहे थे। वह हैरान रह गया। उसके मस्तिष्क में विचार उत्पन्न हुआ— "यदि वह धागों से बना रस्सा पत्थर को घिस सकता है तो क्या मेरा मस्तिष्क पत्थर से भी अधिक कठोर है ? यदि मैं बार-बार अभ्यास करूँ तो क्या मेरे मस्तिष्क पर पठित पाठ प्रभाव न डाल सकेगा ?" वह विद्यालय लौट आया और निरन्तर अभ्यास में रत हो गया। मन्दबुद्धि बालक कुशाग्र बुद्धि बन गया।

अभ्यास का महत्त्व

अभ्यास अर्थात् किसी कार्य को बार-बार करने से सफलता अवश्य मिलती है। छोटा-सा बालक जो ठीक तरह से बोल नहीं सकता, जिसे कलम पकड़नी तक नहीं आती, कुछ ही वर्षों के अभ्यास के पश्चात् सुन्दर अक्षरों को लिखना सीख जाता है और अनेक पुस्तकों को कण्ठस्थ कर लेता है।

अंग्रेजी भाषा में एक मुहावरा है—"Practice makes a man Perfect" अर्थात् किसी कार्य को बार-बार करने से ही व्यक्ति पूर्ण कुशल हो जाता है। इसी प्रकार संस्कृत की भी लोकोक्ति है—"मन्दो ऽप्यविरतोद्योगः सदा विजय-भाग् भवेत्," अर्थात् मन्द व्यक्ति भी निरन्तर अभ्यास करने से सफलता प्राप्त कर लेता है। कालिदास का उदाहरण क्या किसी से छिपा है ? महामूर्ख कालिदास लगन और अभ्यास से संस्कृत का श्रेष्ठ कवि होने का गौरव प्राप्त कर सका। संसार में कौन जन्म से ही विद्वान् बना है ? सब धीरे-धीरे अभ्यास के द्वारा ही सब उच्च आसन को प्राप्त करते हैं। अर्जुन भी निरन्तर अभ्यास से ही महान् धनुर्धर बना। तेल में मछली की छाया देखकर उसकी आँख को बाण से भेदना सतत अभ्यास के कारण ही सम्भव हुआ। अर्जुन को तो द्रोणाचार्य जी ने शिक्षा दी थी, पर एकलव्य को किसने धनुर्विद्या में अर्जुन से भी अधिक प्रवीण बनाया था ? उसने आचार्य द्रोण की मूर्ति बनाई और निरन्तर बाण चलाने का, लक्ष्य-भेद का अभ्यास करने लगा। धनुष पर एक साथ सात बाण चढ़ाकर उनसे भौंकते कुत्ते का मुँह बन्द करना उसकी अभ्यास निपुणता का फल था। एक दिन आया, जब आचार्य द्रोण भी उसकी इस निपुणता पर आश्चर्य चकित हो उठे। आचार्य द्रोण नहीं, अभ्यास ही उसका गुरु था।

ब्रूस शत्रु से पराजित होकर निराश हो एक गुफा में छुप गया। वहाँ उसने मकड़ी को जाला बुनते देखा। कई बार उसका जाला टूटता, पर उसने हिम्मत न छोड़ी और अन्त में जाला बुनने में सफल हो ही गई। बस, "बार-बार करो, कार्य अवश्य पूरा होगा।" स्काटलैंण्ड के राजा ब्रूस को यह पाठ मकड़ी ने पढ़ाया और उसके बाद सफलता ने उसका वरण किया।

आज संसार में जितने श्रेष्ठ भी विद्वान्, वैज्ञानिक, खिलाड़ी अथवा अन्य व्यवसायों में विख्यात व्यक्ति हैं, क्या वे रात में सहसा स्वप्न आने पर दूसरी प्रातः ऐसे हो गए ? नहीं, वह तो उसके परिश्रम और सतत अभ्यास का फल है। जितनी शक्कर होगी, उतना मीठा होगा। कोई जितना अधिक परिश्रम करता है, उतना अधिक सफल होता है। शिक्षा में ही नहीं, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यही सिद्धान्त चरितार्थ होता है।

निबन्ध के प्रारम्भ में जो लघु-कथा है, वह बंगाल के सुप्रसिद्ध विद्वान् बोपदेव की है। वे प्रारम्भ में मन्द बुद्धि थे। विद्यालय में पाठ याद न होने से गुरु जी की झिड़की उन्हें खानी पड़ती थी। पर, कुएं वाली घटना से उनमें परिवर्तन आया। उन्होंने ही संस्कृत में 'मुग्धबोध व्याकरण' की रचना की। अभ्यास से क्या नहीं हो जाता ?

अभ्यास की आवश्यकता

राष्ट्रकवि 'दिनकर' जी के शब्दों में—"जो लोग पाँव भीगने के भय से पानी से बचते रहते हैं, समुद्र में डूब जाने का खतरा उन्हीं के लिए है। समुद्र में तैरने का जिन्हें अभ्यास है, वे मोती लेकर बाहर आएँगे। जीवन के अन्त में हम उतना ही पाते हैं, जितना परिश्रम की पूंजी से अर्जित करते हैं। जीवन को ऊँचा उठाने के लिए कष्ट आवश्यक है। जीवन के उस पन्ने को उलट कर पढ़ना है, जिसके सभी अक्षर फूलों से ही नहीं, अंगारों से भी लिखे गए हैं। जीवन का भेद उसे ही मालूम है, जो यह जानकर चलता है कि जीवन कहीं भी खत्म होने वाली चीज नहीं। अतः कामना का दामन छोटा मत करो, जिन्दगी के फल को दोनों हाथों से दबाकर निचोड़ो, रस की निर्झरी तुम्हारे बहाव से भी बह सकती है।"

विश्व के सर्वोच्च शिखर सागरगाथा (एवरेस्ट) के सर्वप्रथम आरोही तेनसिंह नोर्के की कहानी सभी ने पढ़ी है। उसको पहले दस बार शिखर आरोहण में असफलता मिली थी, पर उसने अभ्यास न छोड़ा और एक दिन एवरेस्ट शिखर पर पाँव रख ही दिया। विश्व में उसकी कीर्ति फैल गई। एक सामान्य ब्राह्मण बालक स्वामी हरिदास जी के सम्पर्क से और निरन्तर अभ्यास से ही सर्व-श्रेष्ठ संगीतज्ञ और अकबर के दरबार का गायक तानसेन बना गया। अपने नगरों में सर्कस के खेल तो प्रायः बच्चे देखते ही हैं। उसमें युवक व युवतियाँ तो अनेक आश्चर्य जनक कलाओं का प्रदर्शन करते हैं। साथ ही हाथी, शेर, बन्दर आदि भी ऐसे-ऐसे कौशल दिखाते हैं कि दाँतों तले अंगुली दबानी पड़ती है। यह उनके निरन्तर अभ्यास और साधना का ही फल है। जादूगरों का जादू भी उनके निरन्तर अभ्यास का फल है। खिलाड़ियों के उच्च खेल भी उनके सतत अभ्यास से ही उन्हें यश देते हैं। रूस, चीन, जापान आदि देशों के खिलाड़ी निरन्तर अभ्यास से ही अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के स्वर्णपदक प्राप्त करने में सफल होते हैं। विश्व प्रसिद्ध भारतीय धाविका पी० टी० ऊषा दौड़ का निरन्तर अभ्यास करके ही उसमें स्वर्ण-पदक प्राप्त कर सकी है।

उपसंहार

ईश्वर ने बुद्धि तो सबको दी है। अतः निरन्तर अभ्यास करो, ताकि तुम भी एक दिन सफलता की अन्तिम सीढ़ी पर पहुँच सको। वृन्द कवि ने तभी तो कहा है:—

करत करत अभ्यास के जड़ मति होत सुजान।
रसरी आवत जात तें सिल परत निसान॥

—o—

मद्य-निषेध

(नशा-बन्दी)

भूमिका

समाज सुधारकों, धर्माचार्यों तथा अन्य विवेकीजनों ने समय-समय पर समाज की जिन दुष्प्रवृत्तियों की निन्दा की है और जिन्हें पाप समझकर त्याज्य बताया है, मदिरापान उनमें से प्रमुख हैं। मदिरापान सामान्य पाप नहीं, अपितु वह सभी पापों से बढ़कर है। इसको स्पष्ट करते हुए कहा है कि —

एकतश्चतुरो वेदाः ब्रह्मचर्यं तथैकतः ।
एकतः सर्वं पापानि मद्यपानं तथैकतः ।

मदिरापान की इस बुराई को समझते हुए मद्य-निषेध आन्दोलन को स्वाधीनता संग्राम का ही एक भाग मानते हुए महात्मा गाँधी ने कहा था—"मैं भारत में कुछ हजार शराबी देखने की अपेक्षा देश को अत्यधिक निर्धन देखना पसन्द करूँगा। पूर्ण मद्य-निषेध के लिए सारा देश अनपढ़ भी रह जाये तो भी नशाबन्दी के उद्देश्य के लिए यह कोई मूल्य नहीं।"

मदिरापान के दुष्परिणाम

मद्यपान ऐसी दुष्प्रवृत्ति है जो व्यक्ति का सब प्रकार से पतन कर देती है। मदिरापान का मद्यप (शराबी) पर होने वाले प्रभाव को हम सब जानते हैं। कहा भी गया है:—

अयुक्तं बहु भाषन्ते यत्र कुत्र कुत्रापि शेरते ।
नग्नाः विक्षिप्य गात्राणि बालका इव मद्यपाः ।

अर्थात् वे (शराबी) अनुचित और बहुत बोलते हैं, जहाँ कहीं—सड़क पर, नाली में—सो जाते हैं और नंगे होकर फिरते हैं और अश्लील चेष्टाएं करते हैं।

मदिरा पीने वालों में लज्जा तो नाम की नहीं होती। मदिरा पीकर मद्यप अपने शरीर का ही नहीं, बुद्धि और आतमा का भी नाश कर लेते हैं। शराब पीने से शरीर में अनेक रोग उत्पन्न हो जाते है। आजकल हृदय-गति रुकने के जो मामले सामने आते हैं, उनमें ऐसे लोग बड़ी संख्या में होते हैं, जो अत्यधिक

मात्रा में मदिरा पान करते हैं। मद्यपान का प्रभाव मद्यप पर तो पड़ता ही है, उसके परिवार पर भी पड़ता है। मदिरापायी अपनी आय का बहुत बड़ा भाग मदिरा पर ही लगा देता है। फलतः परिवार का निर्वाह नहीं हो सकता। इस से पत्नी व पति में अनबन रहती है। शराबी अपनी पत्नी को बुरी तरह पीटता भी है। साथ ही उसकी सन्तान भी अशिक्षित रह जाती है।

अनेक दुर्व्यसनों की जनक

जो व्यक्ति व्यसन के रूप में मदिरा पान करते हैं, वे इसके साथ कई दुर्व्यसनों में भी फंस जाते हैं। सुरा है तो उसके आनन्द के लिए सुन्दरी भी चाहिए। जब सुन्दरी है तो कुछ जुए का मजा लेना ही चाहिए। जुए में हार गए तो घर का दिवाला निकालिए। निर्धन लोगों की स्थिति तो शराब पीने से और भी अधिक दयनीय हो जाती है। वे बढ़िया शराब खरीद नहीं सकते। अतः घटिया शराब खरीदते हैं। जो स्वच्छ नहीं होती और जिसमें विष की मात्रा बढ़ जाती है। इसके पीने से पीने वाले मौत के शिकार हो जाते हैं। समाचार पत्रों में प्रायः पढ़ने को मिलता है कि विषैली शराब पीने से पचास आदमी मर गए या सौ व्यक्तियों का प्राणान्त हो गया। दिल्ली, गुजरात, मद्रास और आन्ध्र में ऐसी कई दुर्घटनाएं कई बार हो चुकी हैं।

वस्तुतः शराब मस्तिष्क के तन्तुओं को कुण्ठित कर देती है, जिससे मद्यप की विवेक शक्ति नष्ट हो जाती है। इसीलिए मदिरा को सभी विवेकीजन बुरा मानते हैं।

मदिरा पान का फैशन

मदिरापान के उक्त दुष्परिणामों को स्पष्टतः जानते हुए भी आज समाज में मदिरापान एक फैशन बन गया है। धनवान और समर्थ लोग ही नहीं, मध्यम श्रेणी के लोगों की पार्टियाँ और समारोह इस शराब के बिना अधूरे ही समझे जाते हैं। बड़े-छोटे सभी नगरों में विवाह के अवसरों पर जब तक नवयुवक शराब पीकर झूम नहीं लेते, तब तक उस विवाह का आनन्द ही नहीं माना जाता। नवयुवक ही नहीं, अधेड़ व बूढ़े लोग भी लालपरी की चुस्की लेने में

पीछे नहीं रहते। आज नगरों के क्लबों, होटलों और रेस्तराओं में शराब की बिक्री बढ़ती जा रही है, घट नहीं रही है। न केवल नगरों में, अपितु छोटे कस्बों और गाँवों में भी यह रोग पूरी तरह फैल गया है।

अन्य मादक द्रव्यों का प्रचलन

आज शराब का ही नहीं, बल्कि गाँजे, चरस, अफीम तथा अन्य नशीली गोलियों और स्मैक का प्रयोग भी धड़ल्ले से बढ़ रहा है। समाज के तरुण वर्ग पर, विशेष कर छात्र-छात्राओं पर इनके सेवन का बहुत ही कुप्रभाव पड़ रहा है। स्मैक के कारण हजारों नवयुवक-नवयुवतियों का जीवन नष्ट हो रहा है। ब्राउन शुगर, हिरोइन आदि की तस्करी धड़ल्ले से हो रही है और चोरी-छुपे खूब बिक रही है।

मद्यपान का विरोध

मदिरा तथा अन्य मादक पदार्थों की इन्हीं बुराइयों के कारण समाज-सुधारकों ने समय-समय पर इसके विरुद्ध आवाज उठाई है। महात्मा गाँधी जी ने तो 'मद्य-निषेध आन्दोलन' को स्वाधीनता आन्दोलन का भाग मान कर ही चलाया था। इसके विरुद्ध शराब की दुकानों पर धरने दिए थे, पर लगता है, वह सब व्यर्थ रहा।

मद्य निषेध का सरकारी प्रयास

मद्यपान से होने वाली बुराइयों को देखकर सरकार ने बारह सूत्री मद्य-निषेध कार्यक्रम की घोषणा की थी। जिसके अनुसार सार्वजनिक स्थानों पर मदिरा पान का निषेध, मदिरापान के विज्ञापनों का निषेध, स्कूल-कालेज, धार्मिक स्थानों के आसपास मदिरालयों का निषेध, वेतन मिलने के दिन मदिरा विक्रय का निषेध आदि व्यवस्था के साथ ही मदिरा की बुराइयों के अधिकाधिक प्रचार की व्यवस्था की। कुछ राज्य सरकारों ने मद्यपान निषेध के कानून भी बनाए, पर 'मर्ज बढ़ता गया, ज्यों-ज्यों दवा की।'

उपसंहार

सरकारी प्रयत्न भी तब तक सफल नहीं होंगे, जब तक मदिरा तथा अन्य

मादक द्रव्यों के प्रति समाज में घृणा न होगी । अतः सभी सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक संस्थाओं को भी इसके विरुद्ध वातावरण बनाना होगा । लोगों में जागृति लानी होगी । ताकि लोग मदिरा के दुष्परिणामों से सदा के लिए सुरक्षित हो जाएं ।

—०—

रेडियो से प्रसारित होने वाले ये विज्ञापन

(विज्ञापनों का मायाजाल)

प्रस्तावना

आधुनिक युग प्रतियोगिता का युग है। उत्पादक को अपनी बनाई वस्तु की माँग उत्पन्न करना ही जरूरी नहीं होता, बल्कि वर्तमान को भी बनाये रखना उतना ही आवश्यक होता है । इन दोनों कार्यों के लिए वस्तु की उपस्थिति तथा उसके विभिन्न प्रयोग या उसकी उपयोगिता के बारे में उपभोक्ता को विज्ञापन के द्वारा सूचित किया जाता है । विज्ञापन को यदि वर्तमान व्यापारिक संसार की रीढ़ कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति न होगी । विज्ञापनों के विभिन्न साधनों---जैसे डिंढोरा, अखबार आदि में रेडियो इसका बहुत ही महत्त्वपूर्ण साधन माना जाता है ।

विज्ञापन प्रसारण के नमूने

आज जब हम अपने चारों ओर दृष्टि डालते हैं तो अपने आपको विज्ञापनों से घिरा पाते हैं । अन्य विज्ञापन साधनों की अपेक्षा रेडियो से प्रसारित होने वाले विज्ञापन विभिन्न प्रकार की विचित्रताएं लिए रेडियो सुनने वालों को अपने मोह जाल में फँसा लेते हैं । वस्तुतः रेडियो के प्रसारित होने वाले विज्ञापनों का करिश्मा ही निराला है । प्रातःकाल जागते ही आपको सुनाई देगा—'टन··· टन···वज्रदन्ती—विको वज्रदन्ती टूथ पाउडर टूथपेस्ट, आयुर्वेदिक जड़ी बूटियों से बनाई गई टूय पाउडर टूथपेस्ट' । आपको दाँत साफ करने के किए नुस्खा

बताया। टूथ पेस्ट करके जैसे ही आप चाय की चुस्कियाँ लेने लगेंगे, आपको ऐसा लगेगा कि जैसे 'लिप्टन रिच ब्रू जायकेदार मजेदार—सुस्ती भगाये फुर्ती जागाए···।' जब भी आप कोई गीत या गजल गुनगुनाते हों, तभी आपके दिमाग़ में अपने आप ये शब्द गूंजने लगते हैं—"चलो सुषमा तैयार हो जाओ···अब तुम्हारा डांस होगा···मैं स्टेज पर कैसे जा सकती हूं ? दर्द के मारे सर फटा जा रहा है···मेरी मानो तो एनासिन की एक गोली ले लो; सिर दर्द गायब।" आप अपनी पत्नी को शॉपिग के लिए तैयार होते देखेंगे, तो आपके कानों में शब्द टकराएँगे···"बन-ठन कर कहाँ चली रेनू···कामधेनू शॉपिंग सेंटर। किसी रोते हुए बच्चे को देखकर आपको याद आयेगा—"आह···आह···मीठी-मीठी मुगली घुट्टी 555" स्नान करने बैठो तो···ला···ला···ला' लिरिल, ताजगी का साबुन तन्दुरुस्ती का साधन—'लाईफ बॉय आदि। आप रास्ते में जा रहे हैं, तभी आपको कोई महाशय नजर आते हैं। आपको कपड़े धोने के मोटे स्पेशल साबुन का जीता जागता रूप नजर आयेगा। आप आराम से सो रहे हैं, तभी आपको मच्छर काटता है तो···"कछुआ छाप अगरबत्ती लाइए···मच्छर भगाइए" याद आ जाता है। आपकी पत्नी रूठ के मायके जाने की धमकी देती है। 'सबेरा हवाई चप्पल की बेड़ियाँ उनके पाँवों में डाल दो, वह खुश हो जायेंगी।'

कहने का अभिप्राय यह है कि आप जहाँ जाएं जहाँ रहें, इन रेडियो में प्रसारित होने वाले विज्ञापनों की ध्वनियां आपके कानों से टकराती रहेंगी। भले ही आप अपने रेडियो न चलायें आप पान की दुकान पर खड़े हैं—रेडियो पर सुनाई देता है—"पेश किया जाये—मुगले ए-आजम पान मसाला।" किसी पार्टी में विभिन्न प्रकार की साड़ियों में सजी सुन्दर स्त्री को देखकर आप गुन-गुना उठेंगे। 'रूप संवारे-रूप निखारे।'······कहियो अपने सैंया जी से रूप की साड़ी लाएँ। रूप का सागर'। आप बस में जा रहे हैं। तभी किसी की जेब कट गई। आपको याद आता है—"अरे-पकड़ो-पकड़ो मेरी जेब कट गई—कटी नहीं फट गई। कहा था मुनीम धागे से सिलाई करवायें···पैसे गिर गये हों तो उठा लो।' सड़क के चौराहे पर पहुँचे—"अरे-अरे देखकर नहीं चलते—क्या यह सड़क आपकी है—नहीं तो आपकी है—जेबरा क्रॉसिंग पर पैदल पथ वालों को पहले चलने का हक है।"

फिल्मों के विज्ञापन भी

रेडियो से प्रसारित होने वाले फिलमों के विज्ञापनों का अपना ही स्थान है। रेडियो पर नई आने वाली फिलमों के प्रायोजित कार्यक्रम दिये जाते हैं। "जागो उठकर देखो···मगर मन की आँखों से···सत्यम्···शिवम्···सुन्दरम्··· राजकपूर की···नई पेशकश···मैं तुलसी तेरे आँगन की···राज खोलला की एक नई भावनात्मक फिलम··· ।'

दूरदर्शन पर भी—अब तो दूरदर्शन भी विज्ञापन-बाजी में बाजी मार रहा है। विज्ञापन के नये-नये रूप इसमें दीखते हैं। जो दर्शकों को मुग्ध करने के साथ ही उनकी जेब ढीली कराने में समर्थ हो रहे हैं।

लाभ

जो भी विज्ञापन आकर्षक होता है, उसका नाम लोगों की जीभ पर चढ़ जाता है, जिससे विज्ञापित वस्तुओं की माँग में वृद्धि हो जाती है। इससे उत्पादक को लाभ होता है।

हानियाँ

रेडियो से और दूरदर्शन से भी बहुत सी वस्तुओं का विज्ञापन बढ़ा-चढ़ाकर किया जाता है। जिससे उपभोक्ता भ्रम में पड़ जाता है। इसके साथ ही मन चाहे संगीत कार्यक्रम में हर एक गीत के बाद विज्ञापन मन को खिन्न कर देता है।

उपसंहार

इस प्रकार हम देखते हैं कि जहाँ रेडियो या दूरदर्शन से प्रसारित होने वाले विज्ञापनों के अतिशयोक्तिपूर्ण प्रसारण पर रोक लगाने चाहिए। जिससे भोले-भाले उपभोक्ताओं को गुमराह होने से बचाया जाय।

—o—

बाढ़ की विभीषिका

(प्रलयंकारी बाढ़)

प्रस्तावना

जल प्रकृति द्वारा समस्त प्राणियों को दिया गया एक महत्त्वपूर्ण उपहार है। स्वच्छ-शीतल नदी का जल कितना मनोरम लगता है, किन्तु वही जल जब बढ़-कर तथा अपनी सीमाएं तोड़कर आस-पास के क्षेत्रों में विनाश मचा देता है, तो जल के इसी रूप को हम बाढ़ या जल प्लावन की संज्ञा देते हैं। सृष्टि के प्राण भूत और प्राणियों के जीवन स्वरूप इस जल का सन् 1978 ईद के अवसर पर ऐसा दर्शन और ऐसा मिलन हुआ कि बाढ़ के पुराने सभी कीर्तिमान टूट गए।

बाढ़ का प्रकोप

भादपद्र भी लगभग आधा बीत गया था और यह आशा हो गई कि अब अगस्त्यनक्षत्र का उदय होगा और वर्षा ऋतु को सकुशल समाप्त ही समझो। तभी अचानक मेघ गरज उठे तथा लगता अविराम गति से भयंकर वर्षा आरम्भ हो गई। गंगा-यमुना तथा टौंस आदि अन्य छोटी-बड़ी नदियाँ अचानक उफन पड़ीं और उत्तरी तथा पूर्वी भारत भयंकर बाढ़ से हाहाकार कर उठा, दिल्ली से बंगाल तक पानी ही पानी हो गया।

दिल्ली में बाढ़

प्रतिवर्ष बरसात के मौसम में देश के विभिन्न भागों में बाढ़ की खबरें हम समाचार पत्रों में पढ़ते थे, परन्तु सन् 1978 में दिल्ली में बाढ़ ने जैसी प्रलय मचाई वैसी कभी नहीं आई। भारी वर्षा के कारण यमुना नदी का पानी निरन्तर बढ़ता गया और उसने अपनी सभी सीमाएं लाँघकर बहुत-सी बस्तियों तथा नगरों को अपनी बाँहों में समेट लिया। दिल्ली की पुनर्वास बस्तियाँ जहांगीर पुरी, मंगोलपुरी एवं पल्ला, मुहम्द पुरी, टीकरी तथा अन्य गाँव जल-मग्न हो गये। वहाँ का दृश्य बहुत ही करुणाजनक था। हजारों एकड़ भूमि जल

में डूब गई थी। गिरते हुए मकान, ढहती हुई दीवारें, बहते पशु, डूबते हुए प्राणियों को दुखकर देखने वालों की आँखों में आँसू आ गए। दिल्ली प्रशासन के बाढ़ नियन्त्रण विभाग तथा अन्य स्वयं सेवी सस्थाओं ने बचाव कार्य प्रारम्भ कर दिया था ' जहांगीर पुरी, आदर्श नगर तथा अन्य सभी बस्तियों से जितने व्यक्तियों को निकाला जा सकता था, उनको सुरक्षित स्थानों पर पहुँचा दिया गया. किन्तु बाढ़ का पानी उधर से शाहआलम बांध में दरार पड़ने के कारण आलीशन बस्ती 'माडल टाऊन' में घुस गया। वहाँ गलियों, बाजारों में पानी की नदियाँ बहने लगीं। उधर मुखर्जी नगर, टैगोर मार्ग भी बुरी तरह जल-मग्न हो गये। माडल टाऊन में दस-दस फुट पानी था तो मुखर्जी नगर और जहाँगीर पुरी में पन्द्रह-पन्द्रह फुट पानी था।

गाँव भी बाढ़ की लपेट में

यमुना के आस-पास के गाँवों तथा नगर की वस्तियों की दशा अत्यन्त शोचनीय थी। बाढ़ का पानी किनारा तोड़कर मनमानी करता हुआ कितने ही गाँवों में घुस गया था। अलीपुर विकास खण्ड के तो प्रायः सभी गाँव इस बाढ़ के कारण पूरी तरह डूब गये थे। अपने प्राणों का मोह लिये हुए गांव के लोग अपनी आँखों से पानी से हुए विनाश पर आँसू बहा रहे थे। उनकी आंखों के सामने ही उनके मकानों की छतें, उनका सामान और पशु बह रहे थे, फिर भी प्रकृति के प्रकोप को वे अपना दुर्भाग्य समझ कर सह रहे थे, जिनके घर उजड़ गये थे, जो घर से बेघर हो गये थे। वे अपना आश्रय पाने की खोज में भटकते दिखाई दे रहे ये। किसी स्त्री की गोद में भूख से बिलबिलाता हुआ बच्चा रो रहा था। तो कोई वृद्ध अपने पोते-पोती का सहारा लिए आगे बढ़ रहा था। किसी युवक के सिर पर बोझ की वह गठरी थी, जो संयोगवश लुटेरन बाढ़ की दृष्टि से बचा ली गई थी।

सहायता कार्य

इस प्रकार के दिल दहला देने वाले दृश्य को देखकर कोई पाषाण हृदय ही मन मारकर बैठ सकता था। इधर दिल्ली प्रशासन की ओर से बाढ़-ग्रस्त क्षेत्रों

से लोगों को निकालने और भोजन सामग्री पहुँचाने का काम चल रहा था तो दूसरी ओर अनेक सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक संस्थाएं सेवा कार्य के लिए मैदान में उतर आईं। बाढ़-पीड़ितों को दिल्ली प्रशासन के विद्यालयों के भवनों में तथा अन्य जगहों में शिविर लगाकर आश्रय दिया गया। कई बच्चे अपने माँ-बाप से बिछुड़ गये, उन्हें भी कैम्पों में रखा गया। सेना के जवान अपनी नौकाओं के द्वारा बाढ़-ग्रस्त लोगों को निकाल रहे थे तथा उन्हें भोजन-सामग्री तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ भी पहुँचा रहे थे। इस अवसर पर दानी लोग धन से तथा स्वयं सेवक तन-मन से सेवा कार्य में जुटे हुए थे। हैलीकॉप्टर से भी बाढ़-ग्रस्त इलाकों में घिरे लोगों के लिए भोजन के पैकेट गिराये गये थे।

अन्य प्रान्तों में भी बाढ़

दिल्ली में तो बाढ़ का प्रकोप कम हुआ, किन्तु इस असीमित जलप्लावन ने आगे बढ़ते हुए उत्तर प्रदेश, बिहार तथा बंगाल में भयंकर विनाश उपस्थित कर दिया। वहाँ की दशा तो भयंकर दयनीय हो गई। असंख्य जन, अपरिमित धन तथा अनेक पशुओं की हानि हो गई। हजारों एकड़ खड़ी फसल नष्ट हो गई।

उपसंहार

इस भयंकर बाढ़ ने सिद्ध कर दिया है कि प्रशासन को बाढ़ की इस विभीषिका से जनता को बचाने के लिए कुछ ठोस उपाय करने होंगे। क्योंकि बाढ़ तो प्रतिवर्ष देश के विभिन्न भागों में आती ही रहती है। इस वर्ष 1988 में भी बाढ़ ने अपना प्रलयंकारी रूप भारत के कई प्रान्तों में दिखाया है। विशेष कर हिमालय की उपत्यका में वृक्षों के कटान पर तत्काल प्रतिबन्ध लगा देना चाहिए, क्योंकि वृक्षों के अभाव से ही बाढ़ की विभीषिका बढ़ती है। बाढ़ से सुरक्षा के लिए यथाशीघ्र नए वृक्षों को लगाने तथा नदियों पर तट-बन्ध बनाने की व्यवस्था भी करनी चाहिए, जिससे प्रति वर्ष होने वाली प्राण-हानि से तथा करोड़ों रुपयों की क्षति से बचा जा सके।

—o—

रेलवे स्टेशन का दृश्य

प्रस्तावना

मनुष्य को जीवन में किसी न किसी कारण यात्रा तो करनी ही पड़ती है। मनुष्य जीवन भी तो स्वयं में एक यात्रा है, जो जन्म से लेकर महाप्रयाण तक चलती है। इस जीवन-यात्रा को अर्थात् जीविका को चलाने के लिए भी मनुष्य को इधर-उधर जाना ही पड़ता है। पहले लोग पैदल, बैल-गाड़ियों द्वारा या घोड़ा गाड़ियों द्वारा यात्रा करते थे। विज्ञान के आविष्कारों ने यात्रा के अनेक नवीन साधनों को जन्म दिया है। जिनमें सबसे सुलभ साधन है—रेल। रेल द्वारा यात्रा करने के लिए यात्री को 'रेलवे-स्टेशन' जाना पड़ता है। स्टेशन से ही किसी भी स्थान के लिए गाड़ी पकड़ी जाती है।।

'स्टेशन' या 'अड्डा' उस स्थान को कहते हैं, जहाँ विभिन्न स्थानों से और विभिन्न दिशाओं से आने वाली तथा विभिन्न स्थानों या दिशाओं में जाने वाली गाड़ियाँ रुकती हैं और जाती हैं। इनमें रेलवे स्टेशन का दृश्य भी बड़ा निराला होता है।

स्टेशन के बाहर का दृश्य

रेलवे-स्टेशन तो छोटे-बड़े सभी नगरों में होते हैं, पर बड़े नगरों के स्टेशन के पास बहुत बड़े-बड़े भवन होते हैं। भवन के पास ही अन्दर की ओर प्लेट-फार्म और बाहर की ओर आने वाले यात्रियों के लिए विश्रामगृह होता है। यहीं विभिन्न दिशाओं में जाने वाली गाड़ियों के लिए टिकट खिड़कियां होती हैं, जहाँ से गन्तव्य स्थान के लिए या प्लेटफार्म पर जाने के लिए टिकट मिलते हैं। स्टेशन से बाहर एक ओर तांगों, मोटरों, साइकिलों तथा बसों आदि के ठहरने के स्थान होते हैं। यहाँ चौबीसों घंटे यात्रियों की भीड़ दिखाई देती है। गाड़ियों के आने-जाने के समय तो वह भीड़ मेले का सा रूप धारण कर लेती है। यात्री ज्यों ही किसी सवारी से उतरता है, लाल वर्दीधारी भार-वाहक (कुली) झपट करउसे घेर लेते हैं। "हाँ, बाबू साहब! बीवी जी! कहाँ जाएँगे? ले चलूं सामान? ज्यादा पैसे न लूंगा। जो हक का बनता है दे दीजिए।" आदि बातें करके वे सामान उठाने को तैयार हो जाते हैं। टिकट खिड़कियों

पर टिकटार्थियों की लम्बी-लम्बी पंक्तियाँ लगी होती हैं। कहीं आरक्षण खिड़कियों पर आरक्षण कराने वालों में ही 'पहले मैं आया था, दूसरी बारी मेरी थी' इस प्रकार का झगड़ा होता रहता है। कहीं फर्श पर यात्री बैठे गाड़ी की प्रतीक्षा में रहते हैं। कहीं सोते हुए और कहीं ऊंघते हुए लोग दिखाई देते हैं। कहीं कुछ लोग पूछताछ कार्यालय से पूछताछ करते दिखाई देते हैं।

प्लेटफार्म पर

भवन के भीतरी ओर अनेक प्लेटफार्म होते हैं, जहाँ विशेष दिशा से आने वाली और विशेष दिशा को जाने वाली गाड़ियाँ खड़ी होती हैं। यहाँ भी यात्रियों का मेला सा लगा रहता है। गाड़ी रुकते हुए या जाने के समय यात्रियों की दौड़-धूप, कुलियों का रेल, यात्रियों का कोलाहल, गाड़ी की गड़गड़ाहट, इंजन की सीटी एक विचित्र-सा आकर्षक वातावरण उत्पन्न कर देते हैं। कहीं ध्वनि-विस्तारक पर गाड़ियों के आने-जाने की सूचना तो कहीं यात्रियों की कुली के साथ छीना-झपटी भी देखी जा सकती हैं।

सामान बेचने वाले

प्लेटफार्म पर सामान बेचने वालों का तो कहना हो क्या ? उनकी भीड़ भी कुछ कम नहीं होती। खोमचे वाले तो रेहड़ी एक जगह लगाए ही खड़े रहते हैं और कुछ चलते फिरते वस्तुएं बेचते हैं उनकी आवाजों के कुछ नमूने देखिए— "पान···बीड़ी···सिगरेट···। चाय···गरम······चाय। दूध गरम······गरम। बड़े···दाल···बड़े···पकोड़ी, समोसे। अखबार···मेगजीन···हिन्दुस्तान······ धर्मयुग···फिलमी अखबार। चूड़ी लो चूड़ी···बिन्दिया···।" इस प्रकार विशेष स्वर में आवाज करते हुए ग्राहकों को आकर्षित करते हैं। यात्री भी कुछ शीघ्रता में कुछ आराम से सामान खरीदते हैं और खाते हैं।

गाड़ी आने के समय

ज्योंही यात्री ध्वनि-विस्तारक से सुनते हैं कि···हावड़ा से आने वाली गाड़ी प्लेटफार्म नं० 3 पर आ रही है। मसूरी एक्सप्रैस नं० 12 प्लेटफ़ार्म पर पहुँचने वाली है।' यात्रियों और कुलियों में भगदड़ सी मच जाती है। सब शीघ्रतातिशीघ्र पहले वहाँ पहुँच जाना चाहते हैं। इसी प्रकार गाड़ी के जाते

हुए भी यात्रियों की भगदड़, सामान रखने की जल्दबाजी, यात्रियों का झगड़ा; कुलियों की हाथापाई, विभिन्न वेशभूषा वाले यात्री, रेलवे स्टेशन के दृश्य को आकर्षक बना देते हैं।

उपसंहार

जब हम यात्रा करने के लिए जाते हैं, उस समय इस वातावरण का पूरा आनन्द नहीं लिया जा सकता, क्योंकि तब तो गाड़ी में स्थान पाने की शीघ्रता होती है, उस वातावरण के ठीक दर्शन के लिए तो खाली समय में वहाँ जाकर दो-चार घंटे रुक कर ही रहना चाहिए। तभी उस दृश्य का पूरा-पूरा आनन्द लिया जा सकता है।

—o—

चुनाव स्थल का दृश्य

प्रस्तावना

शासन की विभिन्न पद्धतियों में प्रजातन्त्रीय शासन पद्धति सबसे श्रेष्ठ है। प्रजातंत्र में प्रजा के लिए चुने हुए प्रतिनिधि शासन करते हैं। चुनाव प्रजातंत्र की रीढ़ की हड्डी है, अतः चुनावों का इसमें विशेष महत्त्व है, क्योंकि इसी से प्रजा को अपनी रुचि के प्रतिनिधियों को निर्वाचित करने का अधिकार और अवसर मिलता है।

चुनाव से पूर्व

निर्वाचन – लोक सभा, विधान सभा, नगर निगम या नगर पालिका किसी भी संस्था के लिए हो सकता है। निर्वाचन में देश के विभिन्न राजनीतिक दल (समूह रूप में) और कोई भी व्यक्ति व्यक्तिगत रूप में भाग ले सकता है। इसके लिए निर्वाचन अधिकारी चुनाव तिथि की घोषणा करता है और नामांकन पत्र प्रविष्ट कराने का दिन निश्चित करता है। इसके पश्चात् विभिन्न दलों के प्रत्याशी या स्वतन्त्र प्रत्याक्षी अपने नामांकन पत्र भरते हैं। फिर निर्दिष्ट तिथि को उनकी जाँच होती है। उस समय कुछ लोग अपने नाम वापिस भी लेते

हैं। तब दल अधिकृत प्रत्याशियों को उनके दलों के लिए निश्चित चुनाव-चिह्न और स्वतंत्र प्रत्याशियों को अन्य चिह्न दे दिए जाते हैं।

चुनाव प्रचार

इसके पश्चात् चुनाव-प्रचार प्रारम्भ होता है। इसके लिए विभिन्न दलों और प्रत्याशियों की ओर से छोटी-बड़ी चुनाव सभाएं की जाती हैं जिनमें वे मतदाताओं से अपने दल को या अपने को मत देने के लिए कहते हैं। प्रत्याशियों के परिचय-पत्र छापकर और दल विशेष की चुनाव-घोषणा के पत्रक लेकर भी प्रत्याशी और उनके समर्थक नगर-नगर, गाँव-गाँव, घर-घर जाकर मतदाताओं से सम्पर्क करते हैं और अपने पक्ष में मतदान करने का आग्रह करते हैं। न केवल चुनाव सभाओं द्वारा अथवा व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा, बल्कि समाचार पत्रों के माध्यम से भी प्रचार होता है, लोक सभा और विधान सभा के चुनावों में अब तो विभिन्न दलों के प्रतिनिधि आकाशवाणी और दूरदर्शन पर भी अपने दल की नीति का उल्लेख करते हुए अपने पक्ष में मतदान का आग्रह करते हैं। मतदान से छत्तीस घंटे पूर्व चुनाव प्रचार बन्द हो जाता है।

चुनाव के लिए निर्वाचन क्षेत्रों में मतदान केन्द्रों की व्यबस्था होती है। ये केन्द्र विद्यालयों में, समुदाय केन्द्रों में पंचायत घरों में, निजी भवनों में या कहीं तम्बुओं में भी बनते हैं।

चुनाव स्थल का दृश्य

मतदान केन्द्र और उसके आस-पास का क्षेत्र चुनाव-स्थल कहलाता है। निर्वाचन के दिन इसका दृश्य भी बड़ा ही आकर्षक और प्रभावी होता है, विभिन्न दलों के प्रत्याशी या स्वतन्त्र केन्द्र से दो सौ गज की दूरी पर अपने-अपने कार्यालय बना लेते हैं। पहले शामियाने भी लगाये जाते थे, पर अब वे वर्जित कर दिये हैं, इन कार्यालयों को अपने दल के निर्वाचन चिह्न से, प्रत्याशियों के चित्रों से, दल के झंडों से और अन्य इश्तहारों से सजा दिया जाता है, वहीं मेज, कुर्सियाँ लगी होती हैं। विभिन्न दलों के कार्यकर्त्ता और समर्थक-मतदाताओं को उनके घरों से बुलाकर वहाँ लाते हैं। इसके लिए कार, स्कूटर, ताँगे, बसों, टैक्टरों आदि का भी खूब प्रयोग होता है। कुछ मतदाता स्वयं ही

वहाँ पहुँचते हैं। चुनाव कार्यालयों पर मतदाताओं की भीड़ मेले की भीड़ की याद दिलाती है, वहाँ उनकी मतदाता संख्या और मतदान केन्द्र बताकर उन्हें मतदान केन्द्र तक ले जाया जाता है।

मतदान केन्द्र में

मतदान केन्द्र में सरकारी अधिकारी मतदाता सूचियाँ और मतपत्र लेकर उपस्थित रहते हैं। यहीं प्रत्याशियों के एजेंट भी बैठे रहते हैं। अनेक अधिकारी होते हैं। दो अधिकारी मतदाता सूची में मतदाता का नाम देखते हैं। एक अंगुली के अलग भाग पर नीली स्याही का निशान लगाता है और मत पत्र फाड़कर मोहर लगाने को देता है। वहीं एक मेज पर मतपेटी रखी रहती। तब मतदाता एक पर्दे के पीछे जाकर मतपत्र पर उस प्रत्याशी के नाम और चिह्न के आगे निशान लगा देता हैं, जिसे वह मत देना चाहता है। इस प्रकार क्रम से सभी मतदाता आकर मतदान करते हैं। केन्द्र के बाहर अन्य मतदाता पंक्तिबद्ध खड़े रहते हैं और अपनी बारी आने पर मत देने जाते हैं।

इस अवसर पर निर्वाचन स्थल के बाहर मतदाताओं में, राजनीतिक दलों के कार्य-कर्त्ताओं और समर्थकों में बड़ा ही उत्साह होता है। वे अपने समर्थकों को जल्दी से जल्दी मतदान का आग्रह करते हैं। कभी-कभी तो एक-एक मत के लिए भी संघर्ष होता है। अपंग और रुग्ण मतदाताओं को भी वाहनों पर या कभी कंधे पर ही घर से लाकर मतदान कराया जाता है। अत: एक-एक मत का बड़ा मूल्य होता है, क्योंकि कभी एक ही मत से हार-जीत हो जाती है। समय समाप्त होने पर मतदान बन्द हो जाता है और प्रत्याशियों का भाग्य भी मत पेटी में बन्द हो जाता है।

उपसंहार

मतदान के बीच में बाहर कभी-कभी नारेबाजी या झगड़ा भी हो जाता है। तब सुरक्षा के लिए खड़ी पुलिस हस्तक्षेप से उन्हें हटा देती है। मतदान के अन्त में निर्वाचन स्थल पर बहुत बड़ी भीड़ एकत्र हो जाती है और अपने-अपने के जय-जयकार से आकाश को गुंजा देती है।

वस्तुतः निर्वाचन स्थल का यह दृश्य बहुत ही आकर्षक तथा उत्साहवर्धक होता है।

—०—

भारत का तीसरा उपग्रह : रोहिणी

(अन्तरिक्ष क्षेत्र में भारत की नयी उपलब्धि)

प्रस्तावना

आज का युग प्रगतिशील विज्ञान का युग है। आज किसी भी देश की उन्नति उस देश की वैज्ञानिक प्रगति पर आधारित है, नवीन वैज्ञानिक आविष्कारों ने देशों के आर्थिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है और साथ ही भौतिक ऐश्वर्यों का अम्बार भी लगा दिया है। वैज्ञानिक आविष्कारों में अब भारत भी पीछे नहीं। भारत ने 18 मई 1974 को पोकरण (राजस्थान) के रेगिस्तान में अणु-विस्फोट कर विश्व का **छठा अणु राष्ट्र** बनने का गौरव प्राप्त किया। भारत का अन्तरिक्ष अभियान 1963 विक्रम सारा भाई के नेतृत्व में प्रारम्भ हुआ था। भारतीय वैज्ञानिकों, इंजीनियरों तथा टैक्नीशियनों ने निरन्तर परिश्रम करके 19 अप्रैल 1975 को 360 कि० ग्राम का उपग्रह 'आर्य भट्ट' अन्तरिक्ष में प्रेषित कर अन्तरिक्ष-विज्ञान में अपनी प्रथम उपलब्धि प्राप्त की। उसके तुरन्त बाद 1978 में अन्य उपग्रह 'भास्कर' को अन्तरिक्ष में भेजकर अन्तरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में खलबली मचा दी। ये दोनों उपग्रह रूस की भूमि से रूसी प्रक्षेपास्त्रों की सहायता से भेजे गए। उक्त दोनों उपग्रहों के अनन्तर अब तक रोहिणी आर० एस० 11 एप्पल, भास्कर 2, इन्सट 1 और रोहिणी डी० 2 अन्तरिक्ष में भेज चुका है।

भारत ने प्रथम राकेट परीक्षण 10 अगस्त 1979 को किया, किन्तु एक वल्ब में खराबी आ जाने के कारण राकेट के पहले खण्ड के जलने के बाद ही वह बंगाल की खाड़ी में गिर गया, किन्तु इस असफलता से वैज्ञानिक हताश नहीं हुए और उन्होंने फिर से बहुत जोर-जोर से प्रयत्न किया, जिसका परिणाम 18 जुलाई 1980 को मिला।

नई सफलता

18 जुलाई 1980 को भारत के वैज्ञानिकों ने एक नया इतिहास बनाकर विश्व को यह दिखला दिया कि हम भी महान् वैज्ञानिक एवं तकनीकी उपलब्धियों को प्राप्त करने में पूर्ण रूप से सक्षम हैं। इसी दिन प्रात: 8 बजकर 3 मिनट 45 सेकेंड पर भारत ने स्वदेशी राकेट एस० एल० वी-3 से 'रोहिणी' नामक उपग्रह को श्री हरिकोटा राकेट केन्द्र से अन्तरिक्ष में प्रेषित किया। इस प्रकार भारत विश्व का छठा अणु राष्ट्र बन गया। इससे पहले अमेरिका, रूस, जापान, फ्रांस और चीन आदि पाँच देशों को यह गौरव प्राप्त हो चुका है, भारत का मस्तष्क इस महती उपलब्धि से जगत् में ऊँचा हो गया।

उपग्रह का प्रक्षेपण

वास्तव में यह दिन भारत एवं भारतीय विज्ञान के लिए एक महान् दिन था। श्री हरिकोटा की प्राकृतिक पृष्ठिभूमि में जब यह उपग्रह छोड़ा गया तो वह दृश्य अविस्मरणीय था। लाखों लोगों ने इसे देखा और अद्भुत बताया। इसका गर्जना बड़ी दूर-दूर तक सुनाई दी। 22 मी० लम्बे 17 टन के भार वाले पेंसिल के आकार के SLV-3 राकेट के चार भाग थे। जब श्री अब्दुल कलाम (निर्देशक SLV-3 मिशन) ने 7.50 पर बटन दबाया, तब उसके 14 मिनट बाद राकेट का ईंधन जला, नीचे से सफेद गैस निकलने लगी और 18 कि० मी० उँचाई पर पहुँच कर राकेट का प्रथम भाग अलग हो गया। अब दूसरे भाग के जलने की प्रक्रिया आरम्भ हुई और राकेट 92 कि० मी० की ऊँचाई पर पहुँच गया। तृतीय भाग राकेट को 140 कि० मी० तक ले गया। अब चौथे भाग के जलने की प्रक्रिया आरम्भ हुई। इसने 35 कि० ग्रा० भार के 'रोहिणी' उपग्रह को 28,000 कि० मी० प्रति घंटे के हिसाब से पृथ्वी की कक्षा में स्थापित किया। इस सारी प्रक्रिया में ठोस प्रोदक ईंधन का प्रयोग किया गया। इस समय पृथ्वी की अण्डाकार कक्षा में रोहिणी उपग्रह की कम से कम दूरी 285 कि० मी० तथा अधिकतम दूरी 600 कि० मी० थी। राकेट सात मंजिले ऊँचे भवन के लगभग ऊंचा था। यह उपग्रह पृथ्वी की परिक्रमा 90 मिनट में कर रहा है।

इस राकेट (SLV-3) को त्रिवेन्द्रम तथा उपग्रह (रोहिणी) को बंगलौर में बनाया गया। जहाँ 85% कलपुर्जे तथा ठोस ईंधन भारत में ही बनाए गए

वहां केवल 15% कलपुर्जों का आयात U.S.P.W.Ounts किया गया । इसकी तकनीकी जानकारी पूर्ण रूप से भारतीय वैज्ञानिकों की थी । इस महती उपलब्धि के लिए 'इण्डियन स्पेस रिसर्च आर्गनाइजेशन' श्री हरिकोटा, 'विक्रम साराभाई स्पेस सेन्टर' त्रिवेन्द्रम, 'एपलिकेशन सेंटर' अहमदाबाद तथा दूसरे उपग्रह केन्द्र बंगलौर के 800 से भी अधिक वैज्ञानिक सारे राष्ट्र की प्रशंसा तथा बधाई के पात्र हैं ।

इस महती सफलता पर अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन के अध्यक्ष प्रो० सतीश धवन ने कहा कि 'भारत ने राकेट प्रक्षेपण तकनीकी में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है ।'

बनावट

रोहिणी उपग्रह किसी भी देश द्वारा प्रथम प्रयास में छोड़े गए उपग्रहों में सबसे छोटा है । पंचाग में 27 नक्षत्रों में चौथे नक्षत्र के नाम पर स्वर्गीय श्री विक्रम साराभाई द्वारा इस उपग्रह नाम 'रोहिणी' आज से 10 वर्ष पहले ही चुना गया था ।

वस्तुत: एस-एल वी-3 की सफल उड़ान ने भारत को 'अन्तरिक्ष तकनीकी, के अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लाकर खड़ा कर दिया है । इस प्रकार भारत ने राकेट की उड़ान नियन्त्रण, मार्ग-दर्शन, संचार अनुरेखन, टेलीमोटरी तथा टेलीकमांड में दक्षता प्राप्त कर ली है ।

लाभ

इसका मुख्य उद्देश्य सारे देश में राष्ट्रीय कार्यक्रम को एक साथ दूरदर्शन पर दिखाना और भारत के ग्रामीणों को उन्हीं की भाषा और उन्हीं के वातावरण में शिक्षित करना है। इसके साथ ही इस उपग्रह से दुर्लभ प्राकृतिक साधनों का पता चलेगा । दूर संचार में सहायता मिलेगी, देश में साक्षरता अभियान द्रुतगति से बढ़ाया जाएगा । साथ ही रेडियो प्रसारण, खनिजों की खोज, मौसम विज्ञान, भूमि अध्ययन, भूमि के उपयोग का अध्ययन, समुद्री दूरसंचार, वन साधनों का मूल्यांकन, फसलों का पूर्वानुमान तथा रक्षा के क्षेत्र में विशेष रूप से लाभ उठाया जा सकेगा ।

इसी प्रकार 'इन्सेट-1' उपग्रह भी भारत की महती उपलब्धि है । इसकी

सहायता से दूरदर्शन कार्यक्रमों के प्रसारण में और भी सुविधाएँ हो जायेंगी। यह बहुद्देशीय उपग्रह दूरभाष, दूरदर्शन और आकाशवाणी तीनों को सहायता पहुँचायेगा । इसकी सहायता से भारत के चार लाख गाँवों को दूरदर्शन के कार्यक्रम देखने सुनने को मिलेंगे ।

उपसंहार

हमारा देश भारत इस उपग्रह उड़ान का उपयोग, परमाणु शक्ति का शान्तिपूर्ण उपयोग, रचनात्मक कार्यों के लिए ही करेगा; जिससे देश भविष्य में विकसित राष्ट्रों में खड़ा हो सकेगा। आज अमेरिका और रूस जैसे राष्ट्र अन्तरिक्ष विज्ञान में बहुत आगे बढ़ चुके हैं । इन परिस्थितियों में भारत का भी इस क्षेत्र में किया गया प्रयास आवश्यक है । साथ ही पाकिस्तान तथा चीन ने हमारे लिए जो खतरा खड़ा कर रखा है, उसकी वास्तविकता को भी हम इस से जान सकेंगे ।

---o---

राशन की दुकान पर मेरा अनुभव

प्रस्तावना

'राशन' व्यवस्था सामान्य जनता के लिए वरदान है। राशन के द्वारा लोगों को खाद्य वस्तुओं गेहूं, चावल, चीनी तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं का निश्चित रूप से नियमित वितरण होता है। राशन-व्यवस्था सरकार द्वारा तब लागू होती है, जब उन वस्तुओं का बाजार में अभाव होता है अथवा ऊँचे दामों पर बिक रही होती है । खुले बाजार में मँहगे सामान खरीदने वालों की कमी नहीं है, पर ये वे ही लोग होते हैं, जिनके पास वैसी क्षमता होती है । सर्व-साधारण के लिए मँहगी वस्तुएँ खरीदना सम्भव नहीं है । अगर उन्हें राशन पर आवश्यक वस्तुएँ न मिलें, तो उनकी अर्थव्यवस्था का ढाँचा ही बिखर जाएगा ।

प्रयोजन

सरकार सर्वसाधारण को उचित दामों पर वस्तुएँ सुलभ कराने के लिए 'राशन' की व्यवस्था करती है । इसमें जनता कालाबाजारियों का शिकार बनने से बच जाती है । इसी कारण सरकार ने राशन की दुकानें निर्धारित की हैं ।

इस योजना के अन्तर्गत लोगों के राशन कार्ड बनाए जाते हैं, ताकि लोग सुविधा-पूर्वक अपना राशन का कोटा ले सकें। प्रत्येक राशन कार्डधारी को अनाज, मिट्टी का तेल, कोयला, सस्ता कपड़ा, सीमेंट के लिए अलग-अलग राशन की दुकानें नियत की जाती हैं। जिसमें लोग अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ उचित मात्रा में उन दुकानों से ले सके।

पर, राशन की दुकान से राशन प्राप्त करना भी टेढ़ी खीर है। राशन की दुकान पर जाना महाभारत के युद्ध में जाने के समान है। उन पर राशन वाले की धौंस भी सहनी पड़ती है। राशन से पैसों की बचत तो होती है, पर समय की हानि भी बहुत होती है।

एक अनुभव

राशन की प्रत्येक दुकान पर ग्राहकों का मेला लगा रहता है। घंटों तक पंक्ति में खड़ा रहना पड़ता है। ऐसा ही कटु अनुभव एक बार मुझे हुआ। उस दिन घर पर कोई और न था, इसलिए माताजी ने मुझे ही राशन लेने के लिए भेज दिया। जब मैं दुकान पहुँचा तो पाया कि दुकान तो बन्द थी; लेकिन लोगों ने अपने सामान डिब्बे वगैरह पंक्ति में पहले ही रखे हुए थे। कुछ लोग वहाँ प्रातः से ही खड़े हुए थे। जिन्हें कार्यालयों में जाने की जल्दी थी, वे दुकान-दार को कोस रहे थे। मैंने भी सामान को पंक्ति में लगा दिया और इधर-उधर घूमने लगा। जब वापस लौटकर अपनी जगह पर आया, तो मेरे डिब्बों का कहीं अता-पता न था। देखा तो पंक्ति के अन्त में डिब्बे पड़े हुए थे। मैं अपने डिब्बों को आगे लाया तो लोग मुझसे लड़ने लगे। उन्होंने मुझ पर पंक्ति तोड़ने का आरोप लगाया, किन्तु कुछ सज्जनों की गवाही से मैं पंक्ति में अपना पूर्व स्थान पा गया। साढ़े नौ के करीब दुकानदार महोदय बड़ी शान के साथ तशरीफ लाए। उन्होंने जैसे ही दुकान का ताला खोला, पंक्ति में खड़े लोगों में हलचल आरम्भ हो गई। दुकानदार लोगों की इस चेष्टा से अकड़ गया और उसने राशन वितरण न करने की धमकी दे दी, तब जाकर लोग शांत हुए।

कोलाहल

जैसेतैसे उसने राशन देना शुरू किया। तभी कुछ उसके परिचित लोग भी आ गए, उसने उमकी पर्ची पहले काट दी। इससे पंक्ति में खड़े ग्राहकों में हँगामा

मच गया । पंक्ति बिखर गई और मार-धाड़, गाली-गलौच शुरू हो गई । प्रत्येक व्यक्ति पहले राशन लेने की कोशिश करने लगा । सभी को किसी न किसी कारण जल्दी थी । ऐसे में दादाओं की बन आई । उन्होंने पहले राशन प्राप्त कर लिया । बड़ी कठिनाई से राम-राम करके मेरी बारी आई । मैंने उसे बीस किलो गेहूं देने को कहा, तो उसने पच्चीस किलो लिख दिया, चीनी चार किलो के स्थान पर तीन ही किलो दी । कारण पूछने पर दुकानदार राशन न देने के लिए अकड़ने लगा । मुझे राशन तो लेना ही था, अतः मैं चुप हो गया । इस तरह कई विपत्तियों का सामना करने के बाद मैं अपने लक्ष्य में सफल हुआ ।

उपसंहार

राशन की दुकान से राशन लेना कोई खेल नहीं, कई बार चार चक्कर लगाने पर भी राशन नहीं मिलता है । जब भी जाओ, निराश वापस लौटना पड़ता है । कई बार दुकानदार अच्छे गेहूं को कालाबाजार में बेच देता है और कार्डधारियों को कूड़े वाले गेहूं देता है । दुकानदार और अधिकारियों में मिली-भगत रहती है । अधिकारी जनता की शिकायतों के प्रति अनभिज्ञ से बने रहते हैं । इससे जनता अपनी सुविधा का साधन होने पर भी राशन की दुकानों से दुखी रहती है । सरकार के संबद्ध अधिकारियों को इस ओर अवश्य ही ध्यान देना चाहिए ।

—o—

शिक्षा और परीक्षा

प्रस्तावना

परीक्षा का विचार ही विद्यार्थियों की आँखों से नींद उड़ा देता है । जिस दिन बच्चा विद्यालय में प्रवेश करता है, उसी दिन से वह परीक्षा रूपी पिशाचिनी से भयभीत रहने लगता है । अविभावक अपने बच्चे की शैक्षिक योग्यता को उसके ज्ञान से जानने की कोशिश नहीं करते हैं, बल्कि बच्चों द्वारा परीक्षा में प्राप्तांक से करते हैं । वे सोचते हैं कि इस तंत्र से ही उन्हें अच्छी आजीविका प्राप्त होगी । यह सही है कि छात्रों की योग्यता और अध्ययन की जांच के लिए

परीक्षा अनिवार्य है। परीक्षा का डर ही विद्यार्थियों को परिश्रम करने के लिए उत्साहित करता है। परीक्षा द्वारा ही विद्यार्थियों की योग्यता की जाँच कर उन्हें उच्च कक्षाओं में चढ़ाया जाता है। विश्वविद्यालयों में प्रवेश मिलता है और आजीविका के लिए इच्छित कार्यालयों में स्थान प्राप्त होता है।

परीक्षा पद्धति के गुण-दोष

शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है। शिक्षा का उद्देश्य यह है कि बालक (विद्यार्थी) वर्ष के प्रारम्भ से ही अध्ययन में रत हो जाए तथा पढ़ाई के साथ-साथ सांस्कृतिक कार्यक्रमों तथा खेलों आदि में भी रुचि लें, लेकिन आज की शिक्षा-पद्धति में परीक्षा के दिनों में तथा उससे पहले विद्यार्थी इन सब कार्यों में रुचि लेना बन्द कर देते हैं, क्योंकि परीक्षा से पहले वे मौज-मस्ती में ही अपना समय नष्ट कर देते हैं। अतः जब परीक्षा आती है तब वे रात-रात भर जागकर पढ़ाई करते हैं। इस तरह परीक्षाएँ विद्यार्थियों के लिए केवल चिन्ता ही सिद्ध होती है। इस प्रकार वे पूर्णतः समझ नहीं पाते, जिससे वह उन्हें स्मरण भी नहीं रहता।

आजकल विद्यार्थियों की अतिरिक्त योग्यता के अंक नहीं आँके जाते। वर्ष में दो बार होने वाली परीक्षाओं में कुल अंकों में से निश्चित अंक प्राप्त करने वाले को उत्तीर्ण घोषित कर दिया जाता है। इस परीक्षा-पद्धति ने नकल को बहुत बढ़ावा दिया है। विद्यार्थी परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए अनुचित तरीकों का प्रयोग करते हैं। परीक्षा का उद्देश्य है, उद्यमी को उसके परिश्रम का फल देना और आलसी और पढ़ाई से जी चुराने वाले को दण्ड देना, किन्तु आज ऐसा नहीं है। आलसी और कमजोर विद्यार्थी कुंजियों और गाइडों में से कुछ निश्चित प्रश्नों के उत्तर रटकर उत्तीर्ण हो जाते हैं। नकल करने के भी उन्होंने नए-नए साधन खोज निकाले हैं।

कई स्थानों पर वार्षिक परीक्षा में विद्यार्थी के गृहकार्य और उपस्थिति के अंक भी जोड़े जाते हैं। यह ठीक है कि अंकों के प्रलोभन से विद्यार्थी नियमित रूप से विद्यालय में उपस्थित रहता है, किन्तु कई विद्यार्थी परीक्षाओं के लिए तैयारी नहीं करते हैं और उपस्थिति तथा गृहकार्यों के अंकों के अधिक होने से उत्तीर्ण हो जाते हैं। परीक्षा में विद्यार्थी को पढ़ाए गए प्रत्येक पाठ में से नहीं

पूछा जाता है। प्रश्न-पत्र बनाते समय उसे बनाने वाले पूरी पुस्तकें नहीं पढ़ते पढ़ते हैं। वे कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न ही पूछते हैं। इससे विद्यार्थी की वास्तविक योग्यता का पता नहीं चलता है। प्रत्येक शिक्षक या शिक्षिका का प्रश्न-पत्रों को जाँचने का ढंग अलग-अलग होता है। प्रत्येक की रुचि भी अलग-अलग होती है। कई शिक्षक व शिक्षिकाएँ पूरा उत्तर भी नहीं पढ़ते हैं। सिर्फ एक-दो पंक्तियाँ पढ़कर अंक दे देते हैं। इससे यह पता नहीं चलता है कि विद्यार्थी ने लिखा क्या है? कई विद्यार्थी परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने पर आत्महत्या भी कर लेते हैं। कई परीक्षा के दिनों में बीमार पड़ जाते हैं। ये भी इसके दोष ही हैं।

उपसंहार

इस तरह की परीक्षाएँ विद्यार्थियों की शैक्षिक योग्यता का वास्तविक प्रमाण नहीं हैं। पुराने समय में भी परीक्षाएँ होती थीं, किन्तु वे मौखिक होती थीं। आजकल भी परीक्षाएँ लिखित के साथ ही मौखिक भी होनी चाहिएँ और समय समय पर होनी चाहिएँ। इससे ही विद्यार्थी के वास्तविक ज्ञान का पता चलेगा। केवल लिखित परीक्षा से विद्यार्थी रट्टू-तोता बनकर रह जाता है। इसलिए परीक्षाएँ केवल लिखित रूप में ही नहीं होनी चाहिएँ। लिखित रूप में ही परीक्षाएँ तभी ठीक हैं, जब उनकी प्रणाली में सुधार हो। दफ्तरी क्लर्क या टाईपिस्ट बनने के लिए तो इनकी उपयोगिता हो सकती है, पर विभिन्न प्रकार के विज्ञान और शिल्पों के लिए तो छात्रों में उस विषय का गम्भीर और व्यावहारिक ज्ञान का होना अत्यावश्यक है। यदि शिक्षा से विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास हो, तभी शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य पूर्ण होगा। अतः उसके लिए परीक्षा-पद्धति में परिवर्तन करना आवश्यक है। देश के शिक्षाविदों को इस ओर अवश्य ही ध्यान देना चाहिए।

—o—

सह शिक्षा

प्रस्तावना

आज वह युग बीत चुका है, जब स्त्री-शिक्षा के नाम पर कुछ लोग नाक-भौं सिकोड़ते थे और 'स्त्री शूद्रौ नाधीयाताम्' कहते थे। अब तो देश के विकास

में स्त्रियों को भी समान अधिकार प्राप्त हुए हैं और वे शिक्षा में भी निरन्तर आगे बढ़ रही हैं। नगरों और कस्बों में ही नहीं, गाँवों में भी कन्या पाठशालाएँ खुल गई हैं। जहाँ बालिकाएँ शिक्षा ले रही हैं। इतना होने पर भी एक प्रश्न आज भी सबके सामने है कि क्या बालक-बालिकाओं को सह शिक्षा दी जाये या नहीं ? क्या उन्हें एक ही विद्यालय में साथ-साथ विद्याध्ययन का अवसर मिलना चाहिए ? इस विषय पर भारतीयों के विचार अलग-अलग तथा अति उग्र हैं।

सह शिक्षा का आशय

छात्र-छात्राओं का एक ही विद्यालय में, एक ही श्रेणी में, एक ही शिक्षक के निर्देशन में एक साथ शिक्षा प्राप्त करने को सह-शिक्षा कहते हैं। यूरोपीय देशों में बहुत समय से सह-शिक्षा एक सामान्य बात हो गई है, किन्तु भारत में आज भी—जब कि कई स्थानों पर सह-शिक्षा है—इसके लाभ-हानियों के सम्बन्ध में विभिन्न विचारकों में तीव्र मतभेद हैं।

समर्थकों के विचार

सह-शिक्षा के समर्थकों का कहना है कि आज कन्याओं में शिक्षा के प्रति अत्यधिक रुचि जागृत हो गई है और वे सभी प्रकार के ज्ञान-विज्ञान, शिल्प, कला-कौशल की शिक्षा ले रही हैं। अतः छात्र-छात्राओं के लिए शिक्षा का पृथक्-पृथक् प्रबन्ध करना भारत जैसे निर्धन देश के लिए सम्भव नहीं, क्योंकि इससे शिक्षा का व्यय बहुत बढ़ जायेगा।

उनका दूसरा तर्क है कि अभी छात्राओं को अलग शिक्षा देने के लिए पर्याप्त मात्रा में योग्य और प्रशिक्षित अध्यापिकाएं भी नहीं हैं। साथ ही धन की कमी के कारण देश में स्कूलों और कॉलेजों की संख्या पहले ही कम है, यदि उनमें से कुछ केवल छात्राओं के लिए ही सुरक्षित कर दिए जायेंगे तो अनेक छात्र—जिनके ऊपर परिवार का सबसे अधिक भार पड़ता है—उच्च शिक्षा से वंचित रह जायेंगे !

फिर, यह सभी जानते हैं कि पुरुष और नारी का परस्पर आकर्षण प्राकृतिक है। जब वे एक-दूसरे से दूर रहते हैं तो मिलन की उत्कण्ठा उनमें तीव्र होती है, कई बार तो संयम का बाँध टूट जाता है, क्योंकि वे एक-दूसरे को

रहस्य मानते हुए उस रहस्य के आवरण को भेदने के लिए उत्सुक रहते हैं। अतः यदि सह-शिक्षा होगी तो उनका यह पारस्परिक कौतूहल कम होगा, उनमें संयम की मात्रा भी बढ़ेगी और छात्रों से दूर रहने के कारण छात्राओं में जो भय और शंका का वातावरण रहता है, वह दूर होगा। उनमें निर्भयता और साहस का संचार होगा। प्रसिद्ध मनोविज्ञान वेत्ता फ्रायड का भी कथन है कि बालक-बालिकाओं के लिए सह-शिक्षा वरदान स्वरूप है। साथ रहकर उन्हें अपनी भावनाओं का दमन या विरोध करने की आवश्यकता नहीं रहती। सह-शिक्षा से दोनों के व्यक्तित्व का विकास अधिक होता है। इसी प्रकार युवकों में भी कन्याओं से दूर रहने के कारण उनके प्रति जो अनादर या उच्छृंखला का भाव रहता है, वह भी आदर, विनम्रता और शिष्टाचार में बदल जायेगा और यही बाद में उनका स्वभाव भी बन जायेगा।

इसके साथ ही जब छात्र-छात्राएँ एक ही साथ पढ़ेगे तो उन एक-दूसरे से आगे बढ़ने की प्रतिस्पर्धा जायेगी जो कि छात्रों के लिए लाभकार ही रहेंगी।

विरोधियों के विचार

सह-शिक्षा के समर्थकों के इस तर्क का -- कि इससे शिक्षा पर व्यर्थ का व्ययभार बढ़ेगा -- उत्तर देते हुए उसके विरोधियों का कहना है कि आज समाज के (कन्याओं में उनके अभिभावकों में) पढ़ाई की ओर इतनी रुचि है कि अब विद्यालयों में छात्राओं की कोई कमी नहीं रहेंगी। अतः उनके लिए पृथक् विद्यालयों के निर्माण से धन का अपव्यय कदापि नहीं होगा।

यह जो तर्क है कि एक साथ पढ़ने से उसमें उत्कंठा की भावना कम होगी, यह गलत है। पश्चिमी देशों ने अपने यहाँ सह-शिक्षा का प्रयोग करके देख लिया है और उनकी प्रतिक्रिया उसके पक्ष में नहीं है। छात्रों के साथ पढ़ते हुए छात्राओं में निर्भयता तो हो सकती है, किन्तु पारस्परिक आकर्षण में कोई कमी सम्भव नहीं। कारण, आज रेडियो ने, टेलीविजन ने, सिनेमा ने और स्वतन्त्रता तथा समानाधिकार की भावना ने, विभिन्न प्रकार की उत्तेजक वेश-भूषा तथा शृंगार ने जो वातावरण बनाया है, उसमें पारस्परिक आकर्षण को बढ़ावा ही मिल रहा है, उसमें कमी नहीं हो रही। हो भी क्यों नहीं? नव-यौवन में ऐसा आकर्षण हो ही जाता है। कवि बिहारी ने कहा है---

इक भीगे चहलें पड़ें, बूढ़े बहें हजार।
किते न औगुन जग करै, वै नै चढ़ती बार॥

आज यह प्रत्यक्ष दीख भी रहा है। छात्र-छात्राएँ श्रेणियों में इतने नहीं दीखते, जितने चाय व कॉफी घरों में। श्रेणी में उपस्थिति देकर अपने तरुण मित्र या तरुणी मित्र के साथ सिनेमा चले जाना फैशन-सा बन गया है। इस प्रकार वे पतन के मार्ग पर अग्रसर हो रहे हैं। परीक्षा-परिणाम में अवनति और उच्च श्रेणी में कम विद्यार्थियों के उत्तीर्ण होने में, अन्य कारणों में, एक कारण सह-शिक्षा जनित छात्र-छात्राओं का पारस्परिक आकर्षण भी है।

इसके साथ एक बात और भी है, नारी और पुरुष की प्रकृति और शारीरिक विकास की दशा भिन्न-भिन्न है। शिक्षा-क्रम में कुछ विषय ऐसे हैं, जो पुरुषों के लिए अधिक उपयोगी हैं और कुछ नारियों के लिए ही। जैसे—सेना, व्यापार, उद्योग, भारी यांत्रिक विज्ञान आदि क्षेत्र पुरुषों के लिए अधिक उपयुक्त हैं, तो चिकित्सा, परिचर्या, संगीत, चित्र-कला और गृह-विज्ञान नारी की प्रकृति के अधिक अनुकूल हैं। छात्र-छात्राएँ इन विषयों का पृथक्-पृथक् अध्ययन करके ही समाज रूपी गाड़ी को चलाने में एक-दूसरे के सहायक बन सकते हैं।

उपसंहार

इस प्रकार दोनों पक्षों के विचारों में कुछ सत्यता और कुछ असत्यता अवश्य है। हमारे मत में—यदि छात्र-छात्राओं के लिए पृथक् विद्यालयों की स्थापना सम्भव न हो तो—दस, ग्यारह वर्ष तक की अवस्था तक, प्राथमिक श्रेणियों तक सह-शिक्षा ठीक है। इसके पश्चात् बारह से बीस वर्ष तक की शिक्षा निश्चित ही छात्र-छात्राओं को अलग दी जानी चाहिए, क्योंकि इस अवस्था में उनमें भावुकता और विवेकहीनता अधिक होती है। बीस वर्ष के अनन्तर परिपक्व विचारों की अवस्था में तथा विभिन्न विषयों के विद्यालयों के अलग न होने की दशा में सह-शिक्षा में कोई दोष नहीं। सह-शिक्षा बुरी ही है; ऐसी धारणा रखकर किसी विशेष विषय की शिक्षा से विद्यार्थी को वंचित रखना ठीक नहीं। इससे व्यक्ति और समाज दोनों का अहित होता है।

—o—

अध्ययन का आनन्द

प्रस्तावना

मनुष्य सुखाभिलाषी प्राणी है। सुख या आनन्द प्राप्ति के लिए ही उनकी सम्पूर्ण चेष्टाएँ और कर्म होते हैं। यद्यपि इस कार्य में कुछ परिश्रम और कष्ट तो करना ही पड़ता है, तो भी परिणति उसकी आनन्द में ही होती है। मनुष्य धन कमाता है, उसके ऐश्वर्य और विलास की अनेक वस्तुएँ खरीदता है, किस लिए ? आनन्द पाने के लिए ही न ?

आनन्द के साधन

सुख या आनन्द प्राप्ति के अनेक साधन हैं। किसी को खेलों में ही सुख मिलता है। किसी को अच्छे भोजन में ही सुख मिलता है। कोई सुरापान में ही आनन्द देखता है। किसी को मित्रों के साथ संलाप में ही आनन्द मिलता है। किसी सात्विक विचारों के व्यक्ति को भागवद् भक्ति और सत्संग में आनन्द की प्राप्ति होती है तो किसी साधु-संत को संसार से विरक्त हो ईश्वर के चिन्तन और योगाराधन में ही आनन्द की उपलब्धि होती है।

आनन्द-प्राप्ति के अन्य भी अनेक साधन हैं और हो सकते हैं। उन्हीं में एक प्रमुख साधन है—सद्ग्रन्थों का अध्ययन करना। अध्ययन से भी असीम सुख मिलता है। एक नीति-श्लोक में कहा गया है—

काव्य-शास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम्।
व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा।।

अर्थात् जहाँ मूर्खो को अनेक प्रकार के दुर्व्यसनों में, नींद में और कलह में ही सुख मिलता है, उसी में वे अपना समय नष्ट करते हैं, वहीं बुद्धिमानों का समय काव्य और शास्त्रों के अध्ययन से, उनसे मनोविनोद करते हुए बीतता है।

विद्वानों और मनीषियों का कथन है कि सत्संगति से व्यक्ति को आनन्द मिलता है। भर्तृहरि ने एक नीति-श्लोक में कहा कि सत्संगति बुद्धि की जड़ता को दूर करती है, सत्य बोलना सिखाती है, सम्मान बढ़ाती है, पाप दूर कराती है, मन को प्रसन्न करती है और चारों ओर यश को फैलाती है। सज्जनों, साधु पुरुषों और सन्त महात्माओं की संगति तो सत्संगति है ही; पर यदि उनकी

संगति प्राप्त न हो तो सद्ग्रन्थों की संगति—सद्ग्रन्थों का अध्ययन भी एक प्रकार की सत्संगति ही है।

अध्ययन से आनन्द लाभ भी

श्रेष्ठ पुस्तकों के अध्ययन अर्थात् वेदादि सत् शास्त्रों, रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थों तथा साहित्य, काव्य-ग्रन्थों के अध्ययन से आनन्द भी मिलता है और शिक्षा भी मिलती है।

साहित्यकारों ने साहित्य के उद्देश्य को बताते हुए कहा है कि "साहित्य के अध्ययन से अनिर्वचनीय सुख की प्राप्ति होती है तथा कान्ता सम्मित उपदेश भी मिलती है।" एक पाश्चात्य विद्वान् का कथन है कि—"पुस्तकें अवकाश के लिए मनोरंजन का अत्युत्तम साधन हैं। रोचक पुस्तकों के अध्ययन से मनुष्य जीवन की सारी चिन्ताओं से मुक्त हो जाता है।"

जब निराशा में, संकट में कोई भी मित्र, बन्धु या आत्मीयजन धैर्य नहीं दे सकता, उस समय धैर्य देने वाला, उत्साह बढ़ाने वाला; चिन्ता मुक्त करके आनन्द बढ़ाने वाला साथी उत्तम साहित्य का अध्ययन ही है। आपका मन विचलित है, रामचरित-मानस में डुबकी लगाइए। मन में अपार शान्ति छा जायेगी। आँखों के आगे का समस्त अन्धकार दूर हो जायेगा और अलौकिक आनन्द से रोम-रोम पुलकित हो जायेगा। 'अध्ययन' में रुचि के कारण अनेक महापुरुष व्यक्ति के प्रेरणादायक बन जाते हैं। श्रीराम, श्रीकृष्ण, गौतम बुद्ध, वर्धमान महावीर जैसे अवतारी पुरुष आशीर्वाद देते हैं। 'अध्ययन' में ही रुचि होने से वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, सूरदास, तुलसीदास, रवीन्द्रनाथ, शरच्चन्द्र, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद और निराला जैसे साहित्यकारों से मित्रता हो जाती है। वे हमारे सुख-दुख के सच्चे साथी बन जाते हैं। साथ ही एक असीम आनन्द भी इनका साहित्य देता है। अध्ययनशील व्यक्ति ज्यों-ज्यों इनके साहित्य-सागर में गोते लगाता है, त्यों-त्यों उसके हाथ में आनन्द के मोती आते-जाते हैं। गहरे पैठने से ही तो मोती मिलते हैं। कबीर ने कहा भी है—

'जिन ढूँढा तिन पाइयां गहरे पानी पैठ।'

रस साहित्य की आत्मा है। रस आनन्द का ही पर्यायवाची है। जब-जब हम किसी पुस्तक को पढ़ते हैं तो आनन्द प्राप्ति के लिए ही उसे पढ़ते हैं। उसमें

कोई भी रस (श्रृंगार आदि) या कोई भी भाव हो, वह चित्त को आनन्द मग्न कर देता है।

उपसंहार

अतः यदि सच्चा और सात्विक आनन्द लेना है, तो सत् साहित्य का अध्ययन करो। ध्यान रहे, घासलेटी या अश्लील पुस्तकें भी आनन्द देती हैं; पर वह आनन्द इन्द्रियों को उत्तेजित और मन को अस्वस्थ करने वाला ही होता है। जैसे चटपटी चाट खाने में तो अच्छी लगती है, पर खाने वाले को अस्वस्थ कर देती है, ऐसे ही अश्लील पुस्तकें मन को बीमार कर देती हैं। जीवन में साथी, मित्र, बन्धु यदि नहीं हों तो सत्-साहित्य का स्वाद लो, जीवन आनन्द से भर जायेगा और उसका श्रेष्ठ विकास भी होगा। अंग्रेजी में भी एक उक्ति है—

"Good books are the best friend"

—o—

देशाटन

प्रस्तावना

मनुष्य जन्म से जिज्ञासु है। वह प्रतिक्षण नई-नई बातें जानना चाहता है। नई-नई बातें जानने के लिए और अनजाने को खोज निकालने के लिए मनुष्य देश-विदेश के विभिन्न स्थानों की यात्रा करता है, इसे ही देशाटन कहते हैं। देशाटन में मूल बात है—देश-विदेश को देखना, उसे जानना और उसकी संस्कृति, सभ्यता को पहचानना। भारत में अति प्राचीन काल से तीर्थ-यात्रा का बहुत महत्त्व रहा है, इसके मूल में भी पर्यटन की भावना निहित है, अन्तर इतना है कि तीर्थ-यात्रा में धार्मिक भावना प्रधान होती है, परन्तु देशाटन में देश विदेश ही मुख्य होता है।

देशाटन की आवश्यकता

जीवन में सफलता के लिए आवश्यक है कि मनुष्य अन्य स्थानों में रहने वाले लोगों के जीवन का अध्ययन करे, उनके रहन-सहन को जाने। यह सब हम एक स्थान पर पड़े-पड़े नहीं जान सकते। इसके लिए एक स्थान से दूसरे

स्थान पर जाना आवश्यक है। फिर, किसी एक ही स्थान पर रहते हुए मनुष्य का मन खिन्न हो जाता है। अतः मनोविनोद के लिए भी देशाटन अनिवार्य है। देशाटन में व्यक्ति नए-नए नगरों को, नए-नए देशों और नए-नए स्थानों को, नए-नए पर्वतों, नदियों, जीव-जन्तुओं को देखता है। उन स्थानों के रीति-रिवाजों, खान-पान, वेश-भूषा और बोलियों से परिचित होता है। इससे उसके मन की संकीर्णता दूर हो जाती है, उसमें विशालता आती है तथा उसका दृष्टिकोण व्यापक बनता है। देशाटन से मनुष्य के मन में सहयोग और सहानुभूति के गुण पनपते हैं, मस्तिष्क चिन्तनशील बनता है और ज्ञान का निरन्तर विकास होता है। देशाटन मनुष्य को क्रियाशील तथा स्वावलम्बी बनाता है। उसे नवीन वातावरण मिलता है, जिससे उसका मानस-सुमन सदा खिला रहता है।

देशाटन का उद्देश्य

देशाटन के कई उद्देश्य हैं। कुछ लोग देश-विदेश की सामाजिक और आर्थिक स्थिति का अध्ययन करने के लिए पर्यटन करते हैं तो कुछ लोग विश्व की राजनीतिक परिस्थितियों का अध्ययन करने के लिए ही देशाटन करते हैं। कुछ अन्य देशों की ऐतिहासिक एवं भौगोलिक स्थिति जानने के लिए नये-नये देशों की सैर करते हैं। कुछ केवल प्रकृति के उपासक होते हैं और मन की प्यास बुझाने के लिए तथा मनोरंजन के लिए ही नए-नए स्थानों को जाते हैं। धार्मिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए भी लोग देशाटन करते हैं।

देशाटन के लाभ

देशाटन से मनुष्य को अनगिनत लाभ होते हैं। वह सदा नवीनता के बीच रहता है। इससे जीवन को एक प्रवाह मिलता है। खिन्नता और आलस्य उससे घबराते हैं। वह जहाँ जाता है वहाँ की संस्कृति, रीति-नीति, परम्परा, प्रगति आदि का ज्ञान तथा आनन्द-लाभ भी प्राप्त करता है।

देशाटन ज्ञान-प्राप्ति का अत्युत्तम साधन है। यदि प्राचीन भारत के कवि भास, कालिदास, भवभूति, बाणभट्ट आदि कवियों ने भ्रमण न किया होता तो उनकी रचनाओं में इतनी मौलिकता और स्वाभाविकता नहीं मिलती। इन सबकी रचनाओं पर देशाटन का प्रभाव स्पष्ट दीखता है। कबीरदास, गोस्वामी

तुलसीदास, केशवदास, पंतजी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर तथा अनेक कवियों ने देशाटन (यात्रा) से नित नया ज्ञान अर्जित किया और मौलिक तथा अनूठे साहित्य का सृजन किया। देशाटन की भावना से ही कोलम्बस ने नई दुनिया (अमेरिका) की खोज की तथा विदेशी नाविकों ने भारत के लिए सरल समुद्री मार्ग खोजा। चीनियों ने भारत से ज्ञान प्राप्त किया और अंग्रेज, फ्राँसीसी तथा डच लोगों ने भारत में व्यापारिक केन्द्र खोजे और यहाँ की सभ्यता को भी प्रभावित किया।

शिक्षा के क्षेत्र में भी देशाटन का अत्यधिक महत्त्व है। इसके द्वारा प्राप्त शिक्षा को छात्र कभी भूलता नहीं। इतिहास, भूगोल, भू गर्भ-विज्ञान, नृवंश विज्ञान तथा यांत्रिक विज्ञान के शिक्षण के लिए भी देशाटन अनिवार्य है। अगर किसी स्थान विशेष पर छात्रों को ले जाकर उसका इतिहास और भूगोल समझाया जाये तो उनका ज्ञान ठोस और पूर्ण होगा।

देशाटन शिक्षा के अतिरिक्त व्यवसायी-वर्ग और शासक-वर्ग के लिए भी बड़ा लाभदायक है। व्यवसायी वर्ग देशाटन से इस बात का अध्ययन कर लेता है कि इस स्थान पर किस वस्तु की माँग ज्यादा है। उस वस्तु को वहाँ समय पर उपलब्ध करवाता है और इस प्रकार अपना व्यवसाय बढ़ाता है। शासक-वर्ग द्वारा देशाटन करने से मित्र देशों की संख्या बढ़ती है। विश्व राष्ट्रों की एकता सुदृढ़ होती है। देशाटन मनुष्य को उदारचित बनाता है। इससे भ्रातृत्व की भावना पनपती है तथा व्यक्ति को मानवता का आदर-करना आता है।

उपसंहार

देशाटन मनुष्य को व्यवहारकुशल और स्वावलम्बी बनाता है। उसके विचारों में दृढ़ता आती है। जीवन में संकीर्णता का स्थान नहीं रहता। दृष्टि-कोण विशाल बनता है। भारतवर्ष में हिन्दुओं ने प्रत्येक जीवनोपयोगी बात को धर्म से जोड़ दिया है। इसीलिए हिन्दू-धर्म में तीर्थ-यात्राओं को बहुत महत्त्व दिया गया, जो देशाटन ही है। देशाटन जीवन का प्राण है, जीवन की आत्मा है। अतः अवसर मिलने पर और सामर्थ्य होने पर देशाटन अवश्य करना चाहिए।

—o—

विद्या धन सब धनों में उत्तम है

(विद्ययाऽमृतमश्नुते)

प्रस्तावना

अखिल सृष्टि में मनुष्य ईश्वर की अद्वितीय व श्रेष्ठ रचना है और मनुष्य की महत्ता उसकी विद्वत्ता में है। मनुष्य सुन्दर हो, यौवन सम्पन्न हो, उच्च कुल में उत्पन्न हुआ हो, किन्तु यदि उसके पास विद्या नहीं तो उसकी कोई शोभा नहीं। जैसे पुष्प की शोभा सुगन्ध से होती है, उसी प्रकार मनुष्य की शोभा विद्वान् होने में है। कहा भी है—

रूप यौवन सम्पन्नाः विशालकुल सम्भवाः।
विद्याहीनाः न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः॥

अनेक विद्याएँ

विद्या का अर्थ है—ज्ञान, शिक्षा। जिस साधन द्वारा मनुष्य कुछ जानता है, सीखता है, उसे विद्या कहते हैं। 'वेत्ति अनया इति विद्या।' वस्तु विशेष के गुणावगुणों की पूर्ण जानकारी 'विद्या' से ही प्राप्त होती है। विद्याएँ अनेक हैं। जिसके द्वारा मनुष्य को औषधियों के गुण, दोष व शरीर पर उनके प्रभाव का ज्ञान होता है, उसे आयुर्वेद विद्या कहते हैं। जिससे पृथ्वी, नदी, सागर आदि का ज्ञान होता है, उसे भूगोल विद्या कहते हैं। जिससे विविध नक्षत्रों व तारागणों का और जीवन पर उनके प्रभाव का ज्ञान होता है, उसे नक्षत्र विद्या या ज्योतिष विद्या कहते हैं। धर्म व कर्त्तव्य सम्बन्धी विद्या वेद विद्या हुई। मन को आनन्द देने के साथ ही शिक्षा देने वाली विद्या साहित्य हुई। इसी प्रकार भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान आदि भी शास्त्र या विद्याएँ हैं। ये विद्या के विविध रूप हुए। उक्त सभी विद्याएँ एक ही व्यक्ति नहीं जान सकता; किन्तु जो इन विविध विद्याओं में से किसी एक, दो या चार को भी जानता है, वह विद्वान् कहलाता है।

विद्या के गुण

विद्या के अनेक गुण हैं। पर उसका सर्व प्रमुख गुण है—नम्रता को देना तथा योग्यता विस्तार करना। उसके साथ अन्य गुण क्रमानुसार स्वतः आते हैं। देखिए—

विद्या देती विनय को, विनय पात्रता मित्त ।
पात्रत्वै धन, धन धरम, धरम बढ़ावै सुख नित्त ॥

अर्थात् विद्या से मनुष्य में नम्रता आती है । नम्रता से योग्यता आती है। योग्यता से मनुष्य धन कमाता है। धन से वह धर्म या कर्त्तव्य का आचरण करता है और धर्म के आचरण से सुख की प्राप्ति होती है ।

विद्या का जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य का रूप, धन, यश, सुख एव सम्मान विद्या में निहित है। विद्वान् मनुष्य ही समाज में उच्च स्थान एवं सुख प्राप्त करता है। राजा का मान अपने ही देश में होता है, पर विद्वान् देश-विदेश सर्वत्र पूजा जाता है "स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वान् सर्वत्र पूज्यते ।"

विद्या धन की विशेषता

विद्या ऐसा धन है, जिसे चोर नहीं चुरा सकते, राजा नहीं छीन सकता, भाई नहीं बाँट सकते और जो व्यय करने पर बढ़ता है, घटने का प्रश्न ही नहीं उठता। रुपया-पैसा अन्न आदि तो ऐसे पदार्थ हैं जो खर्चने पर घटते हैं, किन्तु विद्या-धन की यह विशेषता है कि यह खर्च करने पर बढ़ता है । कहा भी है—

सरस्वती के भंडार की, यह अनूपम बात ।
ज्यों-ज्यों खरचै त्यों बढ़ै बिन खरचै घटि जात ॥

विद्या के बल पर ही तो मनुष्य संसार का इतना विकास कर सका है। हमें जो नित्य नये वैज्ञानिक आविष्कार दिखाई दे रहे हैं, अनन्त वैभव दिखाई दे रहा है, उसके मूल में विद्या ही है; पर विद्या बिना कष्ट नहीं मिलती। विद्या प्राप्ति के लिए सुख त्यागने पड़ते हैं, तपस्या करनी पड़ती है। सुख की कामना करके कोई विद्या नहीं पा सकता । कहा भी है—

सुखार्थी चेत् त्यजेत् विद्यां विद्यार्थी चेत् त्यजेत् सुखम् ।
सुखार्थिनः कुतो विद्या विद्यार्थिनः कुतः सुखम् ॥

विद्वान् सर्वत्र यश प्राप्त करता है; सम्मान पाता है, पूजित होता है, इसके विपरीत अविद्वान् को कोई नहीं पूछता। यदि कोई मूर्ख सुन्दर वस्त्र पहनकर भी विद्वानों की सभा में पहुँच जाए तो उसका आदर नहीं होता, क्योंकि उसमें विद्या नहीं । देखिए—

पुस्तकेषु च नाधीतं, नाधीतं गुरु सन्निधौ।
न शोभते सभा मध्ये, हंस मध्ये वको यथा ॥

अर्थात् जिसने पुस्तकों का अध्ययन नहीं किया और न ही गुरु से अध्ययन किया, वह विद्वानों की सभा में उसी प्रकार शोभा नहीं देता है, जैसे कि हंसों के मध्य बगुला शोभा नहीं देता।

उपसंहार

इसलिए मनुष्य को इस अमूल्य विद्या-धन को प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रयत्न करना चाहिए। विद्या गुरुजनों की सेवा से, अत्यधिक धन से या एक विद्या देकर बदले में दूसरी विद्या देने से मिलती है; पर विद्या प्राप्ति के लिए नम्रता व साधना आवश्यक गुण हैं। विद्या कहीं से भी मिलती हो, उसे अवश्य ग्रहण करना चाहिए। एक नीतिकार ने कहा है—

उत्तम विद्या लीजिए, यदपि नीच पै होय।
पर्‌यो अपावन ठौर पै, कंचन तजत न कोय ॥

मनुष्य के पास यदि सद्‌विद्या है तो वह कहीं भी निरादृत नहीं हो सकता और न भूखा ही मर सकता है। अतः हमें मान, प्रतिष्ठा, यश और लक्ष्मी देने वाली विद्या की आराधना में निरन्तर तत्पर रहना चाहिए।

—०—

विद्यार्थियों में नकल करने की दुष्प्रवृत्ति

प्रस्तावना

विद्यार्थी जब विद्याध्ययन करता है तो उसने विद्या को—पढ़े हुए को—कितना हृदयंगम कर लिया है, इसके लिए परीक्षा-पद्धति प्रचलित है। वस्तुतः परीक्षा द्वारा ही छात्र की योग्यता आँकी जाती है। भारत में प्राचीनकाल में यह परीक्षा मौखिक ही होती थी, किन्तु अब सभी देशों में परीक्षा लिखित रूप में ही मुख्यतः ली जाती है।

जीविका के लिए शिक्षा

छात्र विद्याध्ययन पहले भी करते थे और आज भी करते हैं, किन्तु पहले अध्ययन ज्ञानार्जन के लिए मुख्य रूप से तथा जीविका कमाने के लिए गौण रूप

से होता था। आज शिक्षा नौकरी या जीविका कमाने के लिए मुख्य रूप से और ज्ञानार्जन के लिए गौण रूप से ग्रहण की जाती हैं। आज के युग में शिक्षा या उपाधि (डिग्री) केवल नौकरी पाने का साधन रह गई है। अतः विद्यार्थी भी सोचते हैं कि बड़ी-बड़ी और सम्पूर्ण पुस्तकों को पढ़ने से क्या लाभ ? वे कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तरों को रट लेते हैं और यदि संयोग से वे ही परीक्षा में आ गये तो परीक्षार्थी उत्तर पुस्तक में रटे-रटाये उत्तरों को लिखकर आ जाते हैं।

नकल का सहारा

अब तो छात्र कुछ निश्चित और महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तरों को भी याद करने का कष्ट नहीं करते। उनका अधिकांश समय आराम करने में ही बीतता है और परीक्षा आने पर उत्तीर्ण होने के लिए वे खुलकर नकल का सहारा लेते हैं और नकल करने के लिए भी नित्य नये ढग आविष्कार कर लेते हैं।

आज परीक्षार्थी परीक्षा भवन में छोटे-छोटे पर्चों पर उत्तर लिखकर ले जाते हैं, कुंजियों या पुस्तकों की कतरने ले जाते हैं और समय पर उनका उपयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त आस-पास बैठे विद्यार्थियों से पूछ कर या उनकी कापी में से देखकर भी उत्तर लिखते हैं। कुछ तो परीक्षा से पूर्व परीक्षा भवन की दीवारों पर संभावित प्रश्नों के उत्तर लिख लेते हैं। कई छात्र तो शरीर के अंगों पर लिखकर ले जाते हैं। आजकल तो कुछ 'विद्यार्थी दादा' कुंजियों और गाइडों को साथ ले जाते हैं और चाकू, छुरी या पिस्तौल के बल से भी नकल करते हैं, तो कई परीक्षार्थी निरीक्षक को रिश्वत देकर भी नकल करते हैं। कुछ परीक्षार्थियों के मित्र परीक्षा-भवन के बाहर से भी प्रश्नों के उत्तर लिखकर किसी प्रकार अन्दर पहुँचा देते हैं। नकल की यह बुरी आदत ऐसी बन गई है कि यदि उन्हें इससे रोका जाता है तो वे परीक्षा भी छोड़ देते हैं और निरीक्षकों को भी घायल कर देते हैं। पर इन बुरे कार्यों का परिणाम भी बुरा ही होता है। परीक्षार्थी नकल करते हुए पकड़े जाते हैं, जिससे उनका भविष्य बिगड़ जाता है।

आज के विद्यार्थी नकल करके उत्तीर्ण होना अपना अधिकार समझते हैं। वे नहीं जानते कि वे इससे अंधेरे कुएँ में गिर रहे हैं। अब अधिकांश छात्र वर्ष

भर आवारागर्दी करते हैं और परीक्षा के दिनों में नकल के नये-नये ढंग अपनाकर सफल होने की चेष्टा करते हैं। इस प्रकार नकल की यह बीमारी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। उसे रोकने के आवश्यक उपाय नहीं हो रहे। छात्रों में बढ़ती हुई इस दुष्प्रवृति को यदि रोकना है और उनका वास्तविक हित होना है तो उसे निम्न प्रकार रोका जा सकता है।

नकल की प्रवृत्ति कैसे रोकें

छात्रों की बढ़ती हुई इस दुष्प्रवृति को रोकने के लिए उन्हें प्रारम्भिक श्रेणियों से ही नैतिक शिक्षा दी जानी चाहिए, ताकि वे प्रारम्भ से ही सत्य के मार्ग की ओर चलें।

इसके साथ ही नौकरियों का सम्बन्ध उपाधियों (डिग्रियों) से न जोड़ा जाये। योग्यता के आधार पर ही व्यक्ति को सेवा-कार्य में नियुक्त किया जाए। योग्यता द्वारा नियुक्त होने पर नकल से प्राप्त होने वाली उपाधियों का महत्त्व कम हो जाएगा, तब यह बुराई अपने आप दूर हो जाएगी।

एक उपाय यह भी हो सकता है कि छात्रों को उन विषयों के कठिन से कठिन प्रश्न-पत्र बनाकर दे दी जाएँ और उन्हें पुस्तकों से ही उत्तर लिखने की छूट दे दी जाए। छात्र पुस्तकें तो पढ़ते नहीं, फलतः उनसे यह काम भी न हो सकेगा, और तब वे स्वतः नकल करने के इस स्वभाव को छोड़ देंगे।

पुस्तकों का भार कम हो

आधुनिक शिक्षा-पद्धति में विद्यार्थियों पर पुस्तकों का भी बहुत अधिक बोझ लादा गया है। यह भी एक कारण है कि छात्र सभी विषयों पर पूर्णतः ध्यान नहीं दे पाते और परीक्षा के दिनों में बाजार से कुंजियों और गाइडों को लेकर प्रश्नों के उत्तर तैयार करना चाहते हैं। अधिकाँश छात्र इन्हें याद करना कठिन समझते हैं और कुंजियों आदि को ही परीक्षा-भवन मे ले जाकर नकल करते हैं। ऐसा भी देखा गया है कि कई परीक्षार्थी यह भी नहीं जानते कि प्रश्न-पत्र में आए प्रश्न का उत्तर कहाँ होगा और उसका कितना अंश लिखना आवश्यक होगा? यदि छात्रों पर पुस्तकों का और साथ ही विषयों का भी भार कम कर दिया जाएं तो विद्यार्थी अपने लिए निश्चय किए हुए विषयों की अच्छी तैयारी कर लेंगे। तब उन्हें नकल जैसी दुष्प्रवृत्ति का आश्रय नहीं लेना पड़ेगा, क्योंकि उनके

ज्ञान में अध्ययन के कारण पर्याप्त वृद्धि होगी। छात्रों को अध्ययन काल में एक या दो तकनीकी विषयों का प्रशिक्षण भी अवश्य दिया जाये, ताकि वे शिक्षा के पश्चात् अपनी जीविका का साधन उसे बना लें। इस प्रकार वे डिग्रियों पर आश्रित नहीं रहेंगे तो नकल करने की आदत स्वतः छूट जाएगी।

--o—

मित्रता

प्रस्तावना

मित्रता एक पवित्र वस्तु है। संसार में सब कुछ मिल सकता है, परन्तु सच्चा और स्वार्थहीन मित्र मिलना अत्यन्त दुर्लभ है। जिस व्यक्ति को संसार में मित्र-रत्न मिल गया, समझो उसने अपने जीवन में एक बहुत बड़ी निधि पा ली। मनुष्य जब संसार में जीवन-यात्रा प्रारम्भ करता है तो उसे सबसे बड़ी कठिनाई मित्र खोजने में ही होती है। यदि उसका स्वभाव कुछ विचित्र नहीं तो लोगों से उसका परिचय बढ़ता जाता है और कुछ ही दिनों में यह परिचय हीं गहरा होकर मित्रता का रूप ग्रहण कर लेता है।

मित्रता का वास्तविक अर्थ

मित्रता का वास्तविक अर्थ है—'दो मन, एक तन।' जिस अवस्था में आकर दो व्यक्ति अपने-अपने स्वार्थों का त्याग करके दूसरे के लिए अपने को पूर्णतया समर्पित कर देते हैं, उसे ही मित्रता कहते हैं। मनुष्य को ऐसे मित्र कभी नहीं चुनने चाहिएँ, जो उससे अधिक पक्के विचार के हों, क्योंकि ऐसी अवस्था में मनुष्य को उनके विचार मानकर चलना पड़ेगा। साथ ही उन व्यक्तियों की मित्रता तो और भी हानिकारक है, जो प्रत्येक अवस्था में हमारी ही बात को स्वीकार कर चलते हैं। इस अवस्था में मनुष्य को न तो कोई सहारा ही रहता है और न कोई दबाव ही। इसलिए ऐसे व्यक्ति को मित्र चुनना चाहिए जो न हम से दबता हो और न हमको दबाता हो।

सच्चे मित्र के लक्षण

एक सच्चा मित्र इस संसार में हमारा सबसे बड़ा आश्रय होता है।

विपत्ति में हमारी रक्षा करता है, निराशा में उत्साह देता है, जीवन को पवित्र बनाने वाला, दोषों को दूर करने वाला और माता के समान प्यार करने वाला होता है।

भर्तृहरि ने मित्र के गुणों का वर्णन करते हुए कहा है—

पापान्निवारयति योजयते हिताय,
गुह्यं निगूहति गुणान् प्रकटी करोति।
आपद् गतं च न जहाति ददाति काले,
सन्मित्र लक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः ॥

'एक अच्छा मित्र पाप से बचाता है, अच्छे कामों में लगाता है। मित्र के दोषों को छुपाता है, गुणों को प्रकट करता है, विपत्ति के समय उसका साथ देता है और समय आ पड़ने पर उसे सहायता भी देता है।'

इसलिए इस प्रकार का स्वार्थहीन मित्र ही सबसे बड़ा सहायक है। ऐसे व्यक्ति को ही अपने मित्र के रूप में स्वीकार करना चाहिए। जो व्यक्ति मित्र के दुख में दुखी नहीं होते उनके दर्शन में भी महापाप होता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने सन्मित्र के लक्षण बताते हुए लगभग यही बात कही है—

"निज दुख गिरिसम रज करि जाना। मित्र कै दुख रज मेरु समाना॥"

× × ×

कुपथ निवारि सुपंथ चलावा। गुन प्रगटे अवगुनन्हि दुरावा॥
देत लेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई॥
बिपत्तिकाल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा॥

अर्थात् जो व्यक्ति अपने बड़े-बड़े दुखों को भी धूल के समान समझता है और अपने मित्र के साधारण दुख को भी महान् समझता है, वही सच्चा मित्र होता है। जो मित्र हमें बुरे पथ से हटाकर सुपथ पर चलाता है, जिसके मन में लेन-देन के व्यवहार के समय किसी प्रकार की शंका उत्पन्न नहीं होती और अपनी शक्ति के अनुसार हर प्रकार की सहायता को तत्पर रहता है, ऐसा व्यक्ति ही मित्रता का सच्चा अधिकारी होता है।

जो व्यक्ति सामने कुछ और पीठ पीछे और कुछ कहता है, ऐसे व्यक्ति की मित्रता का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिए। 'कपटी मित्र' 'शूल सम' होता

है, उसका चित्त सर्प के समान होता है, सो ऐसे शूल और सर्प को दूर से ही छोड़ देना चाहिए। जिस व्यक्ति में सच्चा आत्मबल हो, जो शुद्ध हृदय वाला हो, परिश्रम-शील और कोमल स्वभाव का हो, वही सच्चे मित्र-पद का अधिकारी होता है। इतिहास में मित्रता का सबसे अच्छा उदाहरण श्रीकृष्ण और सुदामा की मित्रता का है। श्रीकृष्ण द्वारकाधीश होकर भी अपने बाल्य-मित्र सुदामा को नहीं भूले। उसे उन्होंने वैभव सम्पन्न कर दिया, किन्तु इसके विपरीत राजा द्रुपद ने बचपन के मित्र द्रोणाचार्य को पहचानने से भी इन्कार कर दिया।

जितनी शीतलता मित्र शब्द से उत्पन्न होती है, उतनी किसी दूसरे से नहीं, कहा भी है—

"किं चन्दनैः कर्पूरैस्सुहिमैः किं चयैः शीतलैः।
सर्वे ते मित्रगात्रस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥"

अर्थात् चन्दन, कपूर, हिम और अन्य शीतल पदार्थों से क्या लाभ है? क्योंकि यह सब तो मित्र के शरीर की सोलहवीं कला के समान भी शीतल नहीं। 'मित्र' शब्द अमृत के समान है जो आपत्ति और शोक के समय में रक्षा करता है। जो सुख एक बार मित्र के शरीर स्पर्श से होता है, वह अमृत के सागर से प्राप्त नहीं हो सकता।

उपसंहार

अतः जो व्यक्ति संसार में सच्चा सुख चाहता है, संकट के समय के लिए सच्चे सहायक को चाहता है, उसे सावधानी के साथ ही मित्र का चुनाव करना चाहिए। दुष्टों की मित्रता प्रातःकाल की छाया के समान होती है, जो प्रारम्भ में बड़ी और मध्याह्न में छोटी होती जाती है तथा सत्पुरुष की मित्रता दिन के परार्ध की छाया के समान होती है जो पहले थोड़ी और बाद में बढ़ती जाती है। अतः जो व्यक्ति अपनी कल्याण कामना करता है, उसे बहुत खोज के बाद ही अपनी मित्रता का पात्र चुनना चाहिए।

—o—

जैसी संगति बैठिए, तैसोई फल दीन

(सत्संगति)

प्रस्तावना

हिंदी के प्रसिद्ध कवि रहीम का एक नीति का दोहा है—

कदली सीप भुजंग मुख स्वाति एक गुण तीन ॥
जैसी संगति बैठिए तैसोई फल दीन ॥

अर्थात् स्वाति नक्षत्र में बरसती हुई पानी की एक स्वच्छ तथा पवित्र बूंद केले के गर्भ में (गाभे में) पड़ जाय तो मोती बन जाती है, समुद्र की सीपी में पड़ जाए तो मोती बन जाती है और सर्प के मुख में पड़ जाए तो विष बन जाती है। इसी प्रकार मनुष्य श्रेष्ठ लोगों की संगति में रहकर श्रेष्ठ बन जाता है, मध्यम लोगों की संगति में मध्यम बनता है और नीचों की संगति में रहकर नीच बन जाता है। अंग्रेजी में भी एक कहावत है—A man is known by the company he keeps अर्थात् मनुष्य की परीक्षा उसकी संगति से ही की जाती है।

संगति के भेद

संगति दो प्रकार की होती है—भली और बुरी। भली संगति को सत्संगति और बुरी को कुसंगति कहा जाता है। सत्संगति या सुसंगति मनुष्य का उद्धार, विकास और उन्नति करती है जब कि कुसंगति इसके विपरीत संहार, विनाश और पतन करती है। इससे स्पष्ट है कि सत्संगति सदा ग्राह्य तथा कुसंगति त्याज्य है। चन्दन तो अपने काटने वाले कुल्हाड़े पर भी अपनी सुगन्ध ही फैलाता है। अपनी सुगन्ध से आस-पास के वृक्षों को तो चन्दन बना ही देता है; दूर-दूर तक भी अपनी सुगन्ध का प्रसार करता है। फूल अपनी सुगन्ध जड़ सींचने वाले माली को भी देता है, तोड़ने वाले को भी। वह दोनों को अपने सद्गुण से सत्कृत करता है, किन्तु इसके विपरीत साँप अपने दूध पिलाने वाले तथा पालने वाले मदारी को भी समय मिलने पर अपनी दुष्प्रवृति के कारण काट ही लेता है। काँटा बदन चीरने और वस्त्रों को फाड़ने से हिचकता नहीं।

कुछ उदाहरण

महर्षि वाल्मीकि ब्राह्मण कुल में जन्मे थे, किन्तु आरम्भ में भीलों की संगति से डाकू बन गए, बाद में नारद ऋषि के दर्शनों और उपदेशों से उनमें ज्ञान उत्पन्न हुआ और वे तपस्वी; महर्षि, आदिकवि के नाम से प्रसिद्ध हुए। हनुमान् साधारण बानर होकर तथा विभीषण रावण के भाई होते हुए भी राम की सत्संगति से तर गए। आज हनुमान् आदर्श सेवक के रूप में पूजे जाते हैं, तो विभीषण राम के आदर्श भक्तों की पंक्ति में आते हैं। यह राम की सुसंगति का प्रभाव ही तो है। इसके विपरीत रावण की कुसंगति के प्रभाव से लंका नष्ट हुई और समुद्र बाँधा गया। इसी प्रकार गौतम बुद्ध की संगति से क्रूर और हिंसक दस्यु अंगुलिमाल दुष्प्रवृत्ति छोड़कर एक दिन महान् तपस्वी बन गया। अतः संगति का बड़ा प्रभाव होता है।

सन्तों, महात्माओं, एवं मनीषियों की संगति में रहकर मनुष्य तर जाते हैं। समर्थ गुरुदास की संगति शिवाजी के चरित्र-निर्माण में साधक सिद्ध हुई। महर्षि वाल्मीकि के आश्रम की शिक्षा लव-कुश के जीवन के लिए आदर्श बनी। स्वर्गीय पं० मदनमोहन मालवीय, राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी और राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन की संगति में दरिद्र परिवार में जन्म लेकर भी लाल बहादुर शास्त्री भारत के प्रधानमंत्री बनकर देश पर ही नहीं विश्व पर अपनी सादगी, सरलता, ईमानदारी और महत्ता की छाप छोड़ गए। इससे बड़ा सत्संगति का प्रभाव और क्या हो सकता है?

सत्संगति एक संजीवनी

वस्तुतः सत्संगति एक ऐसी संजीवनी है जो मानव के जीवन को चरमोत्कर्ष तक पहुँचा देती है। गोस्वामी तुलसीदास ने सत्संगति के प्रभाव तथा महत्त्व को स्वीकार करते हुए अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ रामचरित-मानव में लिखा है कि सत्संगति आनन्द और मंगल का मूल है—

बिनु सतसंग विवेक न होई।
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई ।।
सत संगति मुद मंगल मूला।
सोइ फल सिधि सब साधन फूला।

भगवान की कृपा होने पर ही सत्संगति प्राप्त होती है और मानव का उद्धार होता है।

संस्कृत और हिन्दी के कवियों ने स्थान-स्थान पर सत्संगति की महिमा का गुणगान किया है। सूरदास इसीलिए हरि के विमुख रहने वाले दुष्ट-पुरुषों का साथ छोड़ने को कहते हैं—

तजो मन हरि विमुखन को संग।
जिनके संग कुमति नित उपजत परत भजन में भंग।

तुलसीदास जी भी लिखते हैं—

शठ सुधरहिं सतसंगति पाई।
पारस परसि कुधातु सुहाई॥

उपसंहार

वास्तव में मानव जीवन में उन्नति और कल्याण एकमात्र सत्संगति पर ही निर्भर है। इसलिए जीवन में उन्नति व शान्ति के आकाँक्षी पुरुष को चाहिए कि वह सत्संगति की ओर आकृष्ट हो। सत्संगति से ही सच्चरित्र का निर्माण होता है। बिना चरित्र के निर्माण के कभी भी जीवन सफल नहीं हो सकता। प्रत्येक प्रकार की उन्नति का मूल सत्संगति ही है। इस कथन की सत्यता में दो मत नहीं हो सकते कि—

"संगः सतां किमु न मंगलमातनोति"

—o—

साहित्य और समाज

प्रस्तावना

साहित्य और समाज का परस्पर क्या सम्बन्ध है। साहित्य समाज से क्या ग्रहण करता है और समाज को क्या देता है? इस पर विचार करने से पूर्व साहित्य क्या है, इसका विचार कर लेना चाहिए।

परिभाषा

साहित्य के आचार्यों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से साहित्य के विभिन्न लक्षण दिये हैं। संस्कृत के प्रसिद्ध आचार्य चन्द्रशेखर ने कहा है—

'शब्दार्थयोः यथावत् सहभावेन विद्या साहित्य विद्या ।'

अर्थात् शब्द और अर्थ की यथा योग्य सहयोग वाली विद्या साहित्य विद्या है। 'साहित्य दर्पण' के रचयिता आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य की परिभाषा देते हुए कहा है—

"वाक्यं रसात्मक काव्यम्"

अर्थात् रसात्मक वाक्य को काव्य (साहित्य) कहते हैं। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने—'ज्ञान राशि के संचित कोष का नाम साहित्य' कहा है। व्युत्पत्ति के आधार पर –'हितेन सह सहितम्, सहितस्य भावः साहित्यम्' यह साहित्य की परिभाषा की जाती है। कवीन्द्र रवीन्द्र ने भी इसी को ध्यान में रखते हुए कहा है—

'सहित शब्द से साहित्य के मिलने का एक भाव देखा जाता है। यह केवल भाव-भाव का, भाषा-भाषा का, ग्रन्थ-ग्रन्थ का मिलन नहीं, अपितु मनुष्य के साथ मनुष्य का, अतीत के साथ वर्तमान का, दूर के साथ निकट का अन्तरंग मिलन भी है जो कि साहित्य के अतिरिक्त अन्य से सम्भव नहीं।'

इन सभी परिभाषाओं को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट हुआ कि आनन्द देने वाली और लोक मंगलकारिणी रचना साहित्य है। साहित्य में कल्पना-तत्त्व, बुद्धि तत्त्व, शैलीतत्त्व और भाव तत्त्व का अपूर्व समन्वय रहता है।

साहित्य और समाज का सम्बन्ध

साहित्य और समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध है। साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य अपने पोषण के लिए समाज से ही भाव-सामग्री ग्रहण करता है, इसीलिए साहित्य समाज की भावनाओं का प्रतिबिम्ब स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। साहित्यकार अपने समकालीन रीति-नीति, व्यवहार-वातावरण और परिस्थिति से प्रभावित होता है। इस कारण उसकी छाप उसके साहित्य में अवश्य ही दृष्टिगोचर होती है। समाज, राष्ट्र और युगीन भावनाओं की उपेक्षा करके कोई भी साहित्य स्थायी नहीं रह सकता। हाँ, ऐसा अवश्य होता है कि कुछ साहित्यकार देश-काल की सीमा से ऊपर उठकर विश्वजनीन सत्य और भावनाओं को साहित्य में प्रतिष्ठित करते हैं। ऐसा साहित्य ही युग-युग तक सहृदयों के हृदय में रस-संचार करता रहता है।

साहित्य समाज से प्रभावित होता है। इसका उदाहरण हमें हिन्दी साहित्य के इतिहास को देखने से मिल जाता है। आदिकाल में वीर गाथाओं की रचना, पूर्व मध्यकाल में भक्ति साहित्य की रचना, उत्तर मध्यकाल में श्रृंगार प्रधान रचनाएं और आधुनिक काल में नवीन जागरण के साथ सामाजिक-राजनीतिक जागरण सम्बन्धी रचनाएँ इसका प्रमाण हैं। रामायण, महाभारत, रघुवंश, भारत-भारती, सेवा सदन, कर्म भूमि, गोदान आदि रचनाओं में तत्कालीन सामाजिक भावनाएं पूर्णतः प्रतिविम्बित हुई हैं। साहित्य के अध्ययन से ही किसी भी समाज के आचार-विचार, सभ्यता-संस्कृति, रीति-नीति का ज्ञान होता है।

साहित्य का समाज पर प्रभाव

जहाँ साहित्य समाज से प्रभावित होता है, वहीं वह समाज को प्रभावित भी करता है। रूस की राज्य क्रांति का कारण वहाँ का साम्यवादी विचार-धारा का साहित्य रहा है। बालतेयर और रूसो के साहित्य के कारण ही फ्रांस में राज्य क्रांति हुई। नित्शे की विचारधारा के कारण जर्मनी ने शक्ति की उपासना की और उसमें अपनी सभ्यता के विस्तार की भावना उत्पन्न हुई।

गोस्वामी तुलसीदास जी के 'रामचरित मानस' ने हिन्दुओं के निराश हृदयों में आशा का संचार किया, उनके अन्धकारपूर्ण मनों में प्रकाश फैलाया, उन्हें सुख, शांति और सन्तोष दिया। 'जाति-पाँति पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई.' कहने वाले कबीर तथा अन्य सन्तों की वाणी ने साम्प्रदायिक और जातीय कट्टरता को समाप्त किया। महाकवि भूषण की वाणी ने हिन्दुओं के प्राणों में एक नवीन उत्साह का संचार कर उन्हें आक्रान्ता मुगलों से लोहा लेने के लिए सन्नद्ध किया। मुंशी प्रेमचन्द, यशपाल, नागार्जुन, फणीश्वरनाथ 'रेणु' के साहित्य ने शोषित। निर्धन और पद-दलित कृषकों तथा श्रमिकों के प्रति करुणा का और शोषकों के प्रति विद्रोह का भाव भरा तथा मैथिलीशरण गुप्त की 'भारत-भारती' ने हमारी राष्ट्रीय भावनाओं को सुदृढ़ किया।

उपसंहार

वस्तुतः साहित्य समाज के अव्यक्त भावों को व्यक्त कर उसे प्रभावित

करता है । इतना ही नहीं साहित्य समाज में जो परिवर्तन करता है, वह शस्त्रों द्वारा किए गए परिवर्तन से अधिक स्थायी होता है । साथ ही वह हमारा मनोविनोद कर हमारे मन के भार को भी हल्का कर देता है । वही एक आदर्श की सृष्टि भी करता है । वही समाज को सत्य, शिव और सुन्दर के दर्शन कराता है ।

—०—

दिल्ली की मुद्रिका-बस यात्रा

प्रस्तावना

दिल्ली अब बृहत्तर दिल्ली बन चुकी है । जनसंख्या वृद्धि के साथ ही यहाँ नये-नये उपनगरों का निर्माण और विकास हो रहा है । इन नगरों में यातायात की व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने के लिए 'दिल्ली परिवहन निगम' की बसें चलती हैं । लोगों के अपने निजी वाहन तो अलग हैं, किन्तु दिल्ली के उपनगर और बस्तियाँ एक-दूसरे से इतनी दूर हैं कि उन सबका सीधे एक-दूसरे से सम्बन्ध सामान्य बसों से नहीं हो सकता । अतः दिल्ली परिवहन निगम ने कुछ वर्षों से मुद्रिका मार्ग पर मुद्रिका के समान ही बसें चलाई हैं । मुद्रिका बसें अपने टर्मिनल से पूर्व दिशा और पश्चिम दिशा में परिक्रमा करती हुई; जिस स्थान (टर्मिनल) से यात्रा प्रारम्भ करती हैं, (समस्त मुद्रिका मार्ग पर चलते हुए) पुनः उसी स्थान पर अपनी यात्रा की समाप्ति करती हैं । इस सेवा से दूर-दूर जाने वाले यात्रियों को बहुत सुविधा हो गई है ।

मुद्रिका बस-यात्रा

मुद्रिका बस-सेवा के कुछ निश्चित टर्मिनल हैं । उन्हीं से बस यात्रा प्रारम्भ होती है और परिक्रमा करते हुए पुनः वहीं पहुँच जाती हैं । मुद्रिका बस यात्रा से दिल्ली के एक बहुत बड़े भाग के दर्शन हो जाते हैं और आनन्द भी प्राप्त होता है । यदि हम उत्तर में आजादपुर टर्मिनल से पूर्व दिशा की ओर जाने वाली बस में बैठें तो मार्ग में सर्वप्रथम माडल टाऊन की सुन्दर बस्ती दिखती

है। इसके दूसरी ओर छत्रसाल स्टेडियम है, जिसे एशियाड के कारण भव्य और आकर्षक बना दिया गया है। स्टेडियम के आमने-सामने ऊँची-ऊँची हरी-भरी वृक्षावली मन को मोह लेती है। बस यहाँ से आगे अल्पना छविगृह से आगे बढ़ती हुई गुरु तेगबहादुर नगर (किंग्जवे कैम्प) पहुँचती है। कैम्प के चौराहे पर हर समय भीड़-भाड़ रहतीं है। इसके आगे बस मालरोड से आगे बढ़ते हुए खालसा कालेज, खैबर पास, पुराना सचिवालय, इन्द्रप्रस्थ कालेज; एक्सचेंज स्टोर, अन्तर्राज्यीय बस अड्डा, यमुना बाजार, विजय घाट, शान्ति वन और राजघाट की भव्य सुन्दरता के दर्शन तो होते ही हैं, लालकिले के पिछले भाग के भी दर्शन हमें होते हैं।

बस यात्रा जारी है। राजघाट से आगे दिल्ली विकास प्राधिकरण का कार्यालय 'विकास मीनार' है जो कुतुबमीनार से भी ऊँचा है और देखने में अतिभव्य है। यहीं एशियाड के अवसर पर बना इन्द्रप्रस्थ (इन्दिरा गांधी) इन्डोर स्टेडियम है, जो अति सुन्दर और भव्य है। रात्रि के समय तो बिजली के प्रकाश में वह बरबस आँखों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है। यहाँ से आगे इन्द्रप्रस्थ डिपो और इन्द्रप्रस्थ पावर हाउस से होते हुए हम प्रगति मैदान के दर्शन करते हैं। पुनः पुराने किले के आगे से होती हुई बस निजामुद्दीन-भोगल की ओर जाती है। मार्ग में 'सुन्दर नगर' की धनी बस्ती है। आगे ही चौक पर होटल ओबराय कांटीनेंटल के भव्य-भवन दर्शन होते हैं।

निजामुद्दीन की ओर से बस आश्रम की ओर जाती है। आश्रम से बस कालका मोड़ होते हुए श्रीनिवास पुरी, लाजपतनगर, एड्रूजगंज, डिफेंस कालोनी, साउथ एक्सटेंशन होती हुई सफदरजंग अस्पताल के पास पहुँचती हैं। इस मार्ग पर दोनों ओर उक्त बस्तियों के ऊँचे-ऊँचे भव्य भवन और बड़ी-बड़ी दुकानें हैं। सड़कें चौड़ी-चौड़ी हैं, जिन पर हर समय अनेक प्रकार के वाहनों की दौड़ इधर से उधर होती रहती है।

इसी मार्ग पर अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान का चिकित्सालय भी है। आगे बढ़ते हुए हमें क़िदवई नगर के दर्शन होते हैं। यहाँ रात्रि के समय बिजली के तीव्र प्रकाश में चौराहे का दृश्य बहुत ही आकर्षक लगता है। आगे चलकर एक ओर नौरोजी नगर और दूसरी ओर सरोजिनी नगर का स्पर्श

करते हुए बस रामकृष्णपुरम के मोड़ पर पहुँचती है। यहाँ भीखाजी कामा बाजार में बहुत ऊँचे-ऊँचे शापिंग काम्पलेक्स बन रहे हैं तो एक बहुत बड़ा भव्य और ऊँचा पंचतारा होटल 'हयात रेजेंसी' बन चुका है। इससे आगे बढ़कर मोती नगर के चौराहे को पार करके धौला कुआँ की ओर जाती है, यहीं मार्ग में नानकपुरा के पास भव्य गुरुद्वारा का निर्माण हो रहा है। आगे वेंकटेश्वर कालेज और आत्माराम सनातन धर्म कालेज हैं। धौला कुएँ का चौराहा भी बहुत ही व्यस्त रहता है, इसके बीच में सुन्दर वाटिका भी है।

बस आगे बढ़ती हुई नारायणा-विहार पहुँचती है। यहाँ से मायापुरी, राजौरी गार्डन और पुनः राजा गार्डन टर्मिनल आता है। राजागार्डन का चौराहा भी बड़ा व्यस्त रहता है। यहाँ से बस बढती हुई पंजाबी बाग टर्मिनल पर पहुँचती है। इस चौराहे पर एक-एक सेकेंड में कई-कई वाहन एक ओर दूसरी ओर दौड़ते हैं। यहीं बच्चों को यातायात का प्रशिक्षण देने के लिए 'ट्रेफिक ट्रेनिंग पार्क' भी बना हुआ है। इस मार्ग पर बीचों-बीच हरी घास और पौधों की पट्टी भी मन को आकर्षित करती है। इसके बाद हम शकूरपुर की पुनर्वास बस्ती को बाहर से ही देखते हुए बर्तानिया बिस्कुट कम्पनी, डी०टी०सी० का वजीरपुर डिपो टी०वी० टांवर और शालीमार बाग के भव्य भवनों को देखते हुए नई सब्जी-मण्डी के पास से मुड़कर पुनः आजादपुर टर्मिनल पर ही पहुँच जाते हैं।

उपसंहार

मुद्रिका बस की यात्रा वस्तुतः बड़ी अनोखी है, उस स्थिति में जबकि बैठने को स्थान मिल जाए, नहीं तो भीड़ में धक्के-मुक्के भी कम नहीं मिलते। कुछ भी हो मुद्रिका बस की यात्रा का भी अपना ही आकर्षण है। गन्तव्य स्थान पर पहुँचने के लिए इससे सस्ता साधन और कोई नहीं है।

—०—

दिल्ली के दर्शनीय स्थान

प्रस्तावना

दिल्ली भारत की राजधानी है। यह यमुना के दक्षिण भाग में बसी है, किन्तु इसका कुछ भाग यमुना के उत्तर में भी है जो उत्तर प्रदेश की सीमा से मिलता है। दिल्ली का पुराना नाम इन्द्रप्रस्थ था। खाण्डव वन का दहन कर पाण्डवों ने इसे अपनी राजधानी बनाया था। तब से दिल्ली ने अनेक उत्थान-पतन देखे हैं। अनेक राजाओं और बादशाहों ने इसे अपनी राजधानी बनाया "दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा" के अनुसार प्रत्येक राजा सोचता था की जो दिल्ली का अधिपति बन गया, वह विश्व का स्वामी बन गया। भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना पर अंग्रेजों ने पहले तो कलकत्ते को अपनी राजधानी बनाया, किन्तु बाद में उन्होंने भी दिल्ली को ही राजधानी बनाने का निर्णय किया और रायसीना गाँव के पास नई राजधानी बनायी, जो अब नई दिल्ली कहलाती है। दिल्ली भारत की राजधानी होने के कारण ही नहीं, व्यापारिक और ऐतिहासिक कारणों से भी दर्शनीय नगरी है।

पुरानी दिल्ली के दर्शनीय स्थान

पुरानी दिल्ली में अनेक दर्शनीय स्थान हैं। इनमें लालकिला, जामामस्जिद, लाल मन्दिर, गौरीशंकर मन्दिर और शीशगंज का गुरुद्वारा प्रमुख हैं।

लालकिला मुगल शैली में लाल पत्थरों से बना एक दुर्ग है। कहते हैं कि शाहजहाँ ने बनवाया था, पर अब कुछ नई खोजों से पता चला है कि इसे शाहजहाँ से दो सौ वर्ष पूर्व ही किसी हिन्दूराजा ने लालकोट के नाम से बनाया था, जिसे बाद में शाहजहाँ ने अपना निर्माण बताया। इस दुर्ग में अन्दर अनेक दर्शनीय स्थल हैं, जिनमें दीवन-ए आम, दीवान-ए-खास, रंग महल, खास महल, नौबत खाना, मोती महल आदि मुख्य हैं। स्वतंत्रताप्राप्ति के पश्चात् लाल किले का गौरव पुनः बढ़ा है। यहाँ प्रतिवर्ष 15 अगस्त को स्वतंत्रता दिवस पर देश के प्रधानमंत्री ध्वजारोहण करते हैं।

लालकिले से कुछ दूर पर ही जामामस्जिद है जो मुसलमानों का प्रार्थना-स्थल है। देश-विदेश के सहस्रों यात्री नित्य ही इसे देखने आते हैं।

लाल किले के सामने ही चाँदनी चौक के अन्तिम छोर पर लाल मन्दिर है। यह जैन मतावलम्बियों का पूजास्थल है। यह दर्शनीय तो है ही, इसमें पक्षियों का चिकित्सालय भी है। लाल मन्दिर के साथ ही गौरी शंकर मन्दिर है। इसमें मुख्य रूप से भगवान् शंकर की और अन्य देवी-देवताओं की पूजा होती है।

फव्वारे के पास 'शीशगंज' नामक गुरुद्वारा है। यहीं पर हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए गुरु तेग बहादुर ने अपना बलिदान दिया था। इस गुरुद्वारे में प्रातः से रात्रि तक कीर्तन चलता रहता है और दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रहती है।

यहीं चाँदनी चौक का प्रसिद्ध बाजार है, जो पुरानी दिल्ली का दिल है। चाँदनी चौक के बाजार में नित्य ही देश-विदेश के असंख्य पर्यटकों और खरीद-दारों की भीड़ लगी रहती है।

पुरानी दिल्ली से लगते हुए ही लाल किले के पिछले भाग में स्थित विजय घाट, शांति वन और राजघाट दर्शनीय होने के साथ-साथ ही प्रेरणाप्रद भी हैं। विजय घाट में श्री लाल बहादुर शास्त्री की, शांति वन में पं० जवाहरलाल नेहरू की और राजघाट में महात्मा गाँधी की समाधि हैं। यहाँ भी प्रतिदिन दर्शनार्थियों का ताँता लगा रहता है।

नई दिल्ली के दर्शनीय स्थान

नई दिल्ली में भी अनेक दर्शनीय स्थान हैं। इसमें पुराना किला, चिड़िया-घर, कुतुबमीनार, राष्ट्रीय संग्रहालय, संसद् भवन, बिड़ला मन्दिर, गुरुद्वारा रकाबगंज, बुद्ध पार्क आदि प्रमुख हैं।

पुराना किला नाम के अनुरूप ही अत्यन्त प्राचीन है। इसके पास ही एक बहुत बड़े क्षेत्र में फैला हुआ चिड़ियाघर है। जहाँ देश-विदेश के विविध प्रकार के जलचर, स्थलचर, हिंस्र और अहिंसक प्राणी रहते हैं। यह स्थान प्राकृतिक दृष्टि से तो उत्तम है ही। इसमें रहने वाले विविध जीवों को देखकर ज्ञान वृद्धि के साथ ही मनोरंजन भी होता है।

कुतुबमीनार प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्तम्भ है। कुछ का विचार है कि इसे

कुतुबुद्दीन ने बनवाया था और कुछ कथन है कि यह पृथ्वीराज चौहान द्वारा स्थापित यमुना स्तम्भ है। पिछले वर्षों में इस पर मिली भगवान् विष्णु और बुद्ध की मूर्तियों के मिलने से यह धारणा पुष्ट होती है। यहीं गुप्तवंश के समय में निर्मित प्रसिद्ध लौह स्तम्भ है। सैकड़ों वर्ष बीतने पर भी वायु, धूप, वर्षा आदि के कारण उसकी चमक में कोई कमी नहीं आई। यह स्थान अब एक प्रसिद्ध 'पिकनिक स्थल' बन चुका है।

राष्ट्रीय संग्रहालय भी नई दिल्ली का दर्शनीय और ज्ञानवर्द्धक स्थल है। यहाँ सिन्धु घाटी सभ्यता से लेकर अंग्रेजों के भारत आगमन तक की कलाकृतियाँ, हस्तशिल्प के नमूनों, शस्त्रास्त्रों के नमूनों, प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों आदि का भव्य संग्रह है, जिसे देखकर प्राचीन भारत के विभिन्न क्षेत्रों में विकास की एक सुन्दर झलक मिलती है।

संसद् भवन देखने में तो सुन्दर है ही। इसी में देश के भाग्य का निर्माण होता है। अतः संसद् की प्रत्यक्ष कार्यवाही भी देखने में बहुत अच्छी लगती है तथा इससे ज्ञान में वृद्धि भी होती है।

बिड़ला मन्दिर (लक्ष्मी नारायण मन्दिर) भी नई दिल्ली का एक प्रसिद्ध धार्मिक और दर्शनीय-स्थल है। यहाँ प्रतिदिन देश-विदेश के सैकड़ों दर्शनार्थी आकर भारतीय संस्कृति और सभ्यता की एक झलक पाते हैं और साथ ही कुछ ही क्षणों के लिए सही मन में एक अपूर्व शान्ति का अनुभव करते हैं।

इसी प्रकार गुरुद्वारा रकाबगंज सिक्खों का धार्मिक स्थल है तो बुद्ध पार्क भ्रमणार्थियों और सैलानियों का मनोरंजक स्थल है। यह पार्क प्राकृतिक शोभा से युक्त दिल्ली की भीड़-भाड़ से उकताये जीवन को शांति देने वाला है।

इस प्रकार दिल्ली में अन्य भी छोटे-बड़े स्थान हैं, जो दर्शनीय हैं। समय निकालकर इन्हें अवश्य देखना चाहिए।

—o—

आदर्श पड़ोसी

प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । वह अकेला नहीं रह सकता । उसकी इस वृत्ति के कारण ही ग्राम, कस्बों और नगरों का विकास हुआ । गाँव या नगर में व्यक्ति के निवास के आमने-सामने भी कुछ लोग रहते हैं, जो पड़ोसी कहलाते हैं । पड़ोसी शब्द संस्कृत के 'प्रतिवेशी' शब्द का तद्भव रूप है । प्रतिवेशी का अर्थ है—अपने घर के आस-पास रहने वाला । यों भी कहा जा सकता है कि अपने निवास स्थान के सामने, पीछे या बगल में रहने वाले लोग पड़ोसी होते हैं। प्रतिवेशी या पड़ोसी लोग व्यक्ति के सामाजिक जीवन के सबसे बड़े सहायक होते हैं । सुख- दुख में पड़ोसी ही सबसे बड़े सहायक और मित्र होते हैं । एक अच्छे या आदर्श पड़ोसी की यह विशेषता होती है कि अपनी बात कह कर हम अपने मन का बोझ हल्का कर सकते हैं । उसके साथ बैठकर मनोरंजन कर सकते हैं और समय-कुसमय अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति भी कर सकते हैं ।

आदर्श पड़ोसी बड़े सौभाग्य से मिलता है और जिसे ऐसा पड़ोसी मिल जाता है, उसका जीवन बड़ी सरलता और सुखपूर्वक बीतता है । विवेकी; विनम्र, मृदुभाषी, हितचिन्तक, यथावसर सहायता के लिए तत्पर, सच्चरित्र, उचित परामर्श दाता, ये आदर्श पड़ोसी के गुण हैं । आदर्श पड़ोसी पर हम विश्वास कर सकते हैं, वह सगे-सम्बन्धियों से भी अधिक सहायक सिद्ध होता है ।

हमारे पड़ोसी

हमारा परिवार निम्नमध्यम वर्गीय वेतन-भोगी परिवार है, पर कुछ अनिवार्य परिस्थितियों के कारण हमें आजकल एक धनी बस्ती में किसी कोठी के एक छोटे से भाग में रहना पड़ रहा है । हमारे पड़ोस में मकान मालिक तो हैं ही, पीछे की और श्री सुधाकर जी और लक्ष्मीपति जी हैं । बगल में सुरेन्द्र कपूर जी रहते हैं । सभी लोग मकान वाले तथा धनी-मानी हैं । इनसे हमारी

जान-पहचान बहुत अच्छी है और व्यवहार भी उत्तम है। इन लोगों ने हमें आज तक यह अनुभव नहीं होने दिया कि हम आर्थिक दृष्टि से दुर्बल हैं तो हमारा इन से कोई व्यवहार नहीं निभ सकता, बल्कि इन्होंने सदा ही अपनी सदाशयता दिखाई है और अनुभव कराया है कि व्यक्ति धन से नहीं; बल्कि मानवीय व्यवहार के कारण ही प्रतिष्ठा पा सकता है।

श्री सुधाकर जी एक फैक्टरी के स्वामी हैं। घर में उनके तीन बच्चे हैं। उनका बड़ा पुत्र अवस्था में यद्यपि मुझसे तीन वर्ष छोटा है, पर मुझे बुलाए बिना वह खेलता नहीं। घर में मनोरंजन के और उत्सवों के सभी अवसरों पर मेरे बिना उसे चैन नहीं आता। उसके माता-पिता भी मुझे बड़ा स्नेह करते हैं। सुधाकर जी की गृहणी मेरी माँ से भी बड़े आदर और विनम्रता से मिलती है। लेन-देन में शंका नहीं करती।

श्री लक्ष्मीपतिजी भी नाम के अनुरूप ही लक्ष्मीपति हैं। घर में पति-पत्नी के अतिरिक्त एक पुत्र और एक पुत्री हैं। लाला जी की पत्नी बड़े ही सौम्य स्वभाव की है। प्रतिक्षण सहायता के लिए तत्पर रहती हैं। हमारे कमरे में धूप नहीं आती तो हमारी माँ को आग्रह पूर्वक अपने आँगन में बुला लेती हैं। गत वर्ष मेरी दीदी के विवाह के अवसर पर उन्होंने अपना घर हमें सौंप दिया। बराती वहीं ठहरे, उन्हीं के आँगन में भोज हुआ। विवाह में ऐसी तत्परता दिखाई जैसे अपनी ही कन्या का विवाह हो।

हमारे मकान मालिक तो और भी आदर्श पड़ोसी हैं। श्री सुरेन्द्र जी उनके दो पुत्र, एक पुत्री और पत्नी सभी हमसे ऐसे हिल मिलकर रहते हैं, मानो एक ही कुटुम्ब के सदस्य हों। धनवान्, मकान-मालिकपन की कोई बू उनमें नहीं। व्यवहार में कोई औपचारिकता या ननु-नच नहीं। कभी किसी वस्तु की हमें आवश्यकता होती है तो माँगने में कोई संकोच नहीं करते, पर व्यवहार में बड़े खरे और निष्कपट हैं।

आजकल टेलीविजन बच्चों के लिए तो आवश्यकता-सी बन गई है। हमारे पिताजी अर्थाभाव से उसे ले नहीं पाते। हम उनके घर जाने में संकोच करते हैं, फिर भी वे सभी बड़े आग्रह से हमें बुलाते हैं। नहीं जाते तो आवाज लगा कर बुलाते हैं। मेरी दीदी और उनकी पुत्री में सगी बहिनों जैसा स्नेह है।

दीदी के विवाह पर उन्होंने भी अपने सभी कमरे हमें प्रयोग के लिए दे दिए।

उपसंहार

उक्त सभी सज्जन आदर्श पड़ोसी हैं। हम भी अपनी ओर से उन्हें शिकायत का कोई अवसर नहीं देते और अपने स्वाभिमान को बनाये रखते हुए उनसे विनम्रता से व्यवहार करते हैं। सामाजिक व्यवहार में भी सामर्थ्य के अनुसार पीछे नहीं रहते। इसी कारण हमारा जीवन आनन्द से चल रहा है।

हमारा सौभाग्य है कि ईश्वर की कृपा से हमें ऐसे आदर्श पड़ोसी मिले हैं। मेरी अभिलाषा है कि जहाँ भी हम रहें ऐसे-ऐसे ही आदर्श पड़ोसी मिलें, जिससे जीवन में आनन्द बरसता रहे।

—०—

नवम एशियाड—82

प्रस्तावना

खेल जीवन के अनिवार्य अंग हैं। खेलों के महत्त्व को बढ़ाने में खेल-स्पर्धाओं का भी बहुत बड़ा योगदान है। खेल स्पर्धाएँ भाई चारे, मैत्री व बन्धुता की भावना को दृढ़ करती हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित की जानें वाली खेल प्रतियोगिताओं में प्रमुख हैं—एशियाई खेल तथा ओलम्पिक खेल प्रतियोगिता। नवें एशियाई खेलों का आयोजन सन् 1982 में दिल्ली में 19 नवम्बर से 4 दिसम्बर तक हुआ था। प्रारम्भ में कुछ लोगों का विचार था कि समय कम होने से भारत इन खेलों का सफलतापूर्वक आयोजन नहीं कर सकेगा, किन्तु अनेक आलोचकों की आलोचनाओं और कुछ अनिश्चितताओं के होते हुए भी खेल ठीक समय पर आरम्भ हुए और हर्ष के वातावरण में ठीक समय पर समाप्त भी हो गए।

तैयारी

नवें एशियाई खेलों की तैयारी के लिए विशेष आयोजन समिति की स्थापना की गई थी। जिसका अध्यक्ष श्री सरदार बूटासिंह को बनाया गया था। इसके

साथ ही खेल मंत्रालय की स्थापना की गई, जिसके प्रथम मंत्री भी सरदार बूटासिंह बनाए गए । इन खेलों की तैयारी के लिए भारत को दो वर्ष का समय मिला। लेकिन इन दो वर्षों की अल्पावधि में दो खेल मैदानों और खेल गाँव का भी निर्माण हो गया । जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम, इन्द्रप्रस्थ स्टेडियम, तुगलकाबाद शूटिंग रेंज, यमुना वेलोड्रम तथा दिल्ली विश्वविद्यालय मैदान का निर्माण हुआ । इसके अतिरिक्त अम्बेडकर, शिवाजी तथा तालकटोरा इन्डोर स्टेडियमों को नये ढंग से सजाया संवारा गया । इसके अतिरिक्त आधुनिक सुविधाओं से परिपूर्ण हरियाली में ग्रामीण अंचल जैसा तथा नयनाभिराम दृश्य प्रस्तुत करने वाले 'खेल गाँव' का भी निर्माण हुआ । दिल्ली को सजाया संवारा गया । नये-नये फ्लाई ओवर बने । यातायात को सुचारु रूप से चलाने के लिए नई व्यवस्थाएँ की गईं ।

खेलों का प्रारम्भ

नवम एशियाई खेलों का शुभारम्भ 19 नवम्बर 1982 को नवनिर्मित जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम मे हुआ । उस दिन भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह ने जनसमुदाय और खिलाड़ियों के सामने दिल्ली एशियाई खेल उद्‌घाटन की विधिवत् घोषणा की । उस दिन पहले इस खेल में भाग लेने वाले एशिया के 33 देशों के खिलाड़ियों का मार्चपास्ट हुआ । हर दल के आगे एक युवती उस देश का नामपट्ट लेकर चली । फिर उसके बाद एशियाई खेल ध्वज फहराया गया । एशियाड की पवित्र ज्योति को बलवीरसिंह और डायना-साइम्स ने अग्निकुण्ड में प्रज्ज्वलित किया । पं० रविशंकर और विजयराघवराव के निर्देशन में 200 युवक-युवतियों ने 'अथ स्वागतम् शुभ स्वागतम्' नामक स्वागत गीत गाया । गीत की रचना कविवर नरेन्द्र शर्मा ने की थी । उसके बाद भारत की धाविका गीता जुत्शी ने सभी खिलाड़ियों की तरफ से शपथ ली । तदनन्तर खिलाड़ी बैंड की धून पर मैदान से बाहर चले गए । उसके बाद केरल के इक्कीस हाथियों ने मैदान में प्रवेश किया । जिन पर सवारों ने छत्री के नीचे पंचवाद्यम् के साथ चकोर और मोर पंख चलाए । फिर सांस्कृतिक कार्यक्रम हुए । तमिलनाडु का कवरम् कबडी नृत्य, केरल का कथकली, गुजरात के डांडिया रास, उड़ीसा के घूमरा नृत्य, उत्तर प्रदेश के होली नृत्य ने दर्शकों को आनन्द से सराबोर कर

दिया । रविशंकर के संगीत निर्देशन में दिल्ली के सैकड़ों बच्चों द्वारा प्रस्तुत छत्रछाया नाटक बहुत सराहा गया । अन्त में फूलों से बने अप्पू का स्वागत हुआ ।

खेल स्पर्धाएँ

नवम एशियाई खेलों में पहली बार इतनी बड़ी संख्या में खिलाड़ियों और तकनीकी अधिकारियों ने भाग लिया । इस बार सबसे अधिक (21) खेलों की प्रतियोगिता हुई । इनमें से घुड़सवारी, गोल्फ, हैंडबाल और महिला, हांकी को पहली बार शामिल किया गया । इसके अतिरिक्त भारत की कबड्डी और मलेशिया के सेपा तकरा को प्रदर्शन खेलों में शामिल किया गया । फुटबाल की प्रयियोगिताएँ जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम, अम्बेडकर तथा छत्रसाल स्टेडियम में हुई । जिमानास्टिक व बैडमिंटन की स्पर्धाएँ इन्द्रप्रस्थ स्टेडियम में हैंडबाल व तीरंदाजी दिल्ली विश्वविद्यालय मैदान में, घुड़सवारी की प्रतियोगिताएँ हरबख्श स्टेडियम व निकल्सन रेंज में, तैराकी व वाटरपोलो की तालकटोरा में, वास्केट बाल की प्रतियोगिता भी तालकटोरा अतरंग स्टेडियम में सम्पन्न हुई । एथैलेटिक्स की जवाहर लाल स्टेडियम, निशानेबाजी तुगलकाबाद शूटिंश रेंज में, कुश्ती अम्बेडकर स्टेडियम में, टेबलटेनिस व मुक्केबाजी हाल आफ स्टेट्स में गोल्फ की दिल्ली गोल्फ क्लब तथा पाल नौका बम्बई में व नौका दौड़ की प्रतियोगिता राजस्थान की रामगढ़ झील में सम्पन्न हुई ।

पदक तालिका

इन स्पर्धाओं में चीन ने 61 स्वर्ण, 51 रजत व 21 कांस्य पदक जीतकर प्रथम स्थान प्राप्त किया । जापान द्वितीय रहा । भारत ने 13 स्वर्ण, 11 रजत व 25 कांस्य पदक जीतकर पाँचवाँ स्थान प्राप्त किया । चीन 7 प्रतियोगिताओं में चैम्पियन बना । इसके अतिरिक्त एशियाड तैराकी में 25 नए कीर्तिमान स्थापित हुए । एशियाड स्पर्धाओं में भारत के स्वर्ण-पदक विजेता थे—पैदलचाल में चाँदराम, गोला फेंक में बहादुरसिंह, बाधा दौड़ में एम० डी० बालसम्मा, घुड़सवारी में रघुवीर सिंह व रूपी बरार, मुक्केबाजी में कौरसिंह, कुश्ती में सतपाल, पाल नौका में फारूख तारपोखाता तथा जारिम करजिफा । गोल्फ की टीम स्पर्धा का स्वर्ण-पदक तथा व्यक्तिगत पदक लक्ष्मणसिंह ने जीता तथा

प्रथम एशियाई महिला हॉकी का स्वर्ण-पदक भी भारत को मिला।

समापन

4 दिसम्बर 1982 ई० को एशियाई खेलों का समापन हुआ। एशियाई खेल महासंघ के अध्यक्ष राजा भालिन्दरसिंह ने एशियाई खेलों के समाप्ति की विधिवत् घोषणा की। उसी दिन एशियाई खेलों की पवित्र ज्योति बुझाई गई। 112 बिगुल वादकों की वीटिंग रिट्रीट की धुन के साथ ही झंडे उतरे। पाँच तोपों की सलामी के साथ खेलों का समापन हो गया। समापन से पूर्व सांस्कृतिक कार्यक्रम भी हुए। राष्ट्रपति-अंगरक्षक टुकड़ी के 65 घुड़सवारों ने संगीतमय घुड़सवारी प्रस्तुत की। पशु-पक्षी नृत्य के बीच 'अप्पू' को विदाई दी गई। फिर थल सेना, वायु सेना, और नौ सेना के बैण्ड वादकों ने भव्य संगीत रचनाएँ प्रस्तुत कीं। इस तरह गौरवमय एशियाई खेलों का समापन हुआ।

एशियाई खेल और भारत

अब प्रश्न यह उठता है कि भारत एशियाई खेलों में कितना सफल रहा ? भारत पाकिस्तान से हॉकी के प्रतिष्ठापूर्ण फाइनल मैच में भी हार गया। कुश्ती में भी भारतीय मल्लों का प्रदर्शन निराशाजनक रहा। इसका कारण है कि हमारे यहाँ खेलों में राजनीति घुस आई है। खेल अधिकारियों की तानाशाही और दोष-पूर्ण आचरण खिलाड़ियों को निरुत्साहित कर देता है। साथ ही यहाँ खिलाड़ियों का चयन का ढंग भी दोषपूर्ण था। यहाँ तक कि पाकिस्तान की हॉकी टीम के कप्तान समीउल्ला ने हमारे मुँह पर ही कह दिया था कि हमारी टीम का दोष-पूर्ण चयन ही हमारी हार का कारण है। अब खेलों की चयन समितियों में सभी राज्यों को समानुपातिक प्रतिनिधित्व देना होगा तथा खेलों से राजनीति को अलग रखना होगा। अब इन एशियाई खेलों की ओर हमें भविष्य में अधिक ध्यान देना होगा। इन एशियाई खेलों का परिणाम हमें इसी बात की शिक्षा देता है।

—•—

प्रथम भारतीय अन्तरिक्ष यात्री : राकेश शर्मा

प्रस्तावना

अंतरिक्ष मानव को आरम्भ से ही आकर्षित व रोमांचित करता रहा है। मानव मस्तिष्क में अंतरिक्ष से सम्बन्धी नई-नई कल्पनाएँ जन्म लेती रहती हैं। मानव सदा से ही अंतरिक्ष के रहस्य व वहाँ की जीवन परिस्थितियों के बारे में अधिक-से-अधिक जानने को उत्सुक रहता है। सोवियत संघ व संयुक्त राज्य अमेरिका व कुछ अन्य विकसित देश समय-समय पर अपने अंतरिक्ष यात्री अंतरिक्ष में भेजते रहते हैं। भारत ने अंतरिक्ष में सोवियत संघ के सहयोग से मानव रहित उपग्रह तो छोड़ें हैं, परन्तु अंतरिक्ष में प्रथम भारतीय का पदार्पण वर्ष 3 अप्रैल 1984 को हुआ। यह अंतरिक्ष यात्रा भारत-सोवियत मैत्री का उत्कृष्ट उदाहरण है।

अन्तरिक्ष यात्रा का चयन

जब सोवियत राष्ट्रपति स्वर्गीय श्री लियोनिद ब्रेज़नेव दिसम्बर 1980 में भारत यात्रा पर आए थे तो उन्होंने भारत सोवियत संयुक्त अन्तरिक्ष उड़ान का सुझाव दिया था। भारत सरकार ने उनका सुझाव स्वीकार कर लिया और 1.7 करोड़ रुपये की परियोजना 'पवन' नाम से इस सम्बन्ध में शुरू की। भारतीय वायु सेना को अंतरिक्ष यात्रा के दो उम्मीदवारों के चयन की जिम्मेदारी सौंपी गई। चयन प्रक्रिया के अनुसार उन्हीं आवेदनकर्ताओं को चुना गया जो अत्याधुनिक विमान चलाने में दक्ष तथा शारीरिक व मानसिक रूप से पूर्ण सक्षम थे। अत्यन्त कड़ी परीक्षा के बाद 150 उम्मीदवारों से विंग कमांडर रवीश मल्होत्रा तथा स्क्वाड्रन लीडर राकेशशर्मा को चुना गया। रवीश मल्होत्रा का जन्म लाहौर में हुआ था और उन्होंने अपनी पढ़ाई कलकत्ता में पूरी की। वे 3400 घन्टे की उड़ानभर चुके थे और विभिन्न प्रकार के विमान उड़ा चुके थे। राकेश शर्मा का जन्म पटियाला में हुआ और उन्होंने हैदराबाद में पढ़ाई की राष्ट्रीय प्रतिरक्षा अकादमी, खड्गवासला से कमीशन प्राप्त कर उन्होंने भारतीय वायुसेना में कार्य-भार ग्रहण किया। वे कुशल पायलट हैं। वे 1600

घण्टे विमान उड़ा चुके थे और 1971 के भारत-पाक युद्ध में उन्होंने कई अभियानों को सफलतापूर्वक सम्पन्न किया था।

प्रशिक्षण

चयन के बाद उन्हें मास्को (रूस) से 30 किलोमीटर दूर उत्तरपूर्व में स्थित यूरीगगारिन अंतरिक्ष-यात्रा प्रशिक्षण केन्द्र में प्रशिक्षण के लिए भेजा गया। प्रशिक्षण अवधि के दौरान उन्हें अंतरिक्ष वायुनिकी के भौतिक पठन-पाठन के अलावा, व्यायाम, रहन-सहन, जैव चिकित्सा और जैव तथा वनस्पति ज्ञान के मूलभूत ज्ञान के अलावा प्रायोगिक ज्ञान का प्रशिक्षण भी दिया गया। उन्हें वहाँ डेढ़ तक कड़ा प्रशिक्षण दिया गया, ताकि उनका शरीर अन्तरिक्ष की परिस्थितियों के अनुकूल बन सके। अन्त में राकेश शर्मा का चयन अंतरिक्ष यात्री के रूप में हुआ। उनके सोवियत सहयोगी थे—कर्नल यूरी मालेशव व गेन्नाडी स्ट्रेकलोव। राकेश शर्मा अनुसंधानकर्त्ता अंतरिक्ष यात्री के रूप में गए थे।

अन्तरिक्ष यात्रा

3 अप्रैल 1984 को राकेश शर्मा व उनके दो सोवियत सहयोगियों को लेकर सोल्युत टी-11 यान बेकानूर अंतरिक्ष उड़ान स्थल से भारतीय समयानुसार सायं ठीक 6 बज कर 38 मिनट व 45 सेकिंड पर अंतरिक्ष के लिए उड़ा। यह यान 4 अप्रैल को भारतीय समयानुसार सायं 8 बजकर 1 मिनट 22 सेकेंड पर अंतरिक्ष में घूम रहे सोवियत अंतरिक्ष स्टेशन सेल्युत-7 से जुड़ गया, और टी-11 यान के तीनों अंतरिक्ष यात्री उसमें प्रवेश कर गये। सेल्युत-7 में तीन अंतरिक्ष यात्री पहले से ही उनक स्वागत के लिए मौजूद थे, जो फरवरी (84) से अब तक उनमें थे।

राकेश शर्मा ने सेल्युत-7 में रहकर मुख्यत: 'बायोमैडीसन,' धातुकर्म विज्ञान' व 'सुदूर संवेदन' से सम्बन्धित प्रयोग किये। बायोमैडिसन प्रयोगों को बंगलौर के 'इन्स्टीट्यूट ऑफ एयरोस्पेस मैडिसन' ने तैयार किया था। राकेश शर्मा के ये प्रयोग बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। उन प्रयोगों से यह देखा जाएगा कि सूक्ष्म गुरुत्वाकर्षण और भारहीनता की अवस्था में अंतरिक्ष यात्री के दिल और रक्त-

वाहिनियों तथा तंत्रिका तंत्र पर क्या प्रभाव पड़ता है ? 'स्पेर-सिकेनस' के बारे में भी जाँच की जाएगी । उन्होंने अंतरिक्ष में भारतीय योगाभ्यास भी किया, इन योगिक क्रियाओं से क्या अंतरिक्ष यात्रा के विपरीत प्रभावों से बचा जा सकता है ? यह निष्कर्ष तो विश्लेषण दल की रिपोर्ट के बाद ही निकलेगा । राकेश शर्मा ने अपने शक्तिशाली कैमरे की सहायता से भारत भूमि के साठ प्रतिशत से अधिक भू-भाग के चित्र भी लिए । इन चित्रों से धरती पर व धरती के अन्दर छुपी प्राकृतिक व खनिज संपदा की सूचना मिलेगी । उन्होंने अपने अंतरिक्ष प्रयास के दौरान अपने देशवासियों को सेल्युत-7 की संरचना से परिचित कराया और उन्होंने जो कार्य सम्पन्न किए उनकी भी सूचना दी ।

11 अप्रैल को उन्होंने सुबह 10 बजे सेल्युत-7 के बाकी यात्रियों से विदा ली और सोयुत यान टी-10 में पृथ्वी पर वापसी के लिए चले । 12 अप्रैल को वे वेकानूर से 600 किमी० दूर आर्कलिक के दलदल में उतरे । इस तरह एक ऐतिहासिक उड़ान सफलतापूर्वक सम्पन्न हुई ।

सोवियत सरकार ने राकेश शर्मा को 'हीरो-आफ सोवियत यूनियन' के पुरस्कार से सम्मानित किया । भारत सरकार ने राकेश शर्मा व उनके दो सहयोगियों को 'अशोक-चक्र' तथा रवीश मल्होत्रा को 'कीर्ति चक्र' से सम्मानित किया ।

उपसंहार

यह अंतरिक्ष-उड़ान भारत-सोवियत सहयोग का उत्कृष्ट उदाहरण है । अंतरिक्ष की खोज, इसके शाँतिपूर्ण उपयोग और इस क्षेत्र में तकनीकी व वैज्ञानिक जानकारी के आदान-प्रदान करने के लिए यह दोनों देशों का संयुक्त प्रयास था । अंतरिक्ष का यह सफल अभियान भारत की दीर्घकालीन प्रगति के लिए अत्यन्त सहायक होगा । राकेश शर्मा ने अपने इस साहसिक अभियान से भारत को विश्व में गौरवपूर्ण स्थान दिलाया है और मातृभूमि को सेवा से अपने को भी धन्य किया है ।

प्रदूषण की समस्या

(पर्यावरण शुद्धि)

प्रस्तावना

विज्ञान वरदान भी है और अभिशाप भी। आज मानव जीवन को सुगम और सरल बनाने में जितना योगदान विज्ञान का है, उतना किसी अन्य का नहीं। बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति के लिए आज अधिकाधिक उत्पादन की आवश्यकता है। बड़े-बड़े कल-कारखानों द्वारा अधिकाधिक उत्पादन करना आजकल सम्भव हो सका है; किन्तु औद्योगीकरण के साथ ही एक गम्भीर समस्या भी जुड़ी हुई है; वह है प्रदूषण की समस्या। प्रदूषण शब्द का अर्थ है—प्राकृतिक वातावरण और वायुमण्डल का दोषपूर्ण होना। प्रकृति और उसका पर्यावरण स्वभाव से शुद्ध व निर्मल हैं, किन्तु यदि वे दोनों किन्हीं कारणों से दूषित हो जाते हैं, तो मानव स्वास्थ्य के लिए खतरा उत्पन्न हो जाता है। प्रदूषण के कारण प्रकृतिक का जैविक संतुलन भी बिगड़ जाता है। इसमें पर्यावरण दूषित हो जाता है। दूषित पर्यावरण से अनेक प्रकार के ज्ञात और अज्ञात रोग पैदा हो जाते हैं। वायुमण्डल विषाक्त हो जाता है, साँस लेना भी दूभर हो जाता है। इसके परिणामस्वरूप मानव और अन्य जीवधारी बड़ी संख्या में संघातक बीमारियों से पीड़ित होकर काल के ग्रास बन जाते हैं। प्रदूषण की समस्या या पर्यावरण की शुद्धि समस्त मानवता के लिए चिन्ता का विषय है।

प्रदूषण का मूल कारण

प्रदूषण के अनेक रूप हैं। जिनमें जल-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण और ध्वनि-प्रदूषण मुख्य हैं।

उद्योगों का आधुनिक मशीनीकरण प्रदूषण की समस्या या पर्यावरण की अशुद्धि का मूल कारण है। इसके फलस्वरूप उद्योगों में अवशेष पदार्थ और कचरा संगृहीत होने लगता है। यह कचरा या तो जला दिया जाता है, या भराव के

काम में लाया जाता है; या नदी और समुद्र में फेंक दिया जाता है। इससे वायु प्रदूषण या जीवाणु प्रदूषण उत्पन्न होता है। कचरे के ढेर से दुर्गन्ध फैलती है तथा प्राकृतिक सौन्दर्य भी नष्ट ही होता है।

कारखानों का गन्दा पानी, घरेलू गन्दा पानी; नालियों में प्रवाहित मल समीपस्थ नदियों और समुद्र में गिरते हैं। कारखानों के पानी में हानिकारक रासायनिक तत्त्व घुले रहते हैं, जो नदियों के जल को विषाक्त कर देते हैं। इससे जलचरों का जीवन संकट में पड़ जाता है। परमाणु विस्फोट से प्रशान्त महासागर का जल दूषित तथा विषाक्त हो गया था। लाखों टन मछली विषैली हो गईं, खाने के योग्य नहीं रही थीं। दूषित पानी की सिंचाई से धरती की मिट्टी भी विषैली हो जाती है। उस मिट्टी में उगने वाली फल व सब्जियों की फसलें दूषित तथा तत्त्वहीन हो जाती हैं। इस विषैले जल के उपयोग करने से आमाशयिक विकार हो जाते हैं। इस जल से सिंचित अन्न तथा फलों का सेवन करने से अवशिष्ट जीवन नाशी रसायन मानव शरीर में पहुँचकर खून को विषैला बना देते हैं।

आज वायु प्रदूषण भी मानव के सम्मुख एक गम्भीर चुनौती है। बड़े-बड़े कल-कारखानों की चिमनियों से लगातार उठने वाला धुआँ, रेल तथा अन्य प्रकार के मोटर वाहनों के पाइपों से और इंजनों से निकलने वाली गैसें तथा धुआँ; घरों में जलाया जाने वाला कोयला, भट्टियों में जलने वाला हार्ड कोक, स्टोव में जलता केरोसिन आदि इन सबसे कार्बनडाईआक्साइड, नाइट्रोजन सल्फयूरिक एसिड, नाइट्रिक एसिड प्रतिक्षण वायुमण्डल में घुलते रहते हैं। वस्तुतः वायु प्रदूषण का प्रभाव अत्यन्त व्यापक है।

महानगरों में अनेक प्रकार के वाहनों, ध्वनि विस्तारकों तथा औद्योगिक संस्थानों की मशीनों के कोलाहल ने ध्वनि प्रदूषण को जन्म दिया है। इससे मानवों की श्रवण-शक्ति का ह्रास होता है और मस्तिष्क पर भी घातक प्रभाव पड़ता है।

प्रदूषण की हानियाँ

वायु-प्रदूषण से अनेक गम्भीर बीमारियाँ उत्पन्न हो रही हैं। ये रोग हैं—

अनेक प्रकार के चर्म व श्वास रोग, खाँसी, दमा, जुकाम, क्षयरोग, फेफड़ों का कैंसर, श्वसनी शोथ आदि। विश्व के महानगर व अन्य नगर जहाँ तेजी से औद्योगीकरण हो रहा है, इससे अत्यन्त प्रभावित हो रहे हैं। ताप और दुर्गन्ध भी प्रदूषण के अन्य कारण हैं। ताप, बिजली घरों व परमाणु भट्टियों से निकलने वाली ऊष्मा, जलवायु का सन्तुलन बिगाड़ देती है। ऋतुचक्र (मौमम) में काफी कुछ व्यक्तिक्रम भी प्रदूषण के कारण हुआ है। अनेक प्रकार के ईंधन जलने से वायुमण्डल में कार्बनडाईआक्साइड की मात्रा बढ़ती जा रही है। यह बढ़ाव यदि इस प्रकार जारी रहा तो हिमखण्ड पिघल जाएँगे और बाढ़ तथा प्रलय का दृश्य उपस्थित हो जाएगा। विशेषज्ञों के अनुसार यदि प्रदूषण को रोकने के लिए और पर्यावरण की शुद्धि के लिए पर्याप्त एवं मजबूत कदम न उठाए गए तो सौ-सवा सौ-वर्षों के बाद इस धरती पर मानव समेत सभी जीवधारियों का रह पाना असम्भव हो जाएगा।

उपसंहार

इन सब तथ्यों को ध्यान में रखते हुए 5 मई 1977 को समस्त विश्व में 'पर्यावरण-दिवस' मनाया गया था। इसमें प्रदूषण से मानव के सम्भावित विनाश को रोकने के लिए सम्भव उपायों के बारे में विचार किया गया था। कहा गया था कि कारखानों को रिहायशी आबादी से दूर लगाया जाय। नगरों के आसपास वन-उपवन लगाए जाएँ। कल-कारखानों के कचरे, प्रदूषित जल और मल मूत्र को नदियों में न फेंककर कोई अन्य विकल्प खोजे जाएँ। जल और वायु के प्रदूषण को रोका जाना चाहिए। मानव के स्वस्थ रहने के लिए शुद्ध वायु, शुद्ध जल तथा शुद्ध भोजन आवश्यक है। मानव के स्वस्थ एवं नीरोग भविष्य प्राप्त के लिए प्रदूषण की समस्या का हल अवश्य होना चाहिए, तभी मनुष्य दीर्घायु प्राप्त कर सकेगा। मानवता के हितैषियों तथा प्रबुद्ध-वैज्ञानिकों को इस विषय पर शीघ्रातिशीघ्र ध्यान देना चाहिए।

—o—

ओलम्पिक खेल (88) और भारत

प्रस्तावना

"शरीरमाद्यं खलुधर्मासाधनम्" अर्थात् सभी कर्तव्यों को पूर्ण करने के लिए (स्वस्थ) शरीर ही प्रथम साधन है। शरीर को स्वस्थ रखने के अनेक साधनों में व्यायाम प्रमुख साधन है और खेल व्यायाम का ही लोकप्रिय अंग है। "पढ़ोगे-लिखोगे बनोगे नबाब, खेलेगो-कूदोगे होओगे खराब" वाली उक्ति अब व्यर्थ हो चुकी है। सत्य तो यह है कि आज खेलों का महत्त्व दिन-प्रति-दिन बढ़ता ही जा रहा है। विश्व के प्रायः सभी देशों में शिक्षा के साथ ही खेलों को भी उचित महत्त्व दिया जाने लगा है। खेल बालक की एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है। इसीलिए फ्रोबेल नामक शिक्षा-शास्त्री ने अपनी किंटर गार्डन शिक्षा-प्रद्धति का मुख्य आधार खेल ही रखा था। उनके अनुसार खेल-खेल में ही बालक ऐसी शिक्षा ले सकता है जो अन्य साधनों से प्राप्त नहीं हो सकती है।

ओलम्पिक खेल

अब तो खेलों को बढ़ावा देने के लिए क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अन्तर-राष्ट्रीय स्तर पर अनेक प्रतियोगिताएँ भी विभिन्न देशों में प्रतिवर्ष होती हैं। इन सब में अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर होने वाले खेलों में ओलम्पिक खेल सर्वप्रमुख और अतिविख्यात हैं। इन खेलों की सर्वप्रथम प्रतियोगिता ईस्वी से 776 वर्ष पूर्व यूनान के एथेंसनगर के ओलम्पिया गाँव में हुई थी और दो-ढ़ाई सौ वर्ष तक वहीं होती रही। किन्तु वहीं के आन्तरिक संघर्षों के कारण यूनान सम्राट् ने इसे बन्द करवा दिया। बाद में फ्रांस के बैरन द कोवेर्त ने इन प्रति-योगिताओं को पुनः आरम्भ करवाया और पुनः आधुनिक प्रतियोगिता सन् 1886 में यूनान के एथेंस में ही हुई। तब से प्रति चार वर्ष पश्चात् विश्व के प्रमुख देशों में यह आयोजन होता है। इस वर्ष 1988 में ओलम्पिक खेलों का आयोजन दक्षिण कोरिया के सियोल नगर में हुआ।

उद्देश्य

ओलम्पिक खेलों का उद्देश्य बताते हुए लार्ड कोवेर्त ने कहा था

कि—"ओलम्पिक खेलों से विश्व राष्ट्र के नागरिकों में शारीरिक शक्ति का विकास होगा। खेलों के माध्यम से प्रत्येक राष्ट्र के बालक-बलिकाओं क उचित चरित्र-निर्माण किया जायेगा तथा खिलाड़ियों में खेल-भावना का विकास होगा, उनमें स्वस्थ प्रति-द्वन्द्विता, अन्तरराष्ट्रीय सहयोग और सद्भाव का निर्माण होगा। इतना ही नहीं, इससे विभिन्न विचारों वाले देश खेल-कूद के माध्य से एक-दूसरे के निकट आयेंगे; जिससे विश्व-बन्धुत्व को बल मिलेगा।"

पाँच छल्लों से अंकित ध्वज ओलम्पिक का प्रतीक है। ये छल्ले विश्व के पाँचों महाद्वीपों में राष्ट्रों के एक-दूसरे से मिलकर ओलम्पिक प्रतियोगिताओं में उनके पारस्परिक सहयोग की भावना को प्रकाशित करते हैं।

चौबीसवाँ ओलम्पिक

चौबीसवें ओलम्पिक खेलों का आयोजन इस बार 1988 के सितम्बर मास में दक्षिण कोरिया के प्रसिद्ध नगर सियोल में बड़ी धूम-धाम से सम्पन्न हुआ। प्रतियोगिता का प्रारम्भ दक्षिणी कोरिया के राष्ट्रपति के उद्घाटन भाषण से हुआ। प्रथम दिन खेलों में भाग लेने आये सभी देशों के प्रतिनिधियों ने अपने देश की वेश-भूषा में अपने देश तथा ओलम्पिक से ध्वज को लेकर मार्च पास्ट' किया और कुछ रंगा-रंगा कार्यक्रम भी हुए। इसी प्रकार इन खेलों का समापन भी बड़ा ही भव्य और आकर्षक रहा।

ओलम्पिक और भारत

चौबीसवीं ओलम्पिक प्रतियोगिताओं में भारत के लगभग पैंसठ खिलाड़ियों ने भाग लिया। खिलाड़ियों में कौन-कौन भाग लेंगे, इसका निर्णय अन्तिम समय तक न हो सका। कुछ अधिकारी वहाँ पहले ही पहुँच गए और कुछ बाद में—असमंजस को स्थिति समाप्त होने पर पहुँचे। पदक- तालिका की दृष्टि से इसमें प्रथम स्थान रूस का, द्वितीय जर्मनी (पूर्वी) का तृतीय अमेरिका का और चतुर्थ चीन का रहा। अन्य छोटे राष्ट्रों ने भी कई जीते। किन्तु भारत का स्थान कहीं भी न रहा। स्वर्ण और रजत-पदकों की तो बात ही क्या, भारत एक कांस्य पदक भी प्राप्त न कर सका। हॉकी, कुश्ती, दौड़, घुड़सवारी, निशानेबाजी किसी में भी हमारे खिलाड़ियों का प्रदर्शन अच्छा न

रहा। जिस हॉकी में भारत ने पहले अनेकबार नाम कमाया था उसमें वह सेमीफाईनल तक भी न पहुँच सका। दौड़ में प्रसिद्ध धाविका पी० टी० उषा से कुछ आशा थी, पर वह भी सातवें स्थान पर रही। अन्य प्रतियोगिताओं को तो बात ही न पूछो। खिलाड़ी मानो बेमन से खेले और सैर करके स्वदेश लौट आये।

हमारे इस निराशाजनक प्रदर्शन का कारण खिलाड़ियों को दोषपूर्ण चयन तथा खेल संघों में राजनीति का घुसना तथा एक दूसरे को नीचा दिखाने की भावना भी है। फिर अन्य देश जहाँ एक प्रतियोगिता समाप्त होने के साथ ही अगली प्रतियोगिता के लिए तैयारी करना आरम्भ कर देते हैं और उनमें भाग लेने वाले खिलाड़ियों का चयन कर उनका प्रशिक्षण प्रारम्भ कर देते हैं, वहीं भारत में अन्तिम क्षणों तक खिलाड़ियों का चयन नहीं होता और चुने गए प्रत्याशियों को प्रशिक्षण भी पूरा नहीं दिया जाता। फिर प्रतियोगी खिलाड़ियों के भविष्य की आर्थिक गारंटी भी नहीं है। इसलिए उनमें वह उत्साह नहीं जगता, जो जीतने के लिए आवश्यक होता है।

उपसंहार

यदि हमें वास्तव में ओलम्पिक खेलों में कुछ कर दिखाना है तो खेलों से राजनीति को दूर रखना होगा, प्रतिभाशाली खिलाड़ियों का समय से पूर्व चयन कर उन्हें उचित प्रशिक्षण देना होगा तथा उन्हें आर्थिक चिन्ताओं से भी मुक्त कराना होगा।

—o—

कम्प्यूटर : प्रयोग तथा महत्त्व

प्रस्तावना

विकसित या विकासशील देशों में उद्योगों के क्षेत्र में आज जिस यन्त्र का सर्वाधिक प्रयोग हो रहा है, वह है—कम्प्यूटर। गत दस-बारह वर्षों से भारत में भी कम्प्यूटर की शिक्षा और उसका प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। भारत के

वर्तमान शासकों का विचार भी है कि इक्कीसवीं शताब्दी में प्रवेश के लिए और द्रुतगति से भौतिक और आर्थिक समृद्धि के लिए आज कम्प्यूटर का प्रयोग नितान्त अनिवार्य है। यदि हमें यथाशीघ्र विश्व के विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में खड़ा होना है, गौरव प्राप्त करना है तथा दस-बारह वर्षों में ही आगामी सौ वर्षों की यात्रा पूर्ण करनी है तो उद्योग, शिक्षा, प्रशासन, कृषि; विज्ञान, टेक्नोलोजी आदि सभी क्षेत्रों में कम्प्यूटर प्रणाली को अपनाना होगा। विज्ञान के कारण अन्य राष्ट्रों में जो सर्वाधिक समृद्धि आ रही है, उसका जो प्रभाव हमारे देश पर पड़ रहा है, उसे भी ध्यान में रखते हुए आज कम्प्यूटर का प्रयोग अनिवार्य हो गया है।

कम्प्यूटर यन्त्र

वर्तमान-काल में जो संगणक यन्त्र हैं —कम्प्यूटर उन्हीं का सबसे विकसित, बृहद् और सूक्ष्मतम गणना को भी अल्प समय में ही करने वाला यन्त्र है। हम जानते हैं कि विभिन्न व्यवसायों में अंक गणित की आवश्यकता पड़ती है। व्यवसायों में जैसे-जैसे विकास और विस्तार होता गया, वैसे ही अंक गणित को आधुनिक बनाने का काम वैज्ञानिकों ने किया। इधर अभियांत्रिकी (इंजनीयरी) के क्षेत्र में नित्य नए और जटिल आविष्कार होते जा रहे हैं तो उनके साथ ही गणना प्रक्रिया भी जटिल से जटिलतर होती जा रही है। जैसे कि उपग्रहों का अन्तरिक्ष में संचरण, उनका भू-केन्द्र से निरन्तर सम्पर्क का एक-एक सेकेंड का ठीक-ठीक ज्ञान, उनका नियन्त्रण; युद्ध में बम-वर्षक यानों का ठीक संचालन और उनकी गति का नियन्त्रण, आधुनिक बड़े-बड़े उद्योगों में बड़ी-बड़ी मशीनों का नियन्त्रण आदि। इनकी गणना इतनी विस्तृत और जटिल हुई कि उसे सरल और सूक्ष्म बनाने के लिए वैज्ञानिक मस्तिष्कों ने एक ऐसे संगणक संयन्त्रा का निर्माण किया, जो बड़ी-से-बड़ी संख्या की त्रुटि रहित गणना क्षण-भर में कर देती है। यही कम्प्यूटर का कौशल है। वस्तुतः जटिल मस्तिष्कों की जटिल यान्त्रिक प्रक्रिया ही कम्प्यूटर है।

कम्प्यूटर यन्त्र के भाग

कम्प्यूटर यन्त्र में पाँच भाग होते हैं—

(i) स्मरण कक्ष—इस भाग में सब प्रकार की सूचनाएँ भरी जाती हैं,

जिनके आधार पर कम्प्यूटर गणना कार्य करता है।

(ii) नियन्त्रण कक्ष—गणना को त्रुटि-रहित और शुद्ध करने में इस भाग का उपयोग होता है।

(iii) अंक गणित यंत्र—इस भाग के द्वारा गणना-प्रक्रिया पूर्ण होती है।

(iv) आन्तरिक यन्त्र—इस भाग में सब प्रकार की जानकारियाँ और उनसे सम्बद्ध निदेश का संकलन होता है।

(v) बाह्य यन्त्र—कम्प्यूटर के उक्त चारों भागों की विभिन्न प्रक्रियाओं से जो-जो सूचनाएँ संकलित होती हैं, उनका विश्लेषण करना और परिणाम को घोषित करना इस भाग के कार्य हैं।

प्रयोग-प्रक्रिया

कम्प्यूटर में सूचनाएँ एकत्र करने के लिए अलग-अलग भाषा (लिपि) और संकेत भरे जाते हैं। इसके लिए सभी सूचनाओं को पहले कम्प्यूटरी भाषा में बदला जाता है; जो तकनीकी प्रक्रिया में 'ऑफ,' 'ऑन,' 'जीरो' (शून्य) तथा एक है। इसे द्विचर संख्या भी कहते हैं। इन बिट्स के द्वारा भाषा को संख्या में परिवर्तित किया जाता है। कम्प्यूटर प्रणाली में छह बिट्स को चौंसठ विधियों में प्रयुक्त किया जा सकता है। कम्प्यूटर के कुंजीपटल पर अंग्रेजी के छब्बीस वर्णों, दस अंकों तथा विराम चिह्नों को आवश्यक संकेतों द्वारा ही प्रकट किया जाता है। तब नियंत्रण उपकरण की सहायता से निश्लेषण तैयार होने पर अन्तिम परिणाम कम्प्यूटर टर्मिनल पर मुद्रित होकर बाहर आ जाता है।

उपयोग और महत्त्व

आज बड़े-बड़े व्यवसायों, तकनीकी संस्थानों, उद्योगों, प्रशासनिक कार्यालयों, विज्ञान संस्थानों में कम्प्यूटरों का प्रयोग आरम्भ हो गया है; तथा दिन-प्रतिदिन इनका उपयोग बढ़ता ही जा रहा है। अब तो अमेरिका से सुपर-कम्प्यूटर खरीदने की बात भी चल रही है। उक्त सभी संस्थानों में सूक्ष्म से सूक्ष्मतम गणना, बड़े-बड़े उत्पादनों का लेखा, भावी उत्पादनों का पूर्वानुमान; बृहत् संयंत्रों की परीक्षा और उचित संचालन, परीक्षा परिणामों की गणना;

वर्गीकरण, योग, गुणा, भाग, घटाना, अन्तरिक्ष यात्रा, ऋतु सम्बन्धी जानकारी, व्यवसाय, चिकित्सा, समाचार-पत्रों आदि में उपयोगी तथा त्रुटिहीन जानकारी कम्प्यूटर प्रणाली से ही प्राप्त की जा रही है। इसी प्रकार आंकिक कार्यों के करने की गति, स्व-चालित उद्योगों, और विद्युतीय विद्या (इलेक्ट्रोनिक्स) की प्रगति में भी इस प्रणाली का अधिक प्रयोग हो रहा है।

आधुनिक कम्प्यूटर एक सैकेंड में दस लाख तक की गणना को बड़ी सरलता और सूक्ष्मता से कर सकता है। बिना थके और बिना ध्यान बटे ही शुद्ध गणना करना इस यन्त्र की विशेषता है। इसके कारण सभी क्षेत्रों में विकास की गति दस गुणा से लेकर हजार गुणा तक हो सकेगी। यद्यपि कम्प्यूटर मानव मस्तिष्क की बराबरी नहीं कर सकता, वह भावना शून्य है तथा मानव के समान निर्णय लेने की सामर्थ्य उसमें नहीं है तो भी जटिल गणनाओं को त्वरित कर देने में उसकी क्षमता कई मानव मस्तिष्कों के समान है। बहुत प्रत्न करने पर भी मनुष्य जब तथ्यों, नामों, स्थानों तथा सूचनाओं को स्मरण नहीं कर पाता, तब कम्प्यूटर पलक झपकते ही इन सभी कार्यों कर देता है।

उपसंहार

देश को आर्थिक दृष्टि से सुसमृद्ध करने में कम्प्यूटर अत्यन्त उपयोगी रहेगा। अतः इसका उपयोग करना ही पड़ेगा। नहीं तो भारत अन्य राष्ट्रों के विकास की गति में बहुत ही पीछे छूट जायेगा।

---o---

इक्कीसवीं शताब्दी का भारत

प्रस्तावना

भारत एक विशाल देश है। इसके हजारों वर्षों से अपनी परम्पराएँ व विश्वास रहे हैं। यहाँ के लोग अपने-अपने ढंग से अपना जीविका-उपार्जन करते रहे हैं। यह माना जाता रहा है कि यहाँ के लोग प्रगतिशील नहीं हैं या उनके काम में गति नहीं है। वे किसी परिवर्तन के लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं

हैं तथा इससे समाज में जड़ता आ गई है। हमारे युवा प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी ने जब से सत्ता संभाली है, तभी से वे 21वीं सदी के भारत की कल्पना करने लगे हैं। वे इसे अपने सपनों का भारत बनाना चाहते हैं तथा द्रुतगति से विश्व के अन्य विकसित देशों के समकक्ष पहुँचाना चाहते हैं। 21वीं सदी जबकि अभी 12 वर्ष दूर है, लेकिन उसका शोर अभी से मचा हुआ है। अब हम श्री राजीव गाँधी के 21वीं सदी के कार्यक्रम और उस समय में भारत कैसा होगा। सरकार की उस समय के बारे में क्या योजनाएँ हैं। इन सबके बारे में विचार करेंगे।

इक्कीसवीं शताब्दी के भारत की रूपरेखा

श्री राजीव गाँधी के अनुसार इक्कीसवीं सदी का भारत भूख और गरीबी से मुक्त होगा। भारत एक आर्थिक रूप से मजबूत देश बन जायेगा। औद्योगिक जड़ता समाप्त हो जायेगी। उन्होंने इसीलिए एक 'मानव संसाधन तथा विकास' मंत्रालय की स्थापना की है ताकि सामाजिक कल्याण और गरीबी उत्थान के कार्यक्रम भली-भांति प्रकार चलाए जा सकें। उनके अनुसार देश की प्रगति के लिए तकनीकी क्रांति होना जरूरी है। इक्कीसवीं सदी का भारत एक कम्प्यूटर युग में पदार्पण कर चुका होगा, जो कम्प्यूटर युग होगा। शिक्षा के क्षेत्र में कम्प्यूटर अनिवार्य हो जायेगा। कम्प्यूटर को गाँवों तक भी पहुँचाया जायेगा। विज्ञान और तकनीक का बोलबाला होगा। 21वीं सदी मशीनी मानवों की होगी। उद्योग यंत्र मानवों (रोबोट) द्वारा संचालित होंगे। कम्प्यूटर के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति होगी। कम्प्यूटर द्वारा काम में गलतियां कम हो जायेगी। उनके अनुसार आधुनिक तकनीक से नये रोजगारों का निर्माण होगा, जो ज्यादा योग्यता माँगेगा और ज्यादा आकर्षक होगा।

इक्कीसवीं सदी के भारत में ज्ञान और विज्ञान का बोलबाला होगा। उच्च तकनीक द्वारा सारी सुविधाओं का विस्तार होगा। अंतरिक्ष कार्यक्रमों में तेजी आयेगी। दूरसंचार, देलीविजन आदि का किस्तार गाँव-गाँव तक होगा। स्वास्थ्य और शिक्षा पर अत्यधिक जोर होगा। 21वीं सदी का भारत बीमारियों से मुक्त होगा। सारी जनता का स्वास्थ्य अच्छा होगा। सरकार यह लक्ष्य प्राथमिक

चिकित्सा सेवाओं का गाँवों तक विस्तार कर प्राप्त करेगी। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में टेलीविजन और वीडियो कैसेट द्वारा स्वास्थ्य सम्बन्धी सूचनाएँ भी दी जायेंगी। सभी घर सभी तरह की भौतिक सुख-सुविधाओं से परिपूर्ण होंगे।

हानि

इतने सब होते हुए भी इक्कीसवीं सदी की इस परिकल्पना में अनेक खतरे भी निहित हैं। आधुनिक तकनीक पर अत्यधिक जोर होने के साथ हमारी सरकार बहुराष्ट्रीय निगमों को इस देश में आने का खुला निमंत्रण दे रही है। इससे यहाँ की मिश्रित अर्थव्यवस्था को धक्का लगेगा। इससे यहाँ के सार्वजनिक उपक्रमों को भी सरकार द्वारा बन्द करने की नौबत आ सकती है। उच्च तकनीक अपनाने व समझने के लिए हमें वहाँ से विदेशी तकनीशियनों को भी बुलाना पड़ेगा, जिससे यहाँ के आर्थिक संसाधनों पर बोझ बढ़ेगा। वैसे भी विकसित देश हमें वे ही जानकारियाँ देते हैं जो तकनीक उनमें यहाँ पुरानी पड़ चुकी है। तब हम कैसे यह आशा कर सकते हैं कि हमारी तकनीक उच्च व सर्वश्रेष्ठ होगी। वैसे भी अपने देश के नागरिकों को न्यूनतम सुविधाएँ उपलब्ध कराए बिना इतनी महँगी तकनीक आयात करना कहाँ की बुद्धिमानी है? इतनी जटिल तकनीक का दूसरा नुकसान यह है कि वह मानवीय भावनाओं को बिल्कुल नजरअंदाज कर देती है और मानव को बिल्कुल मशीन बना देती है। इससे कुंठा, तनाव, भय आदि बढ़ते हैं।

अन्य सम्भावनाएं

21वीं सदी में उपभोक्ता संस्कृति का बोलबाला होगा। हर चीज बाजार की के जरूरत हिसाब से तैयार की जायेगी। भौतिक सुविधाओं को प्राप्त करने की इस दौड़ में मनुष्य के नैतिक संस्कार समाप्त होते जा रहे हैं। दहेज आदि समस्त बुराइयाँ भी इसी उपभोक्ता वादी संस्कृति की देन है। जो लड़का खुद अपनी कमाई से सुख-सुविधाएँ नहीं जुटा पाता है, वह अपनी ससुराल से आशा रखता है। इक्कीसवीं सदी में मनुष्य ज्यादा व्यक्तिवादी हो जायेगा। परिवारों में इसी वजह से तनाव बढ़ने व बिखराव आने की आशंका है। हमारे देश में अभी भी छुआछूत भेदभाव व अंधविश्वास जैसी समस्याएं हैं। जनसंख्या का

एक बहुत बड़ा भाग जो कि लगभग 60% है, अनपढ़ है। आधी आबादी के पास रहने को घर नहीं है। बेरोजगारी की समस्या भीषण होती जा रही है। इन सब के होते सिर्फ ऊँची श्रेणी के कुछ सुविधासम्पन्न लोग ही 21वीं सदी में पहुँच सकेंगे। आज हर जगह राजनीति का बोलबोला है। सभी अच्छी योजनाएँ सफेद हाथी बनकर रह जाती हैं। राजनीतिज्ञों की आपसी लड़ाई में काम ढंग भी से नहीं हो पाता है। जब तक जनता का नेतृत्व करने वाले योग्य नहीं होंगें, कोई भी योजनाएँ फलीभूत नहीं होगी, न ही हम 21वीं सदी में संतोष जनक ढंग से प्रवेश कर सकेंगे।

उपसंहार

21वीं सदी में जाने के लिए हमें अभी से सही योजनाएँ बनानी होंगी। सरकारी प्रक्रिया को सरल बनाना होगा। योग्य अधिकारियों को आगे लाना होगा। लालफीताशाही को समाप्त करना होगा। मन्त्रियों का हस्तक्षेप कम करना होगा और उच्च तकनीक को धीरे-धीरे लाना होगा, न कि एकदम से।

—o—

प्रधानमंत्री राजीव गाँधी की चीन-यात्रा

प्रस्तावना

चीनी सभ्यता भारतीय सभ्यता की तरह हजारों वर्ष पुरानी है। दोनों सभ्यताओं के इतिहास में भी अद्भुत समानता है। दोनों सभ्यताओं के पारस्परिक सम्बन्ध भी हजारों वर्ष पुराने हैं। यहाँ से कुमारजीव और बुद्धिधर्म जैसे भारतीय विद्वानों ने चीन जाकर अपनी विद्वता का सिक्का जमाया। फाह्यान, ह्वेनसांग आदि यात्रियों ने हिन्दुस्तान आकर यहाँ की सम्पन्नता और ज्ञान का स्वदेश जाकर बखान किया। यहाँ से डा० कोटनीस जैसे महापुरुष ने चीन जाकर वहाँ के युद्धपीड़ितों की सेवा की। आपस का इतना भाईचारा होते हुए भी पिछले छत्तीस वर्षों से दोनों देशों के सम्बन्ध तनावपूर्ण हैं। सन् 1962 में भारत-चीन युद्ध ही दोनों देशों में वैमनस्यपूर्ण सम्बन्ध बन गए हैं।

सन् 1954 में भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं० नेहरू चीन गए थे। उसके बाद वहाँ के प्रधानमन्त्री चाऊ० एन० लाई भी हिन्दुस्तान आये थे। सन् 1955 में दोनों देशों ने पंचशील के सिद्धान्तों को स्वीकार किया था; जिसके आधार पर शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की भावना को अंगीकार किया गया था। वह जमाना 'हिन्दी-चीनी' भाई-भाई का था। किन्तु चीन ने अचानक सन् 1962 में भारत पर आक्रमण कर हमारे एक बहुत बड़े भू-भाग पर अधिकार कर लिया था। साथ ही वह अरुणाचल पर भी अपना दावा जताता है। सन् 1986 में चीन नेअरुणाचल में घुसपैठ की थी। इन सब परिस्थितयों के चलते दोनों देशों के सम्बन्ध अत्यन्त कटु हो गये थे। इन विवादों का सबसे महत्वपूर्ण पहलू सीमाओं के निर्धारण को लेकर है। दोनों देशों के बीच 'सीमा-वार्ता' के आठ दौर हो चुके हैं, किन्तु कोई संतोषजनक हल अभी तक नहीं निकल पाया है। सीमा-विवाद के चलते चीन के साथ अन्य क्षेत्रों के सहयोग में भी गतिरोध बना हुआ था। हमारे प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी की वर्तमान यात्रा इस गतिरोध को तोड़ने में एक सार्थक कदम है। पहली बार दोनों देशों ने यह स्वीकार किया है कि सीमा-विवाद के सम्बन्धों को सामान्य बनाने की प्रक्रिया में बाधक न बनने दिया जाए।

राजीव की चीन-यात्रा

प्रधानमंत्री राजीव गाँधी इसी 19 दिसम्बर' 88 को पाँच दिन की चीन की राजकीय यात्रा पर गए। वहाँ पहुँचने पर उनका भव्य स्वागत किया गया। हवाई अड्डे से उन्हें 'ग्रेट हाल आफ पीपुल' ले जाया गया, जहाँ चीनी प्रधानमंत्री ली पेंग ने उनका हार्दिक स्वागत किया। स्वागत समारोह के बाद दोनों देश के प्रधानमंत्रियों के बीच वार्ता के दो प्रारम्भिक दौरों में पुराने विवादों को भुलाने और सदियों पुराने सम्बन्धों को (जो कि शान्तिपूर्ण. सह-अस्तित्व की भावना पर आधारित हैं) मजबूत बनाने पर जोर दिया गया। यह एक ऐतिहासिक क्षण था, जब दोनों देश के प्रधानमन्त्री एक साथ चौंतीस वर्षों बाद वार्ता की मेज पर बैठे। साथ ही सीमा-विवाद को सौहार्द पूर्ण वातावरण में सुझलाने का भी निश्चय हुआ। उन्होंने वहाँ के राष्ट्रपति यांग शांग कुन तथा

कम्युनिस्ट पार्टी के चेयरमैन देंग श्याओं से भी मुलाकात की। प्रत्येक वार्ता में सीमा विवाद को शान्ति से सुलझाने पर जोर दिया गया तथा पंचशील के सिद्धान्तों को अपनाने पर बल दिया गया। श्री राजीव गाँधी की चीन यात्रा के साथ ही दोनों देशों के बीच सीधी अन्तरराष्ट्रीय ट्रंक काल सेवा शुरू हो गई है।

चीन और भारत के मध्य तीन समझौतों पर हस्ताक्षर किये गए। एक समझौता विज्ञान और तकनीक के सम्बन्ध में किया गया, दूसरा दोनों देश के मध्य हवाई सेवाओं के बारे में तथा तीसरा सांस्कृतिक आदान-प्रदान के बारे में किया गया।

प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने तिब्बत को चीन का हिस्सा मानने की घोषणा की और उसे चीन की आन्तरिक समस्या बताया तथा भारत की भूमि पर चीनी विरोधी अभियान को न चलने देने के अपने संकल्प को दोहराया। साथ ही दोनों देश के प्रधानमंत्रियों के मध्य कम्पूचिया समस्या के बारे में भी विचार-विमर्श हुआ। चीनी सरकार ने तिब्बत के बारे में भारत के रुख की प्रशंसा की। वार्ता में इस बात पर भी जोर दिया कि दोनों देशों के बीच मैत्री-पूर्ण सम्बन्ध सिर्फ दोनों देशों की की जनता भलाई के लिए ही नहीं, वरन् एशिया महाद्वीप में शान्ति के लिए भी अत्यन्त आवश्यक है।

प्रधानमंत्री ने वहाँ जाकर चीन की प्रसिद्ध दीवार को भी देखा, जो कि 6700 कि०मी० लम्बी है। इसे ईसा से सातवीं शताब्दी पूर्व विदेशी आक्रमण-कारियों के बार-बार के हमले से बचने के लिए बनाया गया था। उन्होंने बीजिंग में 15वीं सदी में मिंग शासकों द्वारा बनवाये गये। 'स्वर्ग के मन्दिर' को भी देखा जो कि अपनी वास्तुकला के लिए प्रसिद्ध है।

भारत और चीन के बीच आपस में मंत्रिमंडलीय स्तर की संयुक्त कमेटी बनाने के बारे में भी सहमति हुई है, जो आर्थिक तकनीकी व वैज्ञानिक क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने की संभावनाओं पर विचार करेगी। यह भी निश्चय किया गया है कि दोनों देशों के मध्य प्रतिवर्ष विदेशमंत्रालय के स्तर पर बैठकें हों। एक संयुक्त कार्यकारी दल के गठन का भी फैसला हुआ जो सीमा-विवाद हल करने के लिए तीन वर्षों में ठोस सुझाव देगा। अपनी यात्रा के अन्तिम चरण

में प्रधानमंत्री शंघाई गये। जहाँ उनका स्वागत वहाँ के मेयर ने किया। प्रधानमंत्री 23 तारीख को वापिस स्वदेश लौटे। साथ ही लाए एक उज्ज्वल व शांतिपूर्वक सह-अस्तित्व की भावना, जिसमें दोनों देशों के नागरिकों की भलाई निहित है।

—o—

पत्र-लेखन

(पत्र-लेखन-विधि)

पत्र-लेखन मानव जीवन का अभिन्न अंग और सभ्य मानव की अनिवार्य आवश्यकता है। अपने से दूर स्थित सम्बन्धियों, मित्रों परिचितों या अपरिचितों को अपने भावों से परिचित कराने की भावना ने ही पत्र-लेखन कला को जन्म दिया है।

पत्र-लिखना भी एक कला है। इससे हम पत्र पाने वाले को प्रभावित कर सकते हैं।

पत्र लिखने में, विशेषकर परीक्षोपयोगी पत्र लिखने में परीक्षार्थियों को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए :—

- ☐ शुद्ध, सरल, प्रवाहपूर्ण, आडम्बर हीन भाषा।
- ☐ व्यर्थ और अप्रासंगिक बातों का अभाव।
- ☐ संक्षिप्त प्रभावशाली वाक्य।
- ☐ विराम चिह्नों का उचित प्रयोग।
- ☐ सम्बोधन, अभिवादन तथा उपसंहार शब्दों का विशेष ध्यान।
- ☐ अभिव्यक्त विचारों में तारतम्य।
- ☐ भिन्न-भिन्न विचारों को अलग-अलग अनुच्छेदों में बाँटना।
- ☐ विचारों की पुनरावृत्ति से बचना।

माध्यमिक और उच्चतम माध्यमिक परीक्षाओं में जिस प्रकार के पत्र लिख-

वाये जाते हैं; उनको निम्नलिखित तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है :–

(1) निजी पत्र ।

(2) प्रार्थना पत्र, शिकायती पत्र, सहायता-याचना पत्र ।

(3) व्यापारिक पत्र ।

(क) प्रथम प्रकार के पत्रों में उन सभी पत्रों की गणना होती है जो परिवार के सदस्यों, मित्रों, सम्बन्धियों एवं परिचितों को लिखे जाते हैं। माध्यमिक और प्रवेशिका की परीक्षाओं में पूछे जाने वाले निजी पत्रों में कभी-कभी किसी विशेष दृश्य, स्थल, घटना, समारोह, दुर्घटना, मैच, यात्रा आदि को लिखने का भी निर्देश होता है। ऐसे पत्रों में परीक्षक का मूल उद्देश्य विद्यार्थी की कल्पना-शक्ति को जाँचना होता है।

(ख) द्वितीय प्रकार के पत्रों में किसी उच्च अधिकारी विशेष को पत्र लिखने को कहा जाता है जो प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से जनता के कार्य, शिकायत आदि से सम्बन्धित हैं। ऐसे पत्रों में निजी पत्रों की सी आत्मीयता का पूर्णतः अभाव होता है। इसमें विनय-भाव का होना परम आवश्यक है।

(ग) व्यापारिक पत्रों में लेन-देन सम्बन्धी बातों का वर्णन होता है। ऐसे पत्र संक्षिप्त, सरल और नपे-तुले होते हैं।

प्रत्येक पत्र के आठ भाग होते हैं। पत्र के लिए निर्धारित अंकों को पत्र के विभिन्न अंगों में विभक्त करके ही परीक्षक पत्र की जाँच करता है और अंक देता है। अतः परीक्षार्थी को चाहिए कि पत्र के इन अंगों का पूर्ण ज्ञान अर्जित करें। विद्यार्थियों की सुविधा के लिए हम पत्र के मुख्य अंगों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं।

लिखने का स्थान और पता

पत्र को हाशिया छोड़कर लिखना चाहिए। सर्वप्रथम पत्र के ऊपर दायीं ओर उस स्थान का पता लिखा जाता है, जहाँ से पत्र भेजा जाता है। स्थान-निर्देश के पश्चात् अल्पविराम (,) देना आवश्यक है। परीक्षा के समय 'स्थान' की जगह

'परीक्षा-भवन' लिखना चाहिए। उसके नीचे तिथि-निर्देश होना चाहिए। उदाहरणार्थ :—

परीक्षा भवन,
10 मार्च, 1989

तिथि-निर्देश में जो विशेष ध्यान देने वाली बात है, वह है—सन् के पूर्व अल्प विराम चिह्न लगाना। तिथि को लिखने के कई तरीके हैं। ऊपर दिया गया तरीका सर्वानुमोदित, सर्वविदित, सर्वाधिक प्रचलित एवं शुद्ध है।

पत्र को आरम्भ करने के लिए सम्बोधन वाक्यों का ज्ञान आवश्यक है। इसी प्रकार अभिवादन-शब्दों का ज्ञान भी आवश्यक है, क्योंकि यह पत्र का चतुर्थ मुख्य अंग है। सम्बोधन के पश्चात् पत्र में अभिवादन शब्दों के लिखने का क्रम आता है। इन दोनों को 'प्रशस्ति' भी कहते हैं।

अभिवादन के पश्चात् पत्र का आरम्भ होता है। इसका आरम्भ पत्र के प्रकार के अनुसार होता है। इनमें ध्यान देने योग्य बात यह है कि आरम्भ विषय की भूमिका के रूप में हो।

पत्र के कलेवर को भावानुरूप भिन्न-भिन्न अनुच्छेदों में बाँटा जाना चाहिए। पत्र के इस भाग का सम्बन्ध मुख्य विषय से होता है। अतः इस भाग में व्यक्त विचार सहज, सरल, स्वाभाविक और परीक्षापयोगी हों।

पत्र की समाप्ति पर सम्बन्धित व्यक्तियों को आदर या स्नेह दिया जाता है। व्यापारिक पत्रों में इस प्रकार के वाक्यों की आवश्यकता नहीं होती। अन्त में पत्र का उपसंहार करते समय आज्ञाकारी, विनीत, शिष्य, सेवक, भवदीय आदि शब्द लिखा जाता है। इस प्रकार के शब्द के आगे भी विराम चिह्न देना आवश्यक है। इस शब्द के नीचे लिखने वाले का नाम होता है।

यथासम्भव पत्र की पूर्ण प्रक्रिया को व्यक्त करने के लिए पत्र के अन्त में बाईं ओर पता भी लिखना चाहिए।

पत्र के आरम्भ में लिखने योग्य कुछ वाक्य—

(1) आपका कृपा पत्र मिला; पढ़कर बड़ी प्रसन्नता हुई।

(2) बहुत दिनों पश्चात् आपका पत्र पाकर हृदय गद्‌गद् हो गया।

(3) कार्य में अत्यन्त व्यस्त रहने के कारण आपके पत्र का उत्तर न दे सका। क्षमा प्रार्थी हूँ।

(4) आप को मेरे पत्र की इतनी प्रतीक्षा करनी पड़ी, इसके लिए मुझे हार्दिक खेद है।

(5) यह पढ़कर अत्यन्त दुःख हुआ कि······।

पत्र-समाप्ति से पूर्व लिखे जाने योग्य कुछ वाक्य—

(1) शेष शुभ।

(2) पत्रोत्तर की प्रतीक्षा में।

(3) कष्ट के लिए क्षमा करें।

(4) कृपा के लिए धन्यवाद।

(5) धन्यवाद सहित।

(6) योग्य सेवा से सूचित करें।

(7) विशेष कृपा बनाए रखें।

(8) बड़ों को सादर प्रणाम और सभी छोटों को प्यार-आशीर्वाद।

विशेष—छात्र इस बात पर विशेष ध्यान दें कि वे परीक्षा में पत्र लिखते समय पते के स्थान पर 'परीक्षा भवन' ही लिखें तथा अन्त में अपना नाम लिखकर 'क' 'ख' 'ग' ही लिखें।

[टिप्पणी-सम्बोधन वाक्यों के ज्ञान के लिए आगे दी गई तालिका को ध्यानपूर्वक देखें और कंठस्थ करें।]

पत्र में सम्बोधन, अभिवादन, उपसंहार

(तालिका)

(क) अपने से बड़ों के लिए

सम्बोधन	अभिवादन	उपसंहार
पूज्य, परमपूज्य, मान्य, मान्यवर, श्रद्धेय, आदरणीय, पूजनीय प्रातः स्मरणीय आदि	चरण वन्दना, सादर प्रणाम, सादर चरण-स्पर्श आदि	आज्ञाकारी, विनीत, कृपाभिलाषी, भवदीय, सेवक, प्रेमपात्र आदि

(ख) अपने से छोटों के लिए

सम्बोधन	अभिवादन	उपसंहार
प्रिय, प्रियवर, चिरंजीव, आयुष्मान्, भाई आदि	शुभाशीर्वाद, चिरंजीव, आनन्दित रहो, सुखी रहो, प्रसन्न रहो आदि	शुभचिन्तक, शुभेच्छु, हितैषी, शुभाकांक्षी

(ग) मित्रों के लिए

सम्बोधन	अभिवादन	उपसंहार
प्रियवर, प्रिय मित्र, सखे, प्रियसखी, स्नेही, परम स्नेही आदि	नमस्ते, सप्रेम नमस्ते, नमस्कार स्नेहाभिवादन	आपका मित्र, स्नेही स्नेहाकांक्षी, अभिन्न हृदय

(घ) व्यापारियों के लिए

सम्बोधन	अभिवादन	उपसंहार
श्रीमान्, मान्य महोदय, प्रिय महोदय, मान्यवर आदि	नमस्ते, नमस्कार	भवदीय, निवेदक आपका

(ङ) प्रबन्धकों/अधिकारियों को

सम्बोधन	अभिवादन	उपसंहार
महोदय, श्रीमान् सम्पादक मान्य महोदय, मान्यवर आदि	नमस्ते, नमस्कार	भवदीय, प्रार्थी विनीत

(च) भाई/बहन के लिए

सम्बोधन	अभिवादन	उपसंहार
पूज्य बहिन जी, पूज्य दीदी प्रिय बहिन, पूज्य माता जी, प्रिय भाई आदि	सादर प्रणाम, सादर नमस्कार, प्रणाम, चरणवन्दना, नमस्ते, शुभाशीर्वाद, आशीर्वाद चिरंजीव, आनन्दित रहो	शुभचिन्तक, तुम्हारा भाई, दास बहिन, प्यारी बहन, आपका अनुज, तुम्हारा अग्रज

छोटे भाई को पत्र
(स्वास्थ्य पर ध्यान देने के लिए)

परीक्षा भवन
1 मार्च 1989

य सुनील,

शुभाशीर्वाद ।

एक पत्र मैंने तुम्हारे लिए कल भेजा था । आज दूसरे ही दिन अन्य पत्र
जने का कारण है । आज ही मुझे तुम्हारे अभिन्न मित्र अनुपम से पता चला है
तुम 'किताबी कीड़े' बनते जा रहे हो और अपने खाने-पीने व रहने-सहने के
की ओर जरा भी ध्यान नहीं देते । इसी कारण तुम अस्वस्थ भी रहने लगे हो ।

प्रियवर, यह ठीक है कि परीक्षाएँ सिर पर हैं और कक्षा में अच्छे विद्यार्थियों
तुम्हारा नाम बना रहना आवश्यक है, किन्तु यदि परीक्षा के दिनों में तुम्हारे
ास्थ्य ने तुम्हारा साथ न दिया तो क्या होगा ? अतः तुम्हें पढ़ाई के साथ-साथ
पने स्वास्थ्य की ओर भी ध्यान देना चाहिए ।

इसके लिए तुम नियमित रूप से प्रातः काल खुले स्थान में किसी बाग या
त में भ्रमण के लिए निकल जाया करो और वहाँ एक घण्टा भर हल्का व्यायाम
या करो । इस भ्रमण और हल्के व्यायाम से तुम्हारी शारीरिक और मानसिक
कावट दूर होगी, तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक रहेगा और पढ़ने में और अधिक मन
गेगा, स्वच्छ हवा से शरीर के पुर्जे सुचारू रूप से कार्य करेंगे, बीमारी पास न
टकेगी ।

एक विद्यार्थी के लिए पढ़ाई का जितना महत्त्व है, उतना ही महत्त्व व्यायाम
भी है । स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ विचारों की उत्पति होती है । स्वस्थ शरीर
भी उतना महत्त्व है, जितना कुशाग्र बुद्धि का ।

आशा है तुम मेरे उपर्युक्त कथन के महत्त्व को समझोगे और कल से ही
स पर आचरण करना आरम्भ कर दोगे ।

पूज्य माता जी व पिता जी तुम्हें आशीर्वाद कहते हैं ।

तुम्हारा अग्रज
रवीन्द्र

—o—

छात्रावास में रहने के आनन्द का वर्णन करते हुए सखी/मित्र को पत्र

स० ध० विद्यालय, छात्रावास,
नई दिल्ली।
15 मार्च 1989

प्रिय सखी अञ्जना,

सप्रेम नमस्ते।

आज ही तुम्हारा प्यार भरा पत्र मिला। समाचार ज्ञात हुए। पत्र में तुमने मेरी पढ़ाई और मेरे छात्रावास-जीवन के सम्बन्ध में जानने की उत्सुकता दिखाई है। उसी का उल्लेख मैं इस पत्र में कर रही हूँ।

मुझे यहाँ छात्रावास में रहते हुए लगभग दो वर्ष हो गए हैं। इन दो वर्षों में एक दिन भी ऐसा नहीं आया, जब मैं यहाँ के जीवन से खिन्न हुई होऊँ। मुझे इससे प्रसन्नता और सुख ही मिलता है। यहाँ के जीवन का प्रत्येक क्षण अनुशासन में बँधा हुआ और विविध कार्य-कलापों से पूर्ण होता है। यहाँ विद्यार्थी के चरित्र-निर्माण और विकास पर तथा उसकी सर्वांगीण प्रगति की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है।

छात्रावास का जीवन नियम-पालन के बिना नहीं चल सकता। प्रातः समय पर उठना, शौच आदि से निवृत्त होकर व्यायाम करना, तत्पश्चात् नहा कर संध्या वन्दन करना, समय पर नाश्ता लेना, ठीक समय पर तैयार होकर पाठशाला के लिए प्रस्थान करना, पाठशाला से छुट्टी होने पर सीधे छात्रावास में पहुँचकर खाना खाना, पुनः थोड़े समय के लिए आराम करना, स्कूल का कार्य पूरा करना, स्वाध्याय, खेल, संध्या-वन्दन, सभा में उपस्थिति आदि छात्र-जीवन की कतिपय अनिवार्यताएँ हैं। महान् बनने के लिए इस प्रकार के अनुशासित एवं नियमबद्ध जीवन का निर्वाह परम आवश्यक है।

यहाँ विभिन्न प्रान्तों के विभिन्न रुचि वाले विद्यार्थियों से मिलकर सम्पूर्ण भारत को समझने में भी सहायता मिलती है। यहाँ रहकर समानता की भावना का उदय होता है। यहाँ धनी-निर्धन सभी से समान व्यवहार होता है। सच पूछो तो यहाँ का संसार अनोखा है। मैं तो चाहती हूँ कि प्रत्येक विद्यार्थी के लिए इस प्रकार का जीवन अनिवार्य बना दिया जाए, ताकि छात्रों का पूर्ण विकास हो सके। वस्तुतः छात्रावास का नियमबद्ध जीवन बड़े ही आनन्द का जीवन है।

जब कभी तुम यहाँ आओ तो दो दिन मेरे यहाँ छात्रावास में रहो। मुझे विश्वास है कि तुम्हें भी यह जीवन अच्छा लगने लगेगा और तुम्हारी सारी निराधार शंकाओं का समाधान हो जाएगा।

अपने पूज्य माताजी व पिताजी को मेरा प्रणाम कहना। बेबी को प्यार।

तुम्हारी सखी
ललिता

—०—

छोटे भाई को पत्र
(कुसंगति की हानियाँ बताते हुए)

101 राजेन्द्र नगर,
नई दिल्ली।
11-3-89

प्रिय विवेक,

शुभाशीर्वाद।

बहुत दिनों से तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला और मैं भी कार्य-व्यस्त होने से तुम्हें पत्र न लिख सका। कल अचानक तुम्हारे मित्र अक्षय से भेंट हो गई। उससे विदित हुआ है कि आजकल तुम उससे इसलिए रुष्ट हो क्योंकि उसने, तुम्हें बुरे लड़कों के साथ न खेलने का परामर्श दिया था। अक्षय ने तो अपनी सच्ची मित्रता का ही परिचय दिया है। मैं भी तुम्हारा बड़ा भाई होने के नाते तुम्हें सम्मति दूंगा कि तुम कुसंगति को त्याग दो।

प्रियवर ! तुम्हारा जन्म एक ऊँचे कुल में हुआ है। अतः तुम्हें ऐसा कोई काम न करना चाहिए, जिससे अपने कुल का अपमान हो। तुम्हें अपने कार्यों और कथनों से सदा कुल का मान बढ़ाना चाहिए। तुम कुल के साथ ही देश की भी धरोहर हो। मैं चाहता हूँ कि तुम अपने चरित्र का इस प्रकार निर्माण करो, जिससे भविष्य में देश के कर्णधार बन सको। अपने आपको सत्पथ पर अग्रसर करने के लिए बुरे और दुर्विनीत सहपाठियों का साथ तुरन्त छोड़ दो। अक्षय जैसे अपने मित्रों के साथ रहकर अपने चरित्र का निर्माण करो। कुसंगति में पड़ा व्यक्ति कभी महान् नहीं बन सकता। कुसंगति व्यक्ति का ऐसा शत्रु है

जो उसे नष्ट करके ही छोड़ती है। वह एक भयंकर ज्वर है, जो शरीर और आत्मा का विनाश कर देता है। बुरे का फल बुरा ही होता है। कोयलों की दलाली में मुँह काला ही होता है। "हानि कुसंगति सुसंगति लाहू।" तुमने रहीम जी का निम्न पद तो पढ़ा ही होगा कि—

"कदली सीप भुजंग मुख स्वाति एक गुन तीन।
जैसी संगति बैठिए तैसोई फल दीन।"

कुसंगति में पड़ा व्यक्ति कभी उन्नति नहीं कर सकता। कुसंगित पैरों में बँधी चक्की के समान व्यक्ति को आगे बढ़ने से रोकती है। अतः इससे दूर ही रहना चाहिए।

मैं तुम्हें महान् देखता चाहता हूँ—यह मैं कई बार तुम्हें समझा चुका हूँ। तुम्हारा ध्येय होना चाहिए—विद्याध्ययन, चरित्र-निर्माण और व्यक्तित्व का विकास। आशा है, तुम मेरी बात को अन्यथा न समझोगे और कुसंगति को त्याग कर अभी से ही अच्छे साथियों का साथ करोगे।

इससे तुम्हारा भविष्य उज्ज्वल बनेगा। यदि किसी वस्तु की आवश्यकता हो तो तुरन्त लिखना।

पूज्य माता जी व तुम्हारी भाभी भी तुम्हें आशीर्वाद देती है।

शुभेच्छु
प्रभात वर्मा

—o—

मित्र को निमन्त्रण पत्र

(छुट्टियों में अपने घर आने के लिए)

912-डी, नेताजी नगर,
नई दिल्ली।
21 मई 1989

प्रिय मित्र रविशंकर,

नमस्ते।

तुम्हारा स्नेह-पूर्ण पत्र प्राप्त हुआ। तुमने दसवीं कक्षा उत्तीर्ण कर ली है, इसके लिए मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार हो।

तुम्हारे पत्र द्वारा ज्ञात हुआ कि तुम ग्रीष्मावकाश अपने चाचा जी के पास बिताने का विचार रखते हो। यह बड़ी अच्छी बात है, क्योंकि स्थान परिवर्तन से अवकाश का आनन्द बढ़ जाता है और जल-वायु के परिवर्तन का स्वास्थ्य पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है।

मेरी इच्छा है कि तुम अपने चाचा जी के साथ सात-आठ दिन व्यतीत करने के उपरान्त सम्पूर्ण अवकाश का समय हमारे यहाँ आकर व्यतीत करो तो अधिक उत्तम होगा। इससे आगे की पढ़ाई हम दोनों सम्मिलित रूप से कर सकेंगे, साथ ही दिल्ली के दर्शनीय स्थान भी देख सकेंगे। हमारे घर के निकट ही प्रातः-सायं भ्रमणार्थ एक बड़ा उद्यान है तथा पढ़ने के लिए एक अच्छा पुस्तकालय भी है।

आशा है तुम मेरे आग्रह को स्वीकार कर अपने आने की तिथि और समय सूचित करोगे, ताकि मैं बस स्टैंड पर ही आपका स्वागत कर सकूँ।

शेष मिलने पर।

स्नेहांकित

भुवनेन्द्र शर्मा

—o—

मित्र को उसकी माता जी की मृत्यु पर संवेदना पत्र

3/6 शास्त्री नगर

नई दिल्ली-31

प्रिय संजय, 2 अगस्त, 1989

नमस्कार।

अभी-अभी तुम्हारा पत्र मिला। पत्र में तुम्हारी पूज्य माता जी के स्वर्गवास का शोक समाचार पढ़कर हृदय को भारी आघात पहुँचा। जब तुम छोटे ही थे, तभी तुम्हारे पिताजी की मृत्यु हो गई थी। तब तुम्हारी माताजी पर ही समस्त परिवार के पालन-पोषण का भार आ पड़ा था। अनेक कष्ट सहन करके भी उन्होंने तुम्हारे अध्ययन को जारी रखा। मैं स्वप्न में भी नहीं विचार कर सकता था कि तुम्हारे सिर से उनकी स्नेह-छाया इतनी जल्दी उठ जायेगी।

मित्रवर, काल का चक्र बड़ा बलवान् है। विधि के विधान को कोई रोक नहीं सकता। जन्म और मरण ईश्वर के हाथ में हैं—

"हानि-लाभ जीवन-मरण यश-अपयश विधि हाथ।"

विपत्ति में धैर्य ही व्यक्ति का सबसे बड़ा सहायक होता है। "धीरा स्तरन्ति विपदं न तु दीन चित्ता:।" अत: धैर्य का आश्रय लेकर अपने आगे का कार्यक्रम जारी रखो। प्रभु से प्रार्थना है कि वह तुम्हें असीम धैर्य दे और इस विपत्ति को सहने की शक्ति प्रदान करें तथा स्वर्गीय माता जी की आत्मा को शान्ति दे।

अब छोटे भाई-बहनों का समस्त भार भी तुम्हारे कंधों पर है। अत: तुम्हें धैर्य की और सूझबूझ की ही अधिक आवश्यकता है। उसी से तुम संकट सागर को पार कर सकोगे।

मेरे योग्य कोई सेवा हो तो लिखने में संकोच न करना।

तुम्हारा स्नेही मित्र
राजीव लोचन

—०—

छात्रवृत्ति प्रदान करने के लिए प्रधानाचार्य को प्रार्थना-पत्र

सेवा में,

प्रधानाचार्य महोदय,
रामजस उ० मा० विद्यालय (क्रमांक 3)
चाँदनी चौक, दिल्ली-6

मान्यवर,

सविनय निवेदन है कि मैं आपके विद्यालय की दसवीं कक्षा का छात्र हूँ। विगत दिनों मेरे पूज्य पिताजी का स्वर्गवास हो जाने से घर की आर्थिक स्थिति बहुत बिगड़ गई है। मेरी माँ सारा दिन बड़ी मेहनत करके परिवार के सात सदस्यों की किसी प्रकार उदर पूर्ति करती है। वस्त्र तथा अन्य वस्तुओं के लिए भी बहुत कठिनाई उठानी पड़ती है, ऐसी स्थिति में मेरी माँ के लिए मेरी पढ़ाई

का व्यय-भार उठाना नितान्त असम्भव है, जबकि मेरे मन में पढ़ने की तीव्र अभिलाषा है।

मैं अब तक सभी श्रेणी में सदैव अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होता रहा हूँ। सभी गुरुजन तथा सहपाठी मेरे आचरण से प्रसन्न हैं। मैं खेलों तथा वाक् प्रतियोगिताओं में भी सक्रिय भाग लेता हूँ। अत: आप से करबद्ध प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे विद्यालय की ओर से छात्रवृत्ति दिलाएँ, जिससे मेरी पढ़ाई का खर्च चल सके। आशा है कि मेरी स्थिति को ध्यान में रखकर मेरी प्रार्थना को अवश्य ही स्वीकृत करेंगे।

इस उपकार के लिए जीवन पर्यन्त आप का आभारी रहूँगा।

धन्यवाद सहित।

आपका आज्ञाकारी शिष्य
रमेशचन्द्र, कक्षा 10 अ

दिनांक: 25-7-1989

—०—

प्रमाण-पत्र के लिए प्रधानाचार्य को प्रार्थना-पत्र

सेवा में,

श्रीमान् प्रधानाचार्य जी,
सरदार पटेल उ० मा० विद्यालय,
लोधी एन्क्लेव, नई दिल्ली।

मान्य महोदय,

सविनय निवेदन यह है कि मेरे पिताजी का स्थानान्तरण यहाँ से मुरादाबाद के लिए हो गया है। इस कारण हम सबको भी उनके साथ वहीं जाना पड़ेगा। इसी विवशता के कारण मुझे यह विद्यालय छोड़ना पड़ रहा है। अतः आप मुझे विद्यालय छोड़ने का प्रमाण-पत्र तथा चरित्र-सम्बन्धी प्रमाण-पत्र देकर

कृतार्थ करें। ताकि इसके आधार पर मैं वहाँ के किसी विद्यालय में प्रवेश पा सकूं।

कृपा के लिए धन्यवाद।

आपका आज्ञाकारी शिष्य
दिनाँक 8-7-89 विनोद कुमार बंसल
कक्षा 11 अ

—o—

पोस्ट मास्टर को पत्र

(डाक-वितरण में देरी की शिकायत)

सेवा में,

डाकपाल महोदय, दिल्ली
मुख्य डाकघर, 15.9.89
कश्मीरी द्वार, दिल्ली।

मान्यवर;

मैं आपका ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि हमारे क्षेत्र में जब से नया डाकिया डाक-वितरण पर लगा है, तब से डाक नियमित रूप से नहीं मिल रही हैं। मेरे पत्र दूसरों के यहाँ चले जाते हैं और दूसरों के पत्र यहाँ आ जाते हैं। कई बार मैं डाकिए को इस विषय में बता चुका हूँ, फिर भी व्यवस्था ठीक नहीं हो पाई है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह अभी नया ही इस कार्य पर आया है। क्योंकि कभी-कभी तो वह गली-मुहल्ले में खेलने वाले बच्चों को ही डाक दे जाता है। परिणाम-स्वरूप कभी डाक मिलती भी है तो देर से और कभी बच्चे पत्रों को ही फाड़ देते हैं। पत्र देर से मिलने या न मिलने से हमें कई महत्त्वपूर्ण सूचनाओं से वंचित रह जाना पड़ता है। अतः बाध्य होकर ही यह पत्र आपकी सेवा में भेजना पड़ा है।

अतः आपसे सानुरोध प्रार्थना है कि आप इस क्षेत्र के डाकिए के विरुद्ध

आवश्यक कार्यवाही करें, उसे अपने कार्य के प्रति सचेत करें, ताकि हमें हमारे पत्र नियमित और ठीक समय पर प्राप्त हो सकें।

धन्यवाद सहित ।

102, मालीवाडा
नई सड़क दिल्ली-6

भवदीय
रमेशदत्त मिश्र

—o—

स्वास्थ्य-अधिकारी को पत्र

(अपने मुहल्ले की गन्दगी दूर करने के लिए)

सेवा में,

स्वास्थ्य-अधिकारी,
नगर निगम (क्षेत्र 5)
दिल्ली ।

दिनांक
21 मार्च, 1989

महोदय,

मैं इस पत्र द्वारा आपका ध्यान अपने मुहल्ले की गन्दगी और अनियमित सफाई-व्यवस्था की ओर दिलाना चाहता हूँ ।

काजीवाड़े की इस गली के दोनों कानों के 'प्लाट' खाली पड़े होने के कारण यहाँ गन्दगी के ढेर लग गए हैं। आसपास की गलियों के लोग अपने घर का कूड़ा करकट यहीं डाल जाते हैं। इसकी पिछली सड़क पर भी कई दिनों से सफाई नहीं हुई है। कई छोटे बच्चे गली के पिछवाड़े ही शौच करते हैं। कूड़े-करकट के कारण नालियाँ भी गन्दे पानी से भरी रहती हैं। पानी बह कर रास्ते की ओर आ रहा है, जिससे चारों ओर कीचड़ हो रहा है। परिणाम-स्वरूप आसपास दुर्गन्ध फैली हुई है, जिससे यहाँ के निवासियों का जीवन नारकीय वन गया है। साथ ही मच्छर-मक्खियों का प्रकोप भी बढ़ गया है, जिससे अनेक रोगों के उत्पन्न होने की आशंका हो गई है।

एक नागरिक होने के नाते मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि इस शोचनीय दशा से आपको अवगत कराऊँ। मुझे भय है कि यदि समय पर कोई कदम न

उठाया गया तो महामारी का सामना करना पड़ सकता है।

अतः निवेदन है कि आप हमारे मुहल्ले की सफाई का शीघ्र ही नियमित तथा उचित प्रबन्ध कराएँ, ताकि हमें इस नारकीय जीवन से छुटकारा मिल सके।

अग्रिम धन्यवाद सहित।

प्रार्थी

प्रभुदयाल

गली 5, काजीवाड़ा
दिल्ली-6

—०—

मित्र को बधाई पत्र

(परीक्षा में उत्तीर्ण होने के उपलक्ष्य में)

सी-201 जनक पुरी;
नई दिल्ली।
दिनाँक 8-7-1989

श्रीकान्त

प्रिय मित्र श्रीकान्त,

सप्रेम नमस्कार।

आज ही तुम्हारा स्नेहपूर्ण पत्र प्राप्त हुआ है, उसके द्वारा तुम्हारे स्वास्थ्य और परीक्षा-परिणाम की शुभ सूचना भी मिली।

"मैंने दशम श्रेणी में अपने विद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त किया है और मेरे उत्तीर्णांक 76 प्रतिशत हैं।" पत्र में जब मैंने तुम्हारी लिखी ये पंक्तियाँ पढ़ीं, तो मेरी प्रसन्नता का ठिकाना ही न रहा। मुझे अनुभव हुआ जैसे श्रीकांत नहीं, अपितु मैं ही प्रथम आया हूँ।

प्रियवर, इस श्रेष्ठ परिणाम के लिए मैं तुम्हें हार्दिक बधाई देता हूँ। मुझे विश्वास है कि बारहवीं श्रेणी की परीक्षा में भी तुम ऐसा ही अच्छा परीक्षा-परिणाम दिखाओगे।

तुम्हारी इस सफलता से मुझे भी प्रेरणा मिली है। सोचता हूँ कि मैं भी तुम्हारे समान बन पाऊँ तो कितना अच्छा हो।

मेरी माता जी भी तुम्हें इस अवसर पर बधाई और आशीर्वाद दे रहीं हैं। अपने माता-पिता जी को मेरा सादर नमस्कार कहना।

शेष शुभ।

अभिन्न हृदय

योगेश्वर

—०—

मित्र को सान्त्वना-पत्र
(परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने पर)

परीक्षा भवन
प्रिय मित्र सुरेश
दिनांक 15-3-1989

नमस्कार ।

आज ही तुम्हारा पत्र मिला । तुम सैकेंडरी परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो गए हो, यह पढ़कर मुझे अत्यन्त ही दुःख हुआ । तब तुम्हें कितना दुःख हुआ होगा इसकी कल्पना मैं सहज ही कर सकता हूँ ।

प्रियवर, मैं जानता हूँ कि तुमने यथासम्भव अपना समय नष्ट नहीं किया और अध्ययन में लगे ही रहे । तब इस असफता के दोषी तुम नहीं हो । तुम्हारे पूज्य पिताजी की असामयिक मृत्यु, भाई के व्यापार में घाटा और माताजी की बीमारी आदि ऐसी दैवी विपत्तियाँ तुम पर आईं, जिनके कारण तुम्हारा मन विचलित हो गया था और घर की व्यवस्था भी अस्त-व्यस्त हो गयी थी । वस्तुतः इन्हीं कारणों से तुम्हें असफलता का मुँह देखना पड़ा ।

मित्र, जीवन संघर्षमय है । इसके पथ पर अनेक टेढ़े-मेढ़े मोड़ और काँटे-कंकड़ आया ही करते हैं, किन्तु साहसी यात्री उनके कारण रुकते नहीं हैं ।

'कस्यात्यन्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा ।
नीच्चैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमि क्रमेण ।'

किसी को भी निरन्तर सुख या निरन्तर दुःख कभी नहीं मिलता । रथ के पहिए के समान जीवन की दशा बदलती रहती है ।

तुम्हारा भाग्य-चक्र यदि आज नीचे आया है तो कल निश्चित ही वह ऊपर भी जाएगा । प्रकृति का नियम ही ऐसा है । अतः साहस न त्यागो । हृदय में आत्म-विश्वास बनाये रखो ।

मुझे विश्वास है कि मेरी बातों को ध्यान में रखकर तुम धैर्य और साहस से काम लेकर अध्ययन जारी रखोगे। ईश्वर निश्चित ही तुम्हारी सहायता करेंगे ।

पत्रोत्तर की प्रतीक्षा में ।

अभिन्न हृदय
महेश

—०—

मुहल्ले में सार्वजनिक नल लगवाने के लिए नगर-निगम-अधिकारी को पत्र

सेवा में,

निगमायुक्त महोदय,

दिल्ली नगर निगम,

दिल्ली-6

मान्यवर,

निवेदन है कि हमारी पुनर्वास बस्ती जहाँगीर पुरी के खण्ड 'क' में पचास घर हैं, किन्तु यहाँ घरों में नल न होने के कारण पीने और नहाने के पानी की बहुत कमी है। हाथ-पम्प का पानी खारा है, जो पीने और कपड़े धोने के लि तो बिल्कुल भी उपयुक्त नहीं। हमें पीने का पानी बहुत दूर खण्ड 'ख' से लान पड़ता है।

अतः आप से निवेदन है कि आप यथा शीघ्र हमारे खण्ड 'क' में एक सार्व जनिक नल लगवाने की व्यवस्था कर दें। जिससे हमें पीने और नहाने के पान की असुविधा न रहे। कृपा के लिए हम आपके अत्यन्त अभारी रहेंगे।

अग्रिम धन्यवाद सहित।

भवदीय

दिनाँक :

11-4-89

सुरेश चावल

मन्त्री

(सुधार सभा, जहाँगीर पुर

खण्ड 'क'

—o—

पिताजी को अध्ययन की प्रगति से परिचय कराते हुए मनीआर्डर कुछ रुपए मंगवाने के लिए पत्र

दिल्ली

15-4-8

श्री परम पूज्य पिताजी,

सादर प्रणाम।

मैं यहाँ कुशल से हूँ। विश्वास है कि आप तथा परिवार के अन्य सभी सदस्य भी सुखी और सानन्द होंगे।

आप का स्नेह पूर्ण पत्र मिला, पत्र में आपने मेरी पढ़ाई की प्रगति के सम्बन्ध में पूछा है। इस विषय में निवेदन है कि मेरी पढ़ाई भली प्रकार से आरम्भ हो गई है। मैं नियमित रूप से अपना दैनिक कार्य पूरा कर लेता हूँ, जिससे मुझे सितम्बर मास में होने वाली त्रैमासिक परीक्षा में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होने की पूर्ण आशा है।

एक निवेदन और, इन दिनों मुझे कुछ नई पुस्तकें, कापियाँ, पेंसिल, स्याही आदि लेनी है और कुछ नए वस्त्र भी बनवाने हैं। जिसमें लगभग दो सौ रुपये खर्च होंगे। अतः आप शीघ्र ही उक्त धनराशि मनीआर्डर से भेजने की कृपा करें।

पूज्य माता जी को प्रणाम तथा छोटे भाई बहनों को चिरंजीव कहें।

शेष शुभ।

आपका आज्ञाकारी पुत्र

कमल

—o—

बसें बढ़ाने के लिए समाचार-पत्र-सम्पादक को पत्र

सेवा में,

सम्पादक जी,

दैनिक जनसत्ता

बहादुरशाह जफर मार्ग,

नई दिल्ली-1

महोदय,

आपके प्रतिष्ठित पत्र द्वारा मैं दिल्ली परिवहन निमम के अधिकारियों का ध्यान दिल्ली में यातायात के लिए बसों की संख्या में वृद्धि के लिए आकर्षित कराना चाहता हूँ।

दिल्ली परिवहन की बसों का नियमित यात्री होने के कारण मेरा निजी अनुभव है कि यहाँ की बसों में वैसे तो प्रत्येक समय, पर विशेष रूप से प्रातः-सायं समय, विद्यालयों के समय और कार्यालयों तथा दुकानों के खुलने के ससय भीड़ बहुत बढ़ जाती है। बसों के प्रतीक्षालयों पर यात्रियों की लम्बी-लम्बी

पंक्तियाँ खड़ी रहती हैं, किन्तु बसों की संख्या थोड़ी होने से बसों के ठसाठस भरने पर भी अनेक यात्रियों को उनमें स्थान नहीं मिलता। कई यात्री तो पायदान पर ही खड़े रह जाते हैं, कुछ बाहर लटकते हैं और शेष प्रतीक्षा में खड़े ही रह जाते हैं। अपने गन्तव्य स्थानों पर जाने की शीघ्रता में कई बार इस कारण प्राणों से भी हाथ धो बैठते हैं। भीड़ में बृद्धों और महिलाओं की दुर्गति भी कम नहीं होती। ऐसी स्थिति में जेब-कतरों की भी बन आती है। कई बार तो यात्रियों और संवाहक में या चालक में झगड़ा भी हो जाता है, जिससे यात्रियों को विलम्ब हो जाता है। कभी चालक भी बसों को नियत स्थानों पर खड़ी न करके उससे आगे या पीछे खड़ी करते हैं, जिससे यात्रियों को इधर से उधर दौड़ना पड़ता है। इस भाग-दौड़ में भी कई बार उन्हें चोट लग जाती है।

इन सभी कठिनाइयों को देखते हुए आपके लोकप्रिय पत्र के माध्यम से परिवहन निगम के अधिकारियों से प्रार्थना है कि वे यथा शीघ्र दिल्ली में अधिक संख्या में नई बसें चलवाएँ, जिससे यात्रियों की कठिनाई कम हो और वे यथा समय अपने गन्तव्य पर पहुँच सकें।

धन्यवाद सहित।

दिनाँक 5 मार्च 1989   भवदीय
आदर्श नगर; दिल्ली।   सुधारक द्विवेदी

—०—

मित्र को पत्र

(उसकी विधवा माँ किस प्रकार परिश्रम कर उसकी पढ़ाई का खर्चा चला रही है)

मालवीय नगर, दिल्ली।

प्रिय मित्र अखिलेश,   15-4-89

सप्रेम नमस्कार।

बहुत दिनों के पश्चात् कल तुम्हारा पत्र मिला। मुझे यह जानकर अत्यन्त दुःख हुआ कि तुम गणित में अनुत्तीर्ण हो गए, तुम्हारे लिए यह स्थिति अच्छी नहीं है।

तुम्हें अच्छी तरह पता है कि जब तुम पाँच वर्ष के ही थे, तभी तुम्हारे पूज्य पिताजी की छाया तुम्हारे सिर से उठ गई थी। तब से तुम्हारी विधवा माँ ही पति की मृत्यु के शोक को झेलती हुई हृदय में अनेक अभिलाषाएँ लिए तुम्हारा पालन पोषण करती हुई तुम्हारी शिक्षा के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है। क्या तुम्हें ध्यान नहीं कि वे तुम्हारे लिए प्रभात से सायं तक कितना परिश्रम करती हैं ? घर के खर्चे के लिए और विशेषकर तुम्हारी पढ़ाई का खर्चा पूरा करने के लिए वे किस प्रकार सिलाई और कढ़ाई का काम करती रहती हैं ? उन्होंने तुम्हारे लिए वस्त्रों की, पुस्तकों-कापियों की, विद्यालय शुल्क की और जेब खर्च की कमी न आने दी। क्यों ? इस लिए कि एक दिन पढ़कर तुम उन की आकांक्षाओं की पूर्ति करोगे।

प्रियवर, माँ के इस परिश्रम को देखकर तुम्हें अब अपनी पढ़ाई पर पूरा ध्यान देना चाहिए, जिससे कि आगे तुम्हें सफलता मिले। मुझे विश्वास है कि तुम अपनी विधवा माँ की आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए अवश्य ही निरन्तर प्रयत्नशील रहोगे।

शेष तुम्हारा पत्र आने पर।

तुम्हारा अभिन्न

सुधाकर

—o—

पुस्तक-विक्रेता को पुस्तकें भेजने के लिए पत्र

सेवा में,

दिनांक 11-8-89

प्रबन्धक,

पूजा प्रकाशन,

अमीरचन्द मार्ग, दिल्ली-6

महोदय,

अपने यहाँ से प्रकाशित निम्नलिखित पुस्तकें मूल्य में उचित छूट देकर दिये हुए पते पर यथा शीघ्र वी. पी. पी. द्वारा भेज दें। दस रुपये अग्रिम भेज रहा हूँ। ध्यान रहे कोई पुस्तक पुरानी और कटी-फटी न हो।

1. निबन्ध-प्रभा	25 प्रतियां
2. व्याकरण-रचना	25 प्रतियां

3. अभ्यास-अलंकार 25 प्रतियां

धन्यवाद सहित ।

11, कृष्ण, कुटीर,
बिहा ी गली
सोनीपत (हरियाणा)

भवदीय
गोपाल दास

—o—

पिता को पत्र

(विद्यालय के छात्रों के साथ समाज-सेवार्थ जाने के लिए अनुमति माँगते हुए)

रवीन्द्र विद्यालय छात्रावास।
दिल्ली ।
दिनांक 22-8-89

श्री पूज्य पिताजी,

सादर प्रणाम ।

मैं यहाँ पर कुशल हूँ। आपको भी सर्व प्रकार से कुशल और प्रसन्न चाहता हूँ। पूज्य चरण, आपने समाचार पत्रों में पढ़ा ही होगा कि आजकल यमुना नदी में भयंकर बाढ़ आई हुई है। बाढ़ के कारण पचासों गाँव जलमग्न हो गए हैं तथा अनेक मनुष्य और पशु बाढ़ में घिरकर नष्ट हो गए हैं। इस प्रलयंकर बाढ़ के कारण गाँव के लोग कुछ तो बचकर बाहर आ गए हैं, पर कुछ पक्के घरों की छतों पर या कुछ ऊँचे पेड़ों पर शरण लिए हुए हैं, उनकी स्थिति प्रति दिन विगड़ती जा रही है।

इन बाढ़ पीड़ितों की सेवा के लिए शिक्षा-विभाग की ओर से नरेला में शिविर लगा हुआ है। हमारे विद्यालय के पाँच अध्यापकों की देख-रेख में बीस छात्र सेवा के लिए वहाँ जाने वाले हैं। मेरा भी नाम उनमें है। मेरी स्वयं की इच्छा भी पीड़ित लोगों की सेवा करने की है।

अतः आपसे अनुरोध है कि आप मानवता की सेवा के इस पुण्यकार्य के लिए मुझे वहाँ जाने की तुरन्त ही अनुमति देकर कृतार्थ करें।

पूज्य माता जी को प्रणाम और वीणा को प्यार।

आपका प्रिय पुत्र
हरीश

— o —

मित्र को पत्र

(दिल्ली में प्राप्त सुविधाओं और असुविधाओं का परिचय देते हुए)

परीक्षा भवन
दिल्ली, 1--3-89

प्रिय मित्र राजेश,

सादर नमस्कार ।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि तुमने वार्षिक परीक्षा के पश्चात् दिल्ली आने का विचार किया है । साथ ही तुमने यह भी लिखा है कि मैं तुम्हें दिल्ली में प्राप्त सुविधाओं से और असुविधाओं से भी परिचित कराऊँ ।

मित्रवर, दिल्ली भारत की राजधानी है । इस कारण इस नगर में अनेक सुविधाएँ भी हैं । जैसे पर्यटन के लिए उद्यान, पुरातन स्मारक, धार्मिक और ऐतिहासिक स्थल, मनोरंजन के लिए नाट्य-गृह और छवि-गृह, भोजन के लिए बढ़िया शानदार या साधारण होटल, खरीदारी के लिए सब प्रकार की वस्तुओं के एक से एक बढ़कर बाजार और दुकानें, और जेब में खूब पैसे हों तो यातायात के साधन भी । इसी प्रकार यहाँ लोगों को जीविका के लिए छोटे-बड़े साधन भी मिल ही जाते हैं । शिक्षा के लिए विद्यालयों की भी कमी नहीं ।

किन्तु इन सुविधाओं के साथ ही यहाँ असुविधाएँ भी कम नहीं । एक तो यह कि यहाँ विभिन्न स्थानों की बस्तियों की दूरी बहुत है, मकानों की कमी से आवास की बड़ी विकट समस्या है । यातायात के महँगे साधन टैक्सी या स्कूटर का उपयोग बहुत धनी लोग ही कर सकते हैं । हम जैसे निम्न मध्यम-वर्ग या मध्यम वर्ग के लोगों का यातायात का साधन तो बसें ही हैं । पर, यहाँ बसों की व्यवस्था बहुत ही बिगड़ी हुई है । उनमें भीड़ तो बहुत होती ही है, पर कभी-कभी आधे घंटे या घंटे तक बस नहीं मिलती । फिर, चालक उनको नियत स्थान पर भी खड़ी नहीं करते । इसी प्रकार राजधानी होते हुए भी यहाँ बिजली की आँख-मिचौली चलती ही रहती है । दिन में तो व्यक्ति उसे झेल भी ले, पर रात्रि की स्थिति बड़ी विकट हो जाती है । बिजली के समान ही पानी का संकट भी यहाँ के निवासियों और आने वाले यात्रियों दोनों के लिए कष्टदायक है । नहाने की कौन कहे ? कभी-कभी तो कई-कई घंटे पीने के पानी के लिए भी लोग तरस जाते हैं ? फिर सामान्य गृहस्थियों को ईंधन, राशन, साग-सब्जी

आदि के लिए भी अनेक कठिनाइयाँ सहनी पड़ती हैं। कुछ आवश्यक वस्तुओं के लिए तो व्यक्तियों को कभी-कभी- पंक्ति में लगकर अपने कार्यालयों या छात्रों को विद्यालय से छुट्टी लेनी पड़ जाती है।

फिर भी दिल्ली तो दिल्ली है। आओ, तुम्हारा स्वागत है। दिल्ली आकर यहाँ के कड़वे-मीठे अनुभव स्वयं प्राप्त कर लोगे।

शेष मिलने पर।

अभिन्न मित्र
दीपक शर्मा

—o—

देश में फैले साम्प्रदायिक उन्माद के सम्बन्ध में सम्पादक को पत्र

सेवा में,

सम्पादक जी,
दैनिक नवभारत टाइम्स,
बहादुर जफर मार्ग, दिल्ली-1

महोदय,

मैं आपके लोकप्रिय प्रतिष्ठित पत्र के माध्यम से देशवासियों का ध्यान देश में बढ़ते साम्प्रदायिक उन्माद और झगड़ों की ओर दिलाना चाहता हूँ।

आज देश के उत्तरी भाग में विशेष कर उत्तर प्रदेश में साम्प्रदायिक झगड़ों ने बहुत ही विकराल रूप ले लिया है। अलीगढ़ में तो विष की यह बेल सदा-लहलहाती ही रहती है। कुछ वर्ष पूर्व ईद के अवसर पर मुरादाबाद से इनकी जो ज्वालाएँ उठीं, उन्होंने कानपुर, लखनऊ, अमरोहा, रामपुर, बदायूं और राजधानी दिल्ली आदि नगरों को भी अपनी लपेट में ले लिया। ईद के ... एक कल्पित घटना से पुलिस और तथाकथित अल्पसंख्यकों में झड़प के ... से इसने विस्तार लेना आरम्भ कर दिया। जिससे सैकड़ों निरपराध लोगों के प्राण गए। बच्चे अनाथ हुए और स्त्रियां विधवा हुईं। लाखों की चल-अचल सम्पत्ति की हानि हुई। इस बार भी मेरठ में एक छोटी सी बात को लेकर साम्प्रदायिक उपद्रव आरम्भ हो गए, जिक कारण वहाँ बहुत दिनों तक कर्फ्यू लगा रहा तथा अनेक व्यक्तियों को जीवन से हाथ धोना पड़ा।

इसके पीछे एक निश्चित षड्यन्त्र काम कर रहा है। पहले जिस द्विराष्ट्र सिद्धान्त के आधार पर भारत का विभाजन हुआ था, आज भी लोग उसे भूले

नहीं । सम्प्रदाय विशेष के लोग अपने को सदा से विजेता मानते रहे और आज भी वही भाव उनके मानस में है । ऊपर जिन नगरों की चर्चा की गई है. उनको केन्द्र बनाकर वहाँ वह पुनः एक अन्य पाकिस्तान (मुस्लिम लैंड) बनाने का स्वप्न ले रहे हैं । इसके लिए पाकिस्तानी गुप्तचरों और अरब देशों से प्राप्त धन का उन्हें पूरा लाभ मिल रहा है ।

इसी प्रकार पंजाब प्रदेश में भी खालिस्तान का नारा लगाकर कुछ धर्मान्ध और उग्र अकाली वहाँ के वातावरण को कलुषित कर रहे हैं । निर्भीक पत्रकार लाला जगत नारायण, उनके लड़के रमेश की और अन्य हजारों प्रतिष्ठित नागरिकों की हत्या उसी उन्माद का परिणाम है । तथाकथित सन्त जरनैलसिंह भिंडरवाले के अपने अनुयायियों ने हजारों निरपराध लोगों को मौत के घाट उतार दिया था । सैनिक कार्यवाही के बाद भी उनके हौसले मन्द नहीं पड़े हैं । कई हवाई जहाजों का अपहरण उसी षड्यन्त्र की कड़ी है । आज भी नित्य 15-20 लोगों की हत्या मामूली बात है । कभी-कभी तो यह संख्या पचपन-साठ तक पहुँच जाती है ।

सरकार को अपने गुप्तचरों द्वारा सारी वास्तविक स्थिति की पूरी जानकारी है किन्तु 'वोटों' की राजनीति में उसने इस स्थिति से आँखें मूंद ली हैं ।

अतः देश के समस्त नागरिकों का कर्त्तव्य है कि वे स्वयं भी तथाकथित अल्पसंख्यक समाज के कुछ धर्मान्ध लोगों के आत्मघाती षड्यन्त्र से सावधान रहें और सरकार तथा उसके दल के उच्च पदस्थ अधिकारियों को भी वास्तविकता से आँखें न मूंदने के लिए कहें ।

कहीं ऐसा न हो कि साँप निकल जाने पर हम लकीर पीटते रह जाएँ और देश पुनः खण्ड-खण्ड हो जाए ।

धन्यवाद ।

यशवन्त नगर (म० प्र०)
दिनांक : 18-4-89

भवदीय
विष्णुगुप्त

—o—

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद् के सचिव को पत्र

(आवेदन पत्र मँगाने के लिए)

सेवा में,

दिनांक 12-10-89

सचिव महोदय,

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा-परिषद्

इन्द्रप्रस्थ मार्ग, नई दिल्ली ।

मान्यवर,

निवेदन है कि मैं आपके अधीन होने वाली 1990 की बारहवीं श्रेणी की परीक्षा स्वतन्त्र (प्राइवेट) रूप से देना चाहती हूँ ।

कृपया उसके निमित्त एक आवेदन पत्र निम्नलिखित पते पर शीघ्र भेज दें । आवेदन पत्र का शुल्क मनीआर्डर से भेज दिया गया है ।

अग्रिम धन्यवाद सहित ।

2/एफ, मॉडल टाउन,
दिल्ली-33

भवदीया
सुधा शर्मा

—o—

फुटबाल टीम के कप्तान को पत्र

(मैच खेलने का निमन्त्रण)

सेवा में,

दिनांक 7-9-89

कप्तान, फुटबाल टीम,

गीता उ० मा० विद्यालय

गाँधी नगर, दिल्ली-32

प्रिय महोदय,

निवेदन है कि हमारे विद्यालय की फुटबाल टीम आपके विद्यालय की फुटबाल टीम से आगामी शुक्रवार को मैच खेलना चाहती है । मैच आपके या हमारे विद्यालय के मैदान में कहीं भी खेला जा सकता है । यदि आप अपने दल को लेकर हमारे विद्यालय के मैदान में पधारें तो हमें हार्दिक प्रसन्नता होगी । हम आपका स्वागत करके अपने को धन्य मानेंगे ।

आशा है कि आप शीघ्र ही मैच खेलने की स्वीकृति देकर और स्थान तथा समय की सूचना देकर कृतार्थ करेंगे ।

अनेक धन्यवादों सहित ।

विद्या ज्ञान मन्दिर
कमला नगर, दिल्ली-7

भवदीय
प्रभाकर द्विवेदी
कप्तान, फुटबाल टीम

—०—

पुलिस अधिकारी को पत्र

(साईकिल खो जाने की रिपोर्ट करते हुए)

सेवा में,

2 अगस्त 1979

पुलिस इन्सपेक्टर,
थाना लाहौरी द्वार,
दिल्ली-6

महोदय,

आज जब मैं खारी बावली में घर का सामान खरीदने के पश्चात् नुक्कड़ पर अपनी नई साइकिल को उठाने के लिए पहुँचा तो साइकिल को न पाकर भौंचक्का रह गया। मैं बाजार कुछ आवश्यक सामान लेने आया था, भीड़ बहुत थी। इस कारण मैंने साइकिल किनारे की दुकान के पास ही खड़ी कर दी और सुरक्षा के लिए ताला भी लगा दिया था। ताले की चाबी अब भी मेरे पास है। आस-पास के व्यापारियों से पूछताछ करने पर भी साइकिल का कुछ पता नहीं चला। यह साइकिल मैंने गत रविवार को ही खरीदी थी।

मेरी साइकिल 'हरकुलिस मेक' की है। इसका नम्बर 800672 है और रंग हरा है।

अत: आप से नम्र निवेदन है कि साइकिल को खोजने में में मेरी पूर्ण सहायता करें। धन्यवाद सहित।

25, गली बताशाँ
खारी बावली
दिल्ली 6

विनीत
कृष्ण स्वरूप

—०—

चाचा जी को आभार पत्र

(जन्मदिन का उपहार भेजने के लिए)

26, प्रेम नगर,
दिल्ली-7
दिनांक 10-10-89

परम पूज्य चाचा जी,

सादर प्रणाम !

आज ही आपका स्नेहपूर्ण पत्र मिला। यह जानकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि आप स्वस्थ और सानन्द हैं तथा प्रिय भाई ज्ञानेश्वर त्रैमासिक परीक्षा में प्रथम रहा है।

पूज्यवर, पत्र के साथ ही मेरे जन्म-दिवस के उपलक्ष्य में आपके द्वारा भेजी गई उपहार-स्वरूप घड़ी भी प्राप्त हो गई है। वस्तुतः घड़ी की मुझे अत्यन्त आवश्यकता भी थी। इधर परीक्षा के दिन निकट आ रहे हैं, उधर मुझे समय का ठीक ज्ञान न होने से विद्यालय पहुँचने में विलम्ब हो जाता था। इस कारण अनुपस्थिति तो लग ही जाती थी, साथ ही गुरुजी की डाँट भी सहनी पड़ती थी।

अब घड़ी के रहने पर मैं विद्यालय में यथा समय पर पहुँच ही जाऊँगा तथा मेरे अन्य सभी कार्य भी निर्धारित समय पर पूर्ण हो सकेंगे।

ऐसा उपयुक्त और सुन्दर उपहार भेजने के लिए मैं आपका अत्यन्त आभारी हूँ और आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। विश्वास है कि आप सदैव अपने स्नेहपूर्ण आशीर्वाद में इसी प्रकार कृतार्थ करते रहेंगे।

पूज्य पिता जी व माता जी आपको तथा चाची जी को आशीर्वाद कहते हैं।

मेरी ओर से पूज्य चाची जी को प्रणाम और भैया ज्ञानेन्द्र को शुभ चिरंजीव कहें।

शेष सब प्रकार से कुशल है।

आपका प्रिय भतीजा
भास्कर

—o—

शहर के डिप्टी कमिश्नर को पत्र

(अपने गाँव में बाढ़ के कारण हुई क्षति और दुर्घटना का वर्णन और सहायता की प्रार्थना करते हुए)

सेवा में,

दिनांक 25 सितम्बर, 1989

डिप्टी कमिश्नर महोदय,

जिला रोहतक, (हरियाणा प्रदेश)

मान्यवर,

निवेदन यह है कि अपने इस पत्र द्वारा आपका ध्यान रोहतक जिले के भगाण नामक ग्राम की बाढ़ में हुई क्षति और दुर्गति की ओर दिलाना चाहता हूँ।

यह गाँव तहसील सोनीपत से लगभग 10 किलोमीटर उत्तर में स्थित है। इस गाँव के आस-पास यद्यपि कोई नदी-नाला नहीं है, जिससे किसी प्रकार की बाढ़ का खतरा बना रहे तथापि पिछले दिनों अतिवृष्टि से यहाँ बाढ़ की सी स्थिति उत्पन्न हो गई है। कई दिनों की लगातार मूसलाधार वर्षा से यहाँ के अधिकांश कच्चे मकान ढह गए हैं और घास-फूस की झोपड़ियाँ बैठ गई हैं। अधकच्चे मकानों की छतें बैठ गई हैं और पशु उनमें दबकर मर गए हैं। यहाँ से पाँच मील दूर की यमुना ने तो और भी कष्ट दिया है। उसका पानी भी इस ओर आने लगा है। जिससे आस-पास के खेतों का सत्यानाश हो गया है। गाँव की कच्ची गलियों में अब भी कहीं-कहीं घुटनों तक पानी भरा हुआ है। इस बाढ़ से किसान त्राहि-त्राहि कर उठे हैं। वे विवश होकर घरों में पड़े हाथ मल रहे हैं। चौपाल तक जाने की भी हिम्मत नहीं हो रही। कई दिनों के भूखे-प्यासे जानवर प्राण त्याग रहे हैं। प्रतिदिन की मजदूरी से पेट भरने वाले मजदूरों का भी बुरा हाल है। उनको जान के लाले पड़े हैं। दो-तीन दिनों के लिए संग्रह किया हुआ उनका राशन समाप्त हो चुका है और उनके बच्चे भूख से बिलख रहे हैं। सारा गाँव अस्त-व्यस्त है और एक झील-सा दिखाई देता है। पानी के निकास की व्यवस्था न होने के कारण खड़े हुए पानी

में दुर्गन्ध उत्पन्न हो गई है। मुझे भय है कि बाढ़ के विनाश के पश्चात् कहीं महामारी न फैल जाए।

अतः आपसे सविनय प्रार्थना है कि उपर्युक्त गाँव को अपना संरक्षण प्रदान करें और देवी विनाश के पश्चात् इस गांव के बचे हुए धन-जन की हानि को रोकने का प्रयत्न करें। इस गाँव की विपद्ग्रस्त जनता की सहायता के लिए शीघ्रातिशीघ्र शासकीय आदेश जारी करके अनुगृहीत करें। सरकार को पूर्ण सहयोग देने के लिए यहाँ के युवक और समर्थ व्यक्ति प्रति क्षण प्रस्तुत हैं।

धन्यवाद सहित।

गाँव-भगाण,
तहसील-सोनीपत

कृपाकांक्षी
शंकर चौहान

—०—

दैनिक पत्र के सम्पादक को पत्र

(अपने विद्यालय के छात्र का अपूर्व साहस का परिचय देते हुए)

सेवा में,

श्री सम्पादक जी
नवभारत टाइम्स,
नई दिल्ली।

महोदय,

मेरे विद्यालय 'राजकीय उच्चतम विद्यालय'—के दसवीं कक्षा के विद्यार्थी गिरीश ने गत रविवार को अपने अभूतपूर्व साहस का परिचय देकर न केवल अपने कुल, विद्यालय एवं नगर को गौरवान्वित किया, प्रत्युत सच्चे भारतीय होने का भी परिचय दिया है। उसने अपनी बुद्धि और साहस से हजारों नागरिकों के प्राण बचाकर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया है जो कि एक अल्प-अवस्था के छात्र के लिए बड़ा ही गौरवपूर्ण तथा प्रशंसनीय है।

घटना इस प्रकार है कि गिरीश भ्रमण करता हुआ रेलवे स्टेशन से लगभग दो किलोमीटर दूर निकल गया। अकस्मात् उसकी दृष्टि रेल की उखड़ी हुई

पटरी पर पड़ी। वहाँ से गाड़ी जाने में अभी पन्द्रह मिनट शेष थे। भविष्य में होने वाली रेल दुर्घटना की कल्पना से वह काँप उठा। वह साहस को बटोर कर स्टेशन से विपरीत दिशा की ओर भागने लगा, क्योंकि वह यह अच्छी तरह से जानता था कि पन्द्रह मिनट में वह रेलवे स्टेशन पर नहीं पहुँच सकता।

कुछ दूर जाकर पटरियों के बीच खड़े होकर उसने अपने दोनों हाथ ऊपर उठा दिये, ताकि ड्राईवर गाड़ी रोक ले और भयंकर दुर्घटना न हो। सौभाग्य वश रेलगाड़ी के चालक ने उसे देख लिया और गाड़ी को ब्रेक लगा दी। रेलगाड़ी गिरीश के ठीक दस कदम दूर रुकी। यात्रियों को जब इस बात का ज्ञान हुआ तो उसके विवेक की भूरि-भूरि प्रशंसा किए बिना न रह सके।

विश्वास है कि गिरीश के इस अपूर्व साहस और सूझबूझ से देश के लाखों अन्य छात्र भी अच्छे कार्य करने की प्रेरणा लेंगे।

दिनांक 10 मई, 1989
राजकीय उच्चतर मा० विद्यालय
सब्जी मण्डी, दिल्ली-7

भवदीय
अनिल गुप्ता

—o—

सम्पादक को पत्र

(देश में व्याप्त भ्रष्टाचार के निवारण के लिए)

सेवा में,

सम्पादक महोदय,
दैनिक हिन्दुस्तान,
नई दिल्ली।

मान्यवर,

आज देश की दशा अत्यन्त शोचनीय हो गई है। सर्वत्र अनाचार, भ्रष्टाचार घूसखोरी और चोरबाजारी का बोलबाला हो रहा है। देशभक्ति के अभाव एवं सच्चरित्रता की कमी के कारण ये बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं। जो केवल अपने ही स्वार्थ के लिए, अपनी ही तिजोरियाँ भरने के लिए स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्र का भी दुरुपयोग करते हैं, देश के शत्रु ऐसे जमाखोरों, चोरबाजारी

करने वालों, घूसखोरों और अनुचित लूट-खसूट करने वालों को कड़े से कड़ा दण्ड दिया जाना चाहिए।

देशवासियों का यह परम कर्त्तव्य है कि वे कानून की रक्षा करने के लिए ऐसे दुष्ट व्यक्तियों का ब्यौरा देकर सरकार की सहायता करें। देश-भक्त नागरिकों का यह कर्त्तव्य है कि वे उपदेशों और व्याख्यानों द्वारा देशवासियों के चरित्र का निर्माण करें और चरित्रहीनों के बहिष्कार की सलाह दें। सरकार का भी यह परम कर्त्तव्य है कि वह काले धन का पता लगाने में तत्परता दिखाए और भ्रष्टाचार निवारण के काम में सहयोग देने वाले दुश्चरित्र अधिकारियों को कठोरतम दण्ड दें। भ्रष्टाचार से छुटकारा पाने के पश्चात् ही स्वतन्त्रता के वास्तविक आनन्द का अनुभव होगा।

दिनांक 10 जून, 1989 आपक

राजकीय उच्चतम महाविद्यालय कमले
राजौरी गार्डन, नई दिल्ली।

—o—

विदेश यात्रा पर जाने वाले मित्र को उसकी यात्रा की मंगल कामना करते हुए एक पत्र लिखिए

21, वसन्त विहार,
नई दिल्ली।
21 सितम्बर, 1989

प्रिय मित्र सतीश जी,

सादर नमस्कार।

दिनांक 5 सितम्बर, 1989 का लिखा, आपका पत्र अभी-अभी मुझे प्राप्त हुआ। मुझे यह जानकर अति प्रसन्नता हुई कि शिक्षा मंत्रालव ने आपको रसायन-शास्त्र में विशेष अनुसंधान के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की है और उस सम्बन्ध में 30 तारीख को आप अमेरिका जा रहे हैं।

इसके लिए मैं आपको हार्दिक बधाई देता हूँ और आपकी विदेष-यात्रा

लिए विशेष मंगल कामना करता हूँ। प्रभु से मेरी प्रार्थना है कि वे आपकी इस यात्रा को निर्विघ्न, आनन्दमय और सुखद करें।

मित्रवर, साथ ही मेरी आकांक्षा है कि आप अपने अध्ययन काल में अमेरिका में भारतीय संस्कृति के सन्देश-वाहक के रूप में भी कार्य करें। आपका प्रत्येक आचरण व चेष्टा भी भारतीयता के अनुकूल हो, जिससे कि अमेरिका-वासी भारयीय संस्कृति के गौरव के सामने नत मस्तक हों।

एक बार पुनः आपकी यात्रा के लिए मंगल कामना करता हूँ। शुभास्ते सन्तु पन्थानः। मार्गे मंगलानां बृष्टि र्भवतु।'

अभिन्न

शरद् शर्मा

—०—

अपने विद्यालय के प्रधानाध्यापक के नाम एक प्रार्थना पत्र लिखिए, जिसमें विद्यालय में रिक्त क्लर्क पद के लिए आवेदन किया गया हो

सेवा में,

प्रधानाचार्य महोदय,
सरस्वती उच्चतम माध्यमिक विद्यालय,
वाणी विहार, नई दिल्ली-9

मान्यवर,

निवेदन है कि दैनिक 'नवभारत टाइम्स' के दिनांक 2-5-89 के प्रभात संस्करण में आपके विद्यालय में क्लर्क-पद के लिए रिक्त स्थान की सूचना प्रकाशित हुई है। उसी रिक्त पद की प्राप्ति के लिए मैं अपना नाम प्रस्तुत कर रहा हूँ। मेरी योग्यता निम्न प्रकार से है—

(अ) मैंने गत वर्ष आपके ही विद्यालय से उच्च माध्यमिक (22वीं) परीक्षा द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण की है।

(आ) मैंने परीक्षा में वाणिज्य में विशेष योग्यता प्राप्त की है।

(इ) मैं हिन्दी और अंग्रेजी टाईप जानता हूँ। हिन्दी टंकण में मेरी गति 35 शब्द प्रति तिनट तथा अंग्रेजी में 45 शब्द प्रति मिनट है।

(ई) मैं स्वस्थ और चुस्त नवयुवक हूँ । विद्यालय की हॉकी टीम का भी एक अच्छा खिलाड़ी रहा हूँ ।

(उ) मैं एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार का सदस्य हूँ । मेरे पिताजी एक छोटी-सी नौकरी से जैसे-तैसे परिवार का भरण-पोषण करते हैं ।

विश्वास है कि मेरी उक्त अर्हताओं को देखते हुए आप अवश्य ही रिक्त पद पर मेरा चयन कर मुझे अनुगृहीत करेंगे । यदि आपने मुझे नियुक्ति दी तो मैं अपने कर्त्तव्य पालन करने में और परिश्रम करने में कोई भी त्रुटि न आने दूंगा ।

अग्रिम धन्यवाद सहित ।

22-5-89 }
101, सरोजनी नगर }

नई दिल्ली ।

निवेदक
सुधीर वर्मा

—o—

अपठित
सार लेखन और शीर्षक-निर्वाचन

प्रायः परीक्षाओं में एक अपठित अनुच्छेद देकर उसका शीर्षक-निर्वाचन करने, सार-लिखने और उसमें दिये तथ्यों से सम्बद्ध प्रश्नों का उत्तर देने के लिए कहा जाता है । इस विषय में निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए—

(क) अनुच्छेद या अवतरण को दो-तीन बार अवश्य पढ़ लेना चाहिए इससे अवतरण का अभिप्राय समझ में आ जाता है ।

(ख) अनुच्छेद का शीर्षक प्रायः प्रथम पंक्ति में या अन्तिम पंक्ति में रहता है । कभी वह अवतरण में कही गई बात के साररूप में भी छुपा रहता है । अतः अनुच्छेद अच्छी प्रकार पढ़कर अनुच्छेद में निहित भाव के अनुरूप ही छोटा शीर्षक देना चाहिए ।

(ग) अनुच्छेद का सार यथा सम्भव अपने ही शब्दों में और लगभग अव-तरण के एक तिहाई अंश में लिखना चाहिए ।

(घ) अनुच्छेद से पूछे गए प्रश्नों के उत्तर सम्बद्ध और छोटे ही देने चाहिए, असम्बद्ध नहीं।

यहाँ अभ्यास के लिए कुछ अवतरण दिए गए हैं। उन्हें पढ़कर इसका अभ्यास करना चाहिए।

(1)

"एक अच्छे साहित्यकार का स्थान बड़े से बड़े राजा, राज-नेता अथवा समाज-सुधारक से कम नहीं होता। राजा या राज-नेता अपने समय में ही प्रसिद्धि पाता है, किन्तु सच्चा कलाकर अपने युग का ही नहीं युग-युग का हो जाता है। अनेक शताब्दियों के अनन्तर भी महाकवि कालिदास की ख्याति क्या विक्रमादित्य या भोज से कम है ? स्टालिन जैसे राज-नेता का मान चाहे रूस वालों के हृदय में कम हो जाए, पर क्या गोर्की को रूस वाले कभी भुला सकते हैं ? लेखक की ख्याति में देश-काल की सीमाएँ बाधक नहीं बनती। उपन्यास सम्राट् मुंशी प्रेमचन्द के सम्बन्ध में यही बात चरितार्थ होती है। वे मानवता के सच्चे पुजारी थे। दीन-दुखी और पद-दलित जनता के लिए इतनी सहानुभूति और संवेदना रखने वाला कलाकार आज तक उत्पन्न नहीं हुआ। वस्तुतः उन्होंने टूटी-फूटी झोपड़ियों में रहने वाले भारत के किसानों के मार्मिक चित्रण ने अपने साहित्य को अमर कर दिया है।"

(अ) उपर्युक्त अनुच्छेद का उपयुक्त शीर्षक दीजिए।

(आ) कालिदास क्यों प्रसिद्ध है ?

(इ) गोर्की को रूसवासी क्यों नहीं भुला सकते।

(ई) प्रेमचन्द नें अपने साहित्य में किन का चित्रण किया है ?

(उ) उक्त गद्यांश का सार लिखिए।

उत्तर—(अ) अनुच्छेद का शीर्षक—**उपन्यास सम्राट् मुंशी प्रेमचन्द।**

(आ) कालिदास अपने साहित्य के कारण प्रसिद्ध हैं।

(इ) रूस का महान् साहित्यकार होने के कारण रूसी गोर्की को भुला नहीं सकते।

(ई) प्रेमचन्द ने अपने साहित्य में भारत के निर्धन किसानों का मार्मिक चित्रण किया है।

अनुच्छेद का सार

सच्चा कलाकार किसी राजा या राज नेता से कम नहीं होता। राजा या राजनेता की ख्याति अपने देश और अपने युग में ही होती है, किन्तु श्रे साहित्यकार की ख्याति देश और काल की सीमाओं को लाँघ कर समस्त विश में फैल जाती है। मुंशी प्रेमचन्द ऐसे ही कलाकार थे। उन्होंने अपने साहि में भारत के दीन-हीन किसानों का मार्मिक चित्रण किया है।

(2)

"बल और बुद्धि का वही सम्बन्ध है जो देह और आँख का। बुद्धि-कौश के विना बल का कुछ अर्थ नहीं और बल के अभाव में बुद्धि पंगु है।

राजपूतों में बल था, ऐसा बल, विश्व इतिहास के पृष्ठों में जिसकी को उपमा नहीं, पर पराजय के अतिरिक्त उन्हें क्या मिला ?

वे जहाँ लड़े, सिंह की भाँति लड़े। शत्रु और मित्र सभी ने खुले दिल उनके शौर्य की प्रशंसा की, पर इससे क्या ?

कल्पना के मोदक हमें कुछ काल लिए आनन्द के मधुर आवेश में भले भुला दें, पर हमारी क्षुधा की शान्ति नहीं कर सकते।

शाहजहाँ का उत्तराधिकारी दारा साठ हजार से भी अधिक बल-राशि स्वामी था और उसका छोटा भाई औरंगजेब इससे आधी से भी कम, पर बु कौशल के अभाव में एक का अन्त इतना दयनीय कि **पत्थर भी पसीज उठे**, अ दूसरा भी इसी के सहारे साम्राज्य का अधीश्वर बन बैठा।"

बल के साथ बुद्धि का एकत्र संयोग सौभाग्य श्री का पुनीत वरदान है जिस मनुष्य, जाति या राष्ट्र को महामाया का यह वरदान प्राप्त है, सफ उसके सामने **हाथ बाँधे खड़ी रहने** में अपने जीवन की चरितार्थता मानती और विजय उसकी एक आँख के सूक्ष्म संकेत पर नाचने में अपने गौरव अनुभव करती है।"

(अ) उपर्युक्त गद्यांश का शीर्षक दीजिए।

(आ) बल और बुद्धि के सम्बन्ध की तुलना देह और आँख के सम्बन्ध क्यों की गई है ?

(इ) औरंगजेब की सफलता का क्या रहस्य था ?

(ई) लेखक ने विजय, सौभाग्य और सम्पन्नता के लिए किन गुणों को ावश्यक बताया है ?

(उ) काले अंशों का भावार्थ समझाइए।

(ऊ) उपर्युक्त गद्यांश का सार लगभग पचास शब्दों में लिखिए।

उत्तर —(अ) गद्यांश का शीर्षक—"**बल और बुद्धि।**"

(आ) जैसे आँख देखने की शक्ति से शरीर को यथा स्थान ले जाती है, से ही बुद्धि भी बल का उपयोग कराती है। अतः बल की तुलना शरीर से ार बुद्धि की आँख से की गई है।

(इ) औरंगजेब ने अपने बुद्धिकौशल द्वारा बल के उचित उपयोग से विजय प्त की।

(इ) लेखक ने विजय, सौभाग्य और सम्पन्नता के लिए बल तथा बुद्धि के योग को आवश्यक माना है।

(उ) भावार्थ (1) कल्पना के मोदक—कोरी ऊँची कल्पनाएँ, जिनके पीछे मंशक्ति न हो।

(2) पत्थर भी पसीज उठे —कठोर हृदय भी करुण-द्रवित हो जाए।

(3) भाव यह है कि जब शक्ति के साथ बुद्धि कौशल भी मिल जाता है, ब व्यक्ति को सौभाग्य और लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

(4) हाथ बाँधे खड़ी रहना अर्थात् सेवा के लिए सदा तैयार रहना।

द्यांश का सार

बल और बुद्धि का परस्पर वही सम्बन्ध है, जो देह और आँख का है। द्धि के बिना बल का कोई महत्त्व नहीं। राजपूतों और दारा के पास बल की ई कमी नहीं थी, किन्तु बुद्धि-कौशल न था। अतः वे पराजित हो गये। द्धि-कौशल के साथ अल्प बल होने पर भी औरंगजेब विजयी हुआ। अतः ष्ट है कि जब बल के साथ बुद्धि-कौशल का संयोग होगा, तभी व्यक्ति, समाज राष्ट्र सफलता पा सकेंगे।

(3)

"मानव ने समुद्र की अतल गहराइयों में प्रवेश करके और दुर्ग कान्तार के अन्धकार में घुसकर उनके रहस्यों का पता लगा लिया, किन्तु लम्बे अर्से तक हिमालय के सर्वोच्च शिखर पर वह अनेकानेक प्रयत्नों के भी नहीं पहुँच सका। उसके मन में दुर्दम अभिलाषा थी और वह दस प्रयत्न कर चुका था। जिस दिन मानव ने शिखर पर पहुँच कर अपनी वि पताका फहराई, वह दिन मानव के साहसपूर्ण प्रयत्नों की विजय गाथ स्वर्णिम दिन था। एवरेस्ट-विजय ने मानव को रहस्यों को जानने का उ प्रदान किया है, जो अद्यावधि अज्ञात बने हुए हैं हिमालय के सर्वोच्च शिख पहुँचने के बाद नगाधिराज का कोई रहस्य अब मानव के लिए अज्ञेय या मार्ग दुर्लभ या दुर्गम नहीं रह सकेगा। मानव अपनी विजय यात्रा में नि बढ़ता जा रहा है। चन्द्रलोक और मंगललोक के बाद वह सभी नक्षत्रों के जान कर विश्राम लेगा। मानवों की यह साहसिक यात्रा ही उसे संसा सर्वश्रेष्ठ प्राणी सिद्ध करती है।"

(क) उपर्युक्त गद्यांश का उपर्युक्त शीर्षक दीजिए।

(ख) मानव ने हिमालय विजय से पहले कहाँ-कहाँ प्रवेश कर लिया

(ग) मानव अब किन रहस्यों को जानने में लगा हुआ है ?

(घ) मानव को संसार का सर्वश्रेष्ठ प्राणी किस कारण कहा गया है

(ङ) उपर्युक्त अवतरण का सार लगभग पचास शब्दों में लिखो।

उत्तर–(क) गद्यांश का शीर्षक **'एवरेस्ट विजय'**

(ख) मनुष्य ने हिमालय (एवरेस्ट) विजय से पूर्व सागर की अतल राईयों में घुसकर और वनों में जाकर उसके रहस्यों का पता लगाया।

(ग) अब मानव नक्षत्रों में रहस्यों को जानने में लगा हुआ है।

(घ) अपनी साहसिक यात्राओं और अन्वेषणों के कारण मनुष्य संसार सर्वश्रेष्ठ प्राणी कहा गया है।

अवतरण का सार

मानव अपनी साहसिक यात्राओं से समुद्र के अतल तथा सघन वनों

हस्य का पता तो पा चुका था, किन्तु अनेक प्रयत्न करने पर भी हिमालय के र्वोच्च शिखर को विजित नहीं कर सका था। सतत प्रयत्न से अब मानव ने हिमालय के सर्वोच्च शिखर एवरेस्ट पर भी विजय प्राप्त कर ली है। इसी कार चन्द्रलोक और मंगल लोक के रहस्यों को जान लेने के अनन्तर वह अन्य क्षत्रों के रहस्य को जानने में लगा हुआ है।

(4)

"जो मारता है, उसे कोई योद्धा कहे तो मैं उसे बहस का मौका न दूंगा। रेक को हक है कि जहाँ से स्फूर्ति मिले, वहाँ से ले और जिसमें चाहे, उसी में द्धा रखे। बहस इसमें बेकार है, लेकिन यदि विवेक भी कोई चीज है, तो मैं हना चाहता हूँ कि जो बिना मारे युद्ध में डटा रहता है, जो अपने को शत्रु नने वाले को मित्र मानता है और उसकी शत्रुता को अपनी अखंड मैत्री से लता है, वह प्रवीणतर योद्धा है। प्रवीणतर और अधिक साहसी और अधिक वेकी और अधिक बलवान्।

लेकिन करना कहने सा सीधा नहीं है। जो हमारे खून का प्यासा है, उसमे खून की प्यास निकल जाये और उसमें स्नेह की प्यास पैदा हो जाये, यह स खेल नहीं। इतिहास के युग-युग और देश-देश में बहुतेरे लोग स्पर्द्धापूर्वक कर इस मोर्चे को लेने पहुँचे। असंख्य बीच में ही टूट गये और दुश्मन के यों खेल रहे।"

(अ) उपर्युक्त गद्यांश का उपयुक्त शीर्षक दीजिए।

(आ) आपकी दृष्टि में श्रेष्ठ योद्धा कौन हो सकता है ?

(इ) अपने शत्रु को मित्र बनाने के लिए क्या-क्या उपाय करना चाहिएँ ?

(ई) किस दृष्टि से लड़ा गया युद्ध श्रेष्ठ माना गया है ?

(उ) काले अंशों का भावार्थ समझाइए।

(ऊ) उक्त गद्यांश का सार लगभग चालीस शब्दों में लिखिए।

उत्तर—(अ) गद्यांश का शीर्षक—"प्रवीणतर योद्धा।"

(आ) शत्रु को मित्र मानने वाला तथा उसकी शत्रुता को अखंड मैत्री से ने वाला ही श्रेष्ठ योद्धा है।

(इ) शत्रु को मित्र बनाने के लिए उसे मित्र बनाना चाहिए और
दिल से खून की प्यास को प्रेम के अस्त्र से निकालना चाहिए।

(ई) शत्रु के प्रति प्रेम-दृष्टि से लड़ा गया युद्ध अर्थात् शत्रुता के बदले
प्रदर्शन करना ही श्रेष्ठ युद्ध है।

(उ) **भावार्थ** (i) शत्रु को मित्र मानना और शत्रु यदि शत्रुता करे तो
उससे मित्रता तथा स्नेह करना ही श्रेष्ठ योद्धा का लक्षण है।

(ii) ऐसा श्रेष्ठ योद्धा कोई एक-आध ही बन पाता है।

(iii) शत्रुओं ने उन्हें युद्ध में नष्ट कर दिया।

गद्यांश का सार

दूसरे को मारने वाला भी योद्धा होता है, किन्तु जो शत्रु को मारे भी युद्ध में स्थिर रहता है, शत्रु को मित्र मानता है, उसकी शत्रुता को मित्रता से झेलता है, उससे प्रेम करता है, वही अधिक बलवान् और योद्धा है। खून के प्यासे दिल में प्यार की प्यास जगाना सरल कार्य नहीं, बिरला ही इसमें सफल होता है।

(5)

"सफल और असफल मनुष्यों में क्या अन्तर है ? यह कि एक से कम किया और दूसरे ने ज्यादा ? क्या यही दोनों के परिश्रमों के विभिन्न परि का कारण है ? नहीं, बात कुछ और ही है। सफल व्यक्ति ने अपना काम मत्ता से किया, एकाग्रता से किया, उसमें अपना दिमाग लगाया। व्यक्ति ने बोझा ढोया था। ऐसे लोग काम तो बहुत करते हैं, लेकिन अपनी बुद्धि का प्रयोग नहीं करते। उनके श्रम और उनके फल को दया आती है। वे परिस्थितियों को पकड़े रहते हैं और नहीं जानते कि से किस तरह लाभ उठाना चाहिए। उनमें वह योग्यता नहीं होती कि वे असफलता को सफलता में बदल सकें।

(1) उपर्युक्त गद्यांश का उपयुक्त शीर्षक दीजिये।

(2) सफल और असफल मनुष्यों में क्या अन्तर है ?

(3) 'परिस्थितियों को न पकड़े रहकर अवसर से लाभ उठाना चाहि
इस कथन को उदाहरण देकर सिद्ध कीजिए।

(4) लेखक के अनुसार ऐसे कौन से उपाय हैं, जिनसे हम असफलता को भी सफलता में बदल सकते हैं ?

(5) उक्त गद्यांश का सार लगभग चालीस शब्दों में लिखो ।

उत्तर—गद्यांश का शीर्षक—'सफलता का रहस्य ।'

(2) सफल व्यक्ति अपना कार्य बुद्धिमत्ता और एकाग्रता से करते हैं, भले ही वह परिणाम में अल्प हों । इसके विपरीत असफल व्यक्ति काम तो बहुत करते हैं, किन्तु उसमें अपनी बुद्धि का उपयोग नहीं करते ।

(3) 'परिस्थितियों में पकड़कर……' इस अंश का अभिप्राय है कि व्यक्ति को अवसर देखकर अपना काम सिद्ध करना चाहिए । हम देखते हैं कि अवसर वादी लोग प्राय: किसी राज-नेता से लाभ उठाते हैं और उसका पतन होते ही दूसरे के चमचे बनकर वहाँ से अपना स्वार्थ सिद्ध कर लेते हैं ।

(4) बुद्धि का उपयोग करके, एकाग्रता से काम करने पर और अवसर का लाभ उठाकर ही असफलता को सफलता में बदला जा सकता है ।

गद्यांश का सार

अधिक या कम परिश्रम करने से कोई सफल या असफल नहीं होता । बुद्धिमता से, एकाग्रता से और मस्तिष्क का उपयोग करने से ही व्यक्ति सफलता प्राप्त कर सकता है । कार्य में असफल वे ही होते हैं, जो श्रम तो बहुत करते हैं, किन्तु बुद्धि का उपयोग नहीं करते, अवसर का लाभ उठाना नहीं जानते ।

(6)

"प्राचीन काल में जनक महाराज विदेह में राज करते थे । मिथिला विदेह की राजधानी थी । मिथिला नगरी में राजमहल के आस-पास कोई एक हजार संन्यासियों की पर्ण-कुटियाँ थीं । मिथिला के सिंहासन पर बैठने पर भी जनक महाराज को फकीरी का शौक था । कहा जाता है कि जनक ज्ञानी थे । वे इस तरह राज-काज चलाते थे, मानो स्वयं परमात्मा के विनयशील सेवक हों । सुबह से लेकर शाम तक सारे राज्य का प्रबन्ध करते थे, शत्रुओं का पता रखते थे, अपराधी को दण्ड देते, लोक कल्याण के उपाय करते और इतना सब कुछ करने

पर भी वे सांसारिक कार्य में लिप्त नहीं होते थे। इसलिए लोग इन्हें वि
जनक कहते थे।"

(क) उपर्युक्त गद्यांश का उपयुक्त शीर्षक दीजिए।

(ख) उपर्युक्त गद्यांश का सार एक तिहाई शब्दों में लिखिए।

उत्तर–(क) गद्यांश का शीर्षक 'विदेह जनक'

गद्यांश का सार

प्राचीन काल में मिथिला में महाराज जनक राज्य करते थे। जनक ज्ञा
थे। सिंहासन पर बैठने पर भी उनमें फकीरी का शौक था। वे परमात्मा
विनम्र सेवक के रूप में राज चलाते थे। समस्त राजकार्य करते हुए भी
सांसारिक कार्यों में लिप्त नहीं होते थे। इसलिए वे विदेह जनक कहलाते थे।

—०—

व्यावहारिक व्याकरण

तत्सम व तद्भव शब्द

तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव
अम्बा	अम्मा	कोकिल	कोयल
अग्नि	आग	कृष्ण	किशन
अर्ध	आधा	खट्वा	खाट
अस्थि	हड्डी	गर्दभ	गधा
अश्रु	आँसू	गौर	गोरा
अक्षि	आँख	ग्राम	गाँव
आश्रय	आसरा	गृह	घर
आश्चर्य	अचरज	घट	घड़ा
अष्ट	आठ	घृत	घी
उज्ज्वल	उजला	चन्द्र	चाँद
उष्ट्र	ऊँट	चन्द्रिका	चाँदनी

तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव
ओष्ठ	ओंठ	चौर	चोर
कार्य	कारज	चक्र	चाक
कर्म	काम	चूर्ण	चूरन, चून
कपाट	किवाड़	चैत्र	चैत
कूप	कुआँ	उलूक	उल्लू
कर्ण	कान	ज्येष्ठ	जेठ, जेठा
कुम्भकार	कुम्हार	जमाता	जँवाई
कंकण	कंगन	जिह्वा	जीभ
कंटक	काँटा	तैल	तेल
स्थल	थल	भगिनी	बहिन
दधि	दही	भ्रमर	भौंरा
दुग्ध	दूध	मयूर	मोर
दन्त	दाँत	मुख	मुँह
दुर्बल	दुबला	मस्तक	माथा
दीपावली	दिवाली	यमुना	जमुना
धैर्य	धीरज	लज्जा	लाज
नव	नौ, नया	लक्ष्मण	लछमन
नग्न	नंगा	श्रावण	सावन
निद्रा	नींद	शर्करा	शक्कर
नयन	नैन	शून्य	सूना
प्रहर	पहर	शाक	साग
पाद, पद	पाँव	सप्त	सात
पिपासा	प्यास	हस्त	हाथ
पुराण	पुराना	हृदय	हिय
पौत्र	पोता	श्यामल	साँवला
पत्र	पत्ता	क्षेत्र	खेत

पर्यंक	पलंग	सूत्र	सूत
पक्व	पक्का	सौभाग्य	सुहाग
पक्षी	पंछी	स्फूर्ति	फुर्ती
बधिर	बहरा	स्वप्न	सपना
वधू	बहू	सूर्य	सूरज
बिन्दु	बूंद	हस्ती	हाथी
नासिका	नाक	पर्व	परब
बुभुक्षा	भूख	पिपासा	प्यास
भित्ति	भीत	वाम	बायाँ

भाव-वाचक संज्ञाओं की रचना

शब्द	भाववाचक संज्ञा	शब्द	भाववाचक संज्ञा
अमर	अमरता	चतुर	चतुरता, चातुर्य
अज्ञ	अज्ञता	चुनना	चुनाव
अनुचित	अनौचित्य	जागना	जागरण
अहम्	अहंकार	जड़	जड़ता
अपना	अपनापन	तरुण	तारुण्य
अतिथि	आतिथ्य	तपस्वी	तप, तपस्या
आसली	आलस्य	दास	दासता, दासत्व
उदार	उदारता, औदार्य	देव	देवत्व
ईश्वर	ऐश्वर्य	धीर	धीरज, धैर्य
ऊँचा	उँचाई	नेता (नेतृ)	नेतृत्व
एक	एकता, ऐक्य	पशु	पशुत्व, पशुता
करुण	करुणा, कारुण्य	परतन्त्र	परतन्त्रता
कर्ता	कृति	पुरुष	पौरुष
कुमारी	कौमार्य	प्रभु	प्रभुता, प्रभुत्व

शब्द	भाववाचक संज्ञा	शब्द	भाववाचक संज्ञा
कृपण	कृपणता, कार्पण्य	पंडित	पाण्डित्य, पंडिताई
कुशल	कुशलता, कौशल	वृद्धि	वार्धक्य
कृतज्ञ	कृतज्ञता		
कंजूस	कंजूसी	बिकना	बिक्री, विक्रय
खट्टा	खटास	भ्राता (भ्रातृ)	भ्रातृत्व
खेलना	खेल	भक्त	भक्ति
गुरु	गुरुता, गौरव	मनुष्य	मनुष्यत्व, मनुष्यता
गाना	गान	मलिन	मालिन्य, मलिनता
घबराना	घबराहट	मम	ममता, ममत्व
चपल	चपलता, चापल्य	मधुर	मधुरता, माधुर्य
माता (मातृ)	मातृत्व	सुजन	सौजन्य, सुजनता
महात्मा	माहात्म्य	स्वीकृत	स्वीकृति
महान्	महत्त्व, महत्ता	शान्त	शान्ति
मूर्ख	मूर्खता	शिशु	शैशव
मित्र	मित्रता. मैत्री	सम	समता, साम्य
मुक्त	मुक्ति, मोक्ष	सदृश	सादृश्य
युवा	यौवन	सखा	सख्य
राष्ट्र	राष्ट्रीयता	सुन्दर	सुन्दरता, सौन्दर्य
लघु	लघुता, लाघव	सफल	सफलता, साफल्य
लम्बा	लम्बाई	समीप	सामीप्य
लाल	लाली	स्व	स्वत्व
विधवा	वैधव्य	समर्थ	सामर्थ्य
विद्वान्	विद्वत्ता	स्वामी	स्वामित्व
विषय	विषमता, वैषम्य	हँसना	हँसी
वृद्ध	वार्द्धक्य, वृद्धि	हरा	हरियाली

—o—

विशेषणों की रचना

शब्द	विशेषण	शब्द	विशेषण
अर्थ	आर्थिक	अंश	आंशिक
अनुग्रह	अनुगृहीत	अध्यात्म	आध्यात्मिक
अभिलाषा	अभिलाषी	अभिमान	अभिमानी
अन्त	अन्तिम	अभ्यास	अभ्यस्त, अभ्यासी
अन्तर	आन्तरिक	असुर	आसुरी
अनुकरण	अनुकरणीय	आत्मा	आत्मिक, आत्मीय
आदर	आदरणीय, आदृत	केन्द्र	केन्द्रित, केन्द्रीय
आविष्कार	आविष्कृत	क्रोध	क्रोधी, क्रुद्ध
आयु	आयुष्मान्	कृपा	कृपालु
आभार	आभारी	खेद	खिन्न
इच्छा	इच्छुक, इच्छित	ग्राम	ग्रामीण, ग्राम्य
	ऐच्छिक	गंगा	गांगेय
इतिहास	ऐतिहासिक	गुण	गुणी, गुणवान्
ईश्वर	ईश्वरीय	घृणा	घृणित
ईर्ष्या	ईर्ष्यालु	चिन्ता	चिन्तित
उपेक्षा	उपेक्षित	चिर	चिरन्तन
उद्योग	औद्योगिक	छेदन	छिन्न
उद्यम	उद्यमी	जिज्ञासा	जिज्ञासु
उपयोग	उपयोगी, उपयुक्त	जटा	जटिल, जटाधारी
उपासना	उपास्य	जाति	जातीय
उत्कर्ष	उत्कृष्ट	ज्योति	ज्योतित
उपचार	औपचारिक	तप	तपस्वी
उन्नति	उन्नत	तम	तामस, तामसी
ऋषि	आर्ष		
एक	एकाकी	तत्त्व	तात्त्विक

शब्द	विशेषण	शब्द	विशेषण
कर्म	कर्मण्य, कर्मठ	त्याग	त्यागी
कल्पना	कल्पित	तिरस्कार	तिरस्कृत
करुणा	कारुणिक, करुण	तेज	तेजस्वी
काम	कामी, कामुक	देव	दैवी
काल	कालिक, कालीन	देह	दैहिक
कुल	कुलीन	दिन	दैनिक
कुटुम्ब	कौटुम्बिक	दया	दयालु, दयनीय
कुसुम	कुसुमित	दान	दाता, दानी
दर्शन	दर्शनीय, दर्शक	प्रसिद्धि	प्रसिद्ध
दुख	दुखी	पक्ष	पाक्षिक
द्रव	द्रवित	परलोक	पारलौकिक
देश	देशीय, देश	पीड़ा	पीड़ित
धन	धनिक, धनी	पिता (पितृ)	पैतृक
	धनवान्	पुष्प	पुष्पित
धर्म	धार्मिक	पुरुष	पौरुषेय
धी (बुद्धि)	सुधी	फल	फलित, सफल
ध्यान	ध्यानी, ध्यानमग्न	बुद्धि	बुद्धिमान्, बौद्धिक
नगर	नागर, नागरिक	वल	बली, बलवान्
नरक	नारकीय	भय	भयानक, भयंकर
नव	नवीन, नूतन	भूत	भौतिक
नित्य	नैत्यिक	भूगोल	भौगोलिक
नीति	नैतिक	मन	मानसिक, मनस्वी
नाश	नष्ट, नश्वर		मानसी
निन्दा	निन्दित निन्दनीय	मधु	मधुर
निषेध	निषिद्ध	मान	मान्य, माननीय
पर्वत	पर्वतीय, पार्वत्य	मुख	मौखिक, मुख्य

शब्द	घिशेषण	शब्द	विशेषण
पशु	पाशविक	मूल्य	मूल्यवान्
पाप	पापी	मेधा (बुद्धि)	मेघावी
पिपासा	पिपासित	मांस	मांसल
प्रकृति	प्राकृत, प्राकृतिक	मोक्ष	मुमुक्षु
पूजा	पूज्य, पूजनीय, पूजक	मोह	मुग्ध, मोहित
पुराण	पौराणिक	यश	यशस्वी
प्रवेश	प्रविष्ट	योग	यौगिक
परिवार	पारिवारिक	यज्ञ	याज्ञिक
प्रतिष्ठा	प्रतिष्ठित	युग	युगीन
यन्त्र	यान्त्रिक	विद्या	विद्वान्, विद्यार्थी विद्यावान्
रस	रसिक, सरस, रसीला	विपत्ति	बिपन्न
रज	राजस	विश्वास	विश्वस्त
रक्त	रक्तिम	विष	विषाक्त, विषैला
राजा	राजकीय	शरद्	शारदीय
रुचि	रोचक	शरीर	शारीरिक
रोग	रुग्ण, रोगी	शिव	शैव
रोष	रुष्ट	शास्त्र	शास्त्रीय
लज्जा	लज्जित	शाप	शप्त
लोक	लौकिक	शीत	शीतल
लेख	लेखक	शिक्षा	शिक्षित
वन	वन्य	श्री	श्रीमान्
वर्षा	वार्षिक	शक्ति	शक्तिशाली शाक्त
वसन्त	वासन्ती	श्रद्धा	श्रद्धालु
विष्णु	वैष्णव	समय	सामयिक
वेद	वैदिक		

शब्द	विशेषण	शब्द	विशेषण
व्याकरण	वैय्याकरण	सभा	सभासद्, सभ्य
विज्ञान	वैज्ञानिक, विज्ञानी	स्वर्ग	स्वर्गीय, स्वर्गिक
विस्मय	विस्मित	स्मरण	स्मरणीय, स्मारक
विभाजन	विभक्त	स्तुति	स्तुत्य
विधि	वैध, विहित	स्वप्न	स्वप्निल
विधान	वैधानिक	संचय	संचित
व्यक्ति	वैयक्तिक, व्यक्तिगत	संसार	सांसारिक
		सप्ताह	साप्ताहिक
वेतन	वैतनिक	सम्पत्ति	सम्पन्न
विनय	विनीत	स्थान	स्थानीय
स्त्री	स्त्रैण	सूर्य	सौर
स्वाद	स्वादिष्ट, स्वादु	सन्देह	संदिग्ध
साहित्य	साहित्यिक	हिंसा	हिंसक
समाज	सामाजिक	हृदय	हार्दिक
सिद्धांत	सैद्धांतिक	शुद्धि	शुद्ध
हित	हितैषी	श्री	श्रीमान्

—o—

पर्यायवाची (समानार्थक) शब्द

अमृत—सुधा, पीयूष, सोम, अमी ।

अग्नि—अनल, पावक, वह्नि, हुताशन, कृशानु ।

अर्थ—आशय, अभिप्राय, प्रयोजन ।

अधम—पतित, भ्रष्ट, नीच, निकृष्ट, तुच्छ ।

अपमान—अनादर, अवज्ञा, तिरस्कार, अवहेलना ।

अभिमान—गर्व, दर्प, दम्भ, अहंकार ।

अतिथि—अभ्यागत, आगन्तुक, प्राघुणिक ।

असुर—राक्षस, दैत्य, दानव, निशाचर ।

अन्न—सस्य, धान्य ।

आकाश—अम्बर, व्योम, गगन, नभ, अन्तरिक्ष ।

आँख—नयन, नेत्र, चक्षु, अक्षि, दृग्, लोचन ।

आनन्द—हर्ष, उल्लास, मोद, आह्लाद, सुख, प्रसन्नता ।

आज्ञा—आदेश, निदेश, निर्देश, अनुशासन ।

इच्छा—अभिलाषा, कामना, लालसा, मनोरथ, आकांक्षा ।

इन्द्र—सुरेश, सुरेन्द्र, देवराज, देवेन्द्र, सुरपति, शक्र ।

ईश्वर—परमात्मा, परमेश्वर, प्रभु, जगदीश, भगवान्, ईश ।

उद्देश्य—लक्ष्य, ध्येय ।

उद्योग—उद्यम, यत्न, प्रयत्न, परिश्रम, प्रयास ।

उन्नति—विकास, उत्थान, उत्कर्ष, अभ्युदय, प्रगति ।

कमल—पंकज, सरोज, नीरज, पद्म, अम्बुज, कंज, जलज, अरविन्द ।

कामदेव—मदन, मनोज, कंदर्प, अनंग, मन्मथ, मनसिज, पंचवाण ।

कल्याण—शुभ, मंगल, शिव, श्रेय, क्षेम ।

किरण—रश्मि, कर, अंशु, मरीचि ।

क्रोध—कोप, रोष, आक्रोष, आवेश, मन्यु, अमर्ष ।

गंगा—भागीरथी, जाह्नवी, सुरसरिता, देवनदी, त्रिपथगा, मन्दाकिनी ।

गणेश—गणपति, गजानन, एकदन्त, विनायक, लम्बोदर, विघ्नेश्वर ।

गुरु—शिक्षक, अध्यापक, आचार्य, उपाध्याय ।

गाय—गौ, धेनु, सुरभि ।

घर—गृह, भवन, सदन, निकेत, निकेतन, आलय, निलय, मन्दिर, धाम ।

घोड़ा—घोटक, अश्व, तुरंग, वाजि, हय ।

चन्द्रमा—सोम, शशी, विधु, इन्दु, मयंक, शशांक, राकेश, सुधाकर ।

चतुर—कुशल, प्रवीण, पटु, निपुण, विज्ञ, दक्ष, नागर ।

चाँदनी—चन्द्रिका, ज्योत्सना, कौमुदी ।

चमक—कांति, ज्योति, आभा, द्युति, दीप्ति, प्रकाश ।

छटा—शोभा, आभा, छवि, सुन्दरता, सौन्दर्य, सुषमा ।
जल—नीर, उदक, वारि, पय, सलिल, तोय, अम्बु, जीवन ।
झूठ—असत्य, मिथ्या, अयथार्थ, अनृत ।
तलवार—करवाल, खड्ग, खंग, असि, कृपाण, चन्द्रहास ।
तालाब—सर, सरोवर, तडाग, ह्रद, जलाशय ।
दया—कृपा, अनुग्रह, अनुकम्पा, करुणा ।
दास—सेवक, अनुचर, भृत्य, किंकर, परिचर ।
दिन—दिवस, वार, वासर, दिवा, अह्न, अह ।
दुष्ट—दुर्जन, खल, शठ, धूर्त, कुटिल ।
दुःख—पीड़ा, व्यथा, वेदना, कष्ट, क्लेश, विषाद, सन्ताप, यातना ।
दूध—दुग्ध, पय, क्षीर ।
देवता—देव, सुर, अमर, विबुध, निर्जर ।
देह—शरीर, तनु, वपु, गात्र, काया, कलेवर ।
धन—द्रव्य, अर्थ, वित्त, सम्पत्ति, सम्पदा, द्रविण, लक्ष्मी ।
धनी—धनवान्, सम्पन्न, श्रीमान्, लक्ष्मीवान्, धनपति ।
नदी—सरिता, सरि, तटिनी, तरंगिणी, निर्झरिणी, स्रोतस्विनी ।
नारी—स्त्री, ललना, वनिता, अंगना, महिला, वामा, रमणी ।
पक्षी—खग, विहग, विहंगम, शकुनि, द्विज, शकुन्त ।
पर्वत—गिरि, नग, शैल, अचल, भूधर, महीधर, अद्रि ।
पत्थर—प्रस्तर, पाषाण, उपल, शिला, पाहन ।
पण्डित—विद्वान्, सुधी, मनीषी, विज्ञ, ज्ञानी, प्राज्ञ, कोविद ।
पवन—वायु, अनिल, वात, वातास, समीर, समीरण, मारुत, मरुत् ।
पति—स्वामी, नाथ, वल्लभ, ईश ।
पत्नी—भार्या, वामा, अर्द्धांगिनी, गृहणी, वधू, जाया, कलत्र, भामिनी ।
पुत्र—आत्मज, सुत, तनय, तनुज, नन्दन ।
पुत्री—आत्मजा, सुता, तनया, तनुजा, नन्दिनी, दुहिता ।
पुष्प—कुसुम, प्रसून, सुमन, फुल्ल ।

पूजा—अर्चना, उपासना, आराधना ।

प्रेम—स्नेह, प्रीति, रीति, रति, प्रणय, अनुराग ।

प्रकृति—स्वभाव, निसर्ग ।

पृथ्वी—भूमि, भू, धरणी, धरित्री, वसुधा, वसुन्धरा, मही, अवनि ।

बल—शक्ति, सामर्थ्य, वीर्य, पराक्रम, विक्रम ।

बादल—मेघ, जलद, पयोद, घन, नीरद, पयोधर, वारिधर ।

बाण—शर, इषु, विशिख, सायक, शिलीमुख ।

ब्राह्मण—द्विज, द्विजन्मा, विप्र, भूसुर, भूदेव ।

ब्रह्मा—विधि, विधाता, विरंचि, प्रजापति, चतुरानन ।

बिजली—विद्युत्, चपला, चंचला, तडित्, दामिनी, सौदामिनी ।

बुद्धि—मति, प्रज्ञा, धी, मेधा, मनीषा, प्रतिभा ।

भाग्य—प्रारब्ध, विधि, नियति, दैव, भावी ।

भौंरा—भ्रमर, अलि, षट्पद, मधुकर, मधुप, भृंग, चंचरीक ।

मन—चित्त, हृदय, उर, मानस ।

मस्तक—भाल, मौलि, ललाट, शिराग्र, शीर्ष ।

मनुष्य—मानस, मानुष, नर, जन, पुरुष ।

मित्र—सखा, सुहृद्, वयस्क, सहचर, बन्धु ।

मूर्ख—अज्ञ, जड़, मूढ़, अबोध ।

मुंह—आनन, मुख, वदन ।

मोक्ष—मुक्ति, अपवर्ग, निर्वाण, कैवल्य, परमपद, परमगति ।

युद्ध—रण, संग्राम, समर, आहव ।

राजा—नृप, नृपति, नरेश, भूपति, भूपाल, महीपति, अवनिपाल ।

रात—रात्रि, निशा, रजनी, विभावरी, यामिनी, शर्वरी, दोषा, क्षमा ।

लक्ष्मी—श्री, कमला, इन्दिरा, पद्मा, रमा, चंचला ।

वन—कानन, विपिन, अरण्य, कान्तार, अटवी ।

वसन्त—ऋतुराज, ऋतुपति, कुसुमाकर, मधुमास ।

वृक्ष—तरु, द्रुम, पादप, विपट ।

शत्रु—अरि, वैरी, रिपु, अराति, विपक्षी ।

विष्णु—नारायण, जनार्दन, अच्युत, माधव, मुकुन्द, हरि, लक्ष्मीपति ।
शिव—शंकर, शम्भु, हर, रुद्र, महेश, महादेव, त्रिलोचन, त्रिपुरारि, नीलकंठ ।
समुद्र—जलनिधि, जलधि, सागर, रत्नाकर, सिन्धु, उदधि, अम्बुधि ।
साँप—सर्प, भुजंग, नाग, विषधर, व्याल, अहि, फणी, उरग, पन्नग ।
संसार—जगत्, विश्व, भुवन, भव, लोक, सृष्टि, संसृति ।
सरस्वती—शारदा, वाणी, भारती, गिरा, वीणापाणी, वागीश्वरी ।
सिंह—केसरी, मृगराज, मृगेन्द्र, वनराज, शार्दूल, पंचानन ।
सोना—स्वर्ण, सुवर्ण, कांचन, जातरूप, हेम, कनक, हिरण्य, चामीकर, कुन्दन ।
हाथ—हस्त, पाणि, कर ।
हाथी—हस्ती, गज, द्विप, करी, नाग, कुंजर, मतंग, द्विरद, दन्ती ।

—०—

विलोम (विपरीतार्थक) शब्द

शब्द	विलोम शब्द	शब्द	विलोम शब्द
अथ	इति	उत्कर्ष	अपकर्ष
अज्ञ	विज्ञ	ऋणी	उऋण
अनुकूल	प्रतिकूल	ऐहिक	पारलौकिक
आभ्यन्तर	वाह्य	औपचारिक	अनौपचारिक
्मृत	विष	कटु	मधुर
ानिवार्य	ऐच्छिक	कीर्ति	अपकीर्ति
्पराधी	निरपराध	कृतज्ञ	कृतघ्न
ादर	अनादर, निरादर	कृत्रिम	अकृत्रिम, नैसर्गिक
ादर्श	यथार्थ	कृश	स्थूल
ाकर्षण	विकर्षण	कर्मण्य	अकर्मण्य
ार्य	अनार्य	कोलाहल	शान्ति

शब्द	विलोम शब्द	शब्द	विलोम शब्द
आस्तिक	नास्तिक	गुण	अवगुण, दोष
आह्वान	विसर्जन	गुरु	लघु
आय	व्यय	गुप्त	प्रकट
आयात	निर्यात	गोचर	अगोचर
उत्कृष्ट	निकृष्ट	गृहस्थ	संन्यासी
उपकार	अपकार	जड़	चेतन
उपयुक्त	अनुपयुक्त	जीवन	मृत्यु
उन्नति	अवनति	तेजस्वी	निस्तेज
उत्थान	पतन	तीव्र	मन्द
उदय	अस्त	दानी	कृपण
उत्तम	अधम	दोषी	निर्दोष
उदार	अनुदार	दृश्य	अदृश्य
दैवी	आसुरी	मुख्य	गौण
दुर्बल	बलवान्	मूक	वाचाल
दयालु	निर्दय, क्रूर	मौखिक	लिखित
धर्म	अधर्म	मंगल	अमंगल
निरक्षर	साक्षर	यश	अपयश
निद्रा	जागरण	रोगी	नीरोग
निर्मल	मलिन	रक्षक	भक्षक
निर्माण	ध्वंस	लौकिक	अलौकिक
निर्बल	सबल	विधि	निषेध
निष्काम	सकाम	विनीत	अविनीत
नूतन	पुरातन	विशेष	सामान्य
नवीन	प्राचीन	विधवा	सधवा
नित्य	अनित्य	वैध	अवैध
निन्दा	स्तुति	शुभ	अशुभ
नश्वर	अनश्वर	शिष्ट	अशिष्ट

शब्द	विलोम शब्द	शब्द	विलोम शब्द
पक्ष	विपक्ष	श्रीगणेश	इतिश्री
पण्डित	अपण्डित, मूर्ख	सम	विषम
प्रिय	अप्रिय	सरस	नीरस
प्रवृत्ति	निवृत्ति	सत्य	असत्य, मिथ्या
पूर्ववर्ती	परवर्ती	सन्धि	विग्रह
पाश्चात्य	पौर्वात्य	सफल	विफल, असफल
परमार्थ	स्वार्थ	स्थावर	जंगम
प्राचीन	नवीन, अर्वाचीन	सार्थक	निरर्थक
प्रत्यक्ष	परोक्ष, अप्रत्यक्ष	स्थायी	अस्थायी
बन्धन	मोक्ष, मुक्ति	सभ्य	असभ्य, बर्बर
भीरु	निर्भीक	सुकर	दुष्कर
भूषण	दूषण	सुगम	दुर्गम
संयोग	वियोग	स्वस्थ	अस्वस्थ
साकार	निराकार	सृष्टि	प्रलय
सुमति	कुमति	सदय	निर्दय
सुर	असुर	सदुपयोग	दुरुपयोग
सरल	कठिन, कुटिल	सरस	नीरस
संकीर्ण	विस्तृत	सेवक	स्वामी
सुलभ	दुर्लभ	स्वर्ग	नरक
सरस	नीरस	हर्ष	शोक, विषाद
सुबोध	दुर्बोध	हित	अहित
सजीव	निर्जीव	हानि	लाभ
समस्या	समाधान	हास	रुदन
स्थूल	सूक्ष्म	क्षणिक	शाश्वत
स्वाधीन	पराधीन	ज्ञानी	अज्ञानी, मूढ़

—o—

अनेकार्थक शब्द

शब्द अर्थ

अथ—मंगलवाचक शब्द, प्रारम्भ, इसके पश्चात् ।

अक्षर—वर्ण, अविनाशी, ब्रह्म, सत्य ।

अंग—अवयव, शरीर, भाग, एक प्रदेश ।

अंक—संख्या, भाग्य, गोद, चिह्न ।

अम्बर—वस्त्र, आकाश ।

अर्थ—धन, अभिप्राय, प्रयोजन ।

अचल—स्थिर, पर्वत ।

अपवाद—निन्दा, कलंक, किसी नियम का लागू न होना ।

उत्तर—जवाब, दिशा ।

और—तथा, भिन्न, दूसरा, अधिक ।

कल—आने वाला या बीता हुआ दिन, चैन, मधुर स्वर ।

कर—हाथ, किरण, हाथी की सूंड, लगान (राज्य कर) ।

काम—इच्छा, वासना, कामदेव, कार्य ।

कुल—वंश, वर्ण, सारा, जाति ।

गुण—स्वभाव, धर्म, सत्व-रज-तम ये तीन गुण, रस्सी ।

गुरु—आचार्य, श्रेष्ठ, वृहस्पति, भारी, द्विमात्रिक वर्ण ।

जड़—अचेतन, मूर्ख, पेड़ की जड़ (मूल) ।

चपला—बिजली, लक्ष्मी, चंचला ।

दर्शन—देखना, नेत्र, आकृति, दर्पण, दर्शन शास्त्र ।

द्विज—ब्राह्मण, दाँत, पक्षी, चन्द्रमा ।

पद—पैर, स्थान, ओहदा ।

पूर्व—पहले, एक दिशा ।

पत्र—पत्ता, चिट्ठी, कागज, पंख ।

पय—दूध, पानी ।

पक्ष—पन्द्रह दिन का समूह, पंख, सहायक, शुक्ल और कृष्ण पक्ष ।

पानी—जल, कान्ति, प्रतिष्ठा, लज्जा, चमक ।

मधु—शहद, शराब, मीठा, वसन्त ऋतु ।

रस—आनन्द, जल, काव्य के नौ रस, स्वाद, पारा, स्वाद के छह रस ।

वर—श्रेष्ठ, दूल्हा, वरदान, मनोरथ ।

श्री- लक्ष्मी, शोभा, धन, ऐश्वर्य, मंगलावाची शब्द ।

वर्ण—अक्षर, रंग, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र—ये चार वर्ण ।

बल—शक्ति, सेना, बलराम जी, सामर्थ्य ।

श्रवण—कान, सुनना, एक नक्षत्र, एक पितृभक्त युवक ।

सिन्धु—समुद्र, नदी, एक प्रान्त ।

हरि—विष्णु, कृष्ण, इन्द्र, सूर्य, चन्द्र, घोड़ा, बन्दर ।

—o—

शब्द-युग्मों में अन्तर

(समोच्चारित भिन्नार्थक शब्द)

शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ
1. अगम	पहुँच से बाहर	6. आसन	बैठने का आसन
आगम	शास्त्र	आसन्न	समीप
2. अन्न	अनाज	7. उपेक्षा	तिरस्कार
अन्य	दूसरा	अपेक्षा	आवश्यकता, बनिस्पत
3. अनल	आग	8. उदर	पेट
अनिल	हवा	उदार	दयालु
4. अचल	पर्वत	9. ओर	तरफ
अचला	पृथ्वी	और	अन्य, तथा
5. अविराम	लगातार	10. कलि	कलियुग
अभिराम	सुन्दर	कली	फूल की कली

शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ
11. अर्थी	चाहने वाला	24. कक्षा	श्रेणी
अरथी	मुर्दे की काठी	कक्ष	कमरा, बगल
12. अशक्त	निर्बल	25. कर्म	काम
आसक्त	मोहित	क्रम	बारी, सिलसिला
13. अवलम्ब	सहारा	26. कांच	शीशा
अविलम्ब	शीघ्र	कंचन	सोना
14. अंश	हिस्सा, भाग	27. कुल	किनारा
अंशु	किरण	कूल	किनारा
15. अम्ब	माँ	28. कृति	रचना
अम्बु	जल	कृती	पुण्यात्मा, श्रेष्ठ
16. अदृश्य	न दिखाई देने वाला	29. क्षति	हानि
अदृष्ट	भाग्य	क्षिति	पृथ्वी
17. आकार	शक्ल, आकृति	30. खाद्य	खाने योग्य
आकर	खान, भण्डार	खाद	गोबर आदि की खाद
18. गृह	घर	31. दूत	सन्देश वाहक
ग्रह	सूर्य, चन्द्र आदि नक्षत्र	द्यूत	जुआ
		32. द्विप	हाथी
19. चरम	अन्तिम	द्वीप	टापू
चर्म	चमड़ा	33. दिन	दिवस
20. चिर	देर	दीन	गरीब, दुखी
चीर	वस्त्र	34. देव	देवता
21. चरण	पैर	दैव	भाग्य
चारण	भाट	35. नग	पर्वत
22. चरित्र	आचरण	नाग	हाथी, साँप
चरित	जीवन-कथा	36. निधन	मृत्यु
23. चपल	चंचल	निर्धन	गरीब, धनहीन
चपला	बिजली	37. नियत	निश्चित
		नियत	भाग्य

शब्द	अर्थ
38. प्रकार	ढंग
प्राकार	किले की दीवार
39. छत्र	छतरी
छात्र	विद्यार्थी
40. जूठा	जूठन
झूठा	असत्यवादी
41. तप	तपस्या
ताप	गर्मी, दुख
42. तरंग	लहर
तुरंग	घोड़ा
43. तरुणी	नवयुवती
तरणी	नाव
तरणि	सूर्य
44. दिशा	पूर्व आदि दिशाएँ
दशा	हालत, अवस्था
45. परिषद्	सभा
पार्षद	सदस्य, गण
46. प्रथा	रीति
पृथा	कुन्ती
47. बलि	भेंट, राजा बली
बली	बलवान्
48. बात	बातचीत
वात	हवा
49. भवन	घर
भुवन	संसार

शब्द	अर्थ
50. लक्ष्य	ध्येय
लक्ष	लाख
लाक्षा	मोहर लगाने की लाख
51. पथ	रास्ता
पथ्य	परहेज
52. प्रणय	प्रेम
परिणय	विवाह
53. प्रणाम	नमस्कार
प्रमाग	सबूत
54. परिणाम	नतीजा
परिमाण	मात्रा, माप
55. पुरुष	नर
पुरुष	कठोर
परशु	कुल्हाड़ा
56. प्रसाद	कृपा, नैवेद्य
प्रासाद	महल
57. वदन	मुख
बदन	शरीर
58. वर्ण	रंग, अक्षर
व्रण	घाव, चोट
59. व्यजन	पंखा
व्यंजन	पकवान; क से ह तक अक्षर

शब्द	अर्थ
60. भाग	हिस्सा
भाग्य	किस्मत
61. मद	अभिमान
मद्य	शराब, नशीली वस्तु
62. मूल	जड़
मूल्य	कीमत
63. मस्तक	माथा
मस्तिष्क	दिमाग
64. मनोज	कामदेव
मनोज्ञ	सुन्दर
65. युगल	दो
युग्म	जोड़ा
66. समान	बराबर
सम्मान	आदर
67. समिति	सभा
सम्मति	सलाह
68. हिम	वर्फ
हेम	सोना
69. हंस	एक पक्षी
हँस	हँसना
70. वस्तु	पदार्थ
वास्तु	भवन
71. सुधि	याद
सुधी	विद्वान्

शब्द	अर्थ
72. शुल्क	फीस
शुक्ल	सफेद
73. शिखर	चोटी
शेखर	मस्तक
74. शंकर	शिवजी
संकर	मिला हुआ
75. शकल	टुकड़ा, खण्ड
सकल	सारा
76. स्त्री	नारी
इस्तरी	कपड़ों पर फेरने वाला लोहा
77. सीता	जानकी
सिता	श्वेत शक्कर, चीनी
78. अवधि	समय की सीमा
अवधी	एक भाषा
79. संग	साथ
संघ	संगठन
80. सूची	तालिका
सूचि	सुई
81. सर्ग	सृष्टि
स्वर्ग	देवलोक
82. प्रणय	प्रेम
परिणय	विवाह
83. सुधा	अमृत
क्षुधा	भूख

—o—

समानार्थक शब्दों के अर्थ में सूक्ष्म भेद

1. अलौकिक—जो लोक (संसार) में न पाया जाए।
   अस्वाभाविक—जो स्वभाव के विरुद्ध हो।
2. अस्त्र—हथियार जो फेंका जाए। (बम, गोली, बाण आदि)
   शस्त्र—हथियार जिसे हाथ में पकड़ कर प्रहार किया जाए। (तलवार, छूरी, भाला आदि)
3. अनभिज्ञ—जिसे किसी बात की जानकारी न हो।
   अज्ञानी—जिसमें ज्ञान शक्ति का अभाव हो—मूर्ख।
4. आधि—मानसिक चिन्ता।
   व्याधि—शारीरिक रोग, ज्वर, सिरदर्द आदि।
5. अवस्था (वय)—उम्र जो चल रही हो।
   आयु - पूर्ण आयु।
6. अमूल्य—जिसका मूल्य ही न दिया जा सके। राम नाम अमूल्य है।
   बहुमूल्य—जिसका मूल्य बहुत अधिक हो। सोना बहुमूल्य है।
7. अभिमान (दर्प)—धन, बल, पद आदि का बड़प्पन।
   अहंकार—बिना गुण के बल का घमण्ड।
   गर्व—रूप, यौवन, विद्या, कुल का अभिमान।
   गौरव—अपने बड़प्पन का यथार्थ ज्ञान (स्वाभिमान)।
8. अभिवादन—अपना नाम और गोत्र बताकर प्रणाम करना।
   प्रणाम—अपने से बड़ों को प्रणाम करना।
   नमस्कार—बराबर वालों या अपरिचितों को नमस्कार करना।
   नमस्ते—नमस्कार के लिए सामान्य शब्द।
9. अबला—स्त्री।
   निर्बल—दुर्बल स्त्री।
10. अगम, अगम्य—जो पहुँच से बिलकुल बाहर हो।
    दुर्गम—जहाँ कठिनाई से पहुँचा जा सके।

11. असम्भव—जो कार्य बिल्कुल ही न हो सके ।
कठिन—जो कार्य कठिनता से हो सके ।

12. आविष्कार—किसी नई वस्तु का निर्माण करना ।
अनुसंधान—अज्ञात तथ्यों को प्रकट करना ।
अन्वेषण—छुपी वस्तु को प्रकाश में लाना, खोज लेना ।
शोध—साहित्य, विज्ञान, शिल्प आदि का गम्भीर अध्ययन करना ।

13. ईर्ष्या—दूसरों की उन्नति से अकारण जलना ।
द्वेष—किसी कारण से किसी से शत्रुता करना ।
स्पर्धा—दूसरों के गुणों से प्रभावित हो, अपनी उन्नति की चेष्टा करना ।

14. उत्साह—मन की स्वाभाविक उमंग, जो व्यक्ति को काम में लगाती है ।
साहस—भय के उपस्थित होने पर उसका सामना करने की मन की दृढ़ता ।

15. इच्छा—कुछ पाने की मन की स्वाभाविक चाह ।
कामना—किसी वस्तु को पाने की विशेष इच्छा ।
लालसा—वस्तु को अपने ही पास रखने की चाह ।
लोभ—दूसरों की वस्तु को पाने की या अधिक-से-अधिक पाने की इच्छा ।

16. उपहास—अपमान करने की भावना से दूसरे की हँसी उड़ाना ।
परिहास—मित्र-मंडली में विनोद के लिए हँसी की बात करना ।

17. आलस्य—सामान्य सुस्ती ।
प्रमाद—जानबूझ कर लापरवाही करना ।

18. कृपा—छोटों का कष्ट दूर करने की चेष्टा ।
दया—दीन-दुखियों के दुख को हरने की इच्छा ।
करुणा—दुखियों के दुख को देखकर पिघल जाना ।
अनुग्रह—किसी पर प्रसन्न होकर उसकी सहायता करना ।

19. क्रोध—अपराधी के अपराध से उत्तेजित होना ।
आवेश—विपरीत परिस्थिति में बिना विचारे गुस्सा करना ।
रोष—अप्रसन्नता की गहरी भावना ।
क्षोभ—असफलता के कारण मन में क्रोध और दुख की मिश्रित अनुभूति

20. दुःख—कष्ट के लिए सामान्य शब्द ।

शोक —प्रियजन या प्रियवस्तु के नाश से उत्पन्न दुख ।

विषाद —किसी चिन्ता के कारण मन का दुःखी होना ।

कष्ट—रोग या थकावट से होने वाली पीड़ा ।

खेद—अनिच्छित कार्य होने पर मानसिक दुख ।

21. धर्म—ईश्वर या प्रकृति द्वारा बनाए गए मानव-कल्याणकारी नियम ।

मत (सम्प्रदाय)—मानव कल्याण के लिए किसी महापुरुष द्वारा प्रवर्तित विचार या पंथ ।

22. न्याय—जाँच-परख पर ठीक-ठीक फैसला करना, इन्साफ करना ।

निर्णय—फैसला करना; चाहे कैसा भी हो ।

23. ऋषि—वेद मंत्रों का साक्षात्कार करने वाला ।

मुनि—धर्म के तत्त्व को जानने वाला तपस्वी ।

24. निर्दय—दूसरों को दुख में देखकर भी जिसका हृदय न पसीजे ।

क्रूर—हिंसा आदि कठोर कर्म करते हुए जो जरा भी न घबराये ।

25. पाप—धर्म और प्रकृति के नियमों को तोड़ना ।

अपराध—समाज और राज्य के नियमों को तोड़ना ।

26. भ्रम—मिथ्या ज्ञान । जैसे—रस्सी को साँप समझ लेना ।

सन्देह—अनिश्चयात्मक ज्ञान । जैसे—रस्सी है या साँप ?

27. प्रेम—स्नेह की स्वाभाविक वृत्ति ।

स्नेह—समानता के आधार पर मित्रों पर अथवा छोटों पर प्रीति ।

प्रणय—तरुण व तरुणी की परस्पर आकर्षण-जन्य प्रीति ।

वात्सल्य—माता-पिता का सन्तान के प्रति सहज स्नेह ।

28. श्रद्धा—ईश्वर, देवी-देवताओं या बड़ों के प्रति आदर व विश्वास रखना ।

भक्ति—श्रद्धा को अपनी चेष्टाओं द्वारा प्रकट करना ।

29. सेवा—देवता, माता, पिता आदि की सेवा ।

सुश्रूषा—रोगी की परिचर्या ।

30. स्त्री—कोई भी महिला ।

पत्नी—पुरुष की विवाहिता स्त्री ।

31. वन्धु—निजी सम्बन्धी, जो व्यक्ति के दुखों में दुखी और सुख में हर्षित हो।
सुहृद्—सदा सहमत रहने वाला प्रियजन।
मित्र—जिसकी क्रिया एक सी हो, ऐसा समवयस्क स्नेही।
सखा—जिनके मन-चित्त एक हों।

32. आवश्यक—जरूरी।
अनिवार्य—जो किसी भी स्थिति में टाला न जा सके।

—o—

वाक्यांश के लिए एक शब्द

वाक्यांश	शब्द
1. जिसका जन्म न हो	अज
2. जहाँ पहुँचा न जा सके	अगम्य
3. जिसकी कल्पना भी न की जा सके	अकल्पित
4. जो व्यक्ति कुछ भी कार्य नहीं करता	अकर्मण्य
5. जो चलता (हिलता-डुलता) नहीं	अचल
6. जो कभी बूढ़ा न हो	अजर
7. को कभी मरे नहीं	अमर
8. जिसके नाम का पता न हो	अज्ञात नामा
9. जिसके आने की कोई निश्चित तिथि न हो	अतिथि
10. जो कभी क्षमा न किया जा सके	अक्षम्य
11. बिल्कुल एक-एक अक्षर बोलना या लिखना	अक्षरशः
12. जो देखा न जा सके	अदृश्य
13. जिसके समान कोई दूसरा न हो	अद्वितीय
14. जिसका कोई शत्रु उत्पन्न न हुआ हो	अजातशत्रु
15. जिसके आदि का ज्ञान न हो	अनादि
16. जिसका कोई अन्त न हो	अनन्त

17. जिसका वर्णन न किया जा सके	अनिर्वचनीय
18. जिसको टाला न जा सके	अनिवार्य
19. जिसको कोई जीत न सके	अजेय
20. जिसकी तुलना न हो सके	अतुलनीय
21. जिसका अनुकरण (नकल) किया जा सके	अनुकरणीय
22. जिसे किसी घटना या बात का ज्ञान न हो	अनभिज्ञ
23. जो बिल्कुल कुछ नहीं जानता	अज्ञ
24. जो दूसरों के मन की बात जानता हो	अन्तर्यामी
25. जो बात सामान्य नियम से भिन्न हो	अपवाद
26. जिसका मन काम में न लगा हो, कहीं अन्यत्र लगा हो,	अन्यमनस्क
27. जिस वस्तु का कोई मूल्य ही न दिया जा सके	अमूल्य
28. जिसका पार न पाया जा सके	अपार
29. जिसे थोड़ा सा ज्ञान हो	अल्पज्ञ
30. जिस पर विश्वास न किया जा सके, वह घटना	अविश्वसनीय
31. जिस पर विश्वास न किया जा सके, वह व्यक्ति	अविश्वस्त
32. जो बिना वेतन के काम करे	अवैतनिक
33. जो काम मनुष्यता के विरुद्ध हो	अमानवीय
34. जिस बात के कहने में लज्जा आवे	अश्लील
35. जो बात या स्थिति सही न जा सके	असह्य
36. जिसका इलाज न हो सके (जो साधा न जा सके)	असाध्य
37. जिसका कभी नाश न हो	अविनाशी,
38. किसी बात को बढ़ा-चढा कर कहना	अतिशयोक्ति
39. केवल बाहरी तड़क-भड़क या दिखावा	आडम्बर
40. जिसे ईश्वर में विश्वास हो	आस्तिक
41. जो अकारण दूसरों की उन्नति से जलता हो	ईर्ष्यालु
42. जो किसी के मरने पर उसकी सम्पत्ति का अधिकारी हो	उत्तराधिकारी
43. काम करने में तत्पर व्यक्ति	कर्मठ

44. जो व्यक्ति कर्म करने में विश्वास रखता हो	कर्मण्य
45. जिसे करना धरना कुछ न सूझे	किंकर्तव्यविमूढ़
46. जनता में सुनी-सुनाई बात	किंवन्दती,
47. किए हुए उपकार को मानने वाला	कृतज्ञ
48. किए हुए उपकार को न मानने वाला	कृतघ्न
49. सप्ताह में एक बार होने वाला	साप्ताहिक
50. तीन मास में होने वाला	त्रैमासिक
51. वर्ष में एक बार होने वाला	वार्षिक
52. दूर (भविष्य) की बात सोचने वाला	दूरदर्शी
53. जो वस्तु कठिनता से मिले	दुर्लभ
54. जो काम करना कठिन हो	दुष्कर
55. दर्शन शास्त्र को जानने वाला	दार्शनिक
56. जिसका कोई आधार न हो	निराधार
57. जिसकी कोई उपमा न दे सके	अनुपम
58. जहाँ कोई जन (व्यक्ति) न रहता हो	निर्जन
59. जो किसी का पक्षपात न करे	निष्पक्ष
60. जिसकी कोई सन्तान न हो	निःसन्तान
61. जो मांस नहीं खाता	निरामिष भोजी
62. जिसका कोई आकार न हो, आकार विहीन हो	निराकार
63. पश्चिमी देशों से सम्बन्ध रखने वाला	पाश्चात्य
64. जो बात पहले हो चुकी हो	भूतपूर्व
65. जैसे पहले कभी न हुआ हो	अभूतपूर्व
66. जो बात आँखों के सामने हो	प्रत्यक्ष
67. जिसका नाम प्रातःस्मरण करने योग्य हो	प्रातः स्मरणी
68. किसी रहस्य या भीतरी तत्त्व को जानने वाला	मर्मज्ञ
69. जिसको स्पर्श करना वर्जित हो	अस्पृश्य
70. जो बोल नहीं सकता	मूक
71. थोड़ा बोलने वाला व्यक्ति	मितभाषी

72. जिसके नीचे रेखा खींची गई हो	रेखांकित
73. जो बातें करने में तेज हो	वाचाल
74. जिस पुरुष की पत्नी मर गई हो	विधुर
75. जिस स्त्री का पति मर गया हो	विधवा
76. वीर पुत्र को जन्म देनी वाली	वीर प्रसू
77. विष्णु की पूजा करने वाला	वैष्णव
78. जिस पर विश्वास किया जा सके	विश्वस्त
79. किसी वस्तु की विशेष जानकारी रखने वाला हो	विशेषज्ञ, विज्ञ
80. सब कुछ जानने वाला	सर्वज्ञ
81. सब जगह व्याप्त रहने वाला	सर्वव्यापी
82. दूसरों की बात को सह सकने वाला	सहिष्णु
83. अपना प्रयोजन (मतलब) साधने वाला	स्वार्थी
84. शिव की उपासना करने वाला	शैव
85. शक्ति (दुर्गा) की उपासना करने वाला	शाक्त
86. ऐसी घटना, जिससे हृदय फट जाए	हृदयविदारक
87. साफ-साफ बात करने वाला	स्पष्टवक्ता
88. जिसे लोग प्यार करें, अधिक चाहें	लोकप्रिय
89. जो विधि (कानून) के विरुद्ध हो	अवैध
90. जिसे जाना न जा सके	अज्ञेय
91. जिसे एक भी अक्षर पढ़ना-लिखना न आये	निरक्षर
93. जो चिरकाल तक ठहरे	चिरस्थायी
93. जिसने इन्द्रियों को जीत लिया हो	जितेन्द्रिय
94. जो समान उम्र का हो	समवस्यक
95. जिसे कहीं से तोड़ा (भेदा) न जा सके	अभेद्य
96. जिसका कोई उद्देश्य न हो	निरुद्देश्य
97. जो सबको एक समान देखता हो	समदर्शी
98. जिसने किसी घटना को आँखों के सामने देखा हो	प्रत्यक्षदर्शी
99. जिसका अन्त सुखमय हो	सुखान्त

100. जो लज्जा विहीन हो	निर्लज्ज
101. जिसको भय न हो	निर्भय
102. जिसके हाथ चक्र हो	चक्रपाणि
103. तीनों लोकों का स्वामी	त्रिलोकीनाथ
104. दुष्ट बुद्धि वाला	दुर्बुद्धि
105. जो उत्तर न दे सके	निरुत्तर
106. शक्ति के अनुसार	यथाशक्ति
107. जो जानने की इच्छा रखता हो	जिज्ञासु
108. जिसमें कोई विकार न हो	अविकारी, निर्विकार
109. जानने की इच्छा	जिज्ञासा
110. जिसका भाग्य अच्छा न हो	अभागा
111. जिसमें दया न हो	निर्दय
112. जो कम खाता हो	मिताहारी

—०—

एक ही शब्द का संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि के रूप में प्रयोग

अच्छा—

संज्ञा—**अच्छों** से मिलो, बुरो से बचो।

विशेषण—तुमने **अच्छा** काम किया।

विस्मयादि बोधक—**अच्छा** ! तो तू भी यहीं है।

आगे—

संज्ञा—**आगे** को चित्त देय, समुझि बीती सो बीती।

क्रिया-विशेषण— आवाज सुनते ही वह **आगे** आ गया।

सम्बन्ध बोधक अव्यय—वह मन्दिर नदी से **आगे** है।

और—

संज्ञा—तू अपनी कह, **औरों** से तुझे क्या लेना-देना ?

विशेषण—**और** छात्र कहाँ चले गए ?

योजक अव्यय—कृष्ण **और** बलराम भाई थे ।

इसलिए—

क्रिया-विशेषण—वह **इसलिए** नहाया, क्योंकि नाली में गिर पड़ा था ।

योजक अव्यय—तू दीन है, **इसलिए** मैं तुझे ही देना चाहता हूँ ।

एक—

संज्ञा—उनमें से **एक** भी उत्तीर्ण न हुआ ।

विशेषण—**एक** दिन खरगोश की बारी आई ।

क्रिया-विशेषण—तुम **एक-एक** कर भोजन ले लो ।

कुछ—

विशेषण—**कुछ** लोग मीठा पसन्द नहीं करते ।

क्रिया-विशेषण—लड़की **कुछ** देखती है ।

संज्ञा—**कुछ** खा लो, बेटे !

की—

सम्बन्ध विभक्ति—श्याम **की** अम्मा ।

क्रिया-पद—अर्जुन ने प्रतिज्ञा **की** ।

केवल—

विशेषण—रामहि **केवल** प्रेम पियारा ।

क्रिया-विशेषण—वह **केवल** हँसता है ।

कोई—

सर्वनाम—अन्दर **कोई** है ?

विशेषण—**कोई** फल मीठा नहीं ।

क्या—

विशेषण—तुमने **क्या-क्या** खाया ?

अव्यय—वह **क्या** कर रहा है ?

जो—

सर्वनाम—**जो** करेगा सो भरेगा

विशेषण—तुम्हें जो पुस्तक चाहिए, ले लो।

साथ—

संज्ञा—विपत्ति में **साथ** देने वाला ही सच्चा मित्र होता है।

क्रिया-विशेषण—यहाँ छात्र-छात्राएँ **साथ-साथ** पढ़ती हैं।

सम्बन्ध बोधक-अव्यय—श्री राम के **साथ** सीता भी बन गई।

यह—

सर्वनाम—**यह** कौन है ?

विशेषण—**यह** पुस्तक किसी की है ?

हाँ—

सर्वनाम—वह सबकी **हाँ** में **हाँ** मिलाता है।

अव्यय—तुमने पुस्तक पढ़ी ? **हाँ** !

वाह ! वाह !

संज्ञा—आज तुमने खूब **वाह-वाह** लूटी।

विस्मयादि बोधक—**वाह-वाह** ! खूब किया।

कृष्ण—

संज्ञा—**कृष्ण** ने बंसी बजाई।

विशेषण—**कृष्ण** सर्प ने चिड़िया के अंडे खा लिए।

सीधा—

संज्ञा—आजकल **सीधों** की कहीं पूछ नहीं।

विशेषण—**सीधा** आदमी धोखा खा सकता है।

क्रिया-विशेषण—**सीधा** चल, नहीं तो मारूँगा।

अकाल—

संज्ञा—कई लाख लोग **अकाल** के गाल में समा गए।

विशेषण—उसकी **अकाल** मृत्यु से सभी शोकाकुल थे।

भीम—

संज्ञा—घटोत्कच **भीम** का पुत्र था।

विशेषण—**भीम**-काय दैत्य को देखते ही मेरे रोंगटे खड़े हो गए।

—o—

सन्धि

दो वर्णों के अत्यन्त समीप होने पर उनमें होने वाले विकार को सन्धि कहते हैं। जैसे—विद्या+आलय=विद्यालय। यहाँ 'द्य' में विद्यमान 'आ' और 'आलय' के 'आ' को मिला कर 'आ' हो गया। सन्धि तीन प्रकार की होती है—

(1) **स्वर सन्धि**—स्वर के अनन्तर स्वर के रहने पर उनमें होने वाले विकार को स्वर सन्धि कहते हैं। **जैसे--गण+ईश=गणेश।**

(2) **व्यंजन सन्धि**—व्यंजन के अनन्तर स्वर या व्यंजन रहने पर, उनमें होने वाले विकार को व्यंजन सन्धि कहते हैं। जैसे—जगत्+नाथ=जगन्नाथ।

(3) **बिसर्ग सन्धि**—विसर्ग के अनन्तर स्वर या व्यंजन के रहने पर उसमें होने वाले विकार को विसर्ग सन्धि कहते हैं। जैसे—मन:+हर=मनोहर।

स्वर सन्धि के भेद—

स्वर सन्धि—(1) दीर्घ (2) गुण (3) वृद्धि (4) यण् (5) अयादि—इन पाँच भागों में विभक्त है—

(1) दीर्घ सन्धि

अ, आ,+अ, आ=आ

हिम+आलय=हिमालय	शश+अंक=शशांक
चरण+अमृत=चरणामृत	वेद+अन्त=वेदान्त
परम+आत्मा=परमात्मा	सुख+अन्त=सुखान्त
विद्या+अर्थी=विद्यार्थी	रत्न+आकर=रत्नाकर

इ,+ई+इ, ई=इ

रवि+इन्द्र=रवीन्द्र	परि+ईक्षा=परीक्षा
गिरि+ईश=गिरीश	कवि+इन्द्र=कवीन्द्र
योगी+ईश्वर=योगीश्वर	मुनि+ईश्वर=मुनीश्वर

उ, ऊ+उ, ऊ=ऊ

विधु+उदय=विधूदय	गुरु+उपदेश=गुरूपदेश
सु+उक्ति=सूक्ति	अनु+उदित=अनूदित
वधू+उत्सव=वधूत्सव	साधु+उपदेश=साधूपदेश

(2) गुण सन्धि

अ, आ + इ, ई = ए

गण + ईश = गणेश
राका + ईश = राकेश
देव + इन्द्र = देवेन्द्र
परम + ईश्वर = परमेश्वर
भारत + इन्दु = भारतेन्दु
यथा + इष्ट = यथेष्ट

अ, आ + उ, ऊ = ओ

पर + उपकार = परोपकार
वीर + उचित = वीरोचित
सर्व + उदय = सर्वोदय
पुरुष + उत्तम = पुरुषोत्तम
हित + उपदेश = हितोपदेश
वार्षिक + उत्सव = वार्षिकोत्सव

अ, आ + ऋ = अर्

महा + ऋषि = महर्षि
देव + ऋषि = देवर्षि
सप्त + ऋषि = सप्तर्षि
ब्रह्म + ऋषि = ब्रह्मर्षि

(3) वृद्धि सन्धि

अ, आ + ए, ऐ = ऐ

सदा + एव = सदैव
महा + ऐश्वर्य = महैश्वर्य
तथा + एव = तथैव
मत + एक्य = मतैक्य

अ, आ + ओ, औ = औ

महा + औषध = महौषध
दिव्य + ओषधि = दिव्यौषधि
परम + औदार्य = परमौदार्य
वन + ओषधि = वनौषधि

(4) यण् सन्धि

इ, ई + कोई अन्य स्वर होने पर 'इ' 'ई' को 'य्'

यदि + अपि = यद्यपि
प्रति + एक = प्रत्येक
इति + आदि = इत्यादि
प्रति + उत्तर = प्रत्युत्तर
उपरि + उक्त = उपर्युक्त
अभि + आगत = अभ्यागत

उ, ऊ + कोई अन्य स्वर होने पर 'उ' 'ऊ' को 'व्'

सु + आगत = स्वागत
अनु + एषण = अन्वेषण
मनु + अन्तर = मन्वन्तर
सु + अल्प = स्वल्प

(5) अयादि सन्धि

ए, ऐ ओ औ + कोई स्वर होने पर 'ए' को 'अय्' 'ऐ' को 'आय्' 'ओ' को 'अव्' तथा 'औ' को 'आव्'।

ने + अन = नयन

नै + अक = नायक

पो + अन = पवन

पौ + अक = पावक

व्यंजन सन्धि

व्यंजन सन्धि के प्रमुख नियम ये हैं—

त् + च छ = 'त्' को 'च्'

शरत् + चन्द्र = शरच्चन्द्र

सत् + चरित्र = सच्चरित्र

उत् + चारण = उच्चारण

सत् + चित् = सच्चित्

त् + ज = 'त्' को 'ज्'

सत् + जन = सज्जन

उत् + ज्वल = उज्वल

जगत् + जननी = जगज्जननी

विपत् + जाल = विपज्जाल

त् + ट, ड = 'ट्' या 'ड्'

वृहत् + टीका = वृहट्टीका

उत् + डयन = उड्डयन

त् = ल = 'त्' को 'ल्'

उत् + लास = उल्लास

तत् + लीन = तल्लीन

उत् + लेख = उल्लेख

विद्युत् + लता = विद्युल्लता

त् + श = 'त्' को 'च्' 'श्' को 'छ'

उत् + श्वास = उच्छ्वास

उत् + शिष्ट = उच्छिष्ट

त् + ह = 'त्' को 'द्' 'ह' को 'ध'

उत् + हार = उद्धार

तत् + हित = तद्धित

क्, च्, ट्, त्, प्, को क्रमशः ग्, ज्, ड्, द्ः ब्

दिक् + अन्त = दिगन्त

वाक् + ईश = वागीश

दिक् + अम्बर = दिगम्बर

दिक् + विजय = दिग्विजय

षट् + दर्शन = षड्दर्शन

भगवत् + गीता = भगवद्गीता

षट् + आनन = षडानन

तत् + भव = तद्भव

सत् + गति = सद्गति

जगत् + ईश = जगदीश

अप् + ज = अब्ज

भगवद् + भक्ति = भगवद्भक्ति

सत् + भाव = सद्भाव

दिक् + गज = दिग्गज

'क्' को 'ङ्' 'त्' को 'न्'

वाक् + मय = वाङ्मय

तत् + मय = तन्मय

चित् + मय = चिन्मय

दिक् + नाग = दिङ्नाग

जगत् + नाथ = जगन्नाथ

उत् + नति = उन्नति

'म' को वर्ग का पंचम वर्ण

सम् + कल्प = सङ्कल्प

सम् + जय = सञ्जय

सम् + तोष = सन्तोष

सम् + भव = सम्भव

'म' को अनुस्वार (ं)

सम् + योग = संयोग

सम् + रक्षण = संरक्षण

सम् + शय = संशय

सम् + वाद = संवाद

सम् + सार = संसार

सम् + हार = संहार

'छ' से पूर्व 'च्, का आगम

परि + छेद = परिच्छेद

स्व + छन्द = स्वच्छन्द

अनु + छेद = अनुच्छेद

वृक्ष + छाया = वृक्षच्छाया

'न्' को 'ण'

परि = नाम = परिणाम

राम + अयन = रामायण

प्र + नाम = प्रणाम

कृष् + न = कृष्ण

'स' को 'ष'

अभि + सेक = अभिषेक

सु + सप्ति = सुषुप्ति

वि + सम = विषम

नि + सेघ = निषेध

'र्' का लोप और ह्रस्व को दीर्घ

निर् + रस = नीरस

निर् + रोग = नीरोग

निर् — रव = नीरव

विसर्ग सन्धि

विसर्ग सन्धि के प्रमुख नियम ये हैं—

'अ' पूर्व होने पर विसर्ग को 'ओ'

मनः+हर=मनोहर   रजः+गुण=रजोगुण
अधः+गति=अधोगति   मनः+रंजन=मनोरंजन
मनः+रथ=मनोरथ   तपः+वन=तपोवन
सरः+ज=सरोज   मनः+योग=मनोयोग
मनः+विज्ञान=मनोविज्ञान   यशः+दा=यशोदा

विसर्ग को 'र्'

निः+बल=निर्बल   दुः+जन=दुर्जन
निः+धन=निर्धन   दुः+गुण=दुर्गुण
पुनः+जन्म=पुर्नजन्म   बहिः+मुख=बहिर्मुख
निः+बल=निर्बल   निः+आशा=निराशा

विसर्ग के पश्चात् च, छ होने पर विसर्ग को 'श्'

निः+चल=निश्चल   निः+छल=निश्छल
हरिः+चन्द्र=हरिश्चन्द्र   दुः+चरित्र=दुश्चरित्र

विसर्ग के अनन्तर 'त' होने पर विसर्ग को 'स'

नमः+ते=नमस्ते   निः+तेज=निस्तेज
दुः+तर=दुस्तर   मनः+ताप=मनस्ताप

विसर्ग के पश्चात् श, स होने पर विसर्ग को क्रमशः 'श्' 'स्'

दुः+शासन=दुश्शासन   निः+शंक=निश्शंक
नि+सन्देह=निस्संदेह   निः+सार=निस्सार

विसर्ग को 'ष्'

निः+फल=निष्फल   दुः+कर्म=दुष्कर्म
निः+काम—निष्काम   दुः+कर—दुष्कर

विसर्ग को 'स्'

पुरः+कार—पुरस्कार   नमः+कार—नमस्कार

वाचः+पति—वाचस्पति श्रेयः+करः—श्रेयस्कर

विसर्ग का लोप

अतः+एव—अतएव ततः+एव—ततएव

—०—

समास

परस्पर सम्बन्ध रखने वाले दो या अधिक शब्दों के मेल को समास कहते हैं। **जैसे**—गंगा-जल (गंगा का जल)

(समास का अर्थ है - **संक्षेप**। समास में बहुत से शब्दों को मिलाकर **विभक्ति** आदि की बचत कर ली जाती है।)

समस्त पद—समास द्वारा बने पद को समस्त पद कहते हैं। **जैसे**—**गंगाजल**।

विग्रह—समस्त पद को अलग-अलग करने को विग्रह कहते हैं जैसे—गंगा का जल।

समास के छह भेद हैं—(1) अव्ययी भाव, (2) तत्पुरुष, (3) कर्मधारय, (4) द्विगु, (5) द्वन्द्व, (6) बहुव्रीहि।

(1) अव्ययी भाव

जिस समास में पहला खंड प्रधान हो और समस्त पद अव्यय बन जाय।

जैसे—

समस्त पद	**विग्रह**
यथा शक्ति	शक्ति के अनुसार
यथा मति	मति के अनुसार
यथा समय	समय के अनुसार
यथा योग्य	योग्यता के अनुसार
आजन्म	जन्म से लेकर
प्रति दिन	दिन-दिन
भरपेट	पेट भर कर
हाथों हाथ	हाथ ही हाथ में
रातों रात	रात ही रात में

(2) तत्पुरुष

जिन समास में द्वितीय खंड प्रधान हो और समास करने पर विभक्ति का लोप हो जाए। इनके छह भेद हैं—

कर्म तत्पुरुष—जिनमें कर्म की विभक्ति का लोप हो। जैसे—

समस्त पद	**विग्रह**
शरणागत	शरण को आया हुआ
गगनचुम्बी	गगन को चूमने वाला
मुँहतोड़	मुंह को तोड़ने वाला
चिड़ीमार	चिड़ियों को मारने वाला
गिरहकट	गिरह को काटने वाला
माखनचोर	माखन को चुराने वाला

करण तत्पुरुष—जिसमें कारण की विभक्ति का लोप हो। जैसे—

हस्तलिखित	हाथ से लिखा हुआ
रेखांकित	रेखा से अंकित
जन्मान्ध	जन्म से अन्धा
शोकातुर	शोक से आतुर
रोगग्रस्त	रोग से ग्रस्त
तुलसीकृत	तुलसी के द्वारा कृत
ईश्वरप्रदत्त	ईश्वर द्वारा प्रदत्त
मनघड़न्त	मन से घड़ी हुई
कष्टसाध्य	कष्ट से साध्य

सम्प्रदान तत्पुरुष—जिसमें सम्प्रदान की विभक्ति का लोप हो। जैसे—

होम सामग्री	होम के लिए सामग्री
गुरु दक्षिणा	गुरु के लिए दक्षिणा
डाक गाड़ी	डाक के लिए गाड़ी
रसोई घर	रसोई के लिए घर
युद्ध भूमि	युद्ध के लिए भूमि
सत्याग्रह	सत्य के लिए आग्रह

अपादान तत्पुरुष—जिसमें अपादान की विभक्ति का लोप हो, जैसे—

भयभीत	भय से भीत
पथभ्रष्ट	पथ से भ्रष्ट
जीवनमुक्त	जीवन से मुक्त
पदच्युत	पद से च्युत
बन्धनमुक्त	बन्धन से मुक्त
देश निर्वासन	देश से निर्वासन
जाति बहिष्कृत	जाति से बहिष्कृत

सम्बन्ध तत्पुरुष—जिसमें सम्बन्ध की विभक्ति का लोप हो । जैसे—

गंगाजल	गंगा का जल
कृष्ण मन्दिर	कृष्ण का मन्दिर
अमृतधारा	अमृत की धारा
सेनापति	सेना का पति
उद्योगपति	उद्योग का पति
रामभक्त	राम का भक्त
घुड़ दौड़	घोड़ों की दौड़
लोक सभा	लोक (जनता) की सभा

अधिकरण तत्पुरुष—जिसमें अधिकरण की विभक्ति का लोप हो । जैसे—

पुरुषोत्तम	पुरुषों में उत्तम
कवि शिरोमणि	कवियों में शिरोमणि
आनन्दमग्न	आनन्द में मग्न
ग्रामवास	ग्राम में वास
वनवास	वन में वास
आत्मविश्वास	आत्मा में विश्वास
आपबीती	अपने पर बीती हुई
घुड़सवार	घोड़े पर सवार

नञ् तत्पुरुष—निषेध अथवा अभाव के अर्थ में नञ् (न) का प्रयोग होने पर 'नञ्' तत्पुरुष होता है। 'न' के पश्चात् व्यंजन आने पर 'न' को 'अ' और स्वर आने पर 'न' को 'अन्' हो जाता है। जैसे—

समस्त पद	**विग्रह**
अभाव	न भाव (किसी वस्तु का न होना)
अन्याय	न न्याय (न्याय का न होना)
असम्भव	न सम्भव (सम्भव न होना)
अनुदार	न उदार (जो उदार न होना)
अनुचित	न उचित
अनशन	न अशन (भोजन न खाना)

अलुक् तत्पुरुष—जिस समास में विभक्ति का लोप न हो (यह संस्कृत में ही होता है। संस्कृत से ही हिन्दी में ऐसे शब्द आये हैं।) जैसे—

धनंजय	धन को जीतने वाला
वाचस्पति	वाचः (वाणी) का पति
युधिष्ठिर	युद्ध में स्थिर रहने वाला
मनसिज	मन में जन्म लेने वाला

कर्मधारय

जिस समास में विशेष्य-विशेषण अथवा उपमेय-उपमान का मेल हो। जैसे—
विशेष्य-विशेषण का योग –

समस्त पद	**विग्रह**
नील कमल	नीला कमल
पीताम्बर	पीत रंग का अम्बर
महात्मा	महान् है जो आत्मा
वीरांगना	वीर अंगना (नारी)

समस्त पद	विग्रह
सज्जन	सत् है जो जन
परमानन्द	परम (श्रेष्ठ) आनन्द
कृष्णसर्प	कृष्ण (काला) सर्प
नीलाम्बर	नीला अम्बर (आकाश)

उपमेय-उपमान का योग—

चन्द्रमुख	चन्द्र के समान मुख
चरण कमल	कमल रूपी चरण
कमल नयन	कमल के समान नयन
भव सागर	भव रूपी सागर
वचनामृत	वचन रूपी अमृत
घनश्याम	घन के समान श्याम
प्राणप्रिय	प्राणों के समान प्रिय

मध्यमपद-लोपी कर्मधारय—जिसमें मध्य का पद लुप्त हो जाए। जैसे—

समस्त पद	विग्रह
बैलगाड़ी	बैलों द्वारा खींची जाने वाली गाड़ी
दही बड़ा	दही में डूबा हुआ बड़ा
गोबर गणेश	गोबर से बनी गणेश की मूर्ति
पन चक्की	पानी से चलने वाली चक्की
महावीर चक्र	महती वीरता के लिए दिया जाने वाला चक्र
वायु सेना	वायु में लड़ने वाली सेना
गुरु भाई	गुरु के सम्बन्ध से भाई
घी खिचड़ी	घी मिली हुई खिचड़ी
कठ पुतली	काठ से बनी हुई पुतली

द्विगु

जिस समास में प्रथम खण्ड संख्या वाची हो और समस्त पद समूह का बोध कराये । जैसे—

समस्त पद	विग्रह
पंचवटी	पाँच वटों का समूह
त्रिभुवन	तीन भुवनों का समूह
त्रिफला	तीन फलों का समूह
चौराहा	चार रास्तों का केन्द्र
सतसई	सात सौ का समाहार
अष्टाध्यायी	आठ अध्यायों का समूह
नवग्रह	नौ ग्रहों का समूह
पञ्चतन्त्र	पाँच तन्त्रों का समूह
पञ्चतत्त्व	पाँच तत्वों का समूह
सप्ताह	सात अहों (दिनों) का समूह

द्वन्द्व

समस्त पद **विग्रह**

जिस समास में दोनों खण्ड प्रधान हों । जैसे—

राम-लक्ष्मण	राम और लक्ष्मण
जय-पराजय	जय और पराजय
हानि-लाभ	हानि और लाभ
राजा-प्रजा	राजा और प्रजा
पाप-पुण्य	पाप और पुण्य
जन्म-मरण	जन्म और मरण
दाल-भात	दाल और भात
लोटा-डोरी	लोटा और डोरी
न्यूनाधिक	न्यून और अधिक
जल-वायु	जल और वायु

बहुव्रीहि

जिस समास में अन्य पद प्रधान हो अर्थात् दोनों खण्ड अपना अर्थ छोड़कर किसी तीसरे का विशेषण बन जाएँ। जैसे—

समस्त पद		विग्रह	
गजानन	—	गज के आनन के समान आनन वाला	(गणेश)
दशानन	—	दश आनन वाला	(रावण)
मृगनयनी	—	मृग के नयनों के समान नयनों वाली	(सुन्दरी)
चतुर्भुज	—	चार भुजाओं वाला	(विष्णु)
चतुरानन	—	चार आनन वाला	(ब्रह्मा)
चतुर्मुख	—	चार मुख वाला	(ब्रह्मा)
पीताम्बर	—	पीत अम्बर वाला	(कृष्ण)
अल्पबुद्धि	—	अल्प बुद्धि है जिसकी	(कोई व्यक्ति)
नीलकंठ	—	नीले कंठ वाला	(शंकर)
चौमासा	—	चार मास हैं (वर्षा के) जिसमें	(वर्षा ऋतु)
अजात शत्रु	—	जिसका कोई शत्रु उत्पन्न न हुआ हो	(कोई व्यक्ति)
पंकज	—	पंक में जन्म लेने वाला	(कमल)
मक्खी चूस	—	मक्खी को भी चूस जाने वाला	(कंजूस)
दिगम्बर	—	दिशाएँ ही हैं अम्बर (वस्त्र) जिसके	(नग्न)
घुसपैठिया	—	घुसकर पैठने (प्रवेश करने) वाला	(कोई व्यक्ति)
चक्रधर	—	चक्र को धारण करने वाला	(विष्णु, कृष्ण)

—०—

उपसर्ग

उपसर्ग उन शब्दांशों को कहते हैं, जो किसी शब्द से पूर्व लगकर उसके अर्थ में विशेषता उत्पन्न करते हैं या उसके अर्थ को बदल देते हैं। जैसे—

प्रहार (चोट), आहार (भोजन), विहार (घूमना), संहार (मारना) इन शब्दों में क्रमशः प्र, आ, वि, सम्, उपसर्ग हैं।

(क) संस्कृत के उपसर्ग

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
प्र	अधिक, आगे	प्रगति, प्रबल, प्रभाव, प्रमाण
परा	पीछे, विपरीत	पराजय, पराधीन, पराभव
अप	हीन, बुरा	अपमान, अपयश, अपवाद
सम्	अच्छा, पूर्ण, साथ	सम्मुख, सम्पत्ति, संहार, संगठन
अनु	समान, पीछे	अनुज, अनुचर, अनुरूप, अनुभव
अव	हीन, नीचे	अवतार, अवगुण, अवनति
निस् (निः)	न, रहित	निस्सन्देह, निस्सार, निःशुल्क
निर्	बिना, रहित	निर्गुण, निर्दय, निरादर
दुस्	बुरा, कठिन	दुष्कर, दुस्साहस, दुष्परिणाम
दुर्	बुरा, कठिन	दुर्बोध, दुर्जन, दुराचार, दुर्बुद्धि
वि	विशेष, भिन्न अभाव	विशेष, विदेश, विज्ञान, वियोग
आ	विपरीत, तक	आजन्म, आहार, आगमन
नि	अभाव, पूर्ण	निषेध, निरोध, निदेशक
अधि	श्रेष्ठ, ऊपर	अध्यक्ष, अधिपति, अधिकार
अति	अधिक	अतिशय, अत्यावश्यक
अभि	पास, सामने चारों ओर	अभिवादन, अभ्युदय, अभिनव
सु	अच्छा	सुपुत्र, सुबोध, स्वागत
उत्	अधिक, ऊपर	उन्नति, उत्कर्ष, उत्तम
प्रति	विपरीत, ओर	प्रतिकूल, परिपूर्ण, प्रत्युत्तर, प्रतिदिन
परि	चारों ओर	परिणाम, परिपूर्ण, परिक्रमा
उप	समीप	उपमान, उपकार, उपमन्त्री

(ख) कुछ अव्यय जो उपसर्ग के समान प्रयुक्त होते हैं—

अव्यय	अर्थ	उदाहरण
अधस्	नीचे	अधःपतन, अधोगति
अन्तर्	भीतर	अन्तःकरण, अन्तर्देशीय
पुरा	पहले	पुराण, पुरातन
सत्	अच्छा	सज्जन, सत्कार
पुरस्	सामने, आगे	पुरस्कार, पुरोहित
बहिस्	बाहर	बहिष्कार
का	बुरा	का पुरुष
कु	बुरा	कुपुत्र, कुपात्र
पुनर्	फिर	पुनरुक्ति, पुनर्जन्म
सह	साथ	सहयोग, सहोदर, सहपाठी
चिर	देर	चिरस्थायी, चिरंजीवी

(ग) दो या तीन उपसर्गों का एक साथ प्रयोग --

प्रति+उप+कार	प्रत्युपकार
सम्+आ+लोचना	समालोचना
निर्+आ+कार	निराकार
सु+सम्+गठित	सुसंठित
वि+आ+करण	व्याकरण
प्र+आ+रूप	प्रारूप

(घ) हिन्दी के उपसर्ग

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
अ	निषेध	अटल, अचल
अन	नहीं	अनजान, अनदेखा
अध	आधा	अधपका, अधकचरा
औ	हीन, बुरा	औगुण, औघट
नि	विना	निडर, निकम्मा
भर	पूरा	भरपेट, भरपूर

स	अच्छा	सजग, सपूत
उन	कम	उनतीस, उनसठ

(ङ) उर्दू के उपसर्ग—

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
बे	बिना	बेगार, बेदाग
बा	सहित	बाकार, बाकायदा
ना	नहीं	नालायक, नामुमकिन
हर	प्रति	हरेक, हर घड़ी
खुश	अच्छा	खुशबू; खुशदिल
ला	अभाव	लाइलाज, लाजवाब
सर	मुख्य	सरकार, सरताज, सरपंच
बद	बुरा	बदमाश, बदनाम
गैर	अनुचित	गैर कानूनी, गेर हाजिर
कम	थोड़ा	कमजोर, कम खर्च

—०—

प्रत्यय

प्रत्यय उन शब्दांशों को कहते हैं, जो किसी शब्द के अन्त में लगकर उस के अर्थ में परिवर्तन कर देते हैं, या जो किसी नये शब्द का निर्माण कर देते हैं। जैसे—

बलहीन, सुन्दरता, पढ़ाई

इन शब्दों में हीन, ता, आई प्रत्यय हैं।

प्रत्यय दो प्रकार के हैं : (1) कृत् प्रत्यय और (2) तद्धित प्रत्यय।

कृत् प्रत्यय

क्रिया-पदों (धातुओं) के अनन्तर लगकर जो शब्दांश संज्ञा, विशेषण आदि का निर्माण करते हैं; वे कृत प्रत्यय कहलाते हैं। ये पाँच प्रकार के हैं—

(क) **कर्तृ वाचक**—जिससे क्रिया के करने वाले का बोध होता है। जैसे--

क्रिया	प्रत्यय	उदाहरण
चाहना	वाला	चाहने वाला
सृजन	हारा	सृजनहारा
लड़ना	आकू	लड़ाकू
झगड़ना	आलू	झगड़ालू

(ख) **कर्म वाचक**—जिन प्रत्ययों के लगाने से शब्द कर्म का बोध कराये। जैसे—

क्रिया	प्रत्यय	उदाहरण
बिछाना	औना	बिछौना
खेलना	औना	खिलौना
ओढ़ना	नी	ओढ़नी

(ग) **करणवाचक**—जिन प्रत्ययों के लगाने से निर्मित शब्द क्रिया के साधन का बोध कराये। जैसे—

झूलना	आ	झूला
मथना	आनी	मथानी
कसना	औटी	कसौटी
झाड़ना	ऊ	झाड़ू

(घ) **भाववाचक**—जिन प्रत्ययों के लगाने से भाववाचक संज्ञा बनती है। जैसे—

बोलना	ई	बोली
पढ़ना	आई	पढ़ाई
मिलना	आप	मिलाप
समझना	औता	समझौता

(ङ) **क्रियाद्योतक**—जिन प्रत्ययों के लगाने से विशेषण, क्रिया विशेषण का निर्माण होता है जैसे—

हँसना	ता, हुआ	हँसता हुआ
जाना	"	जाता हुआ
खाना	"	खाता हुआ
पढ़ना	कर	पढ़कर
खाना	"	खाकर

तद्धित प्रत्यय

जो शब्दांश संज्ञा या विशेषण के अनन्तर लगकर नये शब्दों का निर्माण करते हैं, वे तद्धित प्रत्यय कहलाते हैं—

(अ) **अपत्य वाचक**—जिन प्रत्ययों के लगाने से निर्मित शब्द सन्तान का वाचक होता है। जैसे—

शब्द	प्रत्यय	नया शब्द
रघु	अण्	राघव (रघु की संतान)
वसुदेव	"	वासुदेव
यदु	"	यादव
पृथा	अ	पार्थ
कुन्ती	"	कौन्तेय
दिति	"	दैत्य
चणक	"	चाणक्य

(आ) कर्तृवाचक– जिन प्रत्ययों के लगाने से करने वाले का बोध हो। जैसे—

गाड़ी	वाला, वान	गाड़ी वाला, गाड़ीवान
लकड़ी	हारा	लकड़हारा
सोना	आर	सुनार
लोहा	आर	लुहार

(इ) **भाव वाचक**—जिन प्रत्ययों के लगाने से भाववाचक संज्ञा बन जाती है। जैसे—

मनुष्य	ता	मनुष्यता
एक	ता	एकता
नारी	त्व	नारीत्व
देव	"	देवत्व
बूढ़ा	आपा	बुढ़ापा
मोटा	"	मुटापा
सुन्दर	अ	सौन्दर्य
ऊंचा	ई	उँचाई

(ई) **गुणवाचक**—जिन प्रत्ययों के लगाने से विशेषण का निर्माण होता है।

शब्द	**प्रत्यय**	**उदाहरण**
धर्म	इक	धार्मिक
लोक	"	लौकिक
इतिहास	"	ऐतिहासिक
मुख	"	मौखिक
भारत	ईय	भारतीय
राष्ट्र	"	राष्ट्रीय
विद्या	वान्	विद्वान्, विद्यावान्
धन	"	धनवान्
बुद्धि	मान्	बुद्धिमान्
ज्ञान	ई	ज्ञानी
सुख	ई	सुखी
कृपा	आलु	कृपालु
श्रद्धा	"	श्रद्धालु
मीठा	आस	मिठास

(उ) **स्त्रीवाचक**—जिन प्रत्ययों के लगाने से पुंल्लिग शब्द स्त्रीलिंग बनता जैसे—

शब्द	प्रत्यय	नया शब्द
शिष्य	आ	शिष्या
सुत	,,	सुता
देव	ई	देवी
पुत्र	,,	पुत्री
सेठ	आनी	सेठानी
भव	,,	भवानी
अध्यापक	इका	अध्यापिका
लेखक	,,	लेखिका
श्री	मती	श्रीमती
गुण	वती	गुणवती
सुनार	इन	सुनारिन

(ख) **ऊनतावाचक**—जिन प्रत्यों के लगाने से पदार्थ की लघुता का बोध हो। जैसे—

मन	आ	मनुआ
बेटी	इया	बिटिया
डिब्बी	,,	डिबिया
खाट	,,	खटिया
पहाड़	ई	पहाड़ी

—o—

अशुद्धि-शोधन

शब्दों में सामान्य अशुद्धियाँ

(1) इ, ई की अशुद्धियाँ

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
श्रीमति	श्रीमती	हानी	हानि
सखि	सखी	समाधी	समाधि
स्त्रि	स्त्री	प्राप्ती	प्राप्ति

रिती	रीति	परिक्षा	परीक्षा
मुनी	मुनि	कवियित्री	कवयित्री
कीजीए	कीजिए	बिमार	बीमार
अगनि	अग्नि	सामिग्री	सामग्री

(2) उ, ऊ की अशुद्धियाँ

आँसु	आँसू	प्रभू	प्रभु
दुध	दूध	पुर्ण	पूर्ण
गुरू	गुरु	पुजा	पूजा
बाबूओं को	बाबुओं को	साधू	साधु
हिन्दु	हिन्दू	पुरूष	पुरुष
आयू	आयु	शुन्य	शून्य

(3) ऋ, रि की अशुद्धियाँ

अमरित	अमृत	वृज	व्रज
प्रथक्	पृथक्	रितु	ऋतु
रिषि	ऋषि	प्रिथवी	पृथवी, पृथिवी
रिण	ऋण	प्रक्रिति	प्रकृति
किरपा	कृपा	हिरदय	हृदय

(4) न, ण की अशुद्धियाँ

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
पुन्न	पुण्य	रमायन	रामायण
चरन	चरण	नरायन	नारायण
गुन	गुण	कारन	कारण

(5) 'र' के संयोग की अशुद्धियाँ

प्रमात्मा	परमात्मा	स्मर्ण	स्मरण
नर्क	नरक	परसिद्ध	प्रसिद्ध
पवित्तर	पवित्र	चन्दर	चन्द्र
दरसन	दर्शन	धरम	धर्म
निरमल	निर्मल	इन्द्रा	इन्दिरा

आर्शीवाद	आशीर्वाद	समुन्दर	समुद्र
परसाद	प्रसाद	प्रस्पर	परस्पर
दुरदशा	दुर्दशा	अन्तर साक्ष्य	अन्तः साक्ष्य

(6) श, ष, स की अशुद्धियाँ

अशंतोष	असन्तोष	दृष्य	दृश्य
वेश	वेष	सिथिल	शिथिल
सिखर	शिखर	प्रशाद	प्रसाद
श्राप	शाप	स्मसान	श्मशान
विसम	विषम	बरसा	वर्षा
कृशन	कृष्ण	शुषमा	सुषमा

(7) ज्ञ, ग्य की अशुद्धियाँ

सौभाज्ञ	सौभाग्य	ग्यानी	ज्ञानी
योज्ञ	योग्य	परतिग्या	प्रतिज्ञा
विग्यान	विज्ञान	अरोग्य	आरोग्य
अग्यान	अज्ञान	जिग्यासा	जिज्ञासा
यग्य	यज्ञ	विग्ज्ञ	विज्ञ

(8) छ, क्ष की अशुद्धियाँ

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
छत्री	क्षत्रिय	लछमी	लक्ष्मी
छिमा	क्षमा	लछमन	लक्ष्मण
क्षात्र	छात्र	साशतर	शास्त्र

(9) अनुस्वार की अशुद्धियाँ

ठन्ढा	ठण्डा	अहिन्सा	अहिंसा
पन्डित	पण्डित	दन्ड	दण्ड

(10) उर्दू के कारण होने वाली अशुद्धियाँ

अस्तुति	स्तुति	असनान	स्नान
इस्टेशन	स्टेशन	इस्कूल	स्कूल
जै	जय	निरंकार	निराकार

हे	है	हुं	हूँ
तु	तू	अन्नद	आनन्द

(11) **उच्चारण सम्बन्धी अशुद्धियाँ**

अशुद्ध	**शुद्ध**	**अशुद्ध**	**शुद्ध**
अत्याधिक	अत्यधिक	सामिग्री	सामग्री
निरपराधी	निरपराध	उपरोक्त	उपर्युक्त
स्वास्थ	स्वास्थ्य	अलोचना	आलोचना
प्रशन्न	प्रसन्न	कृप्या	कृपया
रतन	रत्न	कृतघन	कृतघ्न
आधीन	अधीन	चिन्ह	चिह्न
प्रीचय	परिचय	परताप	प्रताप
बिमार	बीमार	श्रंगार	शृंगार
सनमान	सम्मान	सन्मुख	सम्मुख
उज्ज्वल	उज्ज्वल	महत्व	महत्त्व
समाजिक	सामाजिक	निर्दोसी	निर्दोष
स्थाई	स्थायी	दुसरा	दूसरा
भाषाऐं	भाषाएं	तिथी	तिथि
जनम	जन्म	समुन्दर	समुद्र
प्रल्हाद	प्रह्लाद	संसारिक	साँसारिक

(12) **'ब' 'व' की अशुद्धियाँ**

बन	वन	बक्ता	वक्ता
बासुदेव	वासुदेव	बिश्व	विश्व
बन्दना	वन्दना	बीना	वीणा

(13) **प्रत्यय सम्बन्धी** अशुद्धियां

आवश्कीय	आवश्यक	महानता	महत्ता, महत्त्व
पूज्यनीय	पूज्य, पूजनीय	अतुल्यनीय	अतुल्य,अतुलनीय
धनमान	धनवान्	शुद्धताई	शुद्धता
साफलता	सफलता, साफल्य	बाहुल्यता	बाहुल्य, बहुलता

महत्वता	महत्त्व, महत्ता	ऐक्यता	ऐक्य, एकता
मान्यनीय	मान्य, माननीय	मनोकामना	मनः कामना

कुछ अशुद्ध वाक्यों के शुद्ध रूप

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
1. मेरे को मेरे सभी शिक्षक पसन्द करते हैं।	1. मुझे मेरे सभी शिक्षक पसन्द करते हैं।
2. तुम्हें तुम्हारी पुस्तकें व्यवस्थित रखनी चाहिएं।	2. तुम्हें अपनी पुस्तकें व्यवस्थित रखनी चाहिएँ।
3. तुम तुम्हारे घर अभी जाओ।	3. तुम अपने घर अभी चले जाओ।
4. तेरे को पिताजी ने तुरंत बुलाया है।	4. तुम्हें पिताजी ने तुरन्त बुलाया है।
5. मेरे को अपने पुस्तक देकर जाना।	5. मुझे अपनी पुस्तक दे जाना।
6. हम आपके घर कल आयेगा।	6. हम आपके घर कल आयेंगे।
7. हमारे से कोई काम नहीं हो सकता।	7. हम से कोई काम नहीं हो सकता।
8. आज वहां राम ने जाना है।	8. आज वहाँ राम को जाना है।
9. वह लोग आ गए हैं।	9. वे लोग आ गए हैं।
10. यह सारा काम मैंने करा है।	10. यह सारा काम मैंने किया है।
11. तू झूठ मत न बोलियो।	11. तू झूठ न बोल।
12. मैंने तुम्हें अनेकों बार देखा है।	12. मैंने तुम्हें अनेक बार देखा है।
13. कृपया करके ध्यान दो।	13. कृपया ध्यान दें।
14. मैं आपका दर्शन करने आया हूं।	14. मैं आपके दर्शन करने आया हूं।
15. यहां नहीं लिखो।	15. यहां न लिखो।
16. इन सबों ने काम नहीं करा है।	16. इन सबने काम नहीं किया है।
17. दादा जी रेलगाड़ी पर आया है।	17. दादा जी रेलगाड़ी से आए हैं।
18. वह लोग आ गए हैं।	18. वे लोग आ गए हैं।
19. हमको तुमको और श्याम को अवश्य जाना है।	19. हमें, तुम्हें और श्याम को अवश्य जाना है।

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
20. कमीज तो सिल गया, लेकिन बटन नहीं टंका है।	20. कमीज तो सिल गई, लेकिन बटन नहीं टंके हैं।
21. एक विरोध-प्रदर्शन मन्त्री महोदय जब आए, किया गया।	21. जब मन्त्री महोदय आए, तब एक विरोध-प्रदर्शन किया गया।
22. दुष्ट हत्यारे को मृत्युदण्ड की सजा मिलेगी।	22. दुष्ट हत्यारे को मृत्युदण्ड मिलेगा।
23. रोगी ने प्राण त्याग दिया।	23. रोगी ने प्राण त्याग दिए।
24. क्या तुम्हें चारों वेदों के नाम ज्ञात है।	24. क्या तुम्हें चारों वेदों के नाम ज्ञात हैं।
25. उनके माताजी दिल्ली रहते हैं।	25. उनकी माताजी दिल्ली रहती हैं।
26. उसका भाई सेक्रेटरी लगा हुआ है।	26. उसका भाई सेक्रेटरी है।
27. मैंने आज जाना है।	27. मुझे आज जाना है।
28. आज मुझको उष्णता प्रदान करता है।	28. आग मुझे उष्णता प्रदान करती है।
29. मशीनों के धुएँ से वायुमंडल में हवा दूषित हो रहा है।	29. मशीनों के धुएँ से वायुमंडल दूषित हो रहा है।
30. हमारे से कोई काम नहीं हो सकता।	30. हमसे कोई काम नहीं हो सकता।
31. अधिकारी ने कर्मचारी को पानी लाने के लिए बोला।	31. अधिकारी ने कर्मचारी को पानी लाने के लिए कहा।
32. यह पुस्तक मैं पढ़ा हूं।	32. यह पुस्तक मैंने पढ़ी है।
33. इस समस्या की औषध उसके पास है।	33. इस समस्या का समाधान उसके पास है।
34. इस विषय पर मैं मेरे विचार प्रगट कर चुका हूं।	34. इस विषय पर मैं अपने विचार प्रकट कर चुका हूँ।
35. केवल कहने मात्र से कुछ नहीं होगा।	35. केवल कहने से कुछ नहीं होगा।

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
36. वहाँ फूलों की प्रदर्शनी बुलाये जाने वाली है ।	36. वहाँ फूलों की प्रदर्शनी लगाई जाने वाली है ।
37. पवन कुमार जी बड़े सज्जन पुरुष हैं ।	37. पवन कुकार जी बड़े सज्जन हैं ।
38. विद्वान नारी देश की शोभा हैं ।	38. विदुषी नारियां देश की शोभा हैं ।
39. कल मैंने यह काम किया हूं ।	39. कल मैंने यह काम किया था ।
40. आठ बजने को पांच मिनट है ।	40. आठ बजने में पाँच मिनट हैं ।
41. सुधीर व विमल सगे भाई होते हैं ।	41. सुधीर व विमल सगे भाई हैं ।
42. वह नपा-तुला शब्द बोलता है ।	42. वह नपे-तुले शब्द बोलता है ।
43. यही साबुन कई नाम से बिकता है ।	43. यही साबुन कई नामों से बिकता है ।
44. वे भगवान् की श्रद्धा करते हैं ।	44. वे भगवान् पर श्रद्धा रखते हैं ।
45. लोकसभा के बीच कल विवाद होगा ।	45. लोक सभा मे कल वाद-विवाद होगा ।
46. अनेकों कामों की भीड़ से मैं परेशान हूं ।	46. अनेकों कामों के बोझ से मैं परेशान हूँ ।
47. यह सुनकर मैं अति विस्मय हुआ ।	47. यह सुनकर मैं अति विस्मित हुआ ।
48. तुम्हारे हमारे क्या वास्ता ।	48. तुम्हारा हमसे क्या वास्ता ?
49. वह पागल आदमी हो गया ।	49. वह आदमी पागल हो गया ।
50. सावित्री, जो सत्यवान की पत्नी थी, वह एक पतिव्रता नारी थी ।	50. सत्यवान् की पत्नी सावित्री पतिव्रता नारी थी ।

वाग्धारा (मुहावरे) और लोकोक्तियाँ

वाग्धारा (मुहावरे)

1. **अंए-अंग ढीला होना**—बहुत थक जाना। आज दिन भर काम करने से मेरे अंग-अंग ढीले हो रहे हैं।

2. **अंगूठा दिखाना**—साफ इन्कार करना। मैंने कल गोविन्द से दस रुपये मांगे तो उसने अंगूठा दिखा दिया।

3. **अन्धे की लकड़ी**—एक मात्र सहारा। अब तो सुरेश ही मुझ अन्धे की लकड़ी है।

4. **अक्ल का दुश्मन**—महा मूर्ख। सोहन तो पूरा अक्ल का दुश्मन है, उसकी समझ में यह बात नहीं आयेगी।

5. **अक्ल पर पत्थर पढ़ना**—बुद्धिभ्रष्ट होना। तुम्हें कई बार समझाया कि बिना टिकट यात्रा नहीं करते, पर तुम्हारी अक्ल पर तो पत्थर पड़े हुए हैं, तुम मानते ही नहीं।

6. **अपना उल्लू सीधा करना**—अपना स्वार्थ पूरा करना। ग्राहक को हानि हो या लाभ, दलाल को अपना उल्लू सीधा करना होता है।

7. **अपनी खिचड़ी अलग पकाना**—सबसे अलग रहना। वे लोग तो अपनी खिचड़ी अलग ही पकाना चाहते हैं। उन्हें क्या पता कि सहयोग से ही लाभ होता है।

8. **अपने मुँह मियां मिठ्ठू बनना**—अपनी प्रशंसा आप करना। भले लोग कभी भी अपने मुँह मियाँ मिठ्ठू नहीं बना सकते।

9. **आँखों का तारा**—बहुत प्यारा। श्रवण कुमार अपने माता-पिता की आँखों का तारा था।

10. **आँखों में धूल झोंकना**—धोखा देना। स्वर्ण-तस्कर पुलिस की आँखों में धूल झोंककर नौ-दो ग्यारह हो गये।

11. **आँख लगना**—नींद आना, प्रेम होना। आँख लगी जब ते सखी, तब ते लगत न आँख।

12. **आँख चुराना**—सामने आने से कतराना। जब से गुरु जी ने रमेश को सिगरेट पीते देखा है, वह उनसे आँखें चुराने लगा है।

13. **आँखों पर परदा पड़ना**—भला बुरा न सूझना। क्या तुम्हारी आँखों पर पर्दा पड़ा हुआ था, जो उस धूर्त की चालों को न समझ सके।

14. **आकाश-पाताल का अन्तर**—बहुत अन्तर। शोभा और विभा के स्वभाव में आकाश-पाताल का अन्तर है।

15. **आस्तीन का साँप**—विश्वासघाती मित्र। तुम ललित को अपना मित्र समझते हो, पर वह तुम्हारे लिए आस्तीन का साँप सिद्ध होगा।

16. **आकाश-पाताल एक करना**—बहुत प्रयत्न करना। हरीश ने अपने पुत्र को ढूंढने के लिए आका-पाताल एक कर दिया।

17. **आटे-दाल का भाव मालूम होना**—कठिनाई का अनुभव होना। बड़े भाई से अलग होते ही सुधीर को आटे-दाल का भाव मालूम होने लगा।

18. **आसमान सर पर उठाना**—बहुत शोर करना। शिक्षक के बाहर जाते ही छात्रों ने आसमान सिर पर उठा लिया।

19. **इति श्री करना**—समाप्त करना। भैया, कहानी की इति श्री हो गई है। अब तो जाओ।

20. **ईद का चांद होना**—बहुत कम दिखाई देना। अरे मोहन ! तुम तो ईद का चाँद हो गए। कई-कई महीनों तुम्हारे दर्शन नहीं होते।

21. **ईंट से ईंट बजाना**—नष्ट-भ्रष्ट कर देना। शिवाजी ने औरंगजेब की ईंट से ईंट बजा दी।

22. **इस कान से सुनना, और उस कान से निकाल देना**—बात पर ध्यान न देना। सुधीर ! यह अच्छा नहीं कि तुम मेरी बात इस कान से सुनकर उस कान से निकाल देते हो।

23. **उंगली पर नचाना**—वश में करना। कैकेयी ने राजा दशरथ को उंगलियों पर नचा दिया था।

24. **उंगली पर नाचना**—वश में होना। भारतीय साम्यवादी तो रूस की उँगली पर नाचते हैं। उनमें स्वयं सोचने की सामर्थ्य है ही नहीं।

25. **उलग देना**—भेद प्रकट कर देना। पुलिस के डंडे पड़ते ही दीनू ने सारी बात उगल दी।

26. **उलटी गंगा बहाना**—विपरीत बात करना। बेटा, तुम अध्यापक को उपदेश देकर उलटी गंगा बहा रहे हो। यह अच्छा नहीं।

27. **उन्नीस-बीस का अन्तर**—बहुत थोड़ा अन्तर। ललिता और प्रीति में उन्नीस-बीस का ही अन्तर है।

28. **उधेड़-बुन में पड़ना**—सोच में पड़ना। तुम किस उधेड़-बुन में पड़ गए हो ? सुरेश तो अब तुम्हारे वश में होने से रहा।

29. **उंगली उठाना**—निन्दा करना। सन्देह त कारण ही किसी पर उँगली उठाना अच्छा नहीं।

30. **एड़ी-चोटी का जोर लगाना**—कठोर परिश्रम करना। योगेन्द्र ने प्रथम आने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा दिया है। वह अवश्य सफल होगा।

31. **एक ही लकड़ी से हांकना**—भले-बुरे सबसे समान व्यवहार करना। उस प्रदेश के मुख्य मन्त्री सबको एक ही लकड़ी से हाँकने के आदि हैं। उनकी मत पूछो।

32. **एक ही थैली के चट्टे बट्टे**—एक ही जैसे चालाक। सोहन और मोहन तो एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। उनकी चाल में न पड़ना।

33. **कमर कसना**—तैयार होना। परीक्षा समीप आ गई है। पूरी तरह कमर कस लो।

34. **कपोल कल्पित**— मन घड़ंत। कपोल-कल्पित बातों से तुम उसे कब तक बहलाओगे ?

35. **कलेजा फटना**—बहुत दुःख होना। उस विधवा का करुण विलाप सुन-कर मेरा तो कलेजा फटा जा रहा था।

36. **कलम तोड़ना**—बहुत सुन्दर लिखना। सतसई लिखने में तो महाकवि बिहारी ने कलम ही तोड़ दी है।

37. **कमर टूटना**—हिम्मत हार जाना। जब से भण्डारी का जवान लड़का मरा है, बेचारे की तो कमर ही टूट गई है।

38. **कलेजे पर साँप लोटना**—ईर्ष्या से जलना। राम के राज्य-तिलक का समाचार पाकर मन्थरा के कलेजे पर साँप लोटने लगा।

39. **कलई खुलना**—भेद प्रकट होना। सुमन कलई खुलने के डर से पहले ही भाग गया।

40. **कान भरना**—चुगली करना। सुधीर तुम मेरे विरुद्ध सदा गुरुजी के कान भरते रहते हो, यह अच्छा नहीं।

41. **कान कतरना**—बहुत चालाक होना। यह छोटा सा लड़का बड़े-बड़ों के कान कतरता है।

42. **कान पर जूं न रेंगना**—कोई प्रभाव न होना। तुम्हें कितना ही समझाया, पर तुम्हारे कानों पर जूं न रेंगी।

43. **काया पलट जाना**—बहुत बड़ा परिवर्तन होना। मंत्री बनते ही रंगनाथ की तो काया ही पलट गई है।

44. **काला अक्षर भैंस बराबर**—बिल्कुल अनपढ़। अंग्रेजी तो मेरे लिए काला अक्षर भैंस बराबर है।

45. **काम आना**—मारा जाना। 'इस स्वतन्त्रता महायज्ञ में कई वीर वर आये काम।'

46. **कागज काले करना**—व्यर्थ लिखना। प्रश्न का उत्तर ठीक लिखो। केवल कागज काले करने से क्या लाभ होगा?

47. **कोल्हू का बैल**—दिन-रात परिश्रम करना। इस मंहगाई में कोल्हू का बैल बनने पर भी भर पेट रोटी नहीं मिलती।

48. **खटाई में पड़ना**—काम में व्यर्थ की देर होना। रमेश की छात्र-वृत्ति का मामला तो अभी खटाई में ही पड़ा हुआ है।

49. **खाला जी का घर**—आसान काम। 'यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं।'

50. **खून का घूंट पीना**—क्रोध को दबा लेना। साहब की झिड़की सुमन को बुरी तो लगी, पर वह खून के घूंट पीकर रह गया।

51. **खून-पसीना एक करना**—बहुत परिश्रम करना। किसान खून-पसीना एक करके अनाज पैदा करता है, पर फसल होने पर उनका अधिकांश भाग सूदखोर महाजन ले जाता है।

52. **गज भर की छाती होना**—साहसी होना। शेर का शिकार करने के लिए गज भर की छाती चाहिए।

53. **गड़ जाना**—लज्जित होना। विमला सोमेश को देखकर एकदम गड़ गई।

54. **गले का हार**—बहुत प्यारा। माधुरी तो अपनी माँ के गले का हार है।

55. **गांठ बाँधना**—अच्छी तरह याद करना। कमलेश, मेरी बात गांठ बाँध लो कि यदि तुमने शरारत न छोड़ी तो इस वर्ष उत्तीर्ण न हो सकोगे।

56. **गागर में सागर भरना**—बड़े विषय को थोड़े शब्दों में कहना। बिहारी ने अपने एक-एक दोहे में गागर में सागर भर दिया है।

57. **गुड़ गोबर कर देना**—बना बनाया काम बिगाड़ देना। मैंने परमिट देने के लिए मन्त्री जी को तैयार कर लिया था, किन्तु किशनू ने उनके कान भर कर गुड़-गोबर कर दिया।

58. **गुरु घंटाल**—बहुत चालाक। सुधीर से बचकर रहो, वह बड़ा गुरु घंटाल है।

59. **गुदड़ी का लाल**—निर्धन, किन्तु गुणवान् व्यक्ति। श्री लाल बहादुर शास्त्री निर्धन परिवार में जन्म लेकर भी भारत के प्रधानमंत्री बने। वे वास्तव में गुदड़ी के लाल थे।

60. **गोबर गणेश**—मूर्ख या भोला व्यक्ति। वर्मा तो बिल्कुल गोबर गणेश है, जो इतनी सी बात नहीं समझता।

61. **घड़ों पानी पड़ना**—अत्यन्त लज्जित होना। जब प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने वाला शशिधर भी नकल करते पकड़ा गया तो उस पर घड़ों पानी पड़ गया।

62. **घाट-घाट का पानी पीना**—बहुत अनुभवी होना। तुम रवीन्द्र की बराबरी कैसे कर कर सकते हो ? उसने तो घाट-घाट का पानी पी रखा है।

63. **घाव पर नमक छिड़कना**—दुखी को और दुखाना। नवीन नौकरी छूटने से वैसे ही दुःखी है और तुम ताने मारकर उसके घाव पर नमक छिड़क रहे हो।

64. **घी के दिए जलाना**—बहुत हर्ष प्रकट करना। अब तो तुम घी के दिए जलाओ, तुम्हारे भैया मंत्री जो बन गए हैं।

65. **घिग्घी बंध जाना**—बहुत डरना। शेर को देखते ही मेरी तो घिग्घी बंध गई।

66. **घोड़े बेचकर सोना**—निश्चिन्त हो जाना। अब परीक्षा समाप्त हो गई है। तभी तो सोनू घोड़े बेचकर सो रहा है।

67. **चांद पर थूकना**—सज्जन पर दोष लगाना। तुम महात्मा गांधी को कायर कहते हो ? तुम्हें चाँद पर थूकने शर्म नहीं आती।

68. **चांदी का जूता**—रिश्वत देना। भोलू बोला—मैं जिसे चाँदी का जूता मारूंगा, वह मुझे वोट क्यों न देगा ?

69. **चारों खाने चित्त होना**—पूरी तरह हार जाना। मास्टर चन्दगीराम के एक ही दाँव से मेहरदीन चारों खाने चित्त हो गया।

70. **चार दिन की चाँदनी**—थोड़े दिनों का सुख। अरे ! जवानी तो चार दिन की चांदनी है। तू इतना क्यों अकड़ रहा है।

71. **चिकनी-चुपड़ी बातें करना**—खुशामदी बातें करना। जो मुख्यमंत्री से चिकनी-चुपड़ी बातें कर लेता है; उसी के भाग्य जाग जाते हैं।

72. **चोली-दामन का साथ होना**—बहुत घनिष्ठता होना। शोभा व हीरा में तो चोली-दामन का साथ है।

73. **चादर से बाहर पाँव फैलाना**—आय से अधिक व्यय करना। चादर से बाहर पाँव फैलाने वाला सदा दुःखी रहता है।

74. **छक्के छुड़ाना**—हरा देना। गत युद्ध में भारतीय सैनिकों ने पाकिस्तान के छक्के छुड़ा दिए।

75. **छठे-छमासे**—कभी-कभी। अलगू के यहाँ बैल को छटे-छमासे घी का स्वाद भी चखने को मिलता था, पर साहू के घर भूसा भी मुश्किल से मिलता था।

76. **जान हथेली पर रखना**—प्राणों की चिन्ता न करना । राणा जी जान हथेली पर रख कर हल्दीघाटी के युद्ध में कूद पड़े ।

77. **जमीन पर पाँव न पड़ना**—बहुत घमंड करना । जब से हीरा का बेटा थानेदार बना है, उसके पांव जमीन पर नहीं पड़ते ।

78. **जी चुराना**—परिश्रम से बचने के लिए बहाने करना । जो बच्चा पढ़ने से जी चुराता है, वह कभी सफल नहीं होता ।

79. **जीती मक्खी निगलना**—सरासर बेइमानी करना । लाला, तुम मेरे सामने ही डंडी मार कर जीती मक्खी निगलना चाहते हो ?

80. **जूती चाटना**—खुशामद करना । मन्त्री जी की जूतियाँ चाटकर ही तुम इस पद पर पहुँचे हो ।

81. **झख मारना**—व्यर्थ समय गंवाना । सवेरे से झख मार रहे थे, जो निबन्ध भी न लिख सके ।

82, **टका सा जवाब देना**—साफ ना कह देगा । शर्मा मेरा मित्र होने का दम भरता है, पर जब मैंने उससे सौ रुपये माँगे तो उसने टका सा जवाब दे दिया ।

83. **टट्टी की आड़ में शिकार खेलना**—छुपकर विरोध करना । लड़ना हो तो सामने आओ, टट्टी की आड़ में शिकार क्यों खेल रहे हो ?

84. **टांग अड़ाना**—बाधा डालना । दुर्जन सदा ही सज्जनों के काम में टांग अड़ाते हैं ।

85. **टेढ़ी खीर**—कठिन काम । भाई ! परीक्षा पास करना तो आसान है, पर नौकरी पाना टेढ़ी खीर है ।

86. **ठन-ठन गोपाल**—पैसा पास न होना । आमदनी अठन्नी खर्चा रुपया, न पूछो हाल, नतीजा—ठन-ठन गोपाल ।

87. **डंके की चोट**—खुल्लम-खुल्ला । मैं डंके की चोट कहता हूँ कि तुम सा स्वार्थी मैंने आज तक नहीं देखा ।

88. **डूबते हुए को तिनके का सहारा**—संकट में थोड़ी सहायता मिलना । यदि आप मुझे चपरासगिरी भी दे देंगे तो वह मुझे डूबते को तिनके का सहारा हो जायेगी ।

89. **ढिढोरा पीटना**—प्रचार करना। तुम उस गरीब को दो रोटियाँ देकर जगह-जगह अपने दान का ढिंढोरा पीट रहे हो।

90· **तिल का ताड़ बनाना**—छोटी बात को बढ़ा कर कहना। मनोहर लाल तुम तिल का ताड़ बनाने में बहुत होशियार हो।

91. **तिलाँजलि देना**— छोड़ देना। मैंने सिगरेट को तो कब से तिलांजलि दे दी है।

92. **थाली का बैंगन**—किसी भी पक्ष में न रहना। जगजीवन तो पूरा थाली का बैंगन है, कभी किसी दल में और कभी किसी दल में।

93. **थूक कर चाटना**—अपने वचन से फिर जाना। थूक कर चाटना दुष्टों का काम है, सज्जनों का नहीं।

94. **दाल न गलना**—बस न चलना। रमेश बाहर बहुत बातें करता है, पर पत्नी के सामने उसकी दाल नहीं गलती।

95. **दांतों तले उंगली दबाना**—हैरान होना। उस छोटे से बच्चे की चालाकी देखकर तो मैंने दाँतों तले उंगली दबा ली।

96. **दाँत खट्टे करना**—बुरी तरह हराना। शिवाजी ने मुगलों के दाँत खट्टे कर दिए।

97. **दाई से पेट छुपाना**—जानकार से भेद छुपाना। मुझे तुम्हारी एक-एक बात का पता है। भला कहीं दाई से भी पेट छुपाया जा सकता है ?

98. **दूध का दूध, पानी का पानी**—ठीक-ठीक न्याय करना। राजेन्द्र के मामले में माननीय न्यायाधीश ने दूध का दूध और पानी का पानी कर दिया।

99. **दाल में कुछ काला**—सन्देह होना। तुम्हारी उखड़ी-उखड़ी बातों से पता चलता है कि दाल में कुछ काला है।

100. **दाँया हाथ**—सहायक। श्री लाल बहादुर शास्त्री नेहरू जी के दाँया हाथ थे।

101. **दौड़-धूप करना**—कोशिश करना। कई महीने तक दौड़-धूप करने के बाद ढाई सौ रुपये की नौकरी हाथ लगी है।

102. **धब्बा लगाना**—कलंक लगाना। चोरी करके तुमने अपने माँ-बाप के नाम को धब्बा लगा दिया है।

103. **धुन का पक्का**—पक्की लगन वाला। सुधीर अपनी धुन का पक्का है। वह इस काम को करके ही छोड़ेगा।

104. **नाक रगड़ना**—दीनता दिखाते हुए प्रार्थना करना। मैंने मन्त्री जी के सामने कई बार नाक रगड़ी, फिर भी वे नहीं पसीजे।

105. **नमक मिर्च लगाना**—बात को बढ़ा-बढ़ा कर कहना। तुम्हें मैंने जरा सा थप्पड़ मारा था, पर तुमने नमक-मिर्च लगाकर गुरुजी से मुझे मार पिटवा दी।

106. **नाक में दम करना**—बहुत तंग करना। जरा से छोकरे ने माँ की नाक में दम कर रखा है।

107. **निन्यानवे का फेर**—रुपये कमाने की चिन्ता। आज तो जिसे देखो वही निन्यानवे के फेर में पड़ा है।

108. **पत्थर की लकीर**—पक्की बात। मेरी बात को तुम पत्थर की लकीर समझो।

109. **पट्टी पढ़ाना**—बहकाना, गलत शिक्षा देना। तुम रवीन्द्र को कितनी पट्टी पढ़ा लो, वह नहीं मानेगा।

110. **पसीना-पसीना होना**—भयभीत होना, लज्जित होना। रीछ को देखते ही छोटू पसीना-पसीना हो गया।

111. **पानी पीकर कोसना**—निरन्तर बुरा चाहना। तू क्यों पड़ोसियों को पानी पी-पीकर कोसता रहता है ?

112. **पानी-पानी होना**—लज्जित होना। ससुर को सामने देखते ही मालती पानी-पानी हो गई।

113. **पीठ दिखाना**—हारकर भाग जाना। युद्ध में वीर कभी पीठ नहीं दिखाया करते।

114. **पेट में दाढ़ी होना**—चालाक होना। नवीन देखने में ही छोटा है, पर इसके पेट में तो दाढ़ी है।

115. **फूला न समाना**—बहुत खुश होना। पुत्र के जन्म का समाचार पाकर राघव फूला न समाया।

116. **पाँचों अंगुलियाँ घी में होना**—बहुत लाभ होना। जब से वह राज्यपाल का निजी सचिव बना है, उसकी पाँचों अंगुलियाँ घी में है।

117. **बगुला भगत**—कपटी । अरे ! विश्वमूर्ति तो बगुला भगत है । उससे बचकर रहना ।

118. **बाग-बाग होना**—बहुत प्रसन्न होना । वर्षों के बाद अपने मित्र को देखकर मेरा दिल बाग-बाग हो गया ।

119. **बात का धनी**—प्रण का पक्का । नरेश तो बात का धनी है, उसी का साथ करो ।

120. **बाल की खाल निकालना**—अधिक तर्क करना । वकील लोग बाल की खाल निकालने में बहुत निपुण होते हैं ।

121. **बाल बाँका न होना**—कोइ हानि न होना ।

जाको राखै साइयां मारि सकै ना कोय ।
बाल न बाँका कर सकै जो जग बैरी होय ॥

122. **भागीरथ प्रयत्न**—बहुत कठिन परिश्रम । भारत की स्वाधीनता के लिए देश भक्तों ने भागीरथ प्रयत्न किया, तब कहीं सफलता मिली ।

123. **भाड़ झोंकना**—व्यर्थ समय गँवाना । बारह वर्ष दिल्ली में रहकर भी तुम भाग झोंकते रहे ।

124. **भाड़े का टट्टू**—पैसे लेकर काम करने वाला । भाड़े के टट्टुओं से स्वाधीनता की लड़ाई नहीं लड़ी जाती ।

125. **मक्खी चूस**—बहुत कंजूस । अनिल तो पूरा मक्खी चूस है ।

126. **मक्खी पर मक्खी मारना**—जैसे का तैसा नकल करना । कुछ अपनी बुद्धि का भी प्रयोग करो, मक्खी पर मक्की क्यों मार रहे हो ?

127. **मन के लड्डू (मोदक) खाना**—कोरी कल्पना से खुश होना । अरे ! कुछ परिश्रम भी कर । मन के लड्डू खाने से भूख नहीं मिटती ।

128. **माथा ठनकना**—आशंका होना । गोविन्द को अचानक वहां देखकर सबका माथा ठनक उठा ।

129. **मिट्टी का माधो**—निरा मूर्ख । तुम तो मिट्टी के माधो हो, कभी न समझोगे ।

130. **मुंह की खाना**—बुरी तरह हारना । 'अब के जनरल स्मिथ सम्मुख था, उससे मुंह की खाई थी ।'

131. **मुंह में पानी भर आना**—ललचाना। अंगूरों के गुच्छे को देखकर लोमड़ी के मुँह में पानी भर आया।

132. **रंगा सियार होना**—कपटी। देवकुमार तो रंगा सियार है, उससे बच कर रहना।

133. **लहू (खून) का घूंट पीकर रह जाना**—गुस्से को पी जाना। लाला ने नौकर को गाली दी, वह बेचारा लहू का घूंट पीकर रह गया।

134. **वीर गति पाना**—युद्ध में लड़ते हुए मारा जाना। इस युद्ध में अनेक सनिकों ने वीर गति प्राप्त की।

135. **श्री गणेश करना**—आरम्भ करना। मैंने आज ही इस पुस्तक का श्री गणेश किया है।

136. **सब्ज बाग दिखाना**—लोभ देकर बहकाना। पहले तो तुमने मुझे कई सब्ज बाग दिखाये, पर अब पूछते ही नहीं।

137. **सोने में सुगन्ध**—एक गुण के साथ कई गुणों का होना। गिरिधर लखपति का लड़का तो है ही। अब तो डाक्टर भी बन गया है। समझो, सोने में सुगन्ध मिल गई है।

138. **सूरज को दीपक दिखाना**—विख्यात व्यक्ति का परिचय देना। गाँधी जी परिचय देना सूरज को दीपक दिखाना है।

139. **स्वाहा करना**—नष्ट कर देना। राजू ने अपनी सारी सम्पत्ति जुए में स्वाहा कर दी है।

140. **हक्का-बक्का रह जाना**—हैरान होना। गुरु जी को अपने कमरे में देख हम हक्के-बक्के रह गए।

141. **हवा से बातें करना**—बहुत तेज भागना। चेतक तो हवा से बातें करता था।

142. **हाथ मलना**—पछताना। यदि तुमने परिश्रम न किया तो बाद में हाथ मलते रह जाओगे।

143. **हाथों का मैल**—तुच्छ वस्तु। रुपया पैसा तो हाथों का मैल है।

144. **हवा लगना**—प्रभाव पड़ना। दीपक को भी अब कालेज की हवा लग गई है। तभी तो उसे नित्य नये कपड़ों का शौक चढ़ गया है।

145. **काँटे बिछाना**—अड़चन डालना। दुर्जन सदा ही सज्जनों के मार्ग में काँटे बिछाते रहते हैं।

146 **खून का प्यासा**—प्राण लेने का इच्छुक। आज के स्वार्थ-पूर्ण वातावरण में भाई-भाई के खून का प्यासा बना हुआ है।

147. **गाल बजाना**—डींग हांकना। 'गाल बजावत तोहि आवत न लाजा ?'

148. **छाती पर मूंग दलना**—सामने रहकर पीड़ा पहुँचाना। मैं तो इसी घर में रह कर तेरी छाती पर मूंग दलूँगी।

149. **धज्जियां उड़ना**—दुर्गति करना। सुरेश ने अपने भाषण में सरकार को मुस्लिम-तुष्टीकरण नीति की धज्जियाँ उड़ा दीं।

150. **लोहा मानना**—प्रभाव स्वीकार करना। इस युद्ध में शत्रु को भारत का लोहा मानना ही पड़ा।

—०—

शरीर के अंगों सम्बन्धी मुहावरे

1. 'सिर' सम्बन्धी मुहावरे

सिर उठाना=विरोध करना, घमण्ड करना। सिर उड़ाना=सिर काट देना। सिर ऊँचा होना=आदर पाना। सिर खाना=व्यर्थ के प्रश्न कर तग करना। सिर घूमना=सिर में चक्कर आना, दिमाग फिर जाना। सिर चढ़ाना =ढीठ बना देना। सिर झुकाना=प्रणाम करना, अधीनता मानना। सिर धुनना=पछताना। सिर पटकना=अनेक उपाय करना। सिर नीचा होना= अपमानित होना। सिर पर भूत सवार होना=धुन सवार होना। सिर फिर जाना=पागल होना। सिर मुंडाते ओले पड़ना=काम के आरम्भ में ही विघ्न पड़ना।

2. 'मुँह' सम्बन्धी मुहावरे

मुँह अंधेरे=प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व ह मुँह काला होना=कलंक लगना, मुँह की खाना=हार जाना, कठोर उत्तर सुनना। मुँह लगाना=अधिक प्यार

देकर ढीठ बनाना । मुँह तोड़ जवाब देना=कड़ा उत्तर देना । मुँह ताकना= सहायता पाने की आशा लगाना । मुँह फट होना=जो इच्छा हो, कह देना । मुँह फुलाता=रुष्ट होना । मुँह मीठा कराना=मिठाई खिलाना । मुँह मोड़ना =साथ छोड़ना । मुंह में राम बगल में छुरी होना=कपट पूर्ण व्यवहार करना ।

3. 'दाँत' सम्बन्धी मुहावरे

दांत गड़ाना=लालच करना । दाँत पीस कर रह जाना=क्रोध के पी लेना । दांत से दाँत बजना=बहुत अधिक दण्ड होना । दाँत काटी रोटी होना =बहुत घनिष्ट सम्बन्ध होना । दांत दिखाना=दीनता प्रदर्शित करना ।

4. 'नाक' सम्बन्धी मुहावरे

नाक कटना=बेइज्जती होना । नाक पर मक्खी न बैठने देना=अपने पर आँच न आने देना । नाक भौं चढ़ाना=असन्तोष प्रकट करना । नाक में दम होना=परेशान होना । नाक रगड़ना=गिड़गिड़ाना । नाक रख लेना=सम्मान रखना । नाकों चने चबाना=तंग करना ।

5. 'कान' सम्बन्धी मुहावरे

कान कतरना=बहुत चालाक होना । कान खड़े होना=सावधान रहना, कान खाना=बहुत शोर करना । कान देना=ध्यान से सुनना । कान भरना= चुगली करना । कानों कान खबर न होना=जरा भी पता न लगना । कान पर जूं न रेंगना=अनसुनी करना, ध्यान न देना ।

6. 'आँख' सम्बन्धी मुहावरे

आंख खुलना=सचेत होना, होश आना । आंखें चार होना=प्रेम होना, आमने-सामने होना । आँखें चुराना=नजर बचाना । आँखें दिखाना=गुस्सा होकर घूरना । आँख फेर लेना=भाव बदल जाना । आँखें बन्द करना=ध्यान छोड़ देना, मरना । आंखें भर आना=आँसू आ जाना । आँखें नीची करना= लज्जा से झुक जाना । आँखों पर बिठाना=आदर करना । आँखों में रात काटना=नींद न आना । आँसू पोंछना=धीरज बँधाना ।

7. 'कलेजा' सम्बन्धी मुहावरे

कलेजा ठंडा होना=शान्ति प्राप्त होना । कलेजा थामना=धीरज रखना । कलेजा फटना=बहुत दुख होना । कलेजे पर हाथ रखना=दिल से पूछना ।

कलेजा मुँह को आना=हृदय का दुख उमड़ना। कलेजे पर साँप लोटना=ईर्ष्या से जलना। कलेजे से लगाकर रखना=बड़े प्रेम से पास रखना, आँखों से ओझल न होने देना।

8. 'गले' सम्बन्धी मुहावरे

गला काटना=बहुत कष्ट देना, हानि पहुँचाना। गला घोंटना=मार देना जबरदस्ती करना। गला छुड़ाना=छुटकारा पाना। गला फँसना=विवश होना। गले का हार=बहुत प्यारा। गले पड़ना=पीछे पड़ना, कठिनाई होना गले मढ़ना=जबरदस्ती थोप देना।

9. 'जी' (मन) सम्बन्धी मुहावरे

जी लगाना=मन को भाना, रुचिकर लगना। जी अच्छा होना=स्वस्थ होना। जी उचटना=मन न लगना। जी कांपना=डर लगना। जी का बोझ हल्का होना=चिन्ता छूटना। जी को मारना=इच्छा को मरना। जी खट्टा होना-प्रेम न रहना, अरुचि होना। जी खोलकर=बिना संकोच के। जी चुराना=काम करने से बचना, मन हर लेना। जी छोटा करना=उत्साह गिरना। जी जलाना=कष्ट पहुँचाना। जी जान से=पूरे मन से। जी टूटना=उत्साह समाप्त हो जाना।

—०—

कुछ अन्य मुहावरे

10. 'घर' सम्बन्धी मुहावरे

घर का आदमी=अत्यन्त निकट होना। घर उजड़ना=गृहस्थी बिखर जाना। घर करना=दिल में समा जाना। घर बसाना=विवाह करना। घर बैठे=बिना परिश्रम किए। घरमें गंगा बहना=आवश्यकता की वस्तु घर में ही होना। घर का शेर=घर में ही अकड़ दिखाने वाला, पर वास्तव में कायर। घर का न घाट का=कहीं का भी न होना। घर फूंक तमाशा देखना=घर की सम्पत्ति नष्ट कर मनोरंजन करना।

11. 'नाम' सम्बन्धी मुहावरे

नाम कमाना=यश प्राप्त करना। नाम करना=प्रसिद्ध करना। नाम

चमकाना=ख्याति फैलाना । नाम जपना=ईश्वर स्मरण करना । नाम बाकी रहना=याद बनी रहना । नाम शेष होना=मर जाना । नाम बिकना=नाम प्रसिद्ध होने से कोई वस्तु बिकना । नाम धरना=दोष लगाना । नाम लेवा न रहना । वंश नष्ट हो जाना । नाम को भी नहीं=थोड़ी भी नहीं । नाम लगना=दोष सिर लगाना । नाम ही नाम=केवल ख्याति रहना ।

12. **'बात' सम्बन्धी मुहावरे**

बात का धनी=वचन का पक्का । बात का बतंगड़ बनाना=छोटी सी बात को बढ़ा देना । बात की बात में=अति शीघ्र । बात न पूछना=आदर न करना, सहायता । न करना बात पक्की होना=किसी बात का निश्चित हो जाना । बात बढ़ाना=झगड़ा बढ़ाना । बात बनाना=काम बनाना, बहाने बनाना । बात-बात में=प्रतिक्षण । बातों में आना=फुसलाने में आ जाना । बातों पर न जाना=विश्वास न करना, ध्यान न देना ।

—o—

लोकोक्तियाँ

1. **अधजल गगरी छलकत जाय**—थोड़े ज्ञान से अधिक अभिमान होता है । चन्दू तीन बार दसवीं में फेल हो गया, फिर भी कहता है कि मैं अध्यापक को अंग्रेजी पढ़ा सकता हूँ । अधजल गगरी छलकत जाय ।

2. **अन (बिन) मांगे मोती मिले, मांगे मिले न भीख** - सन्तोषी को घर बैठे ही सब कुछ मिल जाता है । तुम नौकरी के लिए जगह-जगह फिरते रहे, पर मुझे तो यहीं नियुक्ति-पत्र मिल गया है । अन मांगे मोती मिले, माँगे मिले न भीख ।

3. **अब पछताए होत जब क्या, चिड़ियाँ चुग गईं खेत**—समय बीत जाने पर पछताना व्यर्थ है ।

आछे दिन पाछे भये, हरि सों किया न हेत ।
अब पछताये होत क्या, जब चिड़ियाँ चुग गई खेत ॥

4. **आ बैल मुझे मार**—जान बूझकर विपत्ति मोल लेना। राजनायण पर अनुशासनात्मक कार्यवाही करके जनता पार्टी ने 'आ बैल मुझे मार' वाली लोकोक्ति चरितार्थ कर ली।

5. **आँख का अन्धा नाम नयन सुख**—नाम के विपरीत गुण। नाम तो है—सत्यपाल और बोलता है—दिन-रात झूठ। इसी को कहते हैं—आँख का अन्धा नाम नयन सुख।

6. **आम के आम गुठलियों के दाम**—दुगुना लाभ। मैं इस पुस्तक को खरीद कर पढ़ूँगा और परीक्षा होने पर आधे मूल्य पर बेच दूँगा। आम के आम और गुठलियों के दाम।

7. **ऊँची दुकान फीका पकवान**—केवल ऊपरी दिखलावा। लाल सेवाराम के हैं—दो कोठी, कार, नौकर-चाकर, पर घर जाओ तो पानी को भी नहीं पूछता। ऊँची दुकान जीका पकवान।

8. **न उधो का लेना न माधो का देना**—निश्चित होकर जीवन बिताना। हम से तो घास बेचने वाले अच्छे, जिन्हें रात को गहरी नींद तो आ जाती है। क्योंकि उन्हें न ऊधो का लेना है न माधो को देना।

9. **एक अनार सौ बीमार**—वस्तु कम, लेने (चाहने) वाले अधिक। बैंक में दस क्लर्कों की जगह निकली और दस हजार आवेदन-पत्र आ गए। एक अनार सौ बीमार।

10. **एक पंथ दो काज**—एक ही कार्य से दो-दो लाभ।

चलो सखी तहँ जाइए, जहाँ बसैं ब्रजराज।
गो रस बेचैं हरि मिलैं, एक पंथ दो काज।

11. **कंगाली में आटा गीला**—विपत्ति पर विपत्ति आना। सुजान सिंह ने ऋण लेकर दुकान की, बेचारे की चोरी हो गई। अब ऋण चुकाने की चिन्ता हो गई। इसे कहते हैं, कंगाली में आटा गीला।

12. **कहाँ राजा भोज कहाँ गंगू तेली**—दोनों व्यक्तियों में बहुत अन्तर होना। आप धर्मदेव की समानता आचार्य विनोदानन्द से कर रहे हैं? अरे! कहाँ राजा भोज और कहाँ गंगू तेली।

13. **कोयले की दलाली में मुँह काला**—बुरे काम या बुरी संगति से दोष

लगाना । यदि तुम उस 'दादा' का साथ न करते तो पुलिस तुम्हें क्यों पकड़ती ? तुमने नहीं सुना कि कोयले की दलाली में मुँह काला होता है ।

14. **का वर्षा जब कृषि सुखानी**—समय निकल जाने पर सहायता करने या काम करने का कोई लाभ नहीं । देखो; तुम्हारे पिताजी की हालत बहुत गम्भीर है, उन्हें तुरन्त अस्पताल ले जाओ तो ये ठीक हो सकते हैं । अन्यथा —. का वर्षा जब कृषि सुखानी ।

15. **खिसयानी बिल्ली खंभा नोचे**—अपराध परलज्जित होकर क्रोध करना । परीक्षा में असफल होने पर और तो कुछ बना नहीं, भाई-बहनों पर ही बरस पड़ा । ठीक है—खिसयानी बिल्ली खंभा नोचे ।

16. **खोदा पहाड़ निकली चुहिया**—परिश्रम अधिक, फल कम । सोचा था आज 15-20 रुपये मिलेंगे, पर दिन भर काम करके रुपये मुश्किल से दो मिले । खोदा पहाड़ निकली चुहिया ।

17. **गंगा गये गंगादास, जमुना गये जमुनादास**—अवसरवादी हो... ससद् सदस्यों की न पूछो । राजीव के पास जायेंगे तो उनके गुण गायेंगे और चन्द्रशेखर के पास जायेंगे तो उनके गुण गायेंगे । इनकी तो वही स्थिति है कि गंगा गये गंगादास, जमुना गये जमुनादास ।

18. **घर का भेदी लंका ढावै**—आपस की फूट से हानि होती है । पृथ्वीराज से बदला लेने के लिए जयचन्द ने मुहम्मद गोरी को निमन्त्रण दिया, फलस्वरूप भारत पराधीन हो गया । सच है—घर का भेदी लंका ढाए ।

19. **चमड़ी जाए पर दमड़ी न जाए**—बहुत कंजूसी करना । सेठ जी लाखों के मालिक हैं, पर इस भयंकर गर्मी में भी चार मील पैदल चलकर आये हैं । इनका तो सिद्धान्त है कि चमड़ी जाए पर दमड़ी न जाए ।

20. **चोर की दाढ़ी में तिनका**—अपराधी स्वयं ही डरता है । मेरे पैन खोने की बात पूछने पर आपको बुरा क्यों लगा ? स्पष्ट है कि पैन आपने ही लिया होगा । चोर की दाढ़ी में तिनका ।

21. **चोर-चोर मौसेरे भाई**—अपराधी एक दूसरे की सहायता करते हैं । शेरा तुम्हारी तरफदारी क्यों न करेगा ? बन्दर बाँट में उसका हिस्सा भी तो है । चोर-चोर मौसेरे भाई जो ठहरे ।

22. **बिल्ली के भागों छींका टूटा**—अकस्मात् इष्ट सिद्धि हो जाना। गोवर्द्धन की दादी क्या मरी, उसके लिए तो बिल्ली के भागों छीका टूट गया। क्योंकि दादी अपनी सारी सम्पत्ति उसी के नाम वसीयत कर गई।

23. **छोटा मुंह बड़ी बात**—अपनी योग्यता से बढ़कर बात करना। कविता की दो पंक्तियां क्या लिख लीं कि अपनी तुलना तुम 'पन्त' जी से करने लगे। अरे, छोटा मुँह बड़ी बात शोभा नहीं देती।

24. **जिसकी लाठी उसकी भैंस**—बलवान् की ही सदा जीत होती है। मदन न्यायालय के चक्कर लगाता रहा। मकान मालिक ने पुलिस से मिलकर उसका सामान बाहर फेंक कर कमरे पर ताला लगा दिया। ठीक है—जिसकी लाठी उसकी भैंस।

25. **जाके पाँव न फटे बिवाई सो का जाने पीर पराई**—दुःखी ही दूसरे के दुःख का अनुभव कर सकता है। पेट दर्द के कारण मेरा बुरा हाल है और तू हँस रहा है। सच है—जाके पाँव न फटे बिवाई सो का जाने पीर पराई।

26. **तेते पाँव पसारिए जेती लाँबी सौर**—अपनी सामर्थ्य के अनुसार खर्च [illegible] काम करो।

अपनी पहुँच विचारि के, करतब करिए दौर।
तेते पाँव पसारिए जेती लांबी सौर।

27. **तू डाल-डाल मैं पात-पात**—एक दूसरे से बढ़कर चालाक होना। लल्लन ने कल्लन का कोट उड़ाया तो कल्लन ने उसका सन्दूक ही गायब कर दिया। इसी को कहते हैं—तू डाल-डाल मैं पात-पात।

28. **थोथा चना बाजे घना**—सार कम, दिखावा अधिक। हिन्दी तो ठीक तरह लिख नहीं सकता और कहता है, मैं संस्कृत पढ़ा सकता हूँ। थोथा चना बाजे घना।

29. **दीपक तले अंधेरा**—अपने ही घर में विपरीत आचरण करने वाले। मंत्री जी स्वयं तो भ्रष्टाचार के पीछे लट्ठ लिए फिर रहे हैं और उनका बेटा घड़ियों की तस्करी कर रहा है। इसी को कहते हैं—दीपक तले अँधेरा।

30. **दूर के ढोल सुहावने**—दूर से ही कोई वस्तु [illegible] है, सच्चाई का पता पड़ जाने से पास ही लगता है, उस संन्यासी की प्रशंसा तो खूब फैली

पर जब मैं उससे मिला तो पता चला कि वह निरा ढोंगी है। सच है—दूर के ढोल सुहावने लगते है।

31. **नाच न जाने आँगन टेढ़ा**—काम न आने पर, बहाने करना। सवाल निकालना तो आता नहीं और कहता है, पुस्तक में उत्तर अशुद्ध है। सच है—नाच न जाने आँगन टेढ़ा।

32. **धोबी का कुत्ता घर का न घाट का**—किसी ओर का न रहना। तुमने खेती की नहीं और व्यापार तुम कर न सके। धोबी का कुत्ते की तरह तुम न घर के रहे न घाट के।

33. **पहले आत्मा फिर परमात्मा**—अपना काम करने के बाद ही दूसरे का काम किया जाता है। अजी ! अपने बच्चे तो भूखे मर रहे है और गली के बच्चों में रोटी बाँट रहे हो। इनके लिए भी तो कुछ करो। क्या तुम नहीं जानते कि पहले आत्मा फिर परमात्मा।

34. **बोये पेड़ बबूल के आम कहाँ ते होय**—बुरे काम काम से शुभ फल नहीं मिलता।

करैं बुराई सुख चहै, कहु रहीम कस होय।
बोये पेड़ बबूल के, आम कहाँ ते होय॥

35. **भूखे भजन न होय गोपाला**—पेट भरा न होने पर किसी काम में मन नहीं नगता। 'ले लो अपनी कंठी माला, भूखे भजन न होय गोपाला।'

36. **मन चंगा तो कठौती में गंगा**—मन पवित्र होने पर तीर्थ जाने की आवश्यकता नहीं। बदरीप्रसाद जी इधर तो आप माल की चोर बाजारी करते हैं, उधर रोज जमुना स्नान को जाते है। अरे मन चंगा तो कठौती में गंगा।

37. **मन के हारे हार हैं, मन के जीते जीत**—उत्साही व्यक्ति ही सफलता प्राप्त करता है। श्रेष्ठ पुरुष विपरीत परिस्थितियों में भी धैर्य नहीं छोड़ते। कारण, वे जानते हैं कि मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।

38. **सावन सूखे न भादों हरे**—सदा एक जैसा रहना। हमारे हाल न पूछो। यहाँ तो सावन सूखे न भादों हरे वाली स्थिति रहती है।

39. **हाथ कंगन को आरसी क्या**—प्रत्यक्ष के लिए प्रमाण की आवश्यकता

नहीं होती। अरे, खाकर देख ले, ये आम मीठे हैं या नहीं। हाथ कंगन को आरसी क्या ?

40. **होनहार बिरवान के होते चिकने पात—**श्रेष्ठ व्यक्तियों के लक्षण बचपन में प्रकट हो जाते हैं। डॉ० राजेन्द्रप्रसाद दसवीं से ही सभी परीक्षाओं में प्रथम आते रहे हैं। क्यों न हो ? होनहार बिरवान के होत चीकने पात।

41. **करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान—**निरन्तर परिश्रम से व्यक्ति योग्य बन जाता है।

करत करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जात तें, सिल पर परत निशान॥

42. **न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी**— झगड़े की जड़ ही नष्ट कर देना।

करिए उपाय बाँस डारिए कटाय।
नाहिं उपजैगो बाँस, नाहिं बाजे फेरि बाँसुरी।

—०—

विभिन्न वाक्यों से सम्बद्ध लोकोक्तियाँ

1. अपना दोष न मानकर उल्टा दूसरों को दोषी कहना—**उल्टा चोर कोत वाल को डाँटे।**

2. समय बीत जाने पर पश्चात्ताप बृथा है—**बर्षा जब कृषि सुखानी, समय चुके पुनि का पछिताने।**

3. जिससे हानि हो उसे जड़ काटना ही अच्छा है—**न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी।**

4. काम प्रारम्भ करते ही विघ्न पड़ना—**सिर मुंड़ाते ओले पड़ना।**

5. सोचने मात्र से कोई काम नहीं होता—**अब पछताये होत क्या, जब चिड़ियां चुग गई खेत।**

6. दूर की बात अच्छी लगती है—**दूर के ढोल सुहावने।**

7. जिसका भगवान् रक्षक है, उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता—**जाकी राखें साईयां मार सके ना कोय**

8. जो जैसा करता है, वह उसके अनुसार फल भोगता है—**जो जस करे सो तस फल चाखा।**

9. आपत्ति के समय थोड़ी सहायता भी बहुत होती है—डूबते को तिनके का सहारा।

10. बलवान् की ही जीत होती है—जिसकी लाठी उसकी भैंस।

11. किसी एक सिद्धान्त पर स्थित न रहना—गंगा गए गंगादास जमुना गए जमुनादास।

12. ऊपर से मित्रता, मन में शत्रुता—मुँह में राम बगल में छुरी।

13. मुँह माँगी वस्तु मिल जाना—अंधा क्या चाहे दो आंखें।

14. अच्छे काम का परिणाम अच्छा होता है—अन्त भले का भला।

15. श्रेष्ठ व्यक्ति के लक्षण बचपन में दिख जाते हैं—होनहार बिरवान के होते चीकने पात।

16. जहां अधिकारी मूर्ख हो, वहां गुणी का आदर कौन करे ?—अंधेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाजी, टके सेर खाजा।

17. मांगने पर भी न मिले, पर बिना मांगे अधिक मिल जाये—अनमांगे मोती मिले, मांगे मिले न भीख।

18. गुण के विपरीत नाम होना—आंख के अन्धे नाम नयन सुख।

19. जान-बूझकर विपत्ति मोल लेना—आ बैल मुझे मार।

20. किसी से कोई लेन-देन न रखना—ऊधो का लेना, न माधो का देना।

21. एक वस्तु के अनेक ग्राहक होना—एक अनार सौ बीमार।

22. बेकार और बूढ़ा व्यक्ति या बेकार पशु दोनों बुरे लगते हैं—ऐसे बूढ़े बैल को कौन बांध भुस देय ?

23. विपत्ति पर और विपत्ति पड़ना—कंगाली में आटा गीला।

24. बार-बार किसी को धोखा नहीं दिया जा सकता—काठ की हाँडी बार-बार नहीं चढ़ती।

25. दुर्जन की संगति का दुष्प्रभाव ही पड़ता है—कोयले की दलाली में मुंह काला।

26. अच्छे पैसे देकर ही अच्छा काम कराया जा सकता है—खरी मजदूरी चोखा काम।

27. बहुत अधिक परिश्रम करने पर भी तुच्छ परिणाम निकलना—खोदा पहाड़ निकली चुहिया।

28. दिखावटी परहेज करना—**गुड़ खाये, गुलगुले से परहेज करे।**

29. आपस की फूट से घर नष्ट हो जाता है—**घर का भेदी लंका ढाये।**

30. अपने घर में योग्य से योग्य व्यक्ति का आदर नहीं होता—**घर का जोगी जोगड़ा, आन गाँव का सिद्ध।**

31. सुख के दिन सदा नहीं रहते—**चार दिन की चाँदनी फिर अन्धियारी रात।**

32. जैसा आप वैसे ही उसके साथी—**जस दूलह तस बनी बराता।**

—o—

रिक्त स्थानों में मुहावरे या लोकोक्तियाँ भरना

1. उसे धोखा देना सरल नहीं·········**वह तो पूरा घाघ है।**

2. यहाँ पर किस-किस पर विश्वास किया जाए, छोटे बड़े············**सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं।**

3. जो लोग दो परस्पर विरोधी दलों का सहारा लेते हैं वे मानो······**दो नावों पर पैर रखते हैं।**

4. मेरे जीते जी किसकी शक्ति है, जो·········**तुम्हारा बाल भी बांका कर सके।**

5. ज्यों ही अध्यापक ने कमरे में पाँव रखा त्यों ही शैतान बालक······**भीगी बिल्ली बन गए।**

6. युद्ध में सेनापति के मरते ही उसकी···········**सेना के पांव उखड़ गए।**

7. परमात्मा करे तुम्हारी············**दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति हो।**

8. जब उसका भेद खुल गया तो वह···········**पानी-पानी हो गया।**

9. परीक्षा में प्रथम आने का समाचार सुनकर वह···········**फूला न समाया।**

10. वह अपनी बहादुरी की बड़ी············**डींग हाँकता है, पर है पूरा कायर।**

11. रात-दिन की बड़ी·········**किलकिली अच्छी नहीं होती, आपस में बैठकर फैसला कर लो।**

12. अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर वह.........सन्न रह गया।

13. पुलिस को देखते ही चोर..............नौ दो ग्यारह हो गए।

14. कुछ काम करो इस प्रकार...........हाथ पर हाथ धर कर बैठने से भूखे मरने की स्थिति आ जायेगी।

15. कल थाने में डाका पड़ा, सच है...........दिए तले अंधेरा होता है।

16. न्यायाधीश ने फैसला सुनाते समय..............दूध का दूध और पानी का पानी कर दिया।

17. हिमालय की चोटियाँ तो...............आकाश से बातें करती हैं

18. काम निकलते ही उसने...............आँखें फेर लीं।

19. चतुर लोग भोले लोगों को............उल्लू बनाकर ठग लेते हैं

20. बड़ी देर के बाद मिले हो, तुम तो बस.............ईद का चाँद हो गए हो।

21. नौजवान बेटे के मरते ही बाप पर..........पहाड़ टूट पड़ा

22. ये दोनों जुड़वाँ भाई हैं........दोनों में उन्नीस-बीस का अन्तर

23. मैं तुम्हें ऐसा पीटूंगा कि........तुम्हें नानी याद आ जायेगी।

24. उसकी हरकत देखकर मैं पहले ही समझ गयी थी कि...... कुल काला है।

25. अब बात छिपाने से क्या लाभ ? अब तो सारी......... खुल चुकी है।

26. क्यों मुझे पिछली बातें सुनाकर, मेरा.....घाव हरा करते हो

27. जरा सी बात पर..............लाल पीले क्यों होते हो ? से काम लो।

28. पुलिस के पहुँचते ही अपराधी........नौ दो ग्यारह हो गए।

29. पहले परिश्रम करते, फेल होकर रोने से क्या लाभ ?........अब पछताए होत क्या, जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत।

30. देवेन्द्र की करनी और कथनी में कोई अन्तर नहीं...........उसकी बात को पत्थर की लकीर समझो।

—o—

सब

दो न

कर स

5.

भीगी बि

6.

गए ।

7